मिलिंदपन्हा

मिलिंद पन्हा (पाली में "मिलिंद के प्रश्न") एक बौद्ध ग्रंथ है जो लगभग 100 ईसा पूर्व का है। यह थेरवाद बौद्ध धर्म के पाली कैनन के बर्मी संस्करण में खुद्दक निकाय की एक पुस्तक के रूप में शामिल है; हालाँकि, यह थाई या श्रीलंकाई संस्करणों में नहीं मिलता है। इसका एक संक्षिप्त संस्करण चीनी महायान अनुवादों में मिलता है। ऐसा माना जाता है कि इसमें दूसरी शताब्दी ईसा पूर्व में शासन करने वाले बैक्ट्रिया के इंडो-ग्रीक राजा मेनेंडर प्रथम (पाली में मिलिंदा) द्वारा ऋषि नागसेन से बौद्ध धर्म के बारे में पूछे गए प्रश्नों का वर्णन है।

अंतर्वस्तु

टिपिटक >> सुत्त पिटक >> खुद्दाक निकाय >> मिलिंदपन्हा >> पुस्तक II: नैतिक गुणों की विशिष्ट विशेषताएं - लक्खाना पन्हा अध्याय 1

अनुवादक: टी.डब्ल्यू. राइस डेविड्स

पिछला <<<<-----||-2-||----->>>> अगला

1. अब राजा मिलिंदा आदरणीय नागसेन के पास गए और उन्हें मित्रता और शिष्टाचार के अभिवादन से संबोधित किया और आदरपूर्वक अलग बैठ गए। नागसेन ने भी उनके शिष्टाचार का उत्तर दिया, जिससे राजा का हृदय प्रसन्न हो गया।

और मिलिंडा ने यह पूछकर बात शुरू की, 'आप किस नाम से जाने जाते हैं, और महोदय, आपका नाम क्या है?'

'हे महाराज, मुझे नागसेना के नाम से जाना जाता है और मेरे धर्म के साथी मुझे इसी नाम से पुकारते हैं। परन्तु हे महाराज, चाहे माता-पिता नागसेना, सूरसेना, वीरसेना या शिहसेना जैसे नाम दें, फिर भी, हे महाराज, यह नागसेना इत्यादि केवल एक सामान्य रूप से समझा जाने वाला नाम है, एक प्रचलित पदनाम है। क्योंकि इसमें कोई स्थायी व्यक्तित्व (कोई आत्मा) निहित नहीं है।'

तब मिलिंदा ने योनाकों और भाइयों को साक्षी मानकर कहा, 'यह नागसेन कहता है कि उसके नाम में कोई स्थायी व्यक्तित्व (कोई आत्मा) निहित नहीं है। क्या अब इस आधार पर उसे स्वीकार करना भी संभव है?' और नागसेन की ओर मुड़कर उन्होंने कहा, 'हे परम पूज्य नागसेन, यदि इस मामले में कोई स्थायी व्यक्तित्व (कोई आत्मा) निहित नहीं है, तो कृपया बताएं कि कौन है जो संघ के सदस्यों को वस्त्र, भोजन, आवास और बीमारों के लिए आवश्यक वस्तुएँ प्रदान करता है? कौन है जो दी गई इन वस्तुओं का आनंद लेता है? कौन है जो धर्ममय जीवन जीता है? कौन है जो ध्यान में स्वयं को समर्पित करता है? कौन है जो श्रेष्ठ मार्ग के लक्ष्य, अरहतत्व के निर्वाण को प्राप्त करता है? और कौन है जो जीवित प्राणियों का संहार करता है? कौन है जो दूसरों की वस्तुएँ लेता है?' वह कौन है जो सांसारिक वासनाओं में लिप्त होकर बुरा जीवन जीता है, जो झूठ बोलता है, जो शराब पीता है, जो (संक्षेप में) उन पाँच पापों में से कोई एक करता है जिनका कड़वा फल इसी जीवन में मिलता है? यदि ऐसा है तो न तो पुण्य है और न पाप; न तो अच्छे या बुरे कर्मों का कर्ता है और न ही कारण; न तो अच्छे या बुरे कर्मों का फल है और न ही परिणाम। -हे परम पूज्य नागसेना, यदि हम यह सोचें कि यदि कोई मनुष्य

अगर तुम्हें मार डाला जाए तो वह हत्या नहीं होगी, तो इससे यह निष्कर्ष निकलता है कि तुम्हारे संघ में कोई वास्तविक गुरु या शिक्षक नहीं हैं, और तुम्हारी दीक्षाएँ व्यर्थ हैं। तुम कहते हो कि तुम्हारे संघ के साथी तुम्हें नागसेना कहकर पुकारते हैं। अब यह नागसेना क्या है? क्या तुम्हारा मतलब यह है कि बाल नागसेना हैं?

'मैं ऐसा नहीं कहता, महान राजा।'

'या फिर शरीर के बाल, शायद?'

'हरगिज नहीं।'

या फिर क्या नाखून, दांत, त्वचा, मांस, नसें, हड्डियां, मज्जा, गुर्दे, हृदय, यकृत, पेट, तिल्ली, फेफड़े, बड़ी आंत, छोटी आंत, पेट, मल, पित्त, कफ, मवाद, रक्त, पसीना, वसा, आंसू, सीरम, लार, बलगम, जोड़ों को चिकनाई देने वाला तेल, मूत्र, या मस्तिष्क, या इनमें से कोई भी या सभी, नागसेन हैं?

और इन सभी सवालों का जवाब उन्होंने ना में दिया।

'तो क्या नागसेन बाह्य रूप (रूप) है, या संवेदनाएँ (वेदना), या विचार (संज्ञा), या संरचनाएँ (चरित्र के घटक तत्व, संखार), या चेतना (विज्ञान) है?'

और इन सभी सवालों का जवाब भी उन्होंने 'नहीं' में दिया।

'तो क्या ये सभी स्कंध मिलकर नागसेन हैं?'

'नहीं! महान राजा।'

लेकिन क्या पांच स्कंधों के अलावा भी कुछ ऐसा है जो नागसेन है?

फिर भी उसने जवाब में 'नहीं' कहा।

तो फिर, चाहे मैं कितना भी पूछ लूँ, मुझे कोई नागसेना नहीं मिलता। नागसेना तो बस एक खोखली ध्वनि है। फिर हमारे सामने जो नागसेना है, वह कौन है? आपके आदरणीय, यह एक झूठ है, एक असत्य है!

और आदरणीय नागसेन ने राजा मिलिंद से कहा, 'हे महाराज, आपकी कुलीनता के अनुरूप आपका पालन-पोषण बड़े ही विलासितापूर्ण वातावरण में हुआ है। यदि आप इस शुष्क मौसम में गर्म और रेतीली भूमि पर चलें, और कठोर रेत के किरकिरे कणों को पैरों तले रौंदें, तो आपके पैरों में दर्द होगा। और जैसे-जैसे आपके शरीर में पीड़ा होगी, आपका मन व्याकुल होगा, और आपको शारीरिक कष्ट का अनुभव होगा। तो फिर आप पैदल आए, या रथ में?'

'मैं पैदल नहीं आया, महोदय। मैं एक गाड़ी में आया हूँ।'

'तो अगर आप, महाराज, रथ में आए हैं, तो मुझे समझाइए कि वह क्या है। क्या वह खंभा ही रथ है?'

'में ऐसी बात नहीं की।'

'क्या धुरी ही रथ है?'

'हरगिज नहीं।'

'क्या रथ पहिए हैं, या ढांचा है, या रस्सियां हैं, या जुआ है, या पहियों की तीलियां हैं, या अंकुश है?'

और इन सभी सवालों का जवाब उन्होंने फिर भी 'नहीं' ही दिया।

'तो क्या इसके ये सभी भाग मिलकर रथ बनाते हैं?'

'नहीं, महोदय।'

'लेकिन क्या उनके बाहर ऐसी कोई चीज है जो रथ है?'

फिर भी उसने जवाब में 'नहीं' कहा।

तो फिर, चाहे मैं कितना भी पूछ लूँ, मुझे कोई रथ नहीं मिलता। रथ तो बस एक खोखली बात है। फिर वह रथ क्या है जिसके बारे में आप कहते हैं कि आप उसमें आए हैं? महाराज, आपने जो कहा है वह झूठ है, असत्य है! रथ जैसी कोई चीज नहीं होती! आप पूरे भारत के राजा हैं, एक शक्तिशाली सम्राट हैं। फिर आप किससे डरकर असत्य बोल रहे हैं? और उन्होंने योनकियों और भाइयों को साक्षी बनाकर कहा: 'यहाँ राजा मिलिंद ने कहा है कि वे रथ से आए हैं। लेकिन जब उनसे पूछा गया कि रथ क्या था, तो वे अपनी बात साबित करने में असमर्थ रहे। क्या सचमुच उनकी बात पर विश्वास किया जा सकता है?'

जब उसने ऐसा कहा तो पाँच सौ योनाकाओं ने तालियाँ बजाकर राजा से कहा: 'महाराज, अगर आप कर सकते हैं तो अब आप इससे बाहर निकलें?'

तब राजा मिलिंद ने नागसेन को उत्तर देते हुए कहा, 'मैंने कोई असत्य नहीं कहा है, आदरणीय महोदय। इसमें ये सभी चीजें होने के कारण ही—ध्रुव, धुरी, पहिए, ढांचा, रस्सियाँ, जुआ, तीलियाँ और अंकुश—इसे सामान्यतः प्रचलित शब्द, यानी आम बोलचाल की भाषा में "रथ" कहा जाता है।'

बहुत खूब! महाराज, आपने "रथ" का अर्थ बिल्कुल सही समझा है। और ठीक इसी कारण से, आपने मुझसे जिन सभी बातों के बारे में प्रश्न पूछे - मानव शरीर में पाए जाने वाले बत्तीस प्रकार के कार्बनिक पदार्थ और अस्तित्व के पाँच मूलभूत तत्व - उन्हीं के कारण मुझे आम तौर पर प्रचलित शब्द "नागसेना" के अंतर्गत रखा जाता है।

[पैराग्राफ जारी है] क्योंकि हे महाराज, हमारी बहन वगीरा ने भगवान बुद्ध की उपस्थिति में कहा था:

"जिस प्रकार विभिन्न भागों के सह-अस्तित्व की पूर्व शर्त के आधार पर 'रथ' शब्द का प्रयोग किया जाता है, ठीक उसी प्रकार जब स्कंध उपस्थित होते हैं तो हम 'प्राणी' की बात करते हैं।"

'अत्यंत अद्भुत, नागसेना, और अत्यंत विचित्र। आपने अत्यंत कठिन पहेली को बखूबी सुलझा लिया है। यदि स्वयं बुद्ध यहाँ होते तो वे आपके उत्तर की सराहना करते। शाबाश, शाबाश, नागसेना!'

2. 'नागसेना, आपकी वरिष्ठता कितने वर्षों की है?'

'सात, महाराज।'

लेकिन आप यह कैसे कह सकते हैं कि यह आपका "सात" है? क्या आप ही "सात" हैं, या संख्या ही "सात" है?

उसी क्षण राजसी आभूषणों से सुशोभित राजा की आकृति की छाया जमीन पर पड़ी और जल से भरे एक पात्र में प्रतिबिंबित हुई। नागसेन ने उनसे पूछा, 'हे राजा, आपकी आकृति की छाया जमीन पर पड़ रही है और जल में प्रतिबिंबित हो रही है, अब क्या हुआ? क्या आप राजा हैं या आपकी परछाई राजा है?'

'मैं राजा नागसेन हूँ, लेकिन छाया का अस्तित्व मेरे कारण ही होता है।'

'ठीक वैसे ही, हे राजा, वर्षों की संख्या सात है, मैं सात नहीं हूँ। परन्तु हे राजा, मेरे कारण ही संख्या सात अस्तित्व में आई है; और यह मेरी उसी अर्थ में है जैसे परछाई आपकी है।'

'नागसेना, यह एक बार फिर बहुत अद्भुत और विचित्र है। आपने अपने सामने रखे गए प्रश्न का, चाहे वह कितना भी कठिन क्यों न हो, बहुत अच्छे से समाधान कर लिया है!'

3. राजा ने कहा: 'आदरणीय महोदय, क्या आप मुझसे फिर से चर्चा करेंगे?'

'यदि महाराज एक विद्वान (पंडित) के रूप में चर्चा करेंगे, तो ठीक है; लेकिन यदि आप एक राजा के रूप में चर्चा करेंगे, तो नहीं।'

'तो फिर विद्वान किस बात पर चर्चा करते हैं?'

जब विद्वान आपस में किसी विषय पर चर्चा करते हैं, तो उसमें एक निष्कर्ष निकलता है, एक सुलझन होती है; कोई न कोई अपनी गलती का दोषी पाया जाता है और फिर अपनी गलती स्वीकार करता है; भेद और प्रतिभेद किए जाते हैं; फिर भी वे क्रोधित नहीं होते। हे राजा, विद्वान इसी प्रकार चर्चा करते हैं।

'और राजा आपस में कैसे चर्चा करते हैं?'

'जब कोई राजा, महाराज, किसी मामले पर चर्चा करता है और कोई बात रखता है, तो यदि कोई उससे असहमत होता है, तो वह उसे जुर्माना लगाकर कहता है: "उस व्यक्ति को ऐसा दंड दो!" महाराज, राजा इसी प्रकार चर्चा करते हैं।'

'बहुत खूब। मैं एक विद्वान के रूप में चर्चा करूँगा, राजा के रूप में नहीं। आदरणीय महोदय, आप बेझिझक बात करें, जैसे आप किसी भाई, शिष्य, गृहस्थ छात्र या यहाँ तक कि किसी सेवक से करते हैं। डरें नहीं!'

'बहुत अच्छा, महाराज,' नागसेना ने कृतज्ञतापूर्वक कहा।

'नागसेना, मुझे तुमसे एक प्रश्न पूछना है;' राजा ने कहा।

'कृपया पूछिए, महाराज।'

'मैंने यह अनुरोध किया है, महोदय।'

'इसका जवाब पहले ही दिया जा चुका है।'

आपने क्या उत्तर दिया है?

तो फिर महाराज, आपका तात्पर्य किससे है?

लेकिन राजा मिलिंदा ने सोचा, 'यह भिक्षु तो बड़ा विद्वान है। वह मुझसे चर्चा करने में पूर्णतः सक्षम है। मुझे उससे कई प्रश्न पूछने हैं, और उन सभी को पूछने से पहले ही सूर्य अस्त हो जाएगा। कल घर पर चर्चा जारी रखना बेहतर होगा।' और उसने देवमंतिया से कहा, 'आप महाराज को सूचित कर दीजिए कि राजा से चर्चा कल महल में पुनः शुरू होगी।' और ऐसा कहकर उसने नागसेन से विदा ली, अपने घोड़े पर सवार हुआ और बुदबुदाते हुए चला गया, 'नागसेन, नागसेन!'

और देवमंतिया ने नागसेन को अपना संदेश दिया, जिसे नागसेन ने सहर्ष स्वीकार कर लिया। अगले दिन सुबह-सुबह देवमंतिया, अनंतकाय, मनकुरा और सब्बदिन्ना राजा के पास गए और बोले: 'हे महाराज, क्या नागसेन आज आएँगे?'

'हां, वह आने वाला है।'

वह कितने भाइयों के साथ आने वाला है?

'जितने चाहे उतने लोगों के साथ।'

और सब्बादिन्ना ने कहा: 'उसे दस लोगों के साथ आने दो।' लेकिन राजा ने अपनी बात दोहराई। और जब सब्बादिन्ना ने अपना सुझाव फिर से दोहराया, तो राजा ने कहा: 'यह सारी तैयारी हो चुकी है, और मैं कहता हूँ:

"उसे जितने चाहे उतने लोगों के साथ आने दो," फिर भी सब्बादिन्ना कहती है: "उसे दस लोगों के साथ आने दो।" क्या उसे लगता है कि हम इतने लोगों को भोजन कराने में सक्षम नहीं हैं?

तब सब्बादिन्ना को शर्मिंदगी हुई।

4. देवमंतीय, अनंतकाय और मनकुरा नागसेन के पास गए और उन्हें राजा की कही हुई बातें बताईं। आदरणीय नागसेन ने दोपहर के समय वस्त्र धारण किए और अपने हाथ में पान का पात्र लेकर सभी भाइयों के साथ सागल चले गए। अनंतकाय नागसेन के साथ चलते हुए बोले:

'जब, आदरणीय महोदय, मैं कहता हूँ, "नागसेना," तो वह नागसेना क्या है?'

बुजुर्ग ने उत्तर दिया: 'तुम्हारे विचार से नागसेना क्या है?'

'आत्मा, वह आंतरिक श्वास जो आती-जाती रहती है, मैं उसे नागसेना मानता हूँ।'

लेकिन अगर वह सांस निकल जाने के बाद वापस न लौटे, या वापस लौटने के बाद न निकले, तो क्या वह व्यक्ति जीवित रहेगा?

'बिल्कुल नहीं, महोदय।'

लेकिन क्या तुरही बजाने वाले जब अपनी तुरही बजाते हैं, तो उनकी सांस वापस उन्हीं में लौट आती है?

'नहीं, महोदय, ऐसा नहीं है।'

'या फिर, जब वे बांसुरी या सींग बजाते हैं, तो क्या उनकी सांस वापस उन्हीं में लौट आती है?'

'नहीं, महोदय।'

'तो फिर वे मर क्यों नहीं जाते?'

'मैं ऐसे तर्कवादी से बहस करने में सक्षम नहीं हूं। कृपया मुझे बताएं, महोदय, मामला क्या है।'

'श्वास में आत्मा नहीं होती। ये श्वास लेना और छोड़ना मात्र शरीर की क्रियाशील शक्तियाँ हैं,' गुरु ने कहा। और उन्होंने अभिधम्म से इस प्रकार बात की कि अनंतकाय ने स्वयं को संघ का समर्थक घोषित कर दिया।

5. आदरणीय नागसेन राजा के पास गए और उनके लिए तैयार किए गए आसन पर बैठ गए। राजा ने नागसेन और उनके साथियों को आवश्यकतानुसार पौष्टिक और पौष्टिक भोजन दिया; प्रत्येक भाई को वस्त्रों का एक जोड़ा भेंट किया, और नागसेन को स्वयं तीन वस्त्रों का एक सेट दिया। फिर उन्होंने नागसेन से कहा: 'कृपापूर्वक यहीं बैठे रहें, और अपने साथ दस भाइयों को भी। शेष को जाने दें।'

और जब उसने देखा कि नागसेन ने अपना भोजन समाप्त कर लिया है, तो वह एक नीची कुर्सी पर बैठ गया और उसके बगल में आकर बोला: 'हम किस विषय पर चर्चा करें?'

'हम सत्य तक पहुंचना चाहते हैं। हमारी चर्चा सत्य के बारे में होनी चाहिए।'

और राजा ने कहा: 'हे महाराज, आपके त्याग का उद्देश्य क्या है, और आपका सर्वोच्च लक्ष्य क्या है?'

'तुम क्यों पूछते हो? हमारा त्याग इसलिए है ताकि यह दुःख दूर हो जाए और आगे कोई दुःख उत्पन्न न हो; संसार से आसक्ति रखे बिना पूर्णतः इस संसार से विलीन हो जाना ही हमारा सर्वोच्च लक्ष्य है।'

'यह क्या बात है, महोदय! क्या इतने उच्च कारणों से इसके सभी सदस्य संघ में शामिल हुए हैं?'

'बिल्कुल नहीं, महाराज। कुछ कारणों से,'

लेकिन कुछ लोग राजाओं के अत्याचार से भयभीत होकर दुनिया छोड़कर चले गए हैं। कुछ लोग लूट से बचने के लिए, कुछ कर्ज के बोझ से दबे होने के कारण और कुछ शायद जीविका कमाने के लिए हमारे साथ जुड़ गए हैं।

लेकिन महोदय, आप स्वयं किस उद्देश्य से शामिल हुए थे?

'जब मैं एक छोटा लड़का था, तभी मुझे संघ में शामिल कर लिया गया था; तब मुझे अंतिम लक्ष्य का पता नहीं था। लेकिन मैंने सोचा: "ये बौद्ध समन तो ज्ञानी विद्वान हैं, ये मुझे सिखा सकेंगे।" और उन्होंने ही मुझे सिखाया है; और अब मैं त्याग के कारण और लाभ दोनों को जानता और समझता हूँ।'

'बहुत खूब कहा, नागासेना!'

6. राजा ने कहा: 'नागसेन, क्या कोई ऐसा है जो मृत्यु के बाद पुन: व्यक्ति के रूप में प्रकट नहीं होता?'

'कुछ ऐसे हैं, और कुछ नहीं।'

'कौन हैं वे?'

'पापी व्यक्ति का पुनर्जन्म होता है, पापरहित व्यक्ति का नहीं।'

'क्या आपका पुनर्व्यक्तिगतकरण होगा?'

'अगर मेरी मृत्यु के समय मेरे हृदय में अस्तित्व की लालसा बनी रहे, तो हाँ; लेकिन अगर ऐसा न हो, तो नहीं।'

'बहुत बढ़िया, नागसेना!'

7. राजा ने कहा: 'नागसेन, जो व्यक्ति पुन: वैयक्तिकरण से बच जाता है, क्या वह तर्क के द्वारा इससे बच जाता है?'

'महामहिम, तर्कशक्ति, बुद्धिमत्ता और अन्य अच्छे गुणों के द्वारा।'

लेकिन क्या तर्क और बुद्धिमत्ता काफी हद तक एक ही नहीं हैं?

बिलकुल नहीं। तर्क करना एक बात है, बुद्धिमत्ता नहीं।

एक और बात। भेड़ और बकरियां, बैल और भैंस, ऊंट और गधे तर्क कर सकते हैं, लेकिन उनमें बुद्धि नहीं होती।'

'बहुत खूब कहा, नागासेना!'

8. राजा ने कहा: 'तर्कशक्ति की विशेषता क्या है, और बुद्धिमत्ता की विशेषता क्या है?'

'तर्क की पहचान हमेशा समझ से होती है; लेकिन बुद्धिमत्ता में अलगाव होता है।'

लेकिन समझ, तर्कशक्ति की विशेषता कैसे है, और बुद्धिमत्ता का अवरोध कैसे है? मुझे एक उदाहरण दीजिए।

'तुम्हें जौ काटने वाले याद हैं?'

'हां बेशक।'

'वे जौ की कटाई कैसे करते हैं?'

'वे बाएं हाथ से जौ को एक गुच्छे में पकड़ते हैं, और दाएं हाथ में दरांती लेकर उससे जौ को काटते हैं।'

'ठीक इसी प्रकार, हे राजा, संन्यासी अपने चिंतन से अपने मन को वश में कर लेता है और अपनी बुद्धि से अपनी कमियों को दूर कर लेता है। इस प्रकार, बोध तर्क का गुण है, परन्तु बुद्धि का गुण है।'

'बहुत खूब कहा, नागासेना!'

9. राजा ने कहा: 'जब तुमने अभी कहा, "और अन्य अच्छे गुणों से," तो तुम्हारा तात्पर्य किन गुणों से था?'

'अच्छा आचरण, महान राजा, विश्वास, दृढ़ता, सजगता और ध्यान।'

'और अच्छे आचरण की विशेषता क्या है?'

इसकी विशेषता यह है कि यह सभी अच्छे गुणों का आधार है। पाँच नैतिक शक्तियाँ—विश्वास, दृढ़ता, सजगता, ध्यान और ज्ञान—; अरहतत्व की सात अवस्थाएँ—आत्म-संयम, धम्म का अध्ययन, दृढ़ता, आनंद, शांति, ध्यान और समभाव—; मार्ग; स्मृति की तत्परता (अखंड आत्म-संयम); चार प्रकार के उचित प्रयास; असाधारण शक्तियों के चार मूलभूत आधार; परमानंद की चार अवस्थाएँ; आध्यात्मिक मुक्ति के आठ रूप; आत्म-एकाग्रता के चार तरीके; और गहन चिंतन की आठ अवस्थाएँ—इन सभी का आधार अच्छा आचरण (बाह्य नैतिकता का पालन) है। और हे राजा, जो इस आधार पर निर्माण करता है, उसके लिए ये सभी अच्छे गुण कम नहीं होंगे।

मुझे एक उदाहरण दीजिए।

'हे राजा, जिस प्रकार पशु और वनस्पति जीवन के सभी रूप जो बढ़ते, विकसित होते और परिपक्व होते हैं, पृथ्वी को अपना आधार बनाकर ऐसा करते हैं; ठीक उसी प्रकार एक संन्यासी, जो प्रयास में लगा रहता है, सद्गुण के माध्यम से, सद्गुण के आधार पर, अपने भीतर पांच नैतिक शक्तियों आदि का विकास करता है।'

मुझे एक और उदाहरण दीजिए।

'हे राजा, जिस प्रकार शारीरिक परिश्रम से जुड़े सभी कार्य अंततः पृथ्वी पर निर्भर होकर किए जाते हैं, ठीक उसी प्रकार संन्यासी सद्गुण के माध्यम से, सद्गुण के आधार पर, अपने भीतर पाँच नैतिक शक्तियों आदि का विकास करता है।'

'मुझे इससे भी बेहतर उदाहरण दीजिए।'

'हे राजा, जिस प्रकार एक नगर निर्माता नगर निर्माण करते समय पहले भूमि को साफ करता है, फिर सभी ठूंठों और कंटीली झाड़ियों को हटाकर उसे समतल करता है, और उसके बाद ही सड़कों, चौकों, चौराहों और बाजारों का निर्माण करता है; ठीक उसी प्रकार संन्यासी सद्गुणों के माध्यम से, सद्गुणों के आधार पर, अपने भीतर पांच नैतिक शक्तियों आदि का विकास करता है।'

'क्या आप मुझे एक और उपमा दे सकते हैं?'

हे महाराज, जिस प्रकार एक कलाबाज अपनी कुशलता दिखाने से पहले जमीन खोदता है और उसमें से सारे पत्थर और टूटे हुए मिट्टी के बर्तनों के टुकड़े हटाकर उसे चिकना बनाता है, और फिर नरम मिट्टी पर अपने करतब दिखाता है; ठीक इसी प्रकार संन्यासी सद्गुणों के बल पर पाँचों नैतिक शक्तियों का विकास करता है। क्योंकि हे महाराज, ऐसा कहा गया है।

"सद्गुण ही वह आधार है जिस पर बुद्धिमान व्यक्ति अपने हृदय को प्रशिक्षित कर सकता है और अपनी बुद्धि को बढ़ा सकता है। इस प्रकार परिश्रमी भिक्षु, जो छल से मुक्त है, जीवन के सभी उलझे हुए धागों को सुलझा सकता है।"

"यह आधार है—मनुष्यों के लिए विशाल पृथ्वी के समान—और यही अच्छाई में सभी वृद्धि का मूल है, सभी बुद्धों की शिक्षाओं का आरंभिक बिंदु है, सद्गुण, अर्थात्, जिस पर सच्चा आनंद निर्भर करता है।"

'बहुत खूब कहा, नागासेना!'

10. राजा ने कहा, 'आदरणीय नागसेन, आस्था की विशेषता क्या है?'

'हे राजा, शांति और आकांक्षा।'

'और शांति किस प्रकार आस्था का प्रतीक है?'

हे राजा, जब हृदय में आस्था उत्पन्न होती है, तो वह पाँचों बाधाओं—कामवासना, द्वेष, मानसिक आलस्य, आध्यात्मिक अभिमान और संशय—को तोड़ देती है, और इन बाधाओं से मुक्त होकर हृदय निर्मल, शांत और चिंतामुक्त हो जाता है।

मुझे एक उदाहरण दीजिए।

'हे राजा, ठीक उसी प्रकार जैसे कोई अधिपति राजा अपनी चार गुना सेना के साथ यात्रा करते समय किसी छोटी नदी को पार करता है, और हाथियों, घुड़सवारों, रथों और धनुर्धारियों द्वारा अशांत होने से पानी गंदा, मैला और कीचड़युक्त हो जाता है।'

जब राजा दूसरी ओर होता, तो वह अपने सेवकों को आदेश देते हुए कहता: "मेरे सज्जनों, थोड़ा पानी लाओ। मैं पीना चाहता हूँ।" मान लीजिए कि राजा के पास जल को शुद्ध करने वाला एक रत्न है, और वे सेवक आदेश का पालन करते हुए उस रत्न को पानी में फेंक देते हैं; तो तुरंत ही सारी मिट्टी जम जाती है, सीप के रेतीले कण और जलीय पौधों के टुकड़े गायब हो जाते हैं, और पानी साफ, पारदर्शी और शांत हो जाता है, और फिर वे राजा को पीने के लिए थोड़ा पानी लाते हैं। पानी हृदय है; शाही सेवक संन्यासी हैं; मिट्टी, रेतीले कण और जलीय पौधों के टुकड़े बुरी प्रवृत्तियाँ हैं; और जल को शुद्ध करने वाला रत्न विश्वास है।

और आकांक्षा किस प्रकार आस्था की पहचान है?

'चलोभार्थी दूसरों के हृदयों को मुक्त होते देखकर, श्रेष्ठ मार्ग के प्रथम, द्वितीय या तृतीय चरण के फल को प्राप्त करने की आकांक्षा रखता है, या स्वयं अरहतत्व प्राप्त करने की इच्छा रखता है, और इस प्रकार जो उसने अभी तक प्राप्त नहीं किया है, उसे प्राप्त करने, जिसका उसने अभी तक अनुभव नहीं किया है, उसे प्राप्त करने के लिए प्रयासरत रहता है, इसलिए आकांक्षा ही आस्था का चिह्न है।'

मुझे एक उदाहरण दीजिए।

'हे राजा, ठीक वैसे ही जैसे किसी पर्वत की चोटी पर भयंकर तूफान आ जाए और मूसलाधार बारिश होने लगे, तो पानी ढलान के अनुसार नीचे बहता हुआ दरारों, खाइयों और नालों को भरता हुआ आगे बढ़ता है।'

पहाड़ी से उठने वाला पानी नीचे बहने वाली छोटी नदी में मिल जाता है, जिससे नदी दोनों किनारों को उफान पर लाते हुए तेजी से बहने लगती है। अब मान लीजिए कि लोगों का एक समूह एक के बाद एक ऊपर आता है, और पानी की वास्तविक चौड़ाई या गहराई से अनजान होने के कारण, किनारे पर भयभीत और संकोची होकर खड़ा हो जाता है। और मान लीजिए कि एक व्यक्ति आता है, जो अपनी शक्ति और सामर्थ्य को भलीभांति जानते हुए, दृढ़ता से कमर कस लेता है और एक छलांग लगाकर दूसरी ओर पहुँच जाता है। तब बाकी लोग उसे दूसरी ओर सुरक्षित देखकर, उसी प्रकार पार कर जाते हैं। यही वह तरीका है जिससे संन्यासी, आस्था के बल पर, एक छलांग में ही उच्चतर चीजों की ओर बढ़ने का प्रयास करता है। क्योंकि हे राजा, भगवान बुद्ध ने संयुत्त निकाय में यही कहा है।

"विश्वास से वह नदी पार करता है, लगन से जीवन के सागर को पार करता है; दृढ़ता से वह सभी दुःखों को शांत करता है, और ज्ञान से वह शुद्ध होता है।"

'बहुत खूब कहा, नागासेना!'

11. राजा ने कहा: 'हे नागसेन, दृढ़ता की विशेषता क्या है?'

'हे राजा, समर्थन प्रदान करना दृढ़ता की निशानी है। इससे समर्थित सभी अच्छे गुण कभी नष्ट नहीं होते।'

मुझे एक उदाहरण दीजिए।

'जैसे कोई व्यक्ति, यदि उसका घर गिरने लगे, तो उसे सहारा देने के लिए एक और खंभा लगा देता है, और इस प्रकार सहारा दिया गया घर नहीं गिरता; ठीक उसी प्रकार, हे राजा, सहारा देना दृढ़ता का प्रतीक है, और वे सभी अच्छे गुण जिन्हें यह सहारा देता है, कभी नष्ट नहीं होते।'

मुझे एक और उदाहरण दीजिए।

जैसे जब एक बड़ी सेना एक छोटी सेना को हरा देती है, तो छोटी सेना का राजा अपने सभी संभावित सहयोगियों को याद करके अपनी छोटी सेना को सुदृढ़ करता है, और इस प्रकार छोटी सेना भी बड़ी सेना को हरा देती है; ठीक उसी प्रकार, हे राजा, सहायता प्रदान करना दृढ़ता का चिह्न है, और इससे पोषित सभी अच्छे गुण नष्ट नहीं होते। क्योंकि भगवान बुद्ध ने कहा है: "हे भिक्षुओं, जो दृढ़ता से सत्य का श्रवण करता है, वह बुराई को त्यागकर अच्छाई का पालन करता है, कुकर्म को त्यागकर अपने भीतर अच्छाई का विकास करता है, और इस प्रकार वह स्वयं को शुद्ध रखता है।"

'बहुत खूब कहा, नागासेना!'

12. राजा ने कहा: 'हे नागसेन, ध्यान का विशिष्ट लक्षण क्या है?'

'हे राजा, बार-बार दोहराते रहो और निरंतर प्रयास करते रहो।'

'और पुनरावृत्ति किस प्रकार सचेतनता की निशानी है?'

'हे राजा, जब उनके हृदय में जागरूकता उत्पन्न होती है, तो वे अच्छे और बुरे, सही और गलत, छोटे और बड़े, अंधकारमय और उजाले गुणों और उनसे मिलते-जुलते गुणों का पुनर्मूल्यांकन करते हुए मन ही मन कहते हैं: "ये स्वयं को तैयार और जागरूक रखने के चार तरीके हैं, ये आध्यात्मिक प्रयास के चार तरीके हैं, ये असाधारण शक्तियों के चार आधार हैं, ये नैतिक इंद्रियों के पाँच अंग हैं, ये पाँच मानसिक शक्तियाँ हैं, ये अरहतत्व के सात आधार हैं, ये उत्तम मार्ग के आठ विभाजन हैं, यही शांति है और यही अंतर्दृष्टि है, यही ज्ञान है और यही मुक्ति है।" इस प्रकार संन्यासी अनुसरण करता है।

वह वांछनीय गुणों का ही अभ्यास करता है, अवांछनीय गुणों का नहीं; इस प्रकार वह उन गुणों को विकसित करता है जिनका अभ्यास किया जाना चाहिए, न कि जिनका नहीं किया जाना चाहिए। यही सचेतनता की पहचान है।

मुझे एक उदाहरण दीजिए।

'यह शाही सम्राट के कोषाध्यक्ष के समान है, जो अपने राजा को समय-समय पर उनकी महिमा याद दिलाते हुए कहता है: "हे राजा, तेरे युद्ध हाथी इतने हैं, तेरे घुड़सवार, रथ और धनुर्धर इतने हैं, तेरे धन, सोने और संपत्ति की मात्रा इतनी अधिक है, महाराज, कृपया इसे याद रखें।"'

'और महोदय, सचेतनता का स्तर बनाए रखना कैसा है?'

'हे राजा, जब उनके हृदय में जागरूकता उत्पन्न होती है, तो वे अच्छे गुणों और उनके विपरीत गुणों की श्रेणियों की खोज करते हुए अपने मन में कहते हैं: "अमुक गुण अच्छे हैं, और अमुक बुरे; अमुक गुण सहायक हैं, और अमुक प्रतिकूल।" इस प्रकार संन्यासी अपने भीतर की बुराई को दूर कर देता है और अच्छाई को बनाए रखता है। यही जागरूकता का प्रतीक है।'

मुझे एक उदाहरण दीजिए।

'यह उस शाही परिवार के गोपनीय सलाहकार की तरह है।'

प्रभु उसे भले और बुरे का ज्ञान देते हुए कहते हैं: "ये बातें राजा के लिए बुरी हैं और ये अच्छी, ये सहायक हैं और ये इसके विपरीत।" और इस प्रकार राजा अपने भीतर की बुराई को दूर कर अच्छाई को बनाए रखता है।

'बहुत खूब कहा, नागासेना!'

13. राजा ने कहा: 'हे नागसेन, ध्यान का विशिष्ट लक्षण क्या है?'

'हे राजा, नेता होने के नाते, सभी अच्छे गुणों का मूल तत्व ध्यान है; वे ध्यान की ओर प्रवृत्त होते हैं, ध्यान की ओर अग्रसर होते हैं; वे ध्यान के पर्वत की ओर जाने वाली अनेक ढलानों के समान हैं।'

मुझे एक उदाहरण दीजिए।

'हे राजा, जिस प्रकार किसी घर की छत के सभी शहतीर शिखर तक जाते हैं, उसकी ओर ढलान बनाते हैं, और अंत में आपस में जुड़ जाते हैं, और शिखर को ही सर्वोच्च माना जाता है; ठीक उसी प्रकार ध्यान की आदत का संबंध अन्य अच्छे गुणों से है।'

मुझे एक और उदाहरण दीजिए।

महाराज, यह एक राजा के समान है, जब वह अपनी सेना के साथ चार रूपों में युद्ध में उतरता है। पूरी सेना—हाथी, घुड़सवार, युद्ध रथ और धनुर्धारी—उसे अपना सरदार और अपना स्वामी मानती है।

रेखाएँ उनकी ओर झुकती हुई, उनकी ओर जाती हुई प्रतीत होतीं, वे अनेक पर्वतीय ढलानें होतीं, एक के ऊपर एक, उनका शिखर वे ही होते, वे सब उनके चारों ओर व्यवस्थित होतीं। और हे राजा, भगवान बुद्ध ने कहा है: "हे भिक्षुओं, अपने भीतर ध्यान का अभ्यास करो। जो इसमें स्थिर हो जाता है, वह चीजों को उनके वास्तविक स्वरूप में जान लेता है।"

'बहुत खूब कहा, नागासेना!'

14. राजा ने कहा: 'हे नागसेन, बुद्धिमत्ता की विशेषता क्या है?'

'मैंने आपको पहले ही बता दिया है, हे राजा, कि इसका चिन्ह है काटना, विच्छेद करना, लेकिन ज्ञानोदय भी इसका चिन्ह है।'

और ज्ञानोदय इसकी पहचान कैसे है?

'हे राजा, जब हृदय में ज्ञान का संचार होता है, तो वह अज्ञान के अंधकार को दूर करता है, ज्ञान की चमक को बढ़ाता है, बुद्धि के प्रकाश को प्रज्वलित करता है और आर्य सत्यों को स्पष्ट करता है। इस प्रकार, परिश्रम में लीन संन्यासी सर्वथा स्पष्ट ज्ञान से सभी प्राणियों और वस्तुओं की अनित्यता, व्यक्तिवाद में निहित पीड़ा और आत्मा के अभाव को भलीभांति समझ लेता है।'

मुझे एक उदाहरण दीजिए।

'हे राजा, यह एक दीपक के समान है, जिसे कोई व्यक्ति अंधेरे में डूबे घर में जलाता है। दीपक जलाने से अंधेरा दूर हो जाता है।'

प्रकाश उत्पन्न करना, रोशनी फैलाना और वहां की वस्तुओं को स्पष्ट रूप से दृश्यमान बनाना। ठीक इसी प्रकार, मनुष्य में ज्ञान का भी वही प्रभाव होता है जो अभी बताया गया है।

'बहुत खूब कहा, नागासेना!'

15. राजा ने कहा: 'हे नागसेन, क्या ये इतने भिन्न गुण एक ही परिणाम देते हैं?'

'वे ऐसा करते हैं। बुरी प्रवृत्तियों का अंत करते हैं।'

'यह कैसे संभव है? मुझे एक उदाहरण दीजिए।'

'वे सेना के विभिन्न भागों की तरह हैं - हाथी, घुड़सवार सेना, युद्ध रथ और तीरंदाज - जो सभी एक ही उद्देश्य के लिए काम करते हैं, अर्थात्: युद्ध में विरोधी सेना पर विजय प्राप्त करना।'

'बहुत खूब कहा, नागासेना!'

पहला अध्याय यहीं समाप्त होता है।

टिपिटक >> सुत्त पिटक >> खुद्दाक निकाय >> मिलिंदपन्हा >> पुस्तक II: नैतिक गुणों की विशिष्ट विशेषताएं - लक्खाना पन्हा अध्याय 2

अनुवादक: टी.डब्ल्यू. राइस डेविड्स

पिछला <<<<-----||-3-||----->>>> अगला

1. राजा ने कहा: 'हे नागसेन, जो जन्म लेता है, क्या वह वही रहता है या बदल जाता है?'

'न तो वही, न ही कोई दूसरा।'

मुझे एक उदाहरण दीजिए।

'अब आप क्या सोचते हैं, हे राजा? आप भी कभी शिशु थे, कोमल और छोटे कद के, पीठ के बल लेटे हुए। क्या आप वही थे जो अब बड़े हो गए हैं?'

'नहीं। वह बच्चा एक था, मैं दूसरा हूं।'

'यदि तुम वह बच्चा नहीं हो, तो इसका अर्थ है कि न तो तुम्हारी माँ थी, न पिता, नहीं! न ही शिक्षक। तुम्हें न तो विद्या सिखाई गई, न ही व्यवहार, न ही बुद्धि। हे महाराज! क्या प्रथम अवस्था में भ्रूण की माँ द्वितीय, तृतीय या चतुर्थ अवस्था में भ्रूण की माँ से भिन्न है? क्या शिशु की माँ वयस्क पुरुष की माँ से भिन्न है? क्या विद्यालय जाने वाला व्यक्ति एक है और विद्यालय की शिक्षा पूरी करने के बाद वही व्यक्ति दूसरा है? क्या अपराध करने वाला एक है और हाथ-पैर काटकर दंडित किया जाने वाला दूसरा?'

'बिल्कुल नहीं। लेकिन आप इस बारे में क्या कहेंगे, महोदय?'

बुजुर्ग ने उत्तर दिया: 'मुझे कहना चाहिए कि मैं वही व्यक्ति हूँ, अब जब मैं बड़ा हो गया हूँ, जैसा कि मैं तब था जब मैं एक नन्हा सा शिशु था, पीठ के बल लेटा हुआ। क्योंकि ये सभी अवस्थाएँ इस शरीर के माध्यम से एक में समाहित हैं।'

मुझे एक उदाहरण दीजिए।

'हे राजा, यदि कोई व्यक्ति दीपक जलाए, तो क्या वह पूरी रात को रोशन कर पाएगा?'

'हां, ऐसा हो सकता है।'

'क्या यह वही लौ है जो रात के पहले पहर और दूसरे पहर में जलती है, महोदय?'

'नहीं।'

'या वही जो दूसरे और तीसरे पहर में जलता है?'

'नहीं।'

तो क्या पहले पहर में एक दीपक है, दूसरे में दूसरा और तीसरे में तीसरा?

'नहीं। रात भर रोशनी एक ही दीपक से आती है।'

'हे राजा, ठीक इसी प्रकार किसी व्यक्ति या वस्तु की निरंतरता बनी रहती है। एक का जन्म होता है, दूसरे का अंत होता है; और पुनर्जन्म मानो एक साथ ही होता है। इस प्रकार मनुष्य न तो समान रूप में और न ही किसी भिन्न रूप में अपनी आत्मचेतना के अंतिम चरण तक पहुँचता है।'

मुझे एक और उदाहरण दीजिए।

'यह दूध की तरह है, जो गाय से निकालने के बाद कुछ समय बाद पहले दही में बदल जाता है, फिर दही से मक्खन में और फिर मक्खन से घी में। अब क्या यह कहना सही होगा कि दूध, दही, मक्खन या घी एक ही चीज हैं?'

'बिल्कुल नहीं; लेकिन वे उसी से उत्पन्न होते हैं।'

'हे राजा, ठीक इसी प्रकार किसी व्यक्ति या वस्तु की निरंतरता बनी रहती है। एक का जन्म होता है, दूसरे का अंत होता है; और पुनर्जन्म मानो एक साथ ही होता है। इस प्रकार मनुष्य न तो समान रूप में और न ही किसी भिन्न रूप में अपनी आत्मचेतना के अंतिम चरण तक पहुँचता है।'

'बहुत खूब कहा, नागासेना!'

2. राजा ने कहा: 'क्या नागसेन जैसा व्यक्ति, जिसका पुनर्जन्म नहीं होगा, इस तथ्य से अवगत है?'

'जी हां, हे राजा।'

और उसे यह कैसे पता चला?

'पुनर्जन्म के निकटवर्ती या दूरस्थ सभी कारणों के समाप्त होने से।'

मुझे एक उदाहरण दीजिए।

'मान लीजिए, महाराज, एक किसान ने खेत जोता और बोया और अपना भंडार भर लिया; और फिर कुछ समय के लिए न तो खेत जोते और न ही बोए, बल्कि भंडारित अनाज से अपना जीवन यापन करे, या उसका लेन-देन करे, या आवश्यकतानुसार उसका उपयोग करे। क्या किसान को इस बात का एहसास होगा, महाराज, कि उसका भंडार भर नहीं रहा है?'

'हां, उसे यह पता होना चाहिए।'

'आख़िर कैसे?'

'उसे पता चल गया होगा कि अन्न भंडार के भरने का प्रत्यक्ष और अप्रत्यक्ष दोनों कारण समाप्त हो गया था।'

'ठीक वैसे ही जैसे आपने जिस व्यक्ति की बात की, उसके साथ हुआ। पुनर्जन्म की ओर ले जाने वाली हर चीज के समाप्त होने से, वह इस बात से अवगत हो जाएगा कि वह पुनर्जन्म के प्रति अपनी जिम्मेदारी से बच गया है।'

'बहुत बढ़िया समझाया, नागासेना!'

3. राजा ने कहा: 'हे नागसेन, जिसके पास बुद्धि है, क्या उसके पास ज्ञान भी है?'

'जी हां, महान राजा।'

'क्या; क्या ये दोनों एक ही हैं?'

'हाँ।'

'तो क्या वह अपनी बुद्धि के साथ—जिसे आप ज्ञान के समान मानते हैं—अभी भी असमंजस में रहेगा या नहीं?'

'कुछ मामलों में हां; अन्य मामलों में नहीं।'

'वह किस बात को लेकर असमंजस में होगा?'

'ज्ञान के उन हिस्सों के बारे में जो उसने नहीं सीखे थे, उन देशों के बारे में जो उसने नहीं देखे थे, और उन नामों या शब्दों के बारे में जो उसने नहीं सुने थे, वह अब भी असमंजस में रहेगा।'

और किस बात में वह असमंजस में नहीं होगा?

'अंतर्दृष्टि द्वारा प्राप्त ज्ञान के संबंध में—अर्थात्, सभी प्राणियों की अनित्यता, व्यक्तिवाद में निहित पीड़ा और किसी भी आत्मा के अस्तित्वहीन होने की अनुभूति।'

'तो फिर उन मुद्दों पर उनके भ्रमों का क्या होता?'

'एक बार बुद्धि जागृत हो जाने पर, उसी क्षण भ्रम दूर हो जाता है।'

मुझे एक उदाहरण दीजिए।

'यह उस दीपक के समान है, जिसे जब कोई व्यक्ति अंधेरे कमरे में लाता है, तो अंधेरा दूर हो जाता है और प्रकाश प्रकट हो जाता है।'

'और दूसरी ओर, नागसेना की बुद्धिमत्ता का क्या हुआ?'

जब तर्कशील बुद्धि अपना कार्य पूरा कर लेती है, तब तर्क प्रक्रिया रुक जाती है। लेकिन इसके द्वारा अर्जित ज्ञान शेष रहता है—अर्थात् प्रत्येक प्राणी की अनित्यता का ज्ञान, व्यक्तित्व में निहित पीड़ा का ज्ञान और आत्मा के अभाव का ज्ञान।

'हे आदरणीय महोदय, आपने जो अंतिम बात कही है, उसका एक उदाहरण दीजिए।'

'यह वैसा ही है जैसे कोई व्यक्ति रात में पत्र भेजना चाहता है, अपने क्लर्क को बुलाता है, दीपक जलाता है और पत्र लिखवाता है। फिर, जब यह हो जाता है, तो वह दीपक बुझा देता है। लेकिन दीपक बुझ जाने के बावजूद लिखावट वहीं रहती है। इस प्रकार तर्क समाप्त हो जाता है, और ज्ञान शेष रहता है।'

मुझे एक और उदाहरण दीजिए।

पूर्वी जिलों में किसानों की यह प्रथा है कि वे प्रत्येक झोपड़ी के पीछे पानी से भरे पांच घड़े रखते हैं ताकि आग की किसी भी चिंगारी को तुरंत बुझाया जा सके। मान लीजिए कि घर में आग लग गई, और उन्होंने झोपड़ी पर पानी से भरे पांच घड़े डाल दिए, और आग बुझ गई, तो क्या वे किसान तब भी पानी के घड़ों का उपयोग जारी रखने के बारे में सोचेंगे?

'नहीं, महोदय, पानी के बर्तनों का काम तो खत्म हो चुका होगा। उस समय उनकी क्या आवश्यकता होगी?'

'पांच जल पात्र नैतिक इंद्रियों के पांच अंग हैं - विश्वास, बुद्धि, परिश्रम में दृढ़ता, सजगता, ध्यान और तर्कशक्ति। किसान संन्यासी हैं, जो परिश्रम में लीन रहते हैं; अग्नि पाप है। जैसे पांच पात्रों में रखे जल से अग्नि बुझ जाती है, वैसे ही नैतिक इंद्रियों के पांच अंगों से पाप बुझ जाता है, और एक बार बुझ जाने पर वह फिर कभी उत्पन्न नहीं होता।'

मुझे एक और उदाहरण दीजिए।

'यह उस चिकित्सक की तरह है जो औषधीय जड़ों से बनी पांच प्रकार की औषधियाँ लेकर बीमार व्यक्ति के पास जाता है, उन्हें पीसकर उसे पिलाता है, और इस प्रकार उसकी बीमारी दूर हो जाती है। क्या उस स्थिति में चिकित्सक उस औषधि का आगे कोई उपयोग करने के बारे में सोचेगा?'

'बिल्कुल नहीं, दवा ने अपना काम कर दिया है। और दवा लेने का क्या फायदा?'

'ठीक उसी प्रकार, हे राजा, जब पांच नैतिक शक्तियों द्वारा पाप का नाश हो जाता है, तब तर्कशक्ति समाप्त हो जाती है, परन्तु ज्ञान शेष रहता है।'

मुझे एक और उदाहरण दीजिए।

'यह एक ऐसे योद्धा की तरह है, जो युद्ध में माहिर है, पाँच भाले लेकर शत्रु को जीतने के लिए युद्ध में जाता है। और जब वह उन्हें चला देता है, तो शत्रु पराजित हो जाता है। उसे अब और भाले चलाने की आवश्यकता नहीं रहती।'

'बहुत खूब कहा, नागासेना!'

4. राजा ने कहा: 'हे नागसेन, जो पुनर्जन्म नहीं लेगा, क्या उसे अब भी कोई पीड़ा महसूस होती है?'

बुजुर्ग ने उत्तर दिया: 'कुछ बातें उसे महसूस होती हैं और कुछ नहीं।'

'वह कौन से है?'

'हे राजा, उसे शारीरिक पीड़ा तो हो सकती है; लेकिन मानसिक पीड़ा वह नहीं सहेगा।'

'ऐसा कैसे हो सकता है?'

'क्योंकि शारीरिक पीड़ा के निकटवर्ती या दूरस्थ कारण अभी भी मौजूद हैं, इसलिए वह इसके प्रति उत्तरदायी होगा। परन्तु मानसिक पीड़ा के निकटवर्ती या दूरस्थ कारण समाप्त हो जाने के कारण वह इसे अनुभव नहीं कर सकता। क्योंकि भगवान बुद्ध ने कहा है: "वह एक ही प्रकार की पीड़ा सहता है, शारीरिक पीड़ा, परन्तु मानसिक पीड़ा नहीं।"'

'तो फिर, महोदय, वह मर क्यों नहीं जाता?'

हे राजा, अरहत को न तो चापलूसी करने की आवश्यकता है और न ही द्वेष रखने की। वह कच्चे फल को नहीं गिराता, बल्कि उसके पूर्ण परिपक्व होने की प्रतीक्षा करता है। क्योंकि हे राजा, धर्म के सेनापति, वरिष्ठ सारिपुत्त ने कहा है:

"न तो मुझे मृत्यु का स्वागत है, न ही जीवन का; जैसे एक मजदूर अपनी मजदूरी का इंतजार करता है, वैसे ही मैं अपने समय की प्रतीक्षा करता हूँ। न तो मुझे मृत्यु चाहिए, न ही जीवन; मैं सचेत और विचारशील होकर अपने समय की प्रतीक्षा करता हूँ।"

'बहुत खूब कहा, नागासेना!'

5. राजा ने कहा: 'हे नागसेन, क्या सुखद अनुभूति अच्छी है, बुरी है या उदासीन है?'

'यह तीनों में से कोई भी हो सकता है।'

लेकिन निश्चित रूप से, महोदय, यदि अच्छी परिस्थितियाँ कष्टदायी नहीं होतीं और कष्टदायी परिस्थितियाँ अच्छी नहीं होतीं, तो ऐसी कोई अच्छी परिस्थिति उत्पन्न नहीं हो सकती जो एक ही समय में कष्टदायी भी हो।

'अब, हे महाराज, आपका क्या विचार है? मान लीजिए कि कोई व्यक्ति एक हाथ में लोहे का लाल-गरम गोला और दूसरे हाथ में बर्फ का एक टुकड़ा पकड़े हुए हो, तो क्या दोनों उसे चोट पहुँचाएँगे?'

'हां; वे दोनों ऐसा करेंगे।'

'लेकिन क्या वे दोनों आकर्षक हैं?'

'हरगिज नहीं।'

'लेकिन क्या दोनों को ठंड लग रही है?'

'नहीं।'

तो फिर अपनी गलती मानो! अगर गर्मी से दर्द होता है, और दोनों गर्म नहीं हैं, तो दर्द गर्मी से नहीं हो सकता। अगर ठंड से दर्द होता है, और दोनों ठंडी नहीं हैं, तो दर्द ठंड से नहीं हो सकता। तो फिर, हे राजा, ये दोनों तुम्हें कैसे नुकसान पहुंचा सकते हैं, क्योंकि न तो दोनों गर्म हैं और न ही दोनों ठंडी, और (क्योंकि एक गर्म है और दूसरी ठंडी) दर्द न तो गर्म से आता है और न ही ठंडी से?

'मैं आपसे बहस करने की स्थिति में नहीं हूँ। महोदय, कृपया मामले की वर्तमान स्थिति स्पष्ट करें।'

तब वृषभ ने राजा मिलिंदा से अभिधम्म से लिए गए विषय पर चर्चा करके उन्हें समझाया, जैसे: 'हे राजा, संसार में जीवन से जुड़े ये छह सुख हैं, और ये छह वैराग्य से जुड़े हैं। संसार में जीवन से जुड़े छह दुःख हैं, और छह वैराग्य से जुड़े हैं। संसार में जीवन से जुड़े सुख और दुःख के प्रति छह प्रकार की उदासीनता है, और छह वैराग्य से जुड़ी हैं। कुल मिलाकर छह-छह के छह समूह हैं, अर्थात् वर्तमान में छत्तीस प्रकार की संवेदनाएँ हैं, भूतकाल में भी इतनी ही संख्या में हैं, और भविष्यकाल में भी इतनी ही संख्या में हैं। इन सभी को जोड़कर हमें एक सौ आठ प्रकार की संवेदनाएँ प्राप्त होती हैं।'

'बहुत खूब कहा, नागासेना!'

6. राजा ने कहा: 'हे नागसेन, पुनर्जन्म लेने वाली कौन सी चीज है?'

'नाम और स्वरूप का पुनर्जन्म हुआ है।'

'क्या, यही नाम और रूप पुनर्जन्म लेता है?'

नहीं: बल्कि इसी नाम और रूप से कर्म किए जाते हैं, अच्छे या बुरे, और इन कर्मों (इस कर्म) से एक नया नाम और रूप पुनर्जन्म लेता है।

'यदि ऐसा है, महोदय, तो क्या नया प्राणी अपने बुरे कर्मों से मुक्त नहीं हो जाएगा?'

बुजुर्ग ने उत्तर दिया: 'हां, यदि इसका पुनर्जन्म न हुआ होता। लेकिन हे राजा, केवल पुनर्जन्म होने मात्र से ही यह अपने बुरे कर्मों से मुक्त नहीं हो जाता।'

मुझे एक उदाहरण दीजिए।

'मान लीजिए, हे राजा, कोई व्यक्ति किसी दूसरे व्यक्ति से आम चुरा ले, और आम का मालिक उसे पकड़कर राजा के सामने लाए और उस पर अपराध का आरोप लगाए। और चोर कहे: "महाराज! मैंने इस आदमी के आम नहीं चुराए हैं। जो आम उसने ज़मीन में गाड़ दिए थे, वे उन आमों से अलग हैं जो मैंने चुराए हैं। मैं दंड का पात्र नहीं हूँ।" तो फिर वह दोषी कैसे होगा?'

'बिल्कुल, महोदय। वह सजा का पात्र होगा।'

लेकिन किस आधार पर?

क्योंकि, चाहे वह कुछ भी कहे, पहले आम (जिसे मालिक ने जमीन में लगाया था) से उत्पन्न अंतिम आम के संबंध में वह दोषी होगा।

'हे महाराज, इसी प्रकार, इस नाम और रूप से अच्छे या बुरे कर्म किए जाते हैं और एक और जन्म लेता है। लेकिन इससे वह दूसरा अपने कर्मों से मुक्त नहीं हो जाता।'

मुझे एक और उदाहरण दीजिए।

'यह चोरी हुए चावल या चीनी की तरह है, जिसके बारे में आम के समान ही कहा जा सकता है। या यह उस आग की तरह है जिसे कोई व्यक्ति सर्दी के मौसम में जलाता है, और जब वह खुद को गर्म कर लेता है, तो उसे जलता हुआ छोड़कर चला जाता है। फिर यदि वह आग किसी दूसरे व्यक्ति के खेत में आग लगा दे, और खेत का मालिक उसे पकड़कर राजा के सामने लाए, और उस पर नुकसान का आरोप लगाए, और वह कहे: "महाराज! मैंने इस आदमी के खेत में आग नहीं लगाई। जो आग मैंने जलती हुई छोड़ी थी, वह उस आग से अलग थी जिसने उसके खेत को जलाया। मैं दोषी नहीं हूँ।" तो क्या अब, हे राजा, वह आदमी दोषी होगा?'

'जी हां, महोदय।'

'लेकिन क्यों?'

क्योंकि, चाहे वह कुछ भी कहे, पिछली आग के परिणामस्वरूप लगी अगली आग के लिए वह दोषी होगा।

'हे महाराज, इसी प्रकार, इस नाम और रूप से अच्छे या बुरे कर्म किए जाते हैं और एक और जन्म लेता है। लेकिन इससे वह दूसरा अपने कर्मों से मुक्त नहीं हो जाता।'

मुझे एक और उदाहरण दीजिए।

'मान लीजिए, हे राजा, एक आदमी दीपक लेकर अपने घर की ऊपरी मंजिल पर जाता है और वहाँ भोजन करता है। दीपक की लौ से छप्पर में आग लग जाती है, जिससे घर में आग लग जाती है और उस घर में आग लगने से पूरा गाँव जल जाता है। लोग उसे पकड़कर पूछते हैं, "अरे, तुमने हमारे गाँव में आग क्यों लगाई?" वह कहता है, "मैंने तुम्हारे गाँव में आग नहीं लगाई! जिस दीपक की रोशनी में मैं भोजन कर रहा था, उसकी लौ एक बात थी; और जिस आग ने तुम्हारे गाँव को जलाया, वह दूसरी बात थी।" अब यदि वे इस प्रकार विवाद करते हुए आपके समक्ष न्यायालय में जाएँ, हे राजा, तो आप किसके पक्ष में निर्णय देंगे?'

'ग्रामीणों के पक्ष में।'

'लेकिन क्यों?'

'क्योंकि, महोदय, चाहे वह व्यक्ति कुछ भी कहे, एक आग दूसरी से ही उत्पन्न हुई थी।'

'हे महाराज, ठीक इसी प्रकार एक नाम-रूप मृत्यु में समाप्त हो जाता है, और दूसरा नाम-रूप पुनर्जन्म लेता है। परन्तु दूसरा पहले का परिणाम है, और इसलिए वह अपने बुरे कर्मों से मुक्त नहीं हो पाता।'

मुझे एक और उदाहरण दीजिए।

'मान लीजिए, हे राजा, एक पुरुष किसी युवती को विवाह के लिए चुनता है, उसकी कीमत चुकाता है और चला जाता है। समय आने पर वह युवती बालिग हो जाती है, और फिर दूसरा पुरुष उसकी कीमत चुकाकर उससे विवाह कर लेता है। जब पहला पुरुष लौटकर आता है, तो वह कहता है, "अरे, तुमने मेरी पत्नी को क्यों अगवा कर लिया?" और दूसरा कहता है, "मैंने तुम्हारी पत्नी को नहीं अगवा किया

है! वह नन्ही बच्ची, जिसे तुमने विवाह के लिए चुना और जिसकी कीमत चुकाई, वह एक है; और वह लड़की जो बालिग हो गई है और जिसकी मैंने विवाह के लिए चुना और कीमत चुकाई, वह दूसरी है।" अब यदि वे इस प्रकार विवाद करते हुए आपके समक्ष कानूनी कार्यवाही के लिए आते हैं, हे राजा, तो आप किसके पक्ष में निर्णय देंगे?'

'पहले विकल्प के पक्ष में।'

'लेकिन क्यों?'

'क्योंकि, दूसरी लड़की चाहे जो भी कहे, वयस्क लड़की की उत्पत्ति दूसरी लड़की से ही हुई होगी।'

'हे महाराज, ठीक इसी प्रकार एक नाम-रूप मृत्यु में समाप्त हो जाता है, और दूसरा नाम-रूप पुनर्जन्म लेता है। परन्तु दूसरा पहले का परिणाम है, और इसलिए वह अपने बुरे कर्मों से मुक्त नहीं हो पाता।'

मुझे एक और उदाहरण दीजिए।

'मान लीजिए, हे राजा, एक आदमी एक चरवाहे से दूध का एक बर्तन खरीदता है और उसे उसके भरोसे छोड़कर यह कहता है: "मैं कल इसे लेने आऊंगा;" और अगले दिन वह बर्तन दही बन जाता है। और जब वह आदमी आकर उसे मांगता है, तो मान लीजिए कि दूसरा उसे दही देता है, और वह कहता है: "मैंने आपसे दही नहीं खरीदा था; मुझे मेरा दूध का बर्तन वापस दीजिए।" और दूसरा जवाब देता है: "मेरी कोई गलती नहीं है, आपका दूध दही बन गया है।" अब यदि वे इस प्रकार विवाद करते हुए आपके समक्ष मुकदमा दायर करते हैं, हे राजा, तो आप किसके पक्ष में फैसला करेंगे?'

'चरवाहे के पक्ष में।'

'लेकिन क्यों?'

'क्योंकि, दूसरे चाहे कुछ भी कहें, दही तो दूध से ही बनता है।'

'हे महाराज, ठीक इसी प्रकार, एक नाम और रूप मृत्यु में समाप्त हो जाता है, और दूसरा पुनर्जन्म लेता है। परन्तु वह दूसरा पहले का परिणाम है, और अतः वह अपने बुरे कर्मों से मुक्त नहीं हो जाता।'

'बहुत बढ़िया, नागसेना!'

7. राजा ने कहा: 'क्या तुम, नागसेन, पुनर्जन्म लेना चाहोगे?'

नहीं, हे महाराज, यह प्रश्न दोबारा पूछने का क्या लाभ? क्या मैंने आपको पहले ही नहीं बताया है कि यदि मेरी मृत्यु के समय मेरे हृदय में लालसा बनी रहे, तो मैं मर जाऊँगा; लेकिन यदि नहीं, तो नहीं?

मुझे एक उदाहरण दीजिए।

'मान लीजिए, हे राजा, कोई व्यक्ति राजा की सेवा करे और राजा उससे प्रसन्न होकर उसे कोई पद प्रदान करे। फिर वह व्यक्ति उस पद पर रहते हुए, सभी इंद्रिय सुखों का पूर्ण आनंद लेते हुए, सार्वजनिक रूप से यह घोषणा करे कि राजा ने उसे कुछ भी प्रतिफल नहीं दिया है। तो क्या, हे राजा, वह व्यक्ति न्यायसंगत कार्य कर रहा होगा?'

'बिल्कुल नहीं।'

'तो फिर, हे महाराज, उस प्रश्न को दोबारा पूछने का क्या लाभ? क्या मैंने आपको पहले ही नहीं बताया है कि यदि मेरी मृत्यु के समय मेरे हृदय में लालसा बनी रहे, तो ऐसा ही होगा; और यदि नहीं, तो नहीं?'

'तुम जवाब देने के लिए तैयार हो, नागसेना।'

8. राजा ने कहा: 'तुम अभी नाम और रूप की बात कर रहे थे। उस अभिव्यक्ति में "नाम" का क्या अर्थ है, और "रूप" का क्या?'

'उसमें जो कुछ भी स्थूल है, वही "रूप" है; जो कुछ भी सूक्ष्म, मानसिक है, वही "नाम" है।'

'हे नागसेना, ऐसा क्यों है कि नाम का पुनर्जन्म अलग से नहीं होता, न ही रूप का पुनर्जन्म अलग से होता है?'

'हे महाराज, ये परिस्थितियाँ एक दूसरे से जुड़ी हुई हैं; और एक साथ ही उत्पन्न होती हैं।'
मुझे एक उदाहरण दीजिए।
'हे महान राजा, जिस प्रकार मुर्गी को जुआ या अंडे का छिलका अलग-अलग नहीं मिलता, बल्कि दोनों एक साथ उत्पन्न होते हैं, क्योंकि वे दोनों एक दूसरे पर घनिष्ठ रूप से निर्भर होते हैं; ठीक उसी प्रकार, यदि नाम न हो तो रूप भी न हो। उस अभिव्यक्ति में नाम का अर्थ रूप पर घनिष्ठ रूप से निर्भर है, इसलिए वे एक साथ उत्पन्न होते हैं। और अनादिकाल से यही उनका स्वभाव रहा है।'
'तुम जवाब देने के लिए तैयार हो, नागसेना।'

9. राजा ने कहा: 'हे नागसेन, तुम अनादि काल की बात कर रहे हो। इस शब्द "काल" का क्या अर्थ है?'
'हे राजा, अतीत, वर्तमान और भविष्य।'
'लेकिन क्या? क्या समय जैसी कोई चीज होती है?'
'समय का अस्तित्व भी है और अस्तित्वहीनता भी।'
'तो फिर कौन सा अस्तित्व में है और कौन सा नहीं?'
'हे राजा, कुछ ऐसी रचनाएँ (अस्तित्व की अंतर्निहित क्षमताएँ) हैं जो बीत चुकी हैं, जिनका अर्थ है कि वे समाप्त हो चुकी हैं, उनका अस्तित्व समाप्त हो गया है, या वे विलीन हो गई हैं, या पूरी तरह से बदल गई हैं। उनके लिए समय का कोई महत्व नहीं है। परन्तु हृदय की कुछ ऐसी अवस्थाएँ हैं जो अब अपना प्रभाव उत्पन्न कर रही हैं, या उनमें अभी भी प्रभाव उत्पन्न करने की अंतर्निहित क्षमता है, या जो अन्यथा पुन: वैयक्तिकरण की ओर ले जाएँगी। उनके लिए समय का महत्व है। जहाँ ऐसे प्राणी हैं जो मरने के बाद पुनर्जन्म लेंगे, वहाँ समय का महत्व है। जहाँ ऐसे प्राणी हैं जो मरने के बाद पुनर्जन्म नहीं लेंगे, वहाँ समय का महत्व नहीं है; और जहाँ ऐसे प्राणी हैं जो पूरी तरह से मुक्त हो चुके हैं (जिन्होंने अपने वर्तमान जीवन में निर्वाण प्राप्त कर लिया है और उस जीवन का अंत कर लिया है), वहाँ समय का महत्व नहीं है - क्योंकि वे पूर्णतः मुक्त हो चुके हैं।'
'तुम जवाब देने के लिए तैयार हो, नागसेना।'
यहां दूसरा अध्याय समाप्त होता है।

टिपिटक >> सुत्त पिटक >> खुद्दाक निकाय >> मिलिंदपन्हा >> पुस्तक II: नैतिक गुणों की विशिष्ट विशेषताएं - लक्खाना पन्हा अध्याय 3

अनुवादक: टी.डब्ल्यू. राइस डेविड्स

पिछला <<<<-----||-4-||----->>>> अगला

1. राजा ने कहा: 'हे नागसेन, भूतकाल का मूल क्या है, वर्तमान काल का मूल क्या है और भविष्य काल का मूल क्या है?'

अज्ञान। अज्ञान के कारण ही रचनाएँ उत्पन्न हुईं, रचनाओं के कारण चेतना, चेतना के कारण नाम-रूप, नाम-रूप के कारण ही छह इंद्रियाँ, उनके कारण स्पर्श, स्पर्श के कारण संवेदना, संवेदना के कारण प्यास, प्यास के कारण लालसा, लालसा के कारण जन्म, जन्म के कारण जन्म, जन्म के कारण वृद्धावस्था और मृत्यु, दुःख, विलाप, शोक, पीड़ा और निराशा। इस प्रकार, इस समस्त समय के अतीत का अंतिम बिंदु स्पष्ट नहीं है।

'तुम तैयार हो, नागसेना, जवाब देने के लिए!'

2. राजा ने कहा: 'तुम कहते हो कि समय का अंतिम बिंदु स्पष्ट नहीं है। मुझे इसका एक उदाहरण दो।'

'मान लीजिए, हे राजा, एक व्यक्ति जमीन में एक छोटा सा बीज बोता है, और वह अंकुर बनकर उगता है, और समय के साथ बढ़ता है, विकसित होता है और परिपक्व होकर फल देता है। फिर वह व्यक्ति उस फल से एक बीज लेकर उसे फिर से जमीन में बो देता है, और सब कुछ पहले जैसा ही हो जाता है। क्या इस क्रम का कोई अंत होगा?'

बिलकुल नहीं, महोदय।

'हे राजा, ठीक इसी प्रकार, इस पूरे कालखंड के अतीत का अंतिम बिंदु स्पष्ट नहीं है।'

मुझे एक और उदाहरण दीजिए।

'मुर्गी अंडा देती है। अंडे से मुर्गी निकलती है। मुर्गी से एक अंडा। क्या इस सिलसिले का कोई अंत है?'

'नहीं।'

'हे राजा, ठीक इसी प्रकार, इस पूरे कालखंड के अतीत का अंतिम बिंदु स्पष्ट नहीं है।'

मुझे एक और उदाहरण दीजिए।

तब बुजुर्ग ने जमीन पर एक वृत्त खींचा और राजा से पूछा: 'क्या इस वृत्त का कोई अंत है?'

'नहीं, इसका कोई अंत नहीं है।'

4. यह तो भगवान बुद्ध द्वारा वर्णित उन चक्रों के समान है। "आँख और रूपों के कारण दृष्टि उत्पन्न होती है, जब ये तीनों एक साथ आते हैं तो स्पर्श उत्पन्न होता है, स्पर्श से संवेदना उत्पन्न होती है, संवेदना से तड़प (तन्हा, प्यास) उत्पन्न होती है, तड़प से कर्म उत्पन्न होता है, और कर्म से फिर से आँख उत्पन्न होती है।" क्या इस श्रृंखला का कोई अंत है?

'नहीं।'

फिर अन्य सभी इंद्रियों (कान, नाक, जीभ, शरीर और मन) के लिए एक सटीक संगत वृत्त बनाकर, उन्होंने प्रत्येक मामले में वही प्रश्न पूछा। और उत्तर हमेशा एक जैसा होने पर, उन्होंने निष्कर्ष निकाला:

'हे राजा, ठीक इसी प्रकार अतीत में समय का अंतिम बिंदु स्पष्ट नहीं है।'

'तुम जवाब देने के लिए तैयार हो, नागसेना।'

3. राजा ने कहा: 'जब आप कहते हैं कि अंतिम बिंदु स्पष्ट नहीं है, तो "अंतिम बिंदु" से आपका क्या तात्पर्य है?'

'जो भी समय बीत चुका है, हे राजा, मैं उसी के अंतिम बिंदु की बात कर रहा हूँ।'

लेकिन, यदि ऐसा है, तो जब आप कहते हैं कि यह स्पष्ट नहीं है, तो क्या आपका मतलब हर चीज के बारे में यही है? क्या हर चीज का अंतिम बिंदु अज्ञात है?

'कुछ हद तक सही, और कुछ हद तक नहीं।'

तो फिर इनमें से कौन सा सच है और कौन सा नहीं?

'हे राजा, पूर्वकाल में, प्रत्येक रूप में, प्रत्येक स्वरूप में, सब कुछ अज्ञान था। यह हमारे लिए ऐसा है मानो वह अज्ञान ही हो। इस संदर्भ में परम आरंभ अज्ञात है। परन्तु जो अस्तित्व में नहीं है, वह अस्तित्व में आता है; जैसे ही उसका अस्तित्व शुरू होता है, वह फिर विलीन हो जाता है। इस संदर्भ में परम आरंभ ज्ञात है।'

लेकिन, आदरणीय महोदय, यदि जो अस्तित्व में नहीं था, वह अस्तित्व में आ जाए, और जैसे ही वह अस्तित्व में आना शुरू हो, वैसे ही फिर से लुप्त हो जाए।

अगर यह अलग हो जाए, तो निश्चित रूप से, इस प्रकार दोनों सिरों से कट जाने के कारण, यह पूरी तरह से नष्ट हो जाएगा?

'नहीं, हे राजा, यदि इसे दोनों सिरों से इस प्रकार काट दिया जाए, तो क्या इसे दोनों सिरों से फिर से उगाया नहीं जा सकता?'

'हां, ऐसा हो सकता है। लेकिन मेरा सवाल यह नहीं है। क्या यह उस जगह से दोबारा उग सकता है जहां से इसे काटा गया था?'

'निश्चित रूप से।'

मुझे एक उदाहरण दीजिए।

तब बड़े गुरु ने वृक्ष और बीज की उपमा दोहराई और कहा कि स्कंध (सम्मय जीवन के घटक तत्व, जैविक और अजैविक) इतने सारे बीज हैं, और राजा ने स्वयं को संतुष्ट पाया।

4. राजा ने कहा: 'क्या यहाँ कोई मिठाई बनाई जाती है?'

'निश्चित रूप से।'

'वह कौन से है?'

जहां आंख होती है और आकृतियां भी होती हैं, वहां दृष्टि होती है, जहां दृष्टि होती है वहां आंख के माध्यम से संपर्क होता है, जहां आंख के माध्यम से संपर्क होता है वहां संवेदना होती है, जहां संवेदना होती है वहां लालसा होती है, जहां लालसा होती है वहां अभिलाषा होती है, जहां अभिलाषा होती है वहां विकास होता है।

जहां विकास होता है, वहां जन्म होता है, और जन्म के समय ही वृद्धावस्था और मृत्यु, शोक, विलाप, पीड़ा, दुःख और निराशा का जन्म होता है। इस प्रकार इस प्रकार के सभी दुःखों का उदय होता है। जहां न आंख है, न रूप, वहां दृष्टि नहीं है; जहां दृष्टि नहीं है, वहां आंख के माध्यम से संपर्क नहीं है; जहां संपर्क नहीं है, वहां संवेदना नहीं है; जहां संवेदना नहीं है, वहां लालसा नहीं है; जहां लालसा नहीं है, वहां अभिलाषा नहीं है; जहां अभिलाषा नहीं है, वहां विकास नहीं है; जहां विकास नहीं है, वहां जन्म नहीं है; और जहां जन्म नहीं है, वहां न वृद्धावस्था है, न मृत्यु, न शोक, विलाप, पीड़ा, दुःख और निराशा है। इस प्रकार इस प्रकार के सभी दुःखों का अंत होता है।

'बहुत बढ़िया, नागसेना!'

5. राजा ने कहा: 'क्या कोई ऐसी रचनाएँ (गुण) हैं जो क्रमिक विकास के बिना अचानक अस्तित्व में आ जाती हैं?'

'नहीं। उन सभी का विकास क्रमिक रूप से होता है।'

मुझे एक उदाहरण दीजिए।

'अब आप क्या सोचते हैं, महान राजा? क्या यह घर जिसमें आप बैठे हैं, अचानक अस्तित्व में आ गया?'

'बिल्कुल नहीं, महोदय। यहाँ कुछ भी इस तरह से उत्पन्न नहीं हुआ है। इसका प्रत्येक भाग क्रमिक रूप से बना है - ये बीम जंगल में बने, और यह मिट्टी धरती में, और महिलाओं और पुरुषों के परिश्रम और मेहनत से यह घर निर्मित हुआ है।'

'ठीक वैसे ही, हे महाराज, कोई भी मिठाई बिना क्रमिक विकास के अचानक अस्तित्व में नहीं आती। मिठाइयाँ विकास की प्रक्रिया से ही बनती हैं!'

मुझे एक और उदाहरण दीजिए।

'वे सभी प्रकार के वृक्षों और पौधों की तरह हैं, जो जमीन में लगाए जाने पर बढ़ते, विकसित होते और परिपक्व होते हैं, और फिर अपने फल और फूल देते हैं। वृक्ष बिना विकास के अचानक अस्तित्व में नहीं आते। विकास की प्रक्रिया से ही वे अपना स्वरूप प्राप्त करते हैं। ठीक उसी प्रकार, हे महाराज, कोई भी मिठाई बिना क्रमिक विकास के अचानक अस्तित्व में नहीं आती। मिठाई भी विकास की प्रक्रिया से ही बनती है!'

मुझे एक और उदाहरण दीजिए।

'ये उन विभिन्न प्रकार के बर्तनों के समान हैं जिन्हें कुम्हार मिट्टी खोदकर बनाता है। बर्तन बिना किसी प्रक्रिया के अचानक अस्तित्व में नहीं आ जाते। विकास की प्रक्रिया से ही वे अपना स्वरूप प्राप्त करते हैं। ठीक वैसे ही, हे महाराज, कोई भी मिठाई बिना किसी क्रमिक विकास के अचानक अस्तित्व में नहीं आ जाती। मिठाई भी विकास की प्रक्रिया से ही बनती है!'

मुझे एक और उदाहरण दीजिए।

'मान लीजिए, हे राजा, अगर मैंडोलिन पर धातु का कोई पुल न हो, चमड़ा न हो, कोई खोखली जगह न हो, कोई ढांचा न हो, कोई गर्दन न हो, कोई तार न हो, कोई धनुष न हो, और कोई मानवीय प्रयास या परिश्रम न हो, तो क्या संगीत होगा?'

'बिल्कुल नहीं, महोदय।'

'लेकिन अगर ये सब चीजें होतीं, तो क्या कोई आवाज नहीं होती?'

'बेशक ऐसा होगा।'

'ठीक वैसे ही, हे महाराज, कोई भी मिठाई बिना क्रमिक विकास के अचानक अस्तित्व में नहीं आती। मिठाईयों का निर्माण विकास की प्रक्रिया से ही होता है!'

मुझे एक और उदाहरण दीजिए।

'मान लीजिए, हे राजा, यदि आग जलाने का कोई उपकरण न हो, कोई घुमाने वाली छड़ी न हो, घुमाने वाली छड़ी के लिए कोई रस्सी न हो, कोई आधार न हो, आग जलाने के लिए कोई जला हुआ कपड़ा न हो, और कोई मानवीय प्रयास और परिश्रम न हो, तो क्या घर्षण से आग लग सकती है?'

'हरगिज नहीं।'

लेकिन अगर ये सभी स्थितियां मौजूद हों, तो क्या आग नहीं लग सकती?

'हां बेशक।'

'ठीक वैसे ही, हे महाराज, कोई भी मिठाई बिना क्रमिक विकास के अचानक अस्तित्व में नहीं आती। मिठाईयों का निर्माण विकास की प्रक्रिया से ही होता है!'

'मुझे एक और उदाहरण दीजिए।'

'मान लीजिए, हे राजा, यदि न तो जलने वाला कांच हो, न सूर्य की ऊष्मा हो, और न ही जलाने के लिए सूखी गोबर की सामग्री हो, तो क्या आग लग सकती है?'

'हरगिज नहीं।'

'लेकिन जहां ये चीजें मौजूद हों, वहां आग लग सकती है, है ना?'

'हाँ।'

'हे महाराज, ठीक इसी प्रकार, ऐसी कोई मिठाई नहीं है जो...'

यह किसी क्रमिक विकास के बिना अचानक अस्तित्व में आया है। मिठाइयाँ विकास की प्रक्रिया से ही अस्तित्व में आती हैं!

'मुझे एक और उदाहरण दीजिए।'

'मान लीजिए, हे राजा, कि न तो कोई दर्पण हो, न कोई प्रकाश हो, और न ही उसके सामने कोई चेहरा हो, तो क्या कोई छवि प्रकट होगी?'

'नहीं।'

'लेकिन इन बातों को देखते हुए, शायद इसका कोई प्रतिबिंब हो सकता है?'

'जी हां, हो सकता है।'

'ठीक वैसे ही, हे महाराज, कोई भी मिठाई बिना क्रमिक विकास के अचानक अस्तित्व में नहीं आती। मिठाईयों का निर्माण विकास की प्रक्रिया से ही होता है!'

'बहुत बढ़िया, नागसेना!'

6. राजा ने कहा: 'हे नागसेन, क्या आत्मा जैसी कोई चीज होती है?'

'हे राजा, यह आत्मा (वेदगु) क्या है?'

'वह सजीव सिद्धांत जिसके भीतर आँख से रूप देखता है, कान से आवाज़ें सुनता है, जीभ से स्वाद का अनुभव करता है, नाक से गंध महसूस करता है, शरीर से स्पर्श का अनुभव करता है और मन से चीजों (स्थितियों, "धम्म") को समझता है - ठीक वैसे ही जैसे हम, यहाँ महल में बैठे हुए, अपनी इच्छा अनुसार किसी भी खिड़की से बाहर देख सकते हैं, चाहे वह पूर्व की खिड़की हो या पश्चिम की, या उत्तर की या दक्षिण की।'

बुजुर्ग ने उत्तर दिया: 'मैं तुम्हें पाँचों के बारे में बताऊंगा'

हे महाराज, ध्यानपूर्वक सुनिए। यदि भीतर का सजीव तत्व आपकी बताई गई विधि से आँखों के माध्यम से आकृतियों को देखता है, और अपनी इच्छानुसार द्वार चुनता है, तो क्या वह केवल आँखों के माध्यम से ही नहीं, बल्कि अन्य पाँचों इंद्रियों के माध्यम से भी आकृतियों को नहीं देख सकता? और इसी प्रकार, क्या वह आपके द्वारा प्रत्येक मामले में निर्दिष्ट इंद्रिय के अलावा अन्य पाँचों इंद्रियों के माध्यम से

भी ध्वनियाँ नहीं सुन सकता, स्वाद का अनुभव नहीं कर सकता, गंध को नहीं सूंघ सकता, स्पर्श को महसूस नहीं कर सकता और स्थितियों को नहीं समझ सकता?

'नहीं, महोदय।'

तो ये शक्तियाँ एक दूसरे से अविभेदित रूप से जुड़ी नहीं हैं, न ही एक इंद्रिय दूसरी से जुड़ी है, और इसी प्रकार आगे भी। अब हम, जैसा कि हम यहाँ महल में बैठे हैं, इन सभी खिड़कियों के खुले होने और पूर्ण प्रकाश में, यदि हम केवल अपना सिर आगे बढ़ाएँ, तो सभी प्रकार की वस्तुएँ स्पष्ट रूप से देख सकते हैं। क्या सजीव तत्व भी ऐसा कर सकता है जब आँखों के द्वार खुले हों? क्या कानों के द्वार खुले होने पर वह ऐसा कर सकता है? क्या वह न केवल ध्वनियाँ सुन सकता है, बल्कि दृश्य देख सकता है, स्वाद का अनुभव कर सकता है, गंध सूंघ सकता है, स्पर्श महसूस कर सकता है और स्थितियों को समझ सकता है? और क्या उसकी प्रत्येक खिड़की के साथ ऐसा ही है?

'नहीं, महोदय।'

'तो ये शक्तियां एक दूसरे से अंधाधुंध रूप से एकजुट नहीं हैं। अब फिर से, महान राजा, यदि दिन्ना यहाँ बाहर जाकर द्वार पर खड़ा हो जाए, तो क्या आपको पता चलेगा कि उसने ऐसा किया है?'

'हां, मुझे यह पता होना चाहिए।'

और यदि वही दिन्ना फिर से लौटकर तुम्हारे सामने खड़ा हो जाए, तो क्या तुम्हें उसके ऐसा करने का एहसास होगा?

'हां, मुझे यह पता होना चाहिए।'

'हे महान राजा, क्या भीतर का सजीव सिद्धांत उसी प्रकार पहचान पाएगा, यदि जीभ पर स्वादयुक्त कोई वस्तु रखी जाए, तो उसका खट्टापन, नमकीनपन, अम्लता, तीखापन, कसैलापन या मिठास?'

'हां, उसे पता होगा।'

लेकिन जब स्वाद पेट में चला जाएगा तो क्या वह इन चीजों को पहचान पाएगा?

'हरगिज नहीं।'

तो ये शक्तियाँ एक दूसरे से अंधाधुंध रूप से जुड़ी नहीं हैं। अब मान लीजिए, हे राजा, कि एक व्यक्ति सौ बर्तन शहद मंगवाकर एक पात्र में भरवा दे, और फिर दूसरे व्यक्ति का मुँह बंद करके उसे शहद से भरे पात्र में फेंक दे। क्या वह जान पाएगा कि जिसमें उसे फेंका गया है वह मीठा है या नहीं?

'नहीं, महोदय।'

'लेकिन क्यों नहीं?'

'क्योंकि शहद उसके मुंह में नहीं जा सका।'

'तो, हे महान राजा, ये शक्तियां एक दूसरे से अंधाधुंध रूप से एकजुट नहीं हैं।'

'मैं ऐसे तर्कशील व्यक्ति से चर्चा करने में सक्षम नहीं हूँ। महोदय, कृपया मुझे समझाएँ कि मामला क्या है।'

तब वृद्ध ने अभिधम्म से लिए गए प्रवचन से राजा मिलिंदा को समझाते हुए कहा: 'हे राजा, दृष्टि और रूप के कारण ही दृष्टि उत्पन्न होती है, और अन्य स्थितियाँ—संपर्क,

संवेदना, विचार, चिंतन, अमूर्तता, जीवन का बोध और ध्यान—ये सभी अपने पूर्ववर्ती के साथ एक ही समय में उत्पन्न होते हैं। और इसी प्रकार कारण और प्रभाव का क्रम तब भी उत्पन्न होता है जब अन्य पाँचों इंद्रियों को सक्रिय किया जाता है। अतः यहाँ आत्मा (वेदगु) जैसी कोई वस्तु नहीं है।

7. राजा ने कहा: 'क्या दृष्टि उत्पन्न होने पर विचार-बोध भी उत्पन्न होता है?'

'जी, हे राजा, जहाँ एक है, वहाँ दूसरा भी है। और इन दोनों में से पहले कौन उत्पन्न होता है?'

'पहले नजर पड़ी, फिर विचार आया।'

तब क्या दृष्टि, मानो, विचार को आदेश देती है, यह कहते हुए: "क्या तुम वहाँ उत्पन्न होगे जहाँ मैं हूँ? या क्या विचार दृष्टि को आदेश देता है, यह कहते हुए: जहाँ तुम उत्पन्न होगे, मैं वहाँ उत्पन्न होऊंगा।"

'ऐसा नहीं है, महाराज। उन दोनों के बीच कोई संबंध नहीं है।'

'तो फिर ऐसा कैसे होता है, महोदय, कि जहाँ भी दृष्टि होती है, वहाँ विचार उत्पन्न होते हैं?'

'ढलान होने के कारण, दरवाजा होने के कारण, आदत होने के कारण और जुड़ाव होने के कारण।'

'यह कैसे संभव है? मुझे एक उदाहरण दीजिए जिसमें ढलान होने के कारण दृष्टि के स्थान पर मन उत्पन्न होता हो।'

'अब आप क्या सोचते हैं, महान राजा? जब बारिश होती है, तो पानी कहाँ जाता है?'

'यह जमीन की ढलान का अनुसरण करेगा।'

और अगर दोबारा बारिश हुई तो पानी कहाँ जाएगा?

'यह उसी तरह बहेगा जैसे पहला पानी बहा था।'

तो फिर क्या? क्या पहली जलधारा, मानो, दूसरी जलधारा को आदेश देती है, यह कहते हुए: "क्या तुम वहीं जाओगे जहाँ मैं तुम्हें ले जाऊँगी?" या क्या दूसरी जलधारा पहली जलधारा को आदेश देती है, यह कहते हुए: "तुम जहाँ भी जाओगे, मैं वहीं जाऊँगी"?

'ऐसा नहीं है, महोदय। दोनों के बीच कोई संपर्क नहीं है। जमीन की ढलान के कारण दोनों अपने-अपने रास्ते चले जाते हैं।'

'हे महाराज, यही प्राकृतिक ढलान का नियम है कि जहाँ दृष्टि उत्पन्न होती है, वहीं विचार भी उत्पन्न होते हैं। न तो दृष्टि मन को यह आदेश देती है कि "जहाँ मैं उत्पन्न हुआ हूँ, वहीं तुम भी उत्पन्न हो जाओ;" और न ही मन दृष्टि को यह सूचना देता है कि "जहाँ तुम उत्पन्न हुए हो, वहीं मैं भी उत्पन्न हो जाऊँगा।" उनके बीच कोई संवाद नहीं होता। जो कुछ भी घटित होता है, वह प्राकृतिक ढलान के कारण ही होता है।'

'अब मुझे एक उदाहरण दीजिए जिसमें दरवाजा दिखाया गया हो।'

'हे महान राजा, आप क्या सोचते हैं? मान लीजिए कि एक राजा का एक सीमावर्ती शहर है, जो मीनारों और बुर्जों से मज़बूती से सुरक्षित है, और उसमें केवल एक ही प्रवेश द्वार है। यदि कोई व्यक्ति शहर छोड़ना चाहता है, तो वह बाहर कैसे जाएगा?'

'गेट के पास, बिल्कुल।'

'और अगर कोई दूसरा आदमी इसे छोड़ना चाहे, तो वह कैसे बाहर जाएगा?'

'बिल्कुल पहले की तरह।'

तो फिर क्या? क्या पहला आदमी दूसरे को बताएगा?

[पैराग्राफ जारी है] "ध्यान रहे, तुम भी उसी रास्ते से बाहर जाओगे जिस रास्ते से मैं जाता हूँ?" या दूसरा पहले से कहेगा: "जिस रास्ते से तुम बाहर जाओगे, मैं भी उसी रास्ते से बाहर जाऊँगा?"

'बिल्कुल नहीं, महोदय। उनके बीच कोई संवाद नहीं होगा। वे उस रास्ते से जाएंगे क्योंकि वही द्वार था।'

'हे महान राजा, ठीक इसी प्रकार, विचार और दृष्टि से।'

'अब मुझे एक ऐसा उदाहरण दीजिए जिसमें आदत के कारण देखने पर विचार उत्पन्न होता हो।'

'हे महाराज, आपका क्या विचार है? यदि एक गाड़ी आगे चली जाए, तो दूसरी गाड़ी किस दिशा में जाएगी?'

'पहले वाले जैसा ही।'

लेकिन क्या पहला दूसरे को यह बताएगा कि वह वहीं जाए जहां वह गया था, या दूसरा पहले को यह बताएगा कि वह वहीं जाएगा जहां वह (पहला) गया था?

'नहीं, महोदय। उन दोनों के बीच कोई संवाद नहीं होगा। दूसरा व्यक्ति आदतवश पहले का अनुसरण करेगा।'

'हे महान राजा, दृष्टि और विचार से ठीक ऐसा ही करो।'

'अब मुझे एक उदाहरण देकर समझाइए कि दृष्टि उत्पन्न होने पर, साहचर्य के माध्यम से विचार कैसे उत्पन्न होता है।'

उंगलियों के जोड़ों को संकेतों या चिह्नों के रूप में उपयोग करके गणना करने की कला में, शुद्ध और सरल अंकगणित की कला में, संभाव्यता का अनुमान लगाने की कला में।

फसल की पैदावार में वृद्धि होती है, और लेखन कला में, हे राजा, आरंभिक व्यक्ति अनाड़ी होता है। परन्तु कुछ समय बाद ध्यान और अभ्यास से वह निपुण हो जाता है। ठीक इसी प्रकार, जहाँ दृष्टि उत्पन्न होती है, वहाँ संगति के कारण विचार भी उत्पन्न होते हैं।

और इसी तरह के प्रश्नों के उत्तर में, एल्डर ने घोषणा की कि जहाँ भी श्रवण, स्वाद, गंध या स्पर्श होता है, वहाँ विचार उसी प्रकार उत्पन्न होते हैं: कि प्रत्येक मामले में यह दूसरे के बाद आता है, लेकिन ऊपर बताए गए प्राकृतिक कारणों से बिना किसी संचार के उत्पन्न होता है।

8. राजा ने कहा: 'हे नागसेन, जहाँ विचार (मानसिक बोध) होता है, क्या वहाँ हमेशा संवेदना भी होती है?'

'हाँ, जहाँ विचार उत्पन्न होता है, वहाँ संपर्क होता है, वहाँ संवेदना होती है, वहाँ विचार होता है, वहाँ कल्पित इरादा होता है, वहाँ चिंतन होता है; और वहाँ अन्वेषण होता है।'

9. 'आदरणीय महोदय, संपर्क (फस्सा) की विशिष्ट विशेषता क्या है?'

'हे राजा, स्पर्श करो।'

लेकिन मुझे एक उदाहरण दीजिए।

'यह ऐसा है जैसे दो भेड़ें आपस में टक्कर मार रही हों, ओ'

राजा। आँख को उन दो में से एक, रूप (वस्तु) को दूसरा और संपर्क को उन दोनों के मिलन के रूप में देखा जाना चाहिए।'

मुझे एक और उदाहरण दीजिए।

'यह ऐसा है जैसे दो झांझ आपस में टकराते हैं। एक आँख की तरह है, दूसरा वस्तु की तरह, और दोनों का मिलन संपर्क की तरह है।'

'बहुत बढ़िया, नागसेना!'

10. 'आदरणीय महोदय, वेदना (संवेदना) की विशेषता क्या है?'

'वह अनुभव, महान राजा, और आनंदित हो रहा है।'

मुझे एक उदाहरण दीजिए।

यह उस व्यक्ति के समान है जिसे राजा उसकी किसी सेवा से प्रसन्न होकर कोई पद प्रदान करता है। वह उस पद पर रहते हुए, सभी इंद्रिय सुखों का पूर्ण आनंद लेते हुए, सोचेगा: "पहले मैंने राजा की सेवा की थी। इसके लिए राजा मुझसे प्रसन्न होकर मुझे यह पद दिया। इसी कारण मैं अब ऐसी संवेदनाओं का अनुभव कर रहा हूँ।" और यह उस व्यक्ति के समान है जिसने अच्छे कर्म किए हैं और मृत्यु के बाद शरीर के विघटन पर स्वर्ग में आनंदमय अवस्था में पुनर्जन्म लेता है। वह वहाँ रहते हुए, सभी इंद्रिय सुखों का पूर्ण आनंद लेते हुए, सोचेगा: "पहले मैंने अच्छे कर्म किए होंगे। इसी कारण मैं अब ऐसी संवेदनाओं का अनुभव कर रहा हूँ।" इस प्रकार, हे महाराज, अनुभव और आनंदित होना ही संवेदना का विशिष्ट लक्षण है।

'बहुत बढ़िया, नागसेना!'

11. 'नागसेन, विचार (संज्ञा) की विशिष्ट विशेषता क्या है?'

'हे राजा, पहचान! और वह क्या पहचानता है? नीलापन, पीलापन, लालपन, सफेदी और भूरापन।'

मुझे एक उदाहरण दीजिए।

'यह राजा के कोषाध्यक्ष के समान है। हे राजा, जब वह खजाने में प्रवेश करते समय राजा की संपत्ति को उन सभी रंगों में देखता है, तो वह पहचान लेता है (कि वे ऐसे ही हैं)। इसी प्रकार, हे महान राजा, पहचान ही विचार की पहचान है।'

'बहुत बढ़िया, नागसेना!'

'हे नागसेन, परिकल्पित उद्देश्य (केतना) की विशिष्ट विशेषता क्या है?'

'हे राजा, गर्भ धारण करने की प्रक्रिया और तैयारी की प्रक्रिया।'

मुझे एक उदाहरण दीजिए।

'हे राजा, यह उस व्यक्ति के समान है जो विष तैयार करे और स्वयं भी उसे पी ले और दूसरों को भी पीने को दे। उसे स्वयं भी पीड़ा सहनी होगी और दूसरों को भी। उसी प्रकार, कोई व्यक्ति जानबूझकर कोई बुरा कर्म करने का निश्चय करके, मृत्यु के बाद शरीर के विघटन से

नरक में किसी दुखद पीड़ा में पुनर्जन्म लेगा, और उसके अनुयायी भी उसी प्रकार पीड़ा में रहेंगे। और यह एक ऐसे व्यक्ति के समान है जो...

हे महाराज, वह मनुष्य जो घी, मक्खन, तेल, शहद और गुड़ का मिश्रण तैयार करे और उसे स्वयं भी पिए तथा दूसरों को भी पिलाए, तो उसे स्वयं भी आनंद मिलेगा और दूसरों को भी। इसी प्रकार, कोई व्यक्ति, किसी अच्छे कर्म का निश्चय करके, मृत्यु के बाद शरीर के नष्ट होने पर स्वर्ग में किसी सुखमय अवस्था में पुनर्जन्म लेगा, और उसके उपदेश का पालन करने वाले भी उसी प्रकार स्वर्ग में प्रवेश करेंगे। इस प्रकार, हे महाराज, परिकल्पना और परिकल्पना, परिकल्पना के उद्देश्य के ही लक्षण हैं।

'बहुत बढ़िया, नागसेना!'

12. 'हे नागसेन, बोध (विज्ञाना) की विशिष्ट विशेषता क्या है?'

'मान्यता, महान राजा।'

मुझे एक उदाहरण दीजिए।

'यह उस नगर के रक्षक के समान है जो नगर के मध्य में चौराहे पर बैठा हुआ पूर्व, दक्षिण, पश्चिम या उत्तर से आने वाले व्यक्ति को देख सकता है। उसी प्रकार, हे राजा, वह उस वस्तु को जानता है जिसे वह अपनी आँखों से देखता है, या उस ध्वनि को जिसे वह अपने कानों से सुनता है, या उस गंध को जिसे वह अपनी नाक से सूंघता है, या उस स्वाद को जिसे वह अपनी जीभ से अनुभव करता है, या उस स्पर्शनीय वस्तु को जिसे वह अपने शरीर से स्पर्श करता है, या उस गुण को जिसे वह अपने मन से पहचानता है। इस प्रकार, हे महाराज, जानना ही बोध का चिन्ह है।'

'बहुत बढ़िया, नागसेना!'

13. 'हे नागसेन, चिंतन (वितक्का) की विशिष्ट विशेषता क्या है?'

'किसी उद्देश्य की पूर्ति।'

मुझे एक उदाहरण दीजिए।

'यह उस बढ़ई के मामले के समान है, हे महान राजा, जो लकड़ी के एक सुगठित टुकड़े को जोड़ में ठीक से लगाता है। इसी प्रकार, किसी लक्ष्य की प्राप्ति चिंतन का प्रतीक है।'

'बहुत बढ़िया, नागसेना!'

14. 'हे नागसेन, जांच (विकार) की विशिष्ट विशेषता क्या है?'

बार-बार छानना।

मुझे एक उदाहरण दीजिए।

'यह तांबे के बर्तन के समान है, जिसे आकार देते समय बार-बार ध्वनि उत्पन्न होती है। आकार देने की प्रक्रिया को चिंतन और बार-बार ध्वनि उत्पन्न होने को अन्वेषण माना जाना चाहिए। इसी प्रकार, हे महाराज, बार-बार पीटना ही अन्वेषण का प्रतीक है।'

'बहुत बढ़िया, नागसेना!'

तीसरा अध्याय यहीं समाप्त होता है।

15. राजा ने कहा: 'जब वे स्थितियाँ (जिनके लक्षण आपने अभी बताए हैं) आपस में मिल जाती हैं, तो क्या उन्हें एक तरफ और दूसरी तरफ मोड़कर उनके बीच का अंतर स्पष्ट करना संभव है, ताकि यह कहा जा सके: 'यह संपर्क है, और यह संवेदना है, और यह विचार है, और यह इरादा है, और यह बोध है, और यह चिंतन है, और यह अन्वेषण है'?'

'नहीं: ऐसा नहीं किया जा सकता।'

मुझे एक उदाहरण दीजिए।

'मान लीजिए, हे महाराज, राजमहल का रसोइया एक चाशनी या चटनी बनाए और उसमें दही, नमक, अदरक, जीरा, काली मिर्च और अन्य सामग्रियाँ डाले। मान लीजिए, महाराज उससे कहें: "मुझे दही, नमक, अदरक, जीरा, काली मिर्च और उन सभी चीजों का स्वाद बताइए जो आपने इसमें डाली हैं।" तो क्या यह संभव होगा, हे महाराज, कि इस प्रकार आपस में मिल गए उन स्वादों को अलग-अलग करके यह बताया जा सके: "यहाँ खट्टापन है, यहाँ नमकीनपन है, यहाँ तीखापन है, यहाँ अम्लता है, यहाँ कसैलापन है और यहाँ मिठास है?"

'नहीं, ऐसा संभव नहीं होगा। लेकिन फिर भी प्रत्येक स्वाद अपने विशिष्ट चिह्न द्वारा स्पष्ट रूप से मौजूद होगा।'

'और ठीक यही बात, महान राजा, उन शर्तों के संबंध में भी लागू होती है जिन पर हम चर्चा कर रहे थे।'

'बहुत बढ़िया, नागसेना!'

16. बड़े ने कहा: 'हे राजा, क्या नमक को आँखों से पहचाना जा सकता है?'

'जी हां, महोदय, ऐसा ही है।'

लेकिन सावधान रहें, हे राजा।

तो फिर, महोदय, क्या इसे जीभ से महसूस किया जा सकता है?

'हां वह सही है।'

'लेकिन, महोदय, क्या नमक के हर प्रकार को केवल जीभ से ही पहचाना जा सकता है?'

'हां, हर तरह के।'

'अगर ऐसा है, महोदय, तो बैलगाड़ी भर-भरकर इसे क्यों लाते हैं? क्या सिर्फ नमक ही नहीं, बल्कि और कुछ नहीं, वही तो लाया जाना चाहिए?'

'नमक को अकेले लाना असंभव है। लेकिन ये सभी परिस्थितियाँ मिलकर एक विशिष्ट वस्तु, नमक, का निर्माण करती हैं। (उदाहरण के लिए): नमक भी भारी होता है। लेकिन हे राजा, क्या नमक को तौलना संभव है?'

'जी हां, महोदय।'

नहीं, हे महाराज, आप नमक नहीं तोल रहे हैं, बल्कि वजन तोल रहे हैं।

'नागसेना, तुम बहस के लिए तैयार हो।'

यहीं पर मिलिंदा द्वारा नागसेना से की गई पूछताछ समाप्त होती है।

तिपिटक >> सुत्त पिटक >> खुद्दक निकाय >> मिलिंदपन्हा >> पुस्तक III: कठिनाइयों का निवारण - विमटिकखेदान पन्हा अध्याय 4

अनुवादक: टी.डब्ल्यू. राइस डेविड्स

पिछला <<<<-----||-5-||----->>>> अगला

1. राजा ने कहा: 'क्या पाँच आयतन, नागसेन (आँख, कान, नाक, जीभ और शरीर) विभिन्न कर्मों से उत्पन्न होते हैं, या एक ही कर्म से?' (अर्थात, विभिन्न कर्मों के परिणाम स्वरूप, या एक ही कर्म के परिणाम स्वरूप।)

'विभिन्न कार्यों के माध्यम से, न कि केवल एक कार्य से।'

मुझे एक उदाहरण दीजिए।

'अब, हे राजा, आप क्या सोचते हैं? यदि मैं एक ही खेत में पाँच प्रकार के बीज बोऊँ, तो क्या उन विभिन्न बीजों की उपज अलग-अलग प्रकार की होगी?'

'हां बेशक।'

'ठीक वैसे ही जैसे आयतनों के निर्माण के संबंध में है।'

'बहुत बढ़िया, नागसेना!'

2. राजा ने कहा: 'हे नागसेन, ऐसा क्यों है कि सभी मनुष्य एक समान नहीं होते, बल्कि कुछ अल्प आयु वाले होते हैं और कुछ दीर्घ आयु वाले, कुछ बीमार होते हैं और कुछ स्वस्थ, कुछ बदसूरत होते हैं और कुछ सुंदर, कुछ प्रभावहीन होते हैं और कुछ महान शक्ति वाले, कुछ गरीब होते हैं और कुछ धनी, कुछ नीच कुल के होते हैं और कुछ उच्च कुल के, कुछ मूर्ख होते हैं और कुछ बुद्धिमान?'

बुजुर्ग ने उत्तर दिया: 'ऐसा क्यों है कि सभी सब्जियां एक जैसी नहीं होतीं, कुछ खट्टी, कुछ नमकीन, कुछ तीखी, कुछ खट्टी, कुछ कसैली और कुछ मीठी होती हैं?'

'मुझे लगता है, महोदय, ऐसा इसलिए है क्योंकि वे अलग-अलग प्रकार के बीजों से आते हैं।'

और हे महाराज, आपने मनुष्यों के बीच जिन भेदों का उल्लेख किया है, ठीक इसी प्रकार उनका स्पष्टीकरण किया जाना है। क्योंकि भगवान बुद्ध ने कहा है: "हे ब्राह्मण, प्रत्येक प्राणी का अपना कर्म होता है, वे कर्म के उत्तराधिकारी होते हैं, अपने कर्म के गोत्र से संबंधित होते हैं, कर्म के अनुसार रिश्तेदार होते हैं, और प्रत्येक का कर्म ही उनका संरक्षक होता है। कर्म ही उन्हें निम्न और उच्च तथा इसी प्रकार के अन्य वर्गों में विभाजित करता है।"

'बहुत बढ़िया, नागसेना!'

3. राजा ने कहा: 'नागसेन, तुमने मुझे बताया था कि तुम्हारा त्याग इस उद्देश्य से था कि यह दुःख दूर हो जाए और आगे कोई दुःख उत्पन्न न हो।'

'हां, ऐसा ही है।'

लेकिन क्या वह त्याग पूर्व प्रयासों के फलस्वरूप प्राप्त हुआ है, या फिर वर्तमान समय में उसके लिए प्रयास करना होगा?

बुजुर्ग ने उत्तर दिया: 'अब प्रयास उस काम पर केंद्रित है जो अभी बाकी है, पूर्व प्रयास ने अपना काम पूरा कर लिया है।'

मुझे एक उदाहरण दीजिए।

'अब आप क्या सोचते हैं, हे राजा? क्या प्यास लगने पर ही आप पीने के लिए पानी प्राप्त करने के इरादे से कुआँ या कृत्रिम झील खुदवाने का काम शुरू करते हैं?'

'बिल्कुल नहीं, महोदय।'

'ठीक उसी प्रकार, हे महान राजा, अब प्रयास उस कार्य से संबंधित है जो अभी भी शेष है, पूर्व प्रयास अपना कार्य पूरा कर चुका है।'

मुझे एक और उदाहरण दीजिए।

'अब हे राजा, आप क्या सोचते हैं? क्या भूख लगने पर ही आप खेतों की जुताई, बीज बोने और फसल काटने का काम शुरू करते हैं ताकि आपको खाने के लिए कुछ मिल सके?'

'बिल्कुल नहीं, महोदय।'

'ठीक उसी प्रकार, हे महान राजा, अब प्रयास उस कार्य से संबंधित है जो अभी भी शेष है, पूर्व प्रयास अपना कार्य पूरा कर चुका है।'

मुझे एक और उदाहरण दीजिए।

'अब हे राजा, आप क्या सोचते हैं? क्या जब आपके विरुद्ध युद्ध की तैयारी हो जाती है, तब आप खाई खुदवाने, प्राचीर बनवाने, पहरेदारी मीनार बनवाने, गढ़ बनवाने और भोजन भंडार इकट्ठा करने का काम शुरू करते हैं? क्या तब आप स्वयं हाथियों का प्रबंधन, घुड़सवारी, रथ और धनुष का उपयोग या तलवारबाजी की कला सीखना चाहते हैं?'

'बिल्कुल नहीं, महोदय।'

'हे महाराज, ठीक इसी प्रकार, अब प्रयास उस कार्य से संबंधित है जो अभी शेष है, पूर्व प्रयास ने अपना कार्य पूर्ण कर लिया है। क्योंकि हे महाराज ने ऐसा कहा है:

समय रहते हर बुद्धिमान व्यक्ति को वही करना चाहिए जो उसे अपना भला लगे! उसे गाड़ीवान की तरह नहीं सोचना चाहिए, बल्कि दृढ़ निश्चय के साथ आगे बढ़ना चाहिए। जैसे कोई गाड़ीवान जो सुगम सड़क छोड़कर ऊबड़-खाबड़ रास्तों पर चला जाता है, बेचैन हो जाता है (जैसे कोई जुआरी सब कुछ दांव पर लगाकर हार जाता है) - वैसे ही वह दुर्बल मन जो अच्छाई की उपेक्षा करता है और बुराई का अनुसरण करता है, मृत्यु के चंगुल में फंसकर दुखी होता है, जैसे कोई बर्बाद जुआरी अपनी जरूरत के समय दुखी होता है।

'बहुत बढ़िया, नागासेना।'

4. राजा ने कहा: 'तुम (बौद्ध) ऐसा कहते हो: "नरक की आग साधारण आग से कहीं अधिक भयंकर होती है। साधारण आग में डाला गया एक छोटा पत्थर एक दिन तक बिना नष्ट हुए धुआँ छोड़ सकता है; परन्तु नरक की भट्टी में ऊपरी कक्ष जितना बड़ा पत्थर डाला जाए तो वह उसी क्षण नष्ट हो जाएगा।" यह कथन मुझे विश्वास नहीं होता। अब, दूसरी ओर तुम ऐसा कहते हो: "वहाँ जो भी प्राणी पुनर्जन्म लेते हैं, यद्यपि वे

"वे लाखों वर्षों तक नरक में जलते रहते हैं, फिर भी उनका नाश नहीं होता।" यह भी एक ऐसा कथन है जिस पर मुझे विश्वास नहीं है।

बुजुर्ग ने कहा: 'अब आप क्या सोचते हैं, हे राजा? क्या शार्क, मगरमच्छ, कछुए, मोर और कबूतरों की मादाएं पत्थर और कंकड़ के कठोर टुकड़े नहीं खातीं?'

'जी हां, महोदय। वे करते हैं।'

'तो फिर क्या? क्या ये कठोर चीजें, जब पेट में, उदर के अंदरूनी भाग में पहुँच जाती हैं, तो नष्ट हो जाती हैं?'

'हां, वे नष्ट हो गए हैं।'

और जो भ्रूण उन्हीं जानवरों के अंदर हो सकता है, क्या वह भी नष्ट हो जाता है?

'हरगिज नहीं।'

'लेकिन क्यों नहीं।'

'मुझे लगता है, महोदय, यह कर्म के प्रभाव से विनाश से बच गया।'

"हे महाराज, कर्म के प्रभाव से ही प्राणी, चाहे वे हजारों वर्षों से नरक में हों, नष्ट नहीं होते। यदि उनका वहाँ पुनर्जन्म होता है, तो वे वहीं बड़े होते हैं और वहीं उनकी मृत्यु होती है। हे महाराज, इस बारे में यही कहा गया है: 'जब तक उस बुरे कर्म का फल नहीं मिल जाता, तब तक उसकी मृत्यु नहीं होती।'"

मुझे एक और उदाहरण दीजिए।

'अब आप क्या सोचते हैं, हे राजा? क्या शेरों, बाघों, तेंदुओं और कुत्तों की मादाएं हड्डी और मांस के कठोर टुकड़े नहीं खातीं?'

'हां, वे ऐसी चीजें खाते हैं।'

'तो फिर क्या? जब ऐसी कठोर चीजें पेट में, उदर के अंदरूनी भाग में पहुँच जाती हैं, तो क्या वे नष्ट हो जाती हैं?'

'हां, वे नष्ट हो गए हैं?'

और जो भ्रूण उन्हीं जानवरों के अंदर हो सकता है, क्या वह भी नष्ट हो जाता है?

'हरगिज नहीं।'

'लेकिन क्यों नहीं?'

'मुझे लगता है, महोदय, यह कर्म के प्रभाव से विनाश से बच गया।'

'ठीक इसी प्रकार, हे महाराज, कर्म के प्रभाव से ही नरक में रहने वाले प्राणी, यद्यपि वे हजारों वर्षों तक जलते रहते हैं, नष्ट नहीं होते।'

मुझे एक और उदाहरण दीजिए।

'अब हे राजा, आप क्या सोचते हैं? क्या कोमल स्त्रियाँ—योनाकों की पत्नियाँ, कुलीनों की पत्नियाँ, ब्राह्मणों की स्त्रियाँ और गृहस्थ—कठोर रोटी और मांस नहीं खातीं?'

'हां, वे बहुत सख्त चीजें खाते हैं।'

और जब वे कठोर चीजें पेट में, उदर के अंदरूनी भाग में पहुँच जाती हैं, तो क्या वे नष्ट नहीं हो जातीं?

'हां, वे।'

लेकिन क्या उनके गर्भ में पल रहे बच्चे नष्ट हो जाते हैं?

'हरगिज नहीं।'

'और क्यों नहीं?'

'मेरा मानना है, महोदय, वे कर्म के प्रभाव से विनाश से बच जाते हैं?'

'हे महान राजा, ठीक इसी प्रकार, यह प्रभाव के माध्यम से है।'

हे राजा, इस कर्म के फल से पीड़ित प्राणी हजारों वर्षों तक नरक की आग में जलते रहते हैं, फिर भी उनका नाश नहीं होता। यदि उनका वहाँ पुनर्जन्म होता है, तो वे वहीं बड़े होते हैं और वहीं उनकी मृत्यु होती है। हे महाराज, इस विषय में भगवान बुद्ध ने कहा है: "जब तक उस बुरे कर्म का फल नहीं निकल जाता, तब तक उसकी मृत्यु नहीं होती।"

'बहुत बढ़िया, नागसेना!'

5. राजा ने कहा: 'आदरणीय नागसेन, आपके लोग कहते हैं कि संसार जल पर, जल वायु पर और वायु आकाश पर टिकी है। यह बात भी मुझे विश्वास नहीं होती।'

तब बुजुर्ग व्यक्ति एक मानक बर्तन में पानी लेकर आए और राजा मिलिंदा को यह कहकर आश्वस्त किया: 'जिस प्रकार यह पानी वायुमंडल द्वारा समर्थित है, उसी प्रकार वह पानी हवा द्वारा समर्थित है।'

'बहुत बढ़िया, नागसेना!'

6. राजा ने कहा: 'क्या निश्चिंतता निर्वाण है?'

'जी हां, महाराज।'

'नागसेना, यह कैसा है?'

'हे राजा, सभी मूर्ख व्यक्ति आनंद लेते हैं'

मनुष्य इंद्रियों और इंद्रिय-विषयों में आनंद पाते हैं, उनसे जुड़े रहते हैं। इसी कारण वे उस (मानवीय भावनाओं के) सैलाब में बह जाते हैं; वे जन्म, वृद्धावस्था और मृत्यु से, दु:ख, विलाप, पीड़ा, शोक और निराशा से मुक्त नहीं होते; वे दुख से मुक्त नहीं होते, मैं कहता हूँ। परन्तु हे राजा, ज्ञानी, श्रेष्ठ जनों का शिष्य, न तो इन चीजों में आनंद पाता है, न इनमें प्रसन्न होता है, और न ही इनसे जुड़ा रहता है। और क्योंकि वह ऐसा नहीं करता, उसमें तृष्णा समाप्त हो जाती है, और तृष्णा के समाप्त होने से आसक्ति समाप्त हो जाती है, और आसक्ति के समाप्त होने से जन्म समाप्त हो जाता है, और इसके समाप्त होने से जन्म, वृद्धावस्था और मृत्यु, दु:ख, विलाप, पीड़ा, दु:ख और निराशा का अस्तित्व समाप्त हो जाता है। इस प्रकार यह समाप्ति सभी दु:खों के समूह का अंत कर देती है। इस प्रकार यही समाप्ति निर्वाण है।

'बहुत बढ़िया, नागसेना!'

7. राजा ने कहा: 'हे आदरणीय नागसेन, क्या सभी मनुष्यों को निर्वाण प्राप्त होता है?'

'हे राजा, सभी नहीं। परन्तु जो धर्मपरायण मार्ग पर चलता है, जो उन परिस्थितियों को स्वीकार करता है जिन्हें स्वीकार करना चाहिए, उन परिस्थितियों को स्पष्ट रूप से समझता है जिन्हें स्पष्ट रूप से समझना चाहिए, उन परिस्थितियों का त्याग करता है जिनका त्याग करना चाहिए, उन परिस्थितियों में अभ्यास करता है जिनमें अभ्यास करना चाहिए, उन परिस्थितियों को प्राप्त करता है जिन्हें प्राप्त करना चाहिए—वही निर्वाण प्राप्त करता है।'

'बहुत बढ़िया, नागसेना!'

8. राजा ने कहा: 'हे आदरणीय नागसेन, क्या निर्वाण प्राप्त न करने वाला व्यक्ति यह जानता है कि निर्वाण कितनी सुखद अवस्था है?'

'हां, उसे पता है।'

लेकिन निर्वाण प्राप्त किए बिना वह यह कैसे जान सकता है?

'अब हे राजा, आप क्या सोचते हैं? क्या वे लोग जिनके हाथ-पैर नहीं काटे गए हैं, जानते हैं कि उन्हें काट देना कितना दुखद होता है?'

'जी हां, महोदय, उन्हें यह बात पता है।'

'लेकिन उन्हें यह कैसे पता चला?'

'खैर, जिनके हाथ-पैर काट दिए गए हैं, उनके विलाप की आवाज सुनकर वे यह जान जाते हैं।'

'ठीक इसी प्रकार, हे महाराज, निर्वाण प्राप्त कर चुके लोगों के आनंदमय शब्दों को सुनकर ही वे लोग जो निर्वाण प्राप्त नहीं कर पाए हैं, जान पाते हैं कि यह कितनी सुखद अवस्था है।'

'बहुत बढ़िया, नागसेना!'

यहां चौथा अध्याय समाप्त होता है।
तिपिटक >> सुत्त पिटक >> खुद्दक निकाय >> मिलिंदपन्हा >> पुस्तक III: कठिनाइयों का निवारण - विमटिकखेदान पन्हा अध्याय 5

अनुवादक: टी.डब्ल्यू. राइस डेविड्स

पिछला <<<<-----||-6-||----->>>> अगला

1. राजा ने कहा: 'क्या तुमने, नागसेन, बुद्ध को देखा है?'

'नहीं, महाराज।'

'तो क्या आपके शिक्षकों ने बुद्ध को देखा है?'

'नहीं, महाराज।'

'तो फिर, आदरणीय नागसेना, बुद्ध का कोई अस्तित्व नहीं है!'

लेकिन, हे महाराज, क्या आपने हिमालय पर्वतमाला में ऊहा नदी देखी है?

'नहीं, महोदय।'

'या क्या तुम्हारे पिता ने इसे देखा है?'

'नहीं, महोदय।'

'तो फिर, महाराज, क्या ऐसी कोई नदी नहीं है?'

'यह वहां है। हालांकि न तो मैंने और न ही मेरे पिता ने इसे देखा है, फिर भी यह वहां मौजूद है।'

'जी हाँ, हे महाराज, यद्यपि न तो मैंने और न ही मेरे गुरुओं ने भगवान बुद्ध को देखा है, फिर भी ऐसा एक व्यक्ति अवश्य था।'

'बहुत बढ़िया, नागसेना!'

2. राजा ने कहा: 'क्या बुद्ध, नागसेन, सर्वोत्कृष्ट हैं?'

'हां, उनकी कोई तुलना नहीं है।'

लेकिन आप किसी ऐसे व्यक्ति के बारे में कैसे जान सकते हैं जिसे आपने कभी देखा ही नहीं है कि वह सर्वोत्कृष्ट है?

'अब हे राजा, आप क्या सोचते हैं? जिन्होंने कभी सागर नहीं देखा, क्या वे इसके बारे में जान पाएंगे?'

यह: "विशाल, असीम, अथाह है विशाल सागर। इसमें पाँच महान नदियाँ बहती हैं—गंगा, यमुना, अकीरावती, सरभू और माही—और फिर भी इसमें कहीं भी अधिक खाली या अधिक भरा होने का आभास नहीं होता!"

'हां, उन्हें यह पता होगा।'

'हे महाराज, जब मैं अपने उन महान शिष्यों के बारे में सोचता हूँ जो इस दुनिया से चले गए हैं, तभी मुझे पता चलता है कि बुद्ध अतुलनीय हैं।'

'बहुत बढ़िया, नागसेना!'

3. राजा ने कहा: 'हे नागसेन, क्या दूसरों के लिए यह जानना संभव है कि बुद्ध कितने अतुलनीय हैं?'

'हां, उन्हें शायद पता हो।'

'लेकिन वे ऐसा कैसे कर सकते हैं?'

'बहुत समय पहले, हे राजा, तिस्सा द एल्डर नाम का एक लेखन विशेषज्ञ था, और उसके निधन को कई वर्ष बीत चुके हैं। लोग उसके बारे में कैसे जान सकते हैं?'

'उनके लेखन से, महोदय।'

'हे महाराज, ठीक इसी प्रकार, जो कोई भी सत्य को देख लेता है, वह देख लेता है कि भगवान बुद्ध कौन थे, क्योंकि सत्य का उपदेश भगवान बुद्ध ने ही दिया था।'

'बहुत बढ़िया, नागसेना!'

4. राजा ने कहा: 'क्या तुमने, नागसेन, सत्य को देखा है?'

'हे राजा, क्या हमें शिष्यों के रूप में अपना जीवन बुद्ध की दृष्टि और उनके आदेश के अधीन रहकर व्यतीत नहीं करना चाहिए?'

'बहुत बढ़िया, नागसेना!'

5. राजा ने कहा: 'हे नागसेन, जहाँ पुनर्जन्म नहीं होता, वहाँ क्या पुनर्जन्म संभव है?'

'हां, हो सकता है।'

'लेकिन ऐसा कैसे हो सकता है? मुझे एक उदाहरण दीजिए।'

'हे राजा, मान लीजिए कि कोई व्यक्ति एक दीपक से दूसरा दीपक जलाता है, तो क्या यह कहा जा सकता है कि एक दीपक दूसरे से निकलता है या दूसरे में जाता है?'

'हरगिज नहीं।'

'हे महाराज, पुनर्जन्म ठीक इसी प्रकार होता है, जिसमें शरीर का स्थानांतरण नहीं होता।'

मुझे एक और उदाहरण दीजिए।

'हे महाराज, क्या आपको याद है कि आपने बचपन में अपने शिक्षक से कोई श्लोक सीखा था?'

'हां, मुझे याद है।'

'तो फिर, क्या वह श्लोक आपके शिक्षक से आप तक पहुंचा?'

'हरगिज नहीं।'

'हे महाराज, पुनर्जन्म ठीक इसी प्रकार होता है, जिसमें शरीर का स्थानांतरण नहीं होता।'

'बहुत बढ़िया, नागसेना!'

6. राजा ने कहा: 'हे नागसेन, क्या आत्मा जैसी कोई वस्तु होती है?'

'हे राजा, सर्वोच्च अर्थ में ऐसी कोई चीज नहीं है।'

'बहुत बढ़िया, नागसेना!'

7. राजा ने कहा: 'हे नागसेन, क्या कोई ऐसा प्राणी है जो इस शरीर से दूसरे शरीर में जन्म लेता है?'

'नहीं वहां नहीं है।'

लेकिन अगर ऐसा है, तो क्या यह अपने बुरे कर्मों से मुक्त नहीं हो जाएगा?

'हां, अगर इसका पुनर्जन्म न हुआ हो; लेकिन अगर हुआ हो, तो नहीं।'

मुझे एक उदाहरण दीजिए।

'मान लीजिए, हे राजा, यदि कोई व्यक्ति किसी दूसरे व्यक्ति के आम चुरा ले, तो क्या चोर दंड का पात्र होगा?'

'हाँ।'

लेकिन उसने दूसरे द्वारा जमीन में गाड़े गए आम नहीं चुराए होंगे। उसे सजा क्यों मिलनी चाहिए?

'क्योंकि जो चीजें उसने चुराईं, वे उन चीजों का परिणाम थीं जिन्हें जानबूझकर पैदा किया गया था।'

'हे महाराज, इसी प्रकार यह नाम-रूप शुद्ध या अशुद्ध कर्म करता है, और उस कर्म के फलस्वरूप एक अन्य नाम-रूप का पुनर्जन्म होता है। तो क्या इसलिए वह अपने बुरे कर्मों से मुक्त नहीं हो जाता?'

'बहुत बढ़िया, नागसेना!'

8. राजा ने कहा: 'हे नागसेन, जब एक ही नाम और रूप से कर्म किए जाते हैं, तो उन कर्मों का क्या होता है?'

'हे राजा, कर्म उसका पीछा ऐसे करेंगे जैसे कोई छाया जो कभी उसका पीछा नहीं छोड़ती।'

क्या कोई उन कार्यों की ओर इशारा करते हुए कह सकता है: "ये कार्य यहाँ हैं, या वहाँ हैं"?

'नहीं।'

मुझे एक उदाहरण दीजिए।

'अब हे राजा, आप क्या सोचते हैं? क्या कोई ऐसे पेड़ के फलों की ओर इशारा कर सकता है जिन्हें अभी तक उसने पैदा नहीं किया है, यह कहते हुए: "वे यहाँ हैं, या वहाँ हैं"?'

'बिल्कुल नहीं, महोदय।'

'हे महाराज, जब तक जीवन की निरंतरता नहीं टूटती, तब तक किए गए कर्मों की ओर इशारा करना असंभव है।'

'बहुत बढ़िया, नागसेना!'

9. राजा ने कहा: 'क्या नागसेन, जो पुनर्जन्म लेने वाला है, यह जानता है कि उसका जन्म होगा?'

'हां, वह यह जानता है, हे राजा।'

मुझे एक उदाहरण दीजिए।

'हे राजा, मान लीजिए कि एक किसान, एक गृहस्थ, जमीन में बीज बोता है, और अच्छी बारिश होती है, तो क्या वह जान पाएगा कि फसल पैदा होगी?'

'हां, उसे यह पता होगा।'

'ठीक उसी प्रकार, हे महाराज, जो पुनर्जन्म लेने वाला है, वह जानता है कि उसका जन्म होगा।'

'बहुत बढ़िया, नागसेना!'

10. राजा ने कहा: 'क्या नागसेन नाम का कोई बुद्ध भी है?'

'हाँ।'

'तो क्या नागसेना को यहाँ या वहाँ होने के रूप में इंगित किया जा सकता है?'

'हे राजा, भगवान का उस प्रकार निधन हो गया है जिसमें कुछ भी शेष नहीं रहता जो किसी अन्य के निर्माण में सहायक हो सके।'

व्यक्तिगत। भगवान को यहाँ या वहाँ इंगित करना संभव नहीं है।'

मुझे एक उदाहरण दीजिए।

'अब आप क्या सोचते हैं, हे राजा? जब आग का एक विशाल पिंड धधक रहा हो, तो क्या यह संभव है कि किसी एक बुझी हुई लौ को इंगित किया जा सके, कि वह यहाँ है या वहाँ?'

'नहीं, महोदय। वह लौ बुझ गई है, वह गायब हो गई है।'

'हे महाराज, ठीक इसी प्रकार भगवान बुद्ध का देहांत हुआ है, जिसमें किसी अन्य व्यक्ति के निर्माण के लिए कोई आधार शेष नहीं रहता। भगवान बुद्ध का अंत हो चुका है, और यह बताना असंभव है कि वे यहाँ हैं या वहाँ। परन्तु हे महाराज, उनके उपदेशों में उन्हें देखा जा सकता है। क्योंकि उपदेश तो भगवान बुद्ध ने ही दिए थे।'

'बहुत बढ़िया, नागसेना!'

यहां पांचवां अध्याय समाप्त होता है।
तिपिटक >> सुत्त पिटक >> खुद्दक निकाय >> मिलिंदपन्हा >> पुस्तक III: कठिनाइयों का निवारण - विमातिखदाना पन्हा अध्याय 6

अनुवादक: टी.डब्ल्यू. राइस डेविड्स

पिछला <<<<-----||-7-||----->>>> अगला

1. राजा ने कहा: 'हे नागसेन, क्या यह शरीर तुम संन्यासियों को प्रिय है?'

'नहीं, वे शरीर से प्रेम नहीं करते।'

'तो फिर आप इसका पोषण क्यों करते हैं और इस पर इतना ध्यान क्यों देते हैं?'

'हे राजा, आप जितनी बार और जितने स्थान पर युद्ध के लिए गए हैं, क्या आप कभी तीर से घायल नहीं हुए?'

'हां, मेरे साथ ऐसा हो चुका है।'

'ऐसे मामलों में, हे राजा, क्या घाव पर मरहम नहीं लगाया जाता, तेल नहीं मला जाता और पट्टी नहीं बांधी जाती?'

'हां, इसके साथ ऐसा किया जाता है।'

'तो फिर क्या? क्या वह घाव तुम्हें इतना प्रिय है कि तुम उसके साथ इतनी कोमलता से पेश आते हो और उस पर इतना ध्यान देते हो?'

'नहीं, इन सब के बावजूद यह मुझे प्रिय नहीं है, क्योंकि यह केवल इसलिए किया जाता है ताकि शरीर फिर से बढ़ सके।'

'हे महाराज, संन्यासियों और शरीर के साथ भी ऐसा ही है। वे शरीर से चिपके बिना, जीवन के धार्मिक मार्ग के लिए शरीर धारण करते हैं। हे महाराज ने शरीर को घाव के समान बताया है। इसलिए संन्यासी शरीर को केवल एक घाव की तरह धारण करते हैं, उससे चिपके बिना। क्योंकि महाराज ने ऐसा कहा है:

"चिपचिपी त्वचा से ढका हुआ, एक अशुद्ध और घिनौनी वस्तु, नौ छिद्रों वाला, यह एक घाव की तरह रिसता है।"

'बहुत अच्छा जवाब दिया, नागासेना!'

2. राजा ने कहा: 'क्या सर्वज्ञ बुद्ध नागसेन ने सब कुछ पहले से ही देख लिया था?'

'जी हां। भगवान बुद्ध न केवल सर्वज्ञ थे, बल्कि उन्होंने सब कुछ पहले ही देख लिया था।'

'तो फिर ऐसा क्यों था कि वह समय-समय पर और आवश्यकता पड़ने पर ही संघ के सदस्यों के लिए नियम निर्धारित करने की आदत रखता था?'

'हे राजा, क्या कोई ऐसा चिकित्सक है जो पृथ्वी पर पाए जाने वाले सभी औषधीय पदार्थों को जानता हो?'

'हां, ऐसा कोई व्यक्ति हो सकता है।'

'अच्छा, हे राजा, क्या वह रोगी को बीमारी शुरू होने के समय या उससे पहले ही काढ़ा पीने के लिए देता है?'

'जब बीमारी उत्पन्न हो गई हो।'

'इसी प्रकार, हे महान राजा, भगवान बुद्ध, यद्यपि वे सर्वज्ञ थे और सब कुछ पहले से जानते थे, उन्होंने किसी भी नियम को अनुचित समय पर नहीं बनाया, बल्कि आवश्यकता पड़ने पर ही उन्होंने एक नियम स्थापित किया जिसका उनके शिष्यों को जीवन भर उल्लंघन नहीं करना था।'

'बहुत अच्छा जवाब दिया, नागासेना!'

3. राजा ने कहा: 'क्या यह सच है, नागसेन, कि बुद्ध महान पुरुष के बत्तीस शारीरिक लक्षणों से संपन्न थे, और अस्सी सहायक गुणों से सुशोभित थे; कि उनका रंग स्वर्णिम था, त्वचा स्वर्णमय थी, और उनके चारों ओर एक फ़ैदम की लंबाई का तेजस्वी प्रभामंडल फैला हुआ था?'

'हे राजा, भगवान ऐसे ही थे।'

'लेकिन क्या उनके माता-पिता भी ऐसे ही थे?'

'नहीं, वे नहीं थे।'

'उस स्थिति में आपको कहना होगा कि वह जन्म से ही ऐसा था। लेकिन निश्चित रूप से एक बेटा या तो अपनी माँ जैसा होता है, या अपने माता-पिता जैसा।

या तो वह अपनी माँ की तरफ से है, या वह अपने पिता की तरह है, या पिता की तरफ से है!'

बुजुर्ग ने उत्तर दिया: 'हे राजा, क्या सौ पंखुड़ियों वाला कमल का फूल जैसी कोई चीज होती है?'

'हाँ वहाँ है।'

'यह कहाँ उगता है?'

'यह कीचड़ में उत्पन्न होता है, और पानी में यह पूर्णता प्राप्त करता है।'

लेकिन क्या कमल अपने उद्गम स्थल की कीचड़ से रंग, गंध या स्वाद में मिलता-जुलता है?

'हरगिज नहीं।'

'तो क्या यह पानी जैसा दिखता है?'

'और वह भी नहीं।'

'हे महाराज, ठीक इसी प्रकार, भगवान बुद्ध के शरीर पर वे सभी शारीरिक चिह्न और लक्षण थे जिनका आपने उल्लेख किया है, यद्यपि उनके माता-पिता में वे चिह्न नहीं थे।'

'बहुत अच्छा जवाब दिया, नागासेना!'

4. राजा ने कहा: 'क्या बुद्ध, नागसेन, आचरण में शुद्ध थे (क्या वे ब्रह्मकारिन थे)?'

'जी हां, भगवान बुद्ध पवित्र थे।'

'तो, नागसेन, इससे यह निष्कर्ष निकलता है कि वह ब्रह्मा का अनुयायी था।'

'क्या आपके पास राजसी हाथी है, हे राजा?'

'निश्चित रूप से।'

'अच्छा, क्या वह हाथी कभी चिंघाड़ता है (शाब्दिक रूप से "बगुले की चीख")?'

'ओह हां।'

लेकिन क्या इस वजह से वह बगुले का अनुयायी है?

'बिल्कुल नहीं।'

'अब मुझे बताइए, हे महाराज, क्या ब्रह्मा के पास बुद्धि है या नहीं?'

'वह एक बुद्धिमान प्राणी है।'

'तो (आपके तर्क के अनुसार) वह निश्चित रूप से बुद्ध का अनुयायी है।'

'बहुत अच्छा जवाब दिया, नागासेना!'

5. राजा ने कहा: 'क्या दीक्षा समारोह एक अच्छी बात है?'

'हां, यह अच्छी बात है और खूबसूरत भी।'

लेकिन क्या बुद्ध ने इसे प्राप्त किया था या नहीं?

'हे महाराज, जब भगवान बुद्ध ने ज्ञान के वृक्ष के चरणों में सर्वज्ञता प्राप्त की, तो वह उनके लिए एक दीक्षा थी। उन्हें किसी और के हाथों दीक्षा प्रदान नहीं की गई थी—जिस प्रकार भगवान बुद्ध ने अपने शिष्यों के लिए नियम बनाए थे, जिनका उन्हें जीवन भर उल्लंघन नहीं करना था!'

'बिल्कुल सही, नागसेना!'

6. राजा ने कहा: 'हे नागसेन, इन दोनों में से किसके आँसू—एक वह जो अपनी माँ की मृत्यु पर रोता है, और दूसरा वह जो सत्य (धम्म) के प्रति प्रेम से रोता है—के लिए उपचार हैं?'

'हे राजा, एक के आँसू तीन प्रकार की वासनाओं से प्रज्वलित और गर्म हैं। दूसरे के आँसू निर्मल और शीतल हैं। शीतलता और शांति में ही उपचार है, परन्तु वासना और उत्तेजना में कोई उपचार नहीं हो सकता।'

'बहुत बढ़िया, नागसेना!'

7. राजा ने कहा: 'हे नागसेन, उस व्यक्ति में क्या अंतर है जो वासना से परिपूर्ण है और जो वासना से रहित है?'

'हे राजा, एक तो लालसा से ग्रस्त है, दूसरा नहीं।'

'लेकिन इसका क्या मतलब है?'

'हे राजा, एक को अभाव है, दूसरे को नहीं।'

'मैं इसे इस तरह देखता हूँ, महोदय। चाहे वह कामुक हो या न हो—दोनों ही समान रूप से—जो अच्छा खाना चाहता है, चाहे वह कठोर हो या नरम। और उनमें से कोई भी कुछ भी गलत नहीं चाहता।'

'हे राजा, कामुक मनुष्य भोजन करते समय स्वाद और स्वाद से उत्पन्न होने वाली कामुकता दोनों का आनंद लेता है, परन्तु कामुकता से मुक्त मनुष्य केवल स्वाद का अनुभव करता है, उससे उत्पन्न होने वाली कामुकता का नहीं।'

'बहुत अच्छा जवाब दिया, नागासेना!'

8. राजा ने कहा: 'हे आदरणीय नागसेन, ज्ञान कहाँ निवास करता है?'

'कहीं नहीं, हे राजा।'

'तो फिर, महोदय, ज्ञान जैसी कोई चीज नहीं होती।'

'हे राजा, हवा कहाँ निवास करती है?'

'कहीं नहीं, महोदय।'

'तो हवा जैसी कोई चीज नहीं होती।'

'बहुत अच्छा जवाब दिया, नागासेना!'

9. राजा ने कहा: 'हे नागसेन, जब तुम पुनर्जन्म की बात करते हो, तो उसका क्या अर्थ है?'

'हे राजा, जो प्राणी यहाँ जन्म लेता है, यहीं मरता है। यहाँ मरने के बाद वह कहीं और जन्म लेता है। वहाँ जन्म लेकर वहीं मरता है। वहाँ मरने के बाद वह कहीं और जन्म लेता है। इसी को पुनर्जन्म कहते हैं।'

मुझे एक उदाहरण दीजिए।

'यह उस व्यक्ति के समान है जो आम खाने के बाद उसका बीज जमीन में बो देता है। उससे एक विशाल वृक्ष उत्पन्न होगा और फल देगा। और इस प्रकार आम के वृक्षों की श्रृंखला कभी समाप्त नहीं होगी।'

'बहुत बढ़िया, नागसेना!'

10. राजा ने कहा: 'हे नागसेन, बीते हुए समय और बहुत पहले किए गए कार्यों को कोई कैसे याद रख सकता है?'

'स्मृति के आधार पर।'

लेकिन क्या हम स्मृति से नहीं, बल्कि मन से याद करते हैं?

'हे राजा, क्या आपको कोई ऐसा काम याद है जो आपने किया हो और फिर भूल गए हों?'

'हाँ।'

'तो फिर क्या? क्या तब तुम बिना दिमाग के थे?'

'नहीं। लेकिन मेरी याददाश्त कमजोर हो गई थी।'

'तो फिर आप ऐसा क्यों कहते हैं कि हम स्मृति से नहीं बल्कि मन से याद करते हैं?'

'बहुत बढ़िया, नागसेना'

11. राजा ने कहा: 'नागसेन, क्या स्मृति हमेशा व्यक्तिपरक रूप से उत्पन्न होती है, या यह बाहरी सुझाव से प्रेरित होती है?'

'दोनों ही।'

लेकिन क्या इसका यह अर्थ नहीं है कि सभी स्मृति मूल रूप से व्यक्तिपरक होती है, और कभी कृत्रिम नहीं होती?

'हे राजा, यदि कृत्रिम (प्रदान की गई) स्मृति न होती, तो कारीगरों को अभ्यास, कला या शिक्षा की आवश्यकता न होती और शिक्षक बेकार होते। परन्तु इसके विपरीत स्थिति है।'

'बहुत बढ़िया, नागसेना!'

यहां छठा अध्याय समाप्त होता है।

तिपिटक >> सुत्त पिटक >> खुद्दक निकाय >> मिलिंदपन्हा >> पुस्तक III: कठिनाइयों का निवारण - विमटिकखेदान पन्हा अध्याय 7

अनुवादक: टी.डब्ल्यू. राइस डेविड्स

पिछला <<<<-----||-8-||----->>>> अगला

1. राजा ने कहा: 'हे नागसेन, स्मृति कितने तरीकों से उत्पन्न होती है?'

'सोलह तरीकों से, हे राजा।' कहने का तात्पर्य यह है कि: व्यक्तिगत अनुभव से, जैसे कि पूज्य आनंद, या समर्पित स्त्री खुग्गुत्तरा, या अन्य जिन्होंने यह शक्ति प्राप्त की थी, अपने पिछले जन्मों को याद करते थे—या बाहरी सहायता से, जैसे कि जब दूसरे लोग स्वभाव से भूलने वाले व्यक्ति को याद दिलाते रहते हैं—या किसी अवसर की महानता से उत्पन्न प्रभाव से, जैसे कि राजा अपने राज्याभिषेक दिवस को याद करते हैं, या जैसे कि हम अपने धर्म परिवर्तन के दिन को याद करते हैं—आनंद से उत्पन्न प्रभाव से, जैसे कि जब कोई उस चीज़ को याद करता है जिसने उसे आनंद दिया—या दुःख से उत्पन्न प्रभाव से, जैसे कि जब कोई उस चीज़ को याद करता है जिसने उसे पीड़ा दी—या रूप-रूप की समानता से, जैसे कि अपने जैसे किसी को देखकर हम अपने माता-पिता, बहन या भाई को याद करते हैं, या ऊंट, बैल या गधे को देखकर हम उनके जैसे अन्य लोगों को याद करते हैं—या रूप-रूप के अंतर से, जैसे कि जब हम याद करते हैं कि अमुक रंग, ध्वनि, गंध, स्वाद या स्पर्श अमुक वस्तु से संबंधित हैं—या वाणी के ज्ञान से, जैसे कि स्वभाव से भूलने वाले व्यक्ति को भूलने वाले व्यक्ति को दूसरों द्वारा याद दिलाया जाता है और फिर वह स्वयं याद कर लेता है—या किसी संकेत द्वारा, जैसे कि जब हम किसी बैल को ब्रांड चिह्न या किसी अन्य चिह्न से पहचानते हैं—या याद करने के प्रयास से, जैसे कि जब कोई व्यक्ति

भूलने की प्रवृत्ति वाले व्यक्ति को बार-बार याद दिलाने के लिए प्रेरित किया जाता है: "इसके बारे में सोचने की कोशिश करो"—या गणना द्वारा, जैसे कि लेखन के प्रशिक्षण से यह ज्ञात हो जाता है कि फलां अक्षर के बाद फलां अक्षर आना चाहिए—या अंकगणित द्वारा, जैसे कि लेखाकार संख्याओं के ज्ञान से बड़ी-बड़ी गणनाएँ करते हैं—या कंठस्थ करने द्वारा, जैसे कि शास्त्रों का पाठ करने वाले अपनी कंठस्थता के कौशल से इतना कुछ याद कर लेते हैं—या ध्यान द्वारा, जैसे कि भिक्षु अपने बीते दिनों की अस्थायी अवस्थाओं को याद करते हैं—पुस्तक के संदर्भ द्वारा, जैसे कि राजा किसी पूर्व नियम को याद करते हुए कहते हैं: "पुस्तक यहाँ लाओ," और स्वयं को उससे याद दिलाते हैं—या किसी गिरवी द्वारा, जैसे कि जमा की गई वस्तुओं को देखकर व्यक्ति को (वे परिस्थितियाँ याद आ जाती हैं जिनके तहत उन्हें गिरवी रखा गया था)—या संगति द्वारा, जैसे कि किसी वस्तु को देखने के कारण, किसी ध्वनि को सुनने के कारण, किसी गंध को सूंघने के कारण, या किसी स्पर्श के कारण याद रखना। क्योंकि किसी ने इसे महसूस किया है, या कोई अवधारणा क्योंकि किसी ने इसे समझा है।'

'बहुत बढ़िया, नागसेना!'

2. राजा ने कहा: 'हे नागसेन, तेरे लोग कहते हैं कि यदि कोई मनुष्य सौ वर्ष भी जीवित रहे तो भी

वर्षों तक पापमय जीवन जीने के बावजूद, यदि मृत्यु के समय किसी के मन में बुद्ध के विचार आ जाएं, तो उसका पुनर्जन्म देवताओं के बीच होगा। यह मुझे विश्वास नहीं होता। और वे यह भी कहते हैं: "एक बार जीवन का अंत होने से मनुष्य का पुनर्जन्म नरक में हो सकता है।" यह भी मुझे विश्वास नहीं होता।

लेकिन हे राजा, मुझे बताइए। क्या नाव के बिना एक छोटा सा पत्थर भी पानी पर तैर सकता है?

'हरगिज नहीं।'

'बहुत अच्छा; लेकिन अगर सौ बैलगाड़ियों में भरे पत्थरों को नाव में लाद दिया जाए तो क्या वे पानी पर नहीं तैरने लगेंगे?'

'हां, वे आसानी से तैर सकते हैं।'

'अच्छे कर्म नाव की तरह होते हैं।'

'बहुत बढ़िया, नागसेना!'

3. राजा ने कहा: 'क्या तुम (सन्यासी), नागसेन, बीते हुए दुःखों को दूर करने का प्रयास करते हो?'

'नहीं।'

'तो फिर क्या? क्या आप भविष्य के दुखों को दूर करने का प्रयास कर रहे हैं?'

'नहीं।'

'तो क्या यह वर्तमान दुख है?'

'वो भी नहीं।'

'तो यदि यह न तो अतीत का, न भविष्य का, न वर्तमान का दुख है जिसे आप दूर करने का प्रयास कर रहे हैं, तो आप किस लिए प्रयास कर रहे हैं?'

'हे राजा, आप क्या मांग रहे हैं? कि यह दुख समाप्त हो जाए और कोई दूसरा दुख उत्पन्न न हो—यही हमारा लक्ष्य है।'

लेकिन, नागसेना, क्या भविष्य के दुःख जैसी कोई चीज भी होती है?

'नहीं। मैं यह बात मानता हूँ।'

'तो फिर तुम लोग वाकई बहुत चतुर हो जो उस चीज को हटाने की कोशिश कर रहे हो जो अस्तित्व में ही नहीं है!'

'हे राजा, क्या कभी ऐसा हुआ है कि प्रतिद्वंद्वी राजा आपके विरुद्ध शत्रु और विरोधी बनकर उठ खड़े हुए हों?'

'हां बेशक।'

'फिर, मेरा मानना है कि आप खाई खुदवाने, प्राचीरें बनवाने, निगरानी मीनारें खड़ी करवाने, गढ़ बनवाने और भोजन भंडार इकट्ठा करने के काम में जुट गए?'

'बिल्कुल नहीं। वह सब पहले से ही तैयार था।'

'या आपने युद्ध हाथियों के प्रबंधन, घुड़सवारी, युद्ध रथों के उपयोग, तीरंदाजी और तलवारबाजी में प्रशिक्षण प्राप्त किया था?'

'बिल्कुल नहीं। मैंने यह सब पहले ही सीख लिया था।'

'लेकिन क्यों?'

'भविष्य के खतरे को टालने के उद्देश्य से।'

'ऐसा कैसे? क्या भविष्य के खतरे जैसी कोई चीज (अभी) मौजूद है?'

'नहीं। मुझे यह मानना पड़ेगा।'

'तो फिर तुम राजा लोग बड़े ही चतुर हो कि तुम उस चीज से बचाव के बारे में चिंता कर रहे हो जो अस्तित्व में ही नहीं है!'

मुझे एक और उदाहरण दीजिए।

'हे राजा, मुझे बताइए। क्या प्यास लगने पर ही आप पीने के लिए कुएँ खुदवाते हैं, तालाब खुदवाते हैं या जलाशय बनवाते हैं?'

'बिल्कुल नहीं। वह सब पहले से ही तैयार किया जा चुका है।'

लेकिन इसका उद्देश्य क्या होगा?

'भविष्य में प्यास को रोकने के उद्देश्य से।'

'ऐसा कैसे? क्या भविष्य की प्यास जैसी कोई चीज होती है?'

'नहीं, महोदय।'

'तो हे राजा, आप तो वाकई बहुत बुद्धिमान लोग हैं, जो भविष्य में होने वाली उस प्यास को रोकने के लिए इतनी मेहनत करते हैं जो अभी अस्तित्व में ही नहीं है!'

मुझे एक और उदाहरण दीजिए।

[फिर बुजुर्ग ने पहले की तरह ही, भविष्य में भूख से बचने के लिए लोगों द्वारा अपनाए जाने वाले उपायों का जिक्र किया, और राजा ने पहेली के हल होने के तरीके पर अपनी खुशी व्यक्त की।]

4. राजा ने कहा: 'हे नागसेन, यहाँ से ब्रह्मलोक कितनी दूर है?'

'हे राजा, यह बहुत दूर है। यदि वहाँ से एक चट्टान, जो एक ऊपरी कक्ष के आकार की हो, गिरे, तो उसे पृथ्वी तक पहुँचने में चार महीने लगेंगे, भले ही वह प्रतिदिन और रात अड़तालीस हजार मील की दूरी तय करे।'

'अच्छा, नागसेना! क्या आपके लोग यह नहीं कहते कि इद्धि की शक्ति और मन पर नियंत्रण रखने वाला भिक्षु गम्बुद्वीप से उतनी ही शीघ्रता से विलीन होकर ब्रह्मलोक में प्रकट हो सकता है, जितनी शीघ्रता से कोई बलवान पुरुष अपनी मुड़ी हुई भुजा को फैला सकता है या फैलाकर वापस मोड़ सकता है? यह बात मुझे समझ नहीं आती। भला वह इतनी शीघ्रता से सैकड़ों मील की दूरी कैसे तय कर सकता है?'

बुजुर्ग ने उत्तर दिया: 'हे राजा, आपका जन्म किस जिले में हुआ था?'

'अलसांडा नाम का एक द्वीप है। मेरा जन्म वहीं हुआ था।'

'और अलासांडा यहाँ से कितनी दूर है?'

'लगभग दो सौ लीग।'

'क्या आपको निश्चित रूप से पता है कि आपने वहां कोई व्यवसाय किया था और अब आपको याद है?'

'ओह हां।'

'हे महान राजा, आप इतनी जल्दी लगभग दो सौ मील की दूरी तय कर चुके हैं।'

'बहुत बढ़िया, नागसेना!'

5. राजा ने कहा: 'यदि एक व्यक्ति, नागसेन, यहाँ मरकर ब्रह्मलोक में पुनर्जन्म ले, और दूसरा यहाँ मरकर कश्मीर में पुनर्जन्म ले, तो इन दोनों में से कौन पहले पहुँचेगा?'

'हे राजा, दोनों एक साथ।'

मुझे एक उदाहरण दीजिए।

'हे राजा, आपका जन्म किस नगर में हुआ था?'

'कलासी नाम का एक गांव है। मेरा जन्म वहीं हुआ था।'

'और कलासी यहाँ से कितनी दूर है?'

'लगभग दो सौ लीग।'

'कश्मीर यहां से कितनी दूर है?'

'बारह लीग।'

'अब, हे महान राजा, कलासी के बारे में सोचो।'

मैंने ऐसा कर दिया है।

और अब, कश्मीर के बारे में सोचें।

मैंने ऐसा कर दिया है।

'अच्छा, आपको सबसे जल्दी कौन सा विचार आया?'

'प्रत्येक का एक ही समय में।'

'हे महाराज, ठीक इसी प्रकार ब्रह्मलोक में पुनर्जन्म लेने में उतना ही समय लगेगा जितना कश्मीर में पुनर्जन्म लेने में। और हे महाराज, मुझे बताइए, मान लीजिए दो

पक्षी उड़ रहे थे, एक को एक ऊंचे पेड़ पर और दूसरे को एक छोटी झाड़ी पर उतरना था। यदि वे दोनों एक ही समय पर उतरें, तो किसकी छाया पहले जमीन पर पड़ेगी?

'दोनों परछाइयाँ एक साथ पड़ेंगी।'

'जी हां, महाराज, जैसा आपने कहा है वैसा ही होगा।'

'बहुत बढ़िया, नागसेना!'

6. राजा ने कहा: 'आदरणीय नागसेन, ज्ञान के कितने प्रकार होते हैं?'

'सात, हे राजा।'

और कितने प्रकार के ज्ञान से मनुष्य बुद्धिमान बनता है?

'एक के द्वारा: अर्थात् उस प्रकार की बुद्धिमत्ता द्वारा जिसे "सत्य की खोज" कहा जाता है।'

'तो फिर ऐसा क्यों कहा जाता है कि सात हैं?'

'हे राजा, मुझे बताइए। मान लीजिए कि एक तलवार म्यान में पड़ी है और हाथ में नहीं ली गई है, तो क्या वह आपकी इच्छानुसार किसी भी चीज को काट सकती है?'

'हरगिज नहीं।'

'हे महाराज, इसी प्रकार अन्य प्रकार के ज्ञान से सत्य की खोज किए बिना कुछ भी नहीं समझा जा सकता।'

'बहुत बढ़िया, नागसेना!'

7. राजा ने कहा: 'हे नागसेन, गुण अधिक है या दोष?'

'योग्यता।'

'लेकिन क्यों?'

हे राजा, जो बुराई करता है, उसे पश्चाताप होता है और वह अपने पाप को स्वीकार करता है। अतः उसका पाप नहीं बढ़ता। परन्तु जो अच्छा करता है, उसे पश्चाताप नहीं होता, और पश्चाताप न होने से प्रसन्नता होती है।

उसके भीतर आनंद का संचार होगा, और वह प्रसन्न होकर आनंदित होगा, और इस प्रकार आनंदित होकर उसका संपूर्ण शरीर शांत हो जाएगा, और इस प्रकार शांत होकर वह संतोष की आनंदमय अनुभूति का अनुभव करेगा, और उस आनंद में उसका हृदय शांत होगा, और जिसका हृदय इस प्रकार शांत होता है वह चीजों को उनके वास्तविक स्वरूप में जानता है। इसी कारण पुण्य बढ़ता है। उदाहरण के लिए, यदि कोई व्यक्ति अपने हाथ-पैर कट जाने पर भी भगवान को मुट्ठी भर कमल अर्पित कर दे, तो उसे इक्यावन कल्पों तक नरक में नहीं जाना पड़ेगा। इसीलिए मैंने कहा, हे राजा, कि पुण्य दोष से अधिक है।

'बहुत बढ़िया, नागसेना!'

8. राजा ने कहा: 'हे नागसेन, किसका दोष अधिक है—उसका जिसने जानबूझकर पाप किया हो, या उसका जिसने अनजाने में पाप किया हो?'

'हे राजा, जो अनजाने में पाप करता है, उसका दोष अधिक होता है।'

'ऐसे में, महोदय, हम अपने परिवार या अपने दरबार के किसी भी सदस्य को, जो अनजाने में कोई गलती करता है, दुगुनी सजा देंगे।'

'पर हे राजा, आपका क्या विचार है? यदि एक व्यक्ति जानबूझकर आग से सुलगते हुए धातु के ढेर को पकड़ ले, और दूसरा अनजाने में उसे पकड़ ले, तो कौन अधिक जलेगा?'

'वह व्यक्ति जिसे पता नहीं था कि वह क्या कर रहा है।'

'जो व्यक्ति गलत काम करता है, उसके साथ भी यही बात लागू होती है।'

'बहुत बढ़िया, नागसेना!'

9. राजा ने कहा: 'क्या कोई है, नागसेन?'

इस शरीर के साथ कौन उत्तरकुरु या ब्रह्मलोक या दुनिया के चार प्रमुख महाद्वीपों में से किसी अन्य महाद्वीप में जा सकता है?

'हां, ऐसे लोग होते हैं।'

'लेकिन वे ऐसा कैसे कर सकते हैं?'

'हे राजा, क्या आपको याद है कि आपने कभी जमीन पर एक या दो फुट की छलांग लगाई है?'

'जी हां, नागसेना, मैं बारह फीट कूद सकता हूं।'

'आख़िर कैसे?'

'मैं वहां उतरने के विचार पर अपना ध्यान केंद्रित करता हूं, और मेरे इस दृढ़ संकल्प के क्षण में मेरा शरीर मुझे हल्का प्रतीत होने लगता है।'

'हे राजा, ठीक इसी प्रकार, इद्धि की शक्ति से युक्त और अपने मन पर प्रभुत्व रखने वाला भिक्षु, जब अपने मन को उस अवसर के अनुरूप तैयार कर लेता है, तो अपने मन के बल पर आकाश में यात्रा कर सकता है।'

'बहुत बढ़िया, नागसेना!'

10. राजा ने कहा: 'तुम्हारे लोग कहते हैं कि सौ मील लंबी हड्डियाँ भी होती हैं। अब सौ मील लंबा कोई पेड़ ही नहीं है, तो फिर इतनी लंबी हड्डियाँ कैसे हो सकती हैं?'

लेकिन हे राजा, मुझे बताइए। क्या आपने समुद्र में पाँच सौ मील लंबी मछलियों के बारे में नहीं सुना है?

'हां। मैंने इसके बारे में सुना है।'

'अगर ऐसा है, तो क्या उनकी हड्डियाँ सौ मील लंबी नहीं हो सकतीं?'

'बहुत बढ़िया, नागसेना!'

11. राजा ने कहा: 'हे नागसेन, तुम्हारी प्रजा कहती है कि श्वास लेने और छोड़ने को रोकना संभव है।'

'हां, ऐसा किया जा सकता है।'

'आख़िर कैसे?'

'हे राजा, मुझे बताइए। क्या आपने कभी किसी आदमी को खर्राटे लेते हुए सुना है?'

'हाँ।'

'अच्छा, अगर वह अपना शरीर झुका ले तो क्या वह आवाज़ बंद नहीं हो जाएगी?'

'हाँ।'

'तो फिर, यदि वह ध्वनि शरीर, आचरण, मन और बुद्धि में अप्रशिक्षित व्यक्ति के शरीर के मात्र झुकने से ही रुक सकती है, तो इन सभी पहलुओं में प्रशिक्षित और परमानंदमय ध्यान की चौथी अवस्था तक पहुँच चुके व्यक्ति की श्वास को रोकना क्यों संभव नहीं होना चाहिए?'

'बहुत बढ़िया, नागसेना!'

12. राजा ने कहा: 'नागसेन, सागर शब्द का प्रयोग होता है। जल को सागर क्यों कहते हैं?'

बुजुर्ग ने उत्तर दिया: 'हे राजा, क्योंकि नमक और पानी की मात्रा बराबर है, और पानी और नमक की मात्रा बराबर है, इसीलिए इसे सागर कहा जाता है।'

'बहुत बढ़िया, नागसेना!'

13. राजा ने कहा: 'हे नागसेन, क्या सारा सागर एक ही स्वाद का है, नमक के स्वाद का?'

'क्योंकि इसमें पानी बहुत देर तक रखा रहा है, इसलिए इसका स्वाद एक जैसा हो गया है, नमक का स्वाद।'

'बहुत बढ़िया, नागसेना!'

14. राजा ने कहा: 'क्या नागसेन जैसी सबसे छोटी चीज को भी विभाजित किया जा सकता है?'

'हाँ, यह कर सकते हैं।'

'और महोदय, सबसे छोटी बात क्या है?'

'हे राजा, सत्य (धम्म) अत्यंत सूक्ष्म और सूक्ष्म है। परन्तु यह सभी गुणों (धम्म) के लिए सत्य नहीं है। सूक्ष्मता या इसके विपरीत, गुणों के विशेषण हैं। परन्तु जिसे विभाजित किया जा सकता है, उसे बुद्धि (पञ्ञ) भी विभाजित कर सकती है, और ऐसा कोई अन्य गुण नहीं है जो बुद्धि को विभाजित कर सके।'

'बहुत बढ़िया, नागसेना!'

15. राजा ने कहा: 'हे नागसेन, ये तीनों—अवधारणा, तर्क और आत्मा—क्या ये सब शाब्दिक और सार दोनों में भिन्न हैं, या सार में एक समान हैं, केवल शाब्दिक रूप से भिन्न हैं?'

'हे राजा, पहचान बोध की निशानी है, और विवेक तर्क की, और प्राणियों में आत्मा जैसी कोई चीज नहीं होती।'

लेकिन यदि आत्मा जैसी कोई चीज ही नहीं है, तो फिर वह क्या है जो आंखों से रूप देखता है, कानों से आवाजें सुनता है, नाक से गंध सूंघता है, जीभ से स्वाद चखता है, शरीर से स्पर्श महसूस करता है, या मन से गुणों को अनुभव करता है?

बड़े ने उत्तर दिया: 'यदि कोई आत्मा (शरीर से अलग) है जो यह सब करती है, तो यदि आँख का द्वार तोड़ दिया जाए (यदि आँख निकाल दी जाए), तो क्या वह अपना सिर, मानो, बड़े छिद्र से फैलाकर (अधिक विस्तार से) आकृतियों को पहले से कहीं अधिक स्पष्ट रूप से देख पाएगी? क्या कोई आवाज़ें बेहतर ढंग से सुन पाएगा यदि उसके शरीर को हटा दिया जाए, या सूंघने की शक्ति बेहतर ढंग से प्राप्त कर पाएगा यदि उसकी नाक काट दी जाए, या स्वाद बेहतर ढंग से प्राप्त कर पाएगा यदि उसकी जीभ निकाल दी जाए, या स्पर्श का अनुभव बेहतर ढंग से कर पाएगा यदि उसका शरीर नष्ट हो जाए?'

'बिल्कुल नहीं, महोदय।'

'तब शरीर के भीतर आत्मा का कोई अस्तित्व नहीं हो सकता।'

'बहुत बढ़िया, नागसेना!'

16. बड़े ने कहा: 'हे राजा, यह एक कठिन कार्य है, जो परमेश्वर ने किया है।'

'और वह क्या है?'

'उन सभी मानसिक स्थितियों का निर्धारण जो एक ही इंद्रिय अंग पर निर्भर करती हैं, जो हमें बताती हैं कि ऐसा संपर्क है, ऐसी संवेदना है, ऐसा विचार है, ऐसा इरादा है और ऐसा विचार है।'

मुझे एक उदाहरण दीजिए।

'मान लीजिए, हे राजा, एक आदमी समुद्र में उतरता है, और अपनी हथेली में थोड़ा पानी लेकर उसे अपनी जीभ से चखता है। क्या वह

क्या मैं यह पहचान सकता हूँ कि यह गंगा का जल है, यमुना का, अकीरावती का, सरभू का या माही का?

'असंभव, महोदय।'

'हे महाराज, इससे भी अधिक कठिन यह है कि किसी भी इंद्रिय अंग के प्रयोग के परिणामस्वरूप उत्पन्न होने वाली मानसिक स्थितियों में अंतर कर पाना!'

'बहुत बढ़िया, नागसेना!'

सातवां अध्याय यहीं समाप्त होता है। ______________________

17. बड़े ने कहा: 'हे राजा, क्या आप जानते हैं कि अब क्या समय हुआ है?'

'जी हाँ, महोदय, मुझे पता है। रात का पहला पहर बीत चुका है। मध्य पहर चल रहा है। मशालें जल रही हैं। चारों झंडे फहराने का आदेश दिया गया है, और खजाने से आपको उचित उपहार दिए जाएँ।'

योनाकों ने कहा: 'बहुत अच्छा, महान राजा। भिक्षु सबसे योग्य है।'

'जी हां, मेरे साथियों। भिक्षु सबसे योग्य होता है। यदि गुरु उसके समान और शिष्य मेरे समान होता, तो एक चतुर विद्वान को सत्य तक पहुँचने में अधिक समय नहीं लगता।'

तब राजा नागसेन द्वारा पूछे गए प्रश्नों के उत्तरों से प्रसन्न होकर उन्हें एक लाख रुपये मूल्य का कढ़ाईदार वस्त्र पहनाकर उनसे कहा: 'हे पूज्य नागसेन, मैं आदेश देता हूँ कि आपको आठ सौ दिनों तक प्रतिदिन भोजन उपलब्ध कराया जाए; और आपको यह दिया जाए...'

महल में जो कुछ भी लेना आपके लिए वैध है, आप उसे ले सकते हैं।' और जब बुजुर्ग ने यह कहते हुए इनकार कर दिया कि उनके पास गुजारा करने के लिए पर्याप्त है, तो राजा ने जवाब दिया: 'मुझे पता है, महाराज, आपके पास गुजारा करने के लिए पर्याप्त है। लेकिन आपको मेरी और अपनी दोनों की रक्षा करनी चाहिए - अपनी रक्षा इस संभावना से करें कि सार्वजनिक रूप से यह अफवाह फैल जाए कि आपने मुझे मना लिया लेकिन मुझसे कुछ नहीं लिया, और मेरी रक्षा इस संभावना से करें कि सार्वजनिक रूप से यह अफवाह फैल जाए कि हालांकि मैं मान गया था, मैंने बदले में कुछ नहीं दिया।'

'जैसा आप चाहें, महाराज,' यह उत्तर मिला।

तब राजा ने कहा, "जैसे सिंह, जो पशुओं का राजा है, जब उसे सोने के पिंजरे में भी बंद कर दिया जाता है, तो वह बाहर की ओर लालसा से देखता है; ठीक वैसे ही मैं भी, यद्यपि संसार में रहता हूँ, आप संन्यासियों के उच्चतर जीवन की ओर लालसा से देखता हूँ। परन्तु, महाराज, यदि मैं गृहस्थ जीवन त्याग दूँ और संसार का त्याग कर दूँ, तो मेरा जीवन अधिक समय तक नहीं चलेगा, क्योंकि मेरे शत्रु बहुत हैं।"

तब पूज्य नागसेना ने राजा मिलिंदा द्वारा पूछे गए प्रश्नों का उत्तर देकर अपने आसन से उठकर आश्रम की ओर प्रस्थान किया।

18. नागसेन के जाने के कुछ ही समय बाद, राजा मिलिंद ने मन ही मन विचार किया कि क्या उन्होंने अपने प्रश्न सही ढंग से पूछे थे और क्या उत्तर उचित थे। उन्होंने यह निष्कर्ष निकाला कि सही ढंग से पूछे गए प्रश्नों के सही उत्तर दिए गए थे। नागसेन ने भी जब आश्रम पहुँचकर इस विषय पर विचार किया, तो उन्होंने भी यही निष्कर्ष निकाला कि सही ढंग से पूछे गए प्रश्नों के सही उत्तर दिए गए थे।

नागसेन ने सुबह सवेरे वस्त्र धारण किए और अपने हाथ में कटोरा लेकर महल की ओर चल पड़ा।

और वह अपने लिए तैयार की गई सीट पर बैठ गया। मिलिंदा ने आदरणीय नागसेना को प्रणाम किया और आदरपूर्वक उनके पास बैठ गया और उनसे कहा: 'कृपा करके यह न सोचें, महोदय, कि मैं आपसे प्रश्न पूछने के विचार से प्रसन्न होकर पूरी रात जागता रहा। मैं मन ही मन सोच रहा था कि क्या मैंने सही प्रश्न पूछा था और क्या मुझे सही उत्तर मिला था। और अंत में मैंने यही निष्कर्ष निकाला कि हाँ, मैंने सही उत्तर दिया था।'

और बड़े ने अपनी ओर से कहा: 'हे महाराज, कृपया यह न समझें कि मैंने आपके सभी प्रश्नों का उत्तर देकर सारी रात आनंद मनाया। मैं भी हम दोनों के बीच हुई बातों पर विचार कर रहा था। और मैं इस निष्कर्ष पर पहुँचा कि आपने उचित प्रश्न पूछे थे और मैंने सही उत्तर दिए थे।'

इस प्रकार इन दोनों महान पुरुषों ने एक-दूसरे को उनके द्वारा कही गई अच्छी बातों के लिए बधाई दी।

मिलिंदा के प्रश्नों की समस्याओं का उत्तर यहीं समाप्त होता है।
पुस्तक VI: दुविधाओं का समाधान
टिपिटक >> सुत्त पिटक >> खुद्दाक निकाय >> मिलिंदपन्हा >> पुस्तक VI: दुविधाओं का समाधान - मेंडका पन्हा अध्याय 1

अनुवादक: टी.डब्ल्यू. राइस डेविड्स

पिछला <<<<-----||-9-||----->>>> अगला

1. शब्दों और वाक्पटुता के उस्ताद, चतुर और बुद्धिमान मिलिंद ने महान नागसेन की कुशलता की परीक्षा लेने का प्रयास किया। उन्हें छोड़े बिना, बार-बार उनसे प्रश्न और प्रतिवाद करते रहे, जब तक कि उनकी अपनी कुशलता मूर्खता सिद्ध नहीं हो गई। तब वे पवित्र ग्रंथों के विद्यार्थी बन गए। सारी रात, गुप्त रूप से, उन्होंने नौ प्रकार के शास्त्रों का चिंतन किया, और उनमें उन्हें कठिन और जटिल दुविधाएँ मिलीं। तब उन्होंने सोचा: 'विजयी बुद्ध के वचन बहुआयामी हैं, कुछ व्याख्यात्मक हैं, कुछ अवसर के अनुसार बोले गए हैं, कुछ सारगर्भित हैं। प्रत्येक बार के अर्थ की अज्ञानता के कारण, भविष्य में इस बात पर विवाद होगा कि धर्म के राजा ने इन विविध और सूक्ष्म कथनों में क्या कहा है। अब मुझे महान नागसेन का ध्यान आकर्षित करना चाहिए, और उनसे उस बात को, जो इतनी विचित्र और कठिन—यहाँ तक कि विरोधाभासी—लगाकर उन्हें हल करने के लिए प्रेरित करना चाहिए।' इसलिए भविष्य में जब मनुष्य संदेह करने लगें, तो उनके समाधानों का प्रकाश उन्हें भी सत्य के मार्ग पर मार्गदर्शन करेगा।

2. जब रात ढलकर दिन में बदल रही थी और सूरज निकल आया, तब राजा मिलिंद ने स्नान किया और हाथ जोड़कर माथे पर रखकर अतीत, वर्तमान और भविष्य के बुद्धों का स्मरण किया और पूर्णतया अष्टांग व्रत का पालन करते हुए मन ही मन कहा: 'अब से सात दिनों तक मैं अष्टांग नियमों का पालन करते हुए तपस्या करूंगा और व्रत पूर्ण होने पर गुरु के पास जाकर उनसे इन दुविधाओं के प्रश्न पूछूंगा।' इस प्रकार राजा मिलिंद ने अपने सामान्य वस्त्र और आभूषण त्याग दिए; पीले वस्त्र धारण करके, केवल सिर पर एक संन्यासी की पगड़ी बांधकर, एक साधु के समान रूप में, उन्होंने अष्टांग व्रत का पालन किया और व्रत को ध्यान में रखा - 'इन सात दिनों तक मैं कोई भी विधि संबंधी मामला नहीं लूंगा। मैं कोई भी कामुक विचार, द्वेषपूर्ण विचार या भ्रम उत्पन्न करने वाला विचार नहीं रखूंगा।' सभी दासों, सेवकों और आश्रितों के प्रति मुझे नम्र और दीन स्वभाव दिखाना है। मुझे अपने प्रत्येक शारीरिक कार्य और अपनी छह इंद्रियों पर सावधानीपूर्वक ध्यान देना है। और मुझे अपने हृदय को सभी प्राणियों के प्रति प्रेम के विचारों से भरना है।' इस अष्टांग प्रतिज्ञा का पालन करते हुए, अपने हृदय को इस अष्टांग नैतिक नियम में स्थापित करते हुए, वह सात दिनों तक बाहर नहीं निकला। परन्तु जब रात दिन में परिवर्तित हो रही थी, आठवें दिन सूर्योदय के समय, उसने सुबह जल्दी नाश्ता किया, और फिर दृष्टि झुकाए, संयमित शब्दों में, सौम्य व्यवहार से, एकाग्रचित्त, प्रसन्न और आनंदित हृदय से नागसेन के पास गया। और उनके चरणों में प्रणाम करते हुए, वह आदरपूर्वक एक तरफ खड़ा हुआ, और बोला:

3. 'हे पूज्य नागसेना, एक विशेष विषय है,

मैं आपसे अकेले में इस विषय पर बात करना चाहता हूँ। मैं नहीं चाहता कि कोई तीसरा व्यक्ति उपस्थित हो। किसी सुनसान जगह पर, जंगल के किसी एकांत स्थान पर, जो संन्यासी के लिए आठों मायनों में उपयुक्त हो, वहाँ मेरी यह बात रखी जाए। और वहाँ मुझसे कुछ भी छिपाया न जाए, कुछ भी गुप्त न रखा जाए। गहन विचार-विमर्श के दौरान मैं अब गुप्त बातें सुनने के लिए उपयुक्त अवस्था में हूँ।

और मेरी कही हुई बातों का अर्थ उदाहरण से स्पष्ट हो जाएगा। हे नागसेन, जिस प्रकार अवसर आने पर खजाना जमा करने के लिए विशाल पृथ्वी को सौंपना उचित है, उसी प्रकार गहन विचार-विमर्श के दौरान गुप्त बातें सौंपना मेरे लिए उचित है।

4. फिर गुरु के साथ एक एकांत स्थान पर जाकर उन्होंने आगे कहा: 'हे नागसेन, आठ प्रकार के स्थान हैं जिनसे परामर्श करने वाले व्यक्ति को पूरी तरह बचना चाहिए। कोई भी बुद्धिमान व्यक्ति ऐसे स्थानों पर किसी विषय पर चर्चा नहीं करेगा, अन्यथा विषय निष्फल हो जाएगा और उसका कोई निष्कर्ष नहीं निकलेगा। और वे आठ स्थान कौन से हैं? ऊबड़-खाबड़ भूमि, मनुष्यों के भय से असुरक्षित स्थान, हवादार स्थान, छिपने के स्थान, पवित्र स्थान, राजमार्ग, हल्के बांस के पुल और सार्वजनिक स्नानागार।'

बुजुर्ग ने पूछा: 'इनमें से प्रत्येक पर क्या आपत्ति है?'

राजा ने उत्तर दिया: 'हे नागसेन, ऊबड़-खाबड़ ज़मीन पर चर्चा का विषय अटपटा, लंबा-चौड़ा और अस्पष्ट हो जाता है, और उसका कोई निष्कर्ष नहीं निकलता। असुरक्षित स्थानों में मन विचलित हो जाता है, और विचलित होने के कारण मुख्य बात स्पष्ट रूप से समझ में नहीं आती। हवादार स्थानों में आवाज़ अस्पष्ट हो जाती है। छिपने की जगहों में छुपकर बातें सुनने वाले होते हैं। पवित्र स्थानों में चर्चा का विषय गंभीर विषय की ओर मुड़ जाता है। ऊँची सड़क पर यह विषय बेतुका हो जाता है, और...

पुल अस्थिर और डगमगा रहा था, सार्वजनिक स्नान स्थल पर यह चर्चा आम बातचीत का विषय होती। इसीलिए कहा जाता है:

"ऊबड़-खाबड़ ज़मीन, असुरक्षित और हवादार जगहें, और छिपने की जगहें, और देवी-देवताओं द्वारा आबाद मंदिर, ऊँची सड़कें, और पुल, और सभी स्नान घाट— इन आठों से बचना चाहिए जब उच्च चीजों की बात हो रही हो।"

5. 'हे नागसेन, आठ प्रकार के लोग होते हैं जो किसी विषय पर चर्चा करते समय उसे बिगाड़ देते हैं। वे आठ कौन हैं? कामवासना में लिप्त, द्वेष में लिप्त, भ्रम में लिप्त, अहंकार में लिप्त, लोभी, आलसी, एकतरफा सोच वाला और मूर्ख।'

'इनमें से प्रत्येक पर क्या आपत्ति है?' बुजुर्ग ने पूछा।

'पहला व्यक्ति अपनी वासना से, दूसरा अपनी दुर्भावना से, तीसरा अपने भ्रमों से, चौथा अपने अभिमान से, पाँचवाँ अपने लोभ से, छठा अपने आलस्य से, सातवाँ अपनी संकीर्णता से और अंतिम अपनी मूर्खता से चर्चा को बिगाड़ता है। इसलिए कहा जाता है:

"कामुक, क्रोधित या भ्रमित व्यक्ति, अभिमानी, लालची या आलसी व्यक्ति, एक ही विचार वाला व्यक्ति और मूर्ख व्यक्ति—ये आठों ही उच्च तर्क-वितर्क को बिगाड़ने वाले हैं।"

6. नागसेन, नौ प्रकार के लोग होते हैं जो किसी गुप्त बात को अपने मन में छिपाए बिना ही प्रकट कर देते हैं। वे नौ कौन हैं? कामुक व्यक्ति किसी कामवासना के वश में आकर उसे प्रकट करता है, और क्रोधी व्यक्ति उसके परिणामस्वरूप।

किसी दुर्भावना के कारण, भ्रमित व्यक्ति किसी गलती के कारण। डरपोक व्यक्ति भय के कारण इसे प्रकट करता है, और लालची व्यक्ति इससे कुछ हासिल करने के लिए। स्त्री अपनी दुर्बलता के कारण, शराबी शराब की लालसा के कारण, नपुंसक अपनी अपूर्णता के कारण, और बच्चा चंचलता के कारण इसे प्रकट करता है। इसलिए कहा जाता है:

"कामुक, क्रोधित या भ्रमित व्यक्ति, डरपोक व्यक्ति, और लाभ चाहने वाला व्यक्ति, स्त्री, शराबी, नपुंसक या बच्चा—ये नौ चंचल, अस्थिर और नीच होते हैं। जब गुप्त बातें उनसे कही जाती हैं, तो वे तुरंत सार्वजनिक हो जाते हैं।"

7. 'हे नागसेन, अंतर्दृष्टि की उन्नति और परिपक्वता के आठ कारण हैं। वे आठ क्या हैं? उम्र का बढ़ना, प्रतिष्ठा में वृद्धि, बार-बार प्रश्न पूछना, शिक्षकों का साथ, आत्मचिंतन, बुद्धिमानों से बातचीत, प्रेमयोग्य लोगों का पालन-पोषण और सुखद देश में निवास करना। इसलिए कहा गया है:

"प्रतिष्ठा और उम्र में वृद्धि से, प्रश्न पूछने से और गुरु के मार्गदर्शन से, चिंतन और बुद्धिमानों के साथ वार्तालाप से, प्रेम के योग्य पुरुषों के साथ मेलजोल से, और एक सुखद स्थान पर निवास करने से—इन नौ गुणों से अंतर्दृष्टि शुद्ध होती है। जिनके पास ये गुण होते हैं, उनकी बुद्धि बढ़ती है।"

8. 'यह स्थान, नागसेना, बातचीत करने में किसी भी प्रकार की आपत्ति से मुक्त है। और जो कोई भी ऐसा करना चाहता है, मैं उसके लिए एक आदर्श साथी हूँ। मैं एक

मैं आपका रहस्य गुप्त रखूंगा, और जब तक जीवित रहूंगा तब तक रखूंगा। ऊपर वर्णित सभी आठ तरीकों से मेरी अंतर्दृष्टि परिपक्व हुई है। आपके लिए मुझ जैसा शिष्य मिलना मुश्किल होगा।

अब, जो शिष्य इस प्रकार सही आचरण करता है, उसके प्रति गुरु को गुरु के पच्चीस गुणों के अनुरूप आचरण करना चाहिए। वे पच्चीस गुण क्या हैं? गुरु को सदा और बिना किसी चूक के अपने शिष्य की रक्षा करनी चाहिए। उसे यह बताना चाहिए कि उसे क्या अपनाना चाहिए और क्या नहीं; किस बात पर उसे गंभीर होना चाहिए और किस बात की वह उपेक्षा कर सकता है। उसे नींद, स्वास्थ्य, भोजन और अन्य चीजों के बारे में निर्देश देना चाहिए। उसे भोजन में विवेक का ज्ञान देना चाहिए और अपने कटोरे में दान के रूप में जो कुछ भी आता है, उसे शिष्य के साथ बाँटना चाहिए। उसे प्रोत्साहित करते हुए कहना चाहिए, "डरो मत। तुम्हें यहाँ जो सिखाया जा रहा है, उससे लाभ होगा।" उसे उन लोगों के बारे में सलाह देनी चाहिए जिनकी संगति में उसे रहना चाहिए और उन गाँवों और विहारों के बारे में सलाह देनी चाहिए जहाँ उसे जाना चाहिए। उसे कभी भी शिष्य के साथ व्यर्थ की बातें नहीं करनी चाहिए। जब वह उसमें कोई दोष देखे, तो उसे आसानी से क्षमा कर देना चाहिए। उसे उत्साही होना चाहिए, उसे कुछ भी अधूरा नहीं सिखाना चाहिए, कुछ भी गुप्त नहीं रखना चाहिए और कुछ भी छुपाना नहीं चाहिए। उसे अपने हृदय में उसे पुत्र के समान समझना चाहिए और मन ही मन कहना चाहिए: "मैंने उसे जन्म दिया है।"

शिक्षा। उसे उसे आगे बढ़ाने का प्रयास करना चाहिए, मन ही मन यह कहते हुए: "मैं उसे पीछे हटने से कैसे रोक सकता हूँ?" उसे उसे ज्ञान में मजबूत बनाने का निश्चय करना चाहिए, मन ही मन यह कहते हुए: "मैं उसे शक्तिशाली बनाऊँगा।" उसे उससे प्रेम करना चाहिए, आवश्यकता पड़ने पर कभी उसका साथ नहीं छोड़ना चाहिए, उसके लिए जो भी करना उचित हो उसमें कभी उसकी उपेक्षा नहीं करनी चाहिए, और जब वह गलती करे तो हमेशा उसका मित्र बनना चाहिए—जहाँ तक वह उचित रूप से कर सकता है। हे प्रभु, ये एक शिक्षक के पच्चीस अच्छे गुण हैं। मेरे साथ पूर्णतः इन्हीं के अनुरूप व्यवहार करें। हे प्रभु, संदेह ने मुझे घेर लिया है। विजेता के वचन में स्पष्ट विरोधाभास हैं। इनके बारे में भविष्य में विवाद उत्पन्न होगा, और भविष्य में आपके समान अंतर्दृष्टि वाला शिक्षक मिलना कठिन होगा। इन दुविधाओं पर मुझे प्रकाश डालें, ताकि शत्रुओं का पतन हो सके।

9. तब गुरु ने उनकी बात मान ली और बदले में गृहस्थ शिष्य में पाए जाने वाले दस अच्छे गुणों का वर्णन किया: 'हे महाराज, ये दस गुण गृहस्थ शिष्य के गुण हैं। वह संघ के समान पीड़ा सहता है और आनंद का अनुभव करता है। वह धर्म (धम्म) को अपना गुरु मानता है। वह अपनी सामर्थ्य के अनुसार दान करने में आनंदित होता है। विजेता के धर्म (धम्म) को पतित होते देख वह उसे पुनर्जीवित करने का भरसक प्रयास करता है। वह सही दृष्टिकोण रखता है। उत्तेजना के प्रति उदासीन रहते हुए वह दौड़ता है।

जीवन भर वह किसी अन्य गुरु के पीछे नहीं भागता। वह अपने विचारों और कर्मों में स्वयं पर नियंत्रण रखता है। वह शांति में प्रसन्न रहता है, शांति का प्रेमी है। वह ईर्ष्या नहीं करता और झगड़ालू स्वभाव से धर्म का पालन नहीं करता। वह बुद्ध की शरण लेता है, वह धर्म की शरण लेता है, वह संघ की शरण लेता है। हे महाराज, ये दस गुण एक गृहस्थ शिष्य के गुण हैं। ये सभी गुण आप में विद्यमान हैं। इसलिए यह उचित, सही और आपके लिए उपयुक्त है कि विजेता के धर्म के पतन को देखकर आप उसकी समृद्धि की कामना करते हैं। मैं आपको अनुमति देता हूँ। आप मुझसे जो चाहें मांग सकते हैं।

[यहाँ दुविधाओं के समाधान की प्रस्तावना समाप्त होती है।] दुविधाएँ। [बुद्ध को दिए गए सम्मानों पर।]

10. तब राजा मिलिंदा को जब अनुमति मिल गई, तो वे गुरु के चरणों में गिर पड़े और अपने हाथ माथे पर रखकर बोले: “आदरणीय नागसेन, अन्य संप्रदायों के ये नेता ऐसा कहते हैं: “यदि बुद्ध उपहार स्वीकार करते हैं तो वे पूर्णतः परास्त नहीं हो सकते। वे अभी भी संसार से जुड़े हुए हैं, उनका अस्तित्व कहीं न कहीं संसार में है, वे संसार की वस्तुओं में भागीदार हैं; इसलिए उन्हें दिया गया कोई भी सम्मान व्यर्थ और निरर्थक हो जाता है। दूसरी ओर, यदि वे

जो व्यक्ति पूर्णतः जीवन से विमुख हो जाए, संसार से अनासक्त हो जाए, समस्त अस्तित्व से मुक्त हो जाए, तब उसे सम्मान नहीं दिया जाएगा। क्योंकि जो पूर्णतः मुक्त हो जाता है, वह किसी सम्मान को स्वीकार नहीं करता, और जो सम्मान स्वीकार नहीं करता, उसके प्रति किया गया कोई भी कार्य व्यर्थ और निरर्थक हो जाता है। यह एक ऐसी दुविधा है जिसके दो पहलू हैं। यह बुद्धिहीन लोगों के वश में

नहीं है, यह महान लोगों के लिए उपयुक्त प्रश्न है। इस विधर्म के जाल को चीर-फाड़ कर एक तरफ रख दो। यह पहेली तुम्हारे समक्ष रखी गई है। विजेता के भावी पुत्रों को ऐसी दृष्टि प्रदान करो जिससे वे इस पहेली को देखकर अपने शत्रुओं को भ्रमित कर सकें।

"हे महाराज," बड़े गुरु ने उत्तर दिया, "भगवान पूर्णतः मुक्त हैं। और भगवान कोई उपहार स्वीकार नहीं करते। ज्ञान वृक्ष के चरणों में भी उन्होंने उपहारों को स्वीकार करना त्याग दिया था, तो अब तो वे और भी अधिक मुक्त होंगे, जब वे उस प्रकार के अंतःकरण द्वारा पूर्णतः परास्त हो गए हैं जो किसी नए अस्तित्व के निर्माण के लिए कोई जड़ नहीं छोड़ता। हे महाराज, यही बात धर्म के सेनापति सारिपुत्त ने कही है।"

"यद्यपि पूज्य, ये अद्वितीय पुरुष, देवताओं और मनुष्यों द्वारा समान रूप से पूजे जाते हैं, फिर भी उन सभी के विपरीत, वे न तो किसी उपहार को स्वीकार करते हैं और न ही पूजा को। वे इसे न तो ग्रहण करते हैं और न ही अस्वीकार करते हैं। युगों-युगों से सभी बुद्ध ऐसे ही थे, और सदा ऐसे ही रहेंगे!"

11. राजा ने कहा: 'आदरणीय नागसेन, एक पिता अपने पुत्र की प्रशंसा कर सकता है, या पुत्र अपने पिता की। लेकिन यह शत्रुओं को लज्जित करने का कोई आधार नहीं है। यह तो केवल उनके अपने विश्वास की अभिव्यक्ति है। अब आइए! मुझे इस मामले को पूरी तरह से समझाइए, ताकि आप अपने सिद्धांत को स्थापित कर सकें और विधर्मियों के जाल को उजागर कर सकें।'

बड़े ने उत्तर दिया: 'हे राजा, भगवान पूर्णतः जीवन से मुक्त हैं। और भगवान कोई उपहार स्वीकार नहीं करते। यदि देवता या मनुष्य किसी ऐसे तथागत के अवशेषों के रत्न-संग्रह को रखने के लिए भवन का निर्माण करें जो उनका उपहार स्वीकार नहीं करते, तब भी उनकी बुद्धि के रत्न-संग्रह के रूप में परम सुख की प्राप्ति के प्रति अर्पित उस श्रद्धा से वे स्वयं तीन तेजस्वी अवस्थाओं में से किसी एक को प्राप्त कर लेते हैं। हे राजा, मान लीजिए कि एक बड़ी और तेजस्वी अग्नि प्रज्वलित हो जाए और बुझ जाए, तो क्या वह फिर से सूखी घास या लकड़ियों की आपूर्ति स्वीकार करेगी?'

'जब यह जल रहा था, तब भी यह ईंधन ग्रहण नहीं कर सकता था, महोदय, तो बुझ जाने और जलना बंद हो जाने के बाद, एक अचेतन वस्तु होने के नाते, यह ईंधन कैसे ग्रहण कर सकता है?'

और जब वह भीषण अग्नि समाप्त हो जाएगी, तो क्या संसार अग्नि से वंचित हो जाएगा?

'बिल्कुल नहीं। सूखी लकड़ी आग का आधार है, और आग चाहने वाला कोई भी व्यक्ति अपनी शक्ति और सामर्थ्य का प्रयोग करके, लकड़ी को घुमाकर, आग उत्पन्न कर सकता है, और उस आग से कोई भी ऐसा काम कर सकता है जिसके लिए आग की आवश्यकता हो।'

तब संप्रदायवादियों का यह कथन कि "जो व्यक्ति दान स्वीकार नहीं करता, उसके प्रति किया गया कर्म व्यर्थ और निरर्थक होता है" असत्य सिद्ध होता है। जिस प्रकार वह महान और तेजस्वी अग्नि प्रज्वलित हुई, उसी प्रकार, हे महाराज, भगवान बुद्ध दस हजार संसारों पर अपने बुद्धत्व की महिमा से प्रज्वलित हुए। जैसे वह अग्नि बुझ गई, वैसे ही वे उस प्रकार के परलोक में विलीन हो गए जिसमें कोई जड़ शेष नहीं रहती। जैसे अग्नि बुझने पर ईंधन ग्रहण नहीं करती, ठीक उसी प्रकार, जगत के कल्याण के लिए, उन्होंने दान ग्रहण करना बंद कर दिया और निश्चय कर लिया। जैसे मनुष्य, जब आग बुझ जाती है और जलने का कोई साधन नहीं बचता, तो अपनी सामर्थ्य और प्रयास से, जो भी मनुष्य में निहित होता है, वे आग जलाने वाली लकड़ी को घुमाकर आग उत्पन्न करते हैं और आग से आवश्यक कोई भी कार्य करते हैं—ठीक वैसे ही देवता और मनुष्य, यद्यपि तथागत का देहांत हो गया है और वे अब उनके उपहार स्वीकार नहीं करते, फिर भी उनके अवशेषों के रत्न-संग्रह के लिए एक घर बनाते हैं और उनकी बुद्धि के रत्न-संग्रह के रूप में सर्वोच्च पुण्य की प्राप्ति के प्रति श्रद्धा अर्पित करते हुए, वे तीन गौरवशाली अवस्थाओं में से किसी एक को प्राप्त करते हैं। अतः, हे महाराज, तथागत के देहांत हो जाने और उनके उपहार स्वीकार न करने के बावजूद, उनके प्रति किए गए कर्म भी मूल्यवान होते हैं और फलदायी होते हैं।

12. 'अब इसी बात का एक और कारण सुनो। मान लो, हे राजा, एक तेज और शक्तिशाली हवा चले और फिर शांत हो जाए। क्या वह हवा दोबारा उत्पन्न होने के लिए तैयार होगी?'

'एक थम सी चुकी हवा में पुनरुत्पादन की कोई कल्पना या विचार नहीं हो सकता। और क्यों? क्योंकि हवा एक अचेतन तत्व है।'

या फिर, हे राजा, क्या "हवा" शब्द भी सही रहेगा?

क्या यह बात उस हवा पर भी लागू होती है, जबकि वह हवा लगभग शांत हो चुकी थी?

'बिल्कुल नहीं, महोदय। लेकिन पंखे और हवा तो हवा पैदा करने के साधन हैं। गर्मी से परेशान या बुखार से व्याकुल कोई भी व्यक्ति पंखे और पंखों की सहायता से और अपनी आंतरिक शक्ति और सामर्थ्य का प्रयोग करके हवा पैदा कर सकता है और उस हवा से अपनी गर्मी को शांत कर सकता है या बुखार को कम कर सकता है।'

तब संप्रदायवादियों का यह कथन कि "जो व्यक्ति इसे स्वीकार नहीं करता, उसके साथ किया गया कर्म व्यर्थ और निरर्थक होता है" असत्य सिद्ध होता है। जैसे महान और शक्तिशाली वायु बहती है, वैसे ही, हे महाराज, भगवान बुद्ध ने अपने प्रेम की शीतल, मधुर, शांत और कोमल वायु से दस हजार संसारों को विसर्जित किया है। जैसे वह वायु पहले बही और फिर थम गई, वैसे ही भगवान बुद्ध, जिन्होंने अपने प्रेम की शीतल, मधुर, शांत और कोमल वायु से प्रवाह किया, अब उस प्रकार के विसर्जन के साथ विलीन हो गए हैं जिसमें कोई जड़ नहीं रहती। जैसे वे मनुष्य गर्मी से पीड़ित और बुखार से व्याकुल हुए, वैसे ही देवता और मनुष्य तीन प्रकार की अग्नि और गर्मी से पीड़ित और व्याकुल हैं। जैसे पंखे और हवा उत्पन्न करने के साधन हैं, वैसे ही तथागत के ज्ञान के अवशेष और रत्न-संग्रह तीन प्रकार की प्राप्ति के साधन हैं। और जिस प्रकार गर्मी से पीड़ित और बुखार से व्याकुल मनुष्य पंखे और हवा से गर्मी को कम कर सकते हैं और बुखार से राहत पा सकते हैं, उसी प्रकार देवता और मनुष्य भी अवशेषों के प्रति श्रद्धा अर्पित करके ऐसा कर सकते हैं।

तथागत की ज्ञान की अनमोल धरोहर, भले ही उनका देहांत हो गया हो और वे इसे स्वीकार न करते हों, फिर भी उनमें सत्त्व का भाव उत्पन्न करती है, और उस सत्त्व से त्रिगुण अग्नि के बुखार और पीड़ा को शांत किया जा सकता है। अतः, हे महाराज, तथागत के देहांत होने और उन्हें स्वीकार न करने के बावजूद, उनके प्रति किए गए कर्म मूल्यवान होते हैं और फलदायी होते हैं।

13. 'अब इसी बात का एक और कारण सुनो। मान लो, हे राजा, कोई व्यक्ति ढोल बजाए, और फिर वह ध्वनि लुप्त हो जाए। क्या वह ध्वनि पुनः उत्पन्न होने के लिए तैयार होगी?'

'बिल्कुल नहीं, महोदय। ध्वनि लुप्त हो चुकी है। इसमें पुनरुत्पादन की कोई संभावना नहीं है। ढोल की ध्वनि एक बार उत्पन्न होकर लुप्त हो जाने पर पूरी तरह से समाप्त हो जाती है। लेकिन, महोदय, ढोल ध्वनि उत्पन्न करने का एक साधन है। और कोई भी व्यक्ति, आवश्यकता पड़ने पर, अपने भीतर निहित शक्ति के बल पर उस ढोल को बजाकर ध्वनि उत्पन्न कर सकता है।'

'हे महाराज, ठीक इसी प्रकार, भगवान बुद्ध—अपने गुरु और उनके द्वारा दिए गए उपदेशों और अनुशासन तथा उनके अवशेषों के अनमोल खजाने को छोड़कर, जिनका मूल्य उनके धार्मिकता, चिंतन, ज्ञान, मुक्ति और मुक्ति के ज्ञान से प्राप्त अंतर्दृष्टि से है—ठीक इसी प्रकार उस प्रकार के परलोक में विलीन हो गए हैं जिसमें कोई जड़ शेष नहीं रहती। परन्तु भगवान बुद्ध के परलोक में विलीन होने से तीनों सिद्धियों को प्राप्त करने की संभावना समाप्त नहीं होती। जन्म के दुःख से पीड़ित प्राणी, जब वे सिद्धियों की इच्छा रखते हैं, तो उनके अवशेषों के अनमोल खजाने तथा उनके उपदेशों, अनुशासन और शिक्षा के माध्यम से उन्हें प्राप्त कर सकते हैं। अतः, हे महाराज, यही कारण है कि

तथागत के देहांत हो जाने और उनके न मानने के बावजूद, उनके प्रति किए गए सभी कर्म मूल्यवान और फलदायी होते हैं। हे महाराज, इस भविष्य की संभावना का पूर्वाभास भगवान बुद्ध ने किया था, और इसके बारे में कहा, घोषित किया और बताया था, जब उन्होंने कहा: "हे आनंद, हो सकता है कि तुममें से कुछ के मन में यह विचार आए: 'गुरु का वचन समाप्त हो गया है। अब हमारा कोई गुरु नहीं है!' परन्तु हे आनंद, तुम्हें ऐसा नहीं सोचना चाहिए। जो सत्य मैंने तुम्हें उपदेश दिया है, जो नियम मैंने संघ के लिए निर्धारित किए हैं, मेरे जाने के बाद वे ही तुम्हारे गुरु हों।" अतः तथागत के देहांत हो जाने और उनके न मानने के कारण उनके प्रति किया गया कोई भी कर्म व्यर्थ और निरर्थक है—यह शत्रु का कथन असत्य सिद्ध होता है। यह असत्य, अन्यायपूर्ण, तथ्य के विपरीत, गलत और विकृत है। यह दुःख का कारण है, दुःख ही इसका फल है, और यह विनाश के मार्ग की ओर ले जाता है!

14. 'अब इसी बात का एक और कारण सुनो। हे राजा, क्या विशाल पृथ्वी सभी प्रकार के बीजों को अपने ऊपर बोए जाने देती है?'

'बिल्कुल नहीं, महोदय।'

'तो फिर ऐसा कैसे होता है कि वे बीज, जो धरती की सहमति के बिना बोए जाते हैं, फिर भी मजबूती से जड़ जमाए खड़े रहते हैं, और विशाल तनों, रस और शाखाओं वाले वृक्षों में विकसित हो जाते हैं, और फल और फूल धारण करते हैं?'

'यद्यपि धरती, महोदय, सहमति नहीं देती, फिर भी वह उन बीजों के लिए एक स्थान, उनके विकास का साधन बनती है। उस स्थान पर बोए जाने पर वे बढ़ते हैं,

इसका अर्थ है, शाखाओं, फूलों और फलों से लदे इतने विशाल वृक्षों में बदलना।

'तो, हे महाराज, संप्रदायवादी नष्ट हो जाते हैं, पराजित हो जाते हैं, अपने ही शब्दों से गलत साबित हो जाते हैं जब वे कहते हैं कि "जो व्यक्ति इसे स्वीकार नहीं करता, उसके प्रति किया गया कर्म व्यर्थ और निरर्थक है।" हे महाराज, जिस प्रकार विशाल पृथ्वी है, उसी प्रकार तथागत, अरहत, परम बुद्ध हैं। वे इसके समान कुछ भी स्वीकार नहीं करते। जिस प्रकार इसके माध्यम से बीज ऐसे विकास को प्राप्त करते हैं, उसी प्रकार देवता और मनुष्य तथागत के अवशेषों और ज्ञान के रत्न-संग्रह के माध्यम से—यद्यपि वे देहांतित हो चुके हैं और इसे स्वीकार नहीं करते—पुण्य की जड़ों से दृढ़तापूर्वक जड़े जमाकर, ध्यान के तने, सच्चे सिद्धांत के रस और धर्म की शाखाओं के माध्यम से घनी छाया देने वाले वृक्षों के समान हो जाते हैं, और मुक्ति के फूल और समनत्व के फल धारण करते हैं। अतः, हे महाराज, तथागत के प्रति किए गए कर्म, उनके देहांतित होने और उन्हें स्वीकार न करने के बावजूद, अभी भी मूल्यवान हैं और फलदायी हैं।'

15. 'अब इसी बात का एक और कारण सुनो। क्या ऊंट, भैंस, गधे, बकरियां, बैल या मनुष्य अपने भीतर कीड़े पैदा होने को स्वीकार करते हैं?'

'बिल्कुल नहीं, महोदय।'

'तो फिर ऐसा कैसे होता है कि उनकी सहमति के बिना ही कृमि इस प्रकार पैदा होते हैं और पुत्रों और पोतों के तीव्र प्रजनन द्वारा फैलते हैं?'

'बुरे कर्मों के फल से, महोदय।'

'हे महाराज, ठीक इसी प्रकार, दिवंगत तथागत की पवित्र अवशेषों की शक्ति और ज्ञान के कारण, जो किसी भी बात को स्वीकार नहीं करते, उनके प्रति किया गया कोई भी कार्य मूल्यवान होता है और फलदायी होता है।'

16. 'अब इसी बात का एक और कारण सुनो। हे राजा, क्या मनुष्य इस बात से सहमत हैं कि उनके शरीर में अट्ठानवे रोग उत्पन्न हों?'

'बिल्कुल नहीं, महोदय।'

'तो फिर ये बीमारियां आती कैसे हैं?'

'पूर्व जन्मों में किए गए बुरे कर्मों के कारण।'

लेकिन, हे महाराज, यदि पिछले जन्म में किए गए बुरे कर्मों का फल इस जन्म में भुगतना ही है, तो इस जन्म में या पहले किए गए अच्छे और बुरे दोनों कर्मों का महत्व है और वे फलदायी होते हैं। इसीलिए तथागत के निधन और उनकी अनिच्छा के बावजूद, उनके प्रति किए गए कर्म भी मूल्यवान हैं और फलदायी होते हैं।

17. 'अब इसी बात का एक और कारण सुनो। हे राजा, क्या तुमने कभी नंदक नामक राक्षस के बारे में सुना है, जिसने सारिपुत्त पर हाथ उठाया और धरती में समा गया?'

'जी हां, महोदय, यह पुरुषों के बीच आम बातचीत का विषय है।'

'तो क्या सारिपुत्त ने इस बात को स्वीकार कर लिया था?'

हे प्रभु, भले ही देवताओं और मनुष्यों का संसार नष्ट हो जाए, भले ही सूर्य और चंद्रमा पृथ्वी पर गिर पड़ें, भले ही पर्वतों के राजा सिनेरु का नाश हो जाए, फिर भी सारिपुत्त संत किसी भी प्राणी को कष्ट पहुँचाने की अनुमति नहीं देते। और क्यों नहीं? क्योंकि उनके हृदय में क्रोध या आक्रोश उत्पन्न करने वाली हर भावना नष्ट हो चुकी है। और इस प्रकार क्रोध के सभी कारण दूर हो जाने के कारण, हे प्रभु, सारिपुत्त उन लोगों से भी क्रोधित नहीं हो सकते जो उन्हें जान से मारने का प्रयास करते हैं।

लेकिन यदि सारिपुत्त, हे राजा, ने इसकी सहमति नहीं दी, तो नंदक इस प्रकार कैसे निगल लिया गया?

'उसके बुरे कर्मों की शक्ति से।'

'यदि ऐसा है, तो हे महाराज, अनिच्छुक व्यक्ति के प्रति किया गया कार्य भी शक्तिशाली और फलदायी होता है। और यदि यह किसी बुरे कर्म के लिए ऐसा है, तो अच्छे कर्म के लिए कितना अधिक होगा? अतः, हे महाराज, तथागत के निधन और उनकी अस्वीकृति के बावजूद, उनके प्रति किए गए कार्य मूल्यवान और फलदायी होते हैं।'

18. 'हे राजा, ऐसे कितने लोग हैं जो इस जीवन में ही पृथ्वी में समा गए? क्या आपने इस विषय पर कुछ सुना है?'

'जी हां, महोदय, मैंने सुना है कि उनकी संख्या कितनी है।'

'तो मुझे बताओ।'

'किंका ब्राह्मण स्त्री, सुप्पबुद्ध शाक्यन, देवदत्त वृद्ध, नंदक राक्षस और नंदा ब्राह्मण—ये पाँच लोग पृथ्वी में समा गए।'

'और हे राजा, उन्होंने किसके साथ अन्याय किया था?'

'भगवान और उनके शिष्य।'

'तो क्या भगवान बुद्ध या उनके शिष्यों ने उनके इस प्रकार निगल लिए जाने की सहमति दी थी?'

'बिल्कुल नहीं, महोदय।'

अतः, हे राजा, तथागत के निधन और उनकी सहमति न होने के बावजूद, उनके प्रति किया गया कार्य मूल्यवान होता है और फलदायी होता है।

हे पूज्य नागसेना, आपने इस गहन प्रश्न का बहुत अच्छे से उत्तर दिया है और इसे स्पष्ट कर दिया है। आपने गुप्त बात को स्पष्ट कर दिया है, आपने उलझन सुलझा दी है, आपने जंगल को खुला मैदान बना दिया है, शत्रु पराजित हो गए हैं, गलत धारणा गलत साबित हो गई है, संप्रदायवादियों का पर्दाफाश हो गया है।

हे विद्यालय के सर्वोत्कृष्ट नेता! जब वे आपसे मिले तो उनके सामने अंधेरा छाया हुआ था।

[यहाँ दिए गए सम्मानों को स्वीकार न करने का प्रश्न समाप्त होता है।] [बुद्ध का सर्वज्ञता।]

19. 'आदरणीय नागसेना, क्या बुद्ध सर्वज्ञ थे?'

जी हाँ, हे राजा, वे थे। परन्तु ज्ञान की अंतर्दृष्टि उनमें सदा और निरंतर (सचेतन रूप से) विद्यमान नहीं रहती थी। भगवान बुद्ध की सर्वज्ञता चिंतन पर निर्भर थी। परन्तु यदि वे चिंतन करते तो वे जो कुछ जानना चाहते थे, जान लेते थे।

'तो फिर, महोदय, बुद्ध सर्वज्ञ नहीं हो सकते, यदि उनका सर्वव्यापी ज्ञान खोज के माध्यम से प्राप्त हुआ था।'

'[यदि ऐसा है, हे महाराज, तो हमारे बुद्ध का ज्ञान अन्य बुद्धों के ज्ञान की तुलना में कम परिष्कृत रहा होगा। और यह निष्कर्ष निकालना कठिन है। लेकिन मुझे थोड़ा और समझाने दीजिए।] मान लीजिए, हे महाराज, आपके पास सौ बैलगाड़ी चावल हैं, जिनमें से प्रत्येक में साढ़े सात अम्मन चावल हैं। क्या कोई व्यक्ति, बिना सोचे-समझे, आपको एक पल में बता सकता है कि कुल कितने लाख चावल हैं?'

20. 'अब, सात प्रकार के मन होते हैं। हे महाराज, जो कामवासना, द्वेष, भ्रम या कुकर्म से भरे होते हैं, जो अपने शरीर के प्रबंधन, आचरण, विचार या बुद्धि में प्रशिक्षित नहीं होते, उनकी सोचने-समझने की शक्तियाँ कठिनता से काम करती हैं और धीमी गति से कार्य करती हैं। ऐसा क्यों होता है? क्योंकि उनके मन अप्रशिक्षित होते हैं। यह एक विशाल बांस के धीमे और भारी कदमों के समान है—जब उसे उसकी फैली हुई, विस्तृत, घनी और आपस में उलझी हुई वनस्पति के साथ घसीटा जा रहा हो, और उसकी शाखाएँ एक-दूसरे से जटिल रूप से उलझी हों। हे महाराज, ऐसे ही लोगों के मन धीमे और भारी होते हैं। ऐसा क्यों होता है? क्योंकि कुकर्मों के जटिल उलझावों के कारण। यह मन का पहला प्रकार है।'

21. 'इससे दूसरी श्रेणी को अलग किया जाना है। हे राजा, जो परिवर्तित हो चुके हैं, जिनके लिए नरक के द्वार बंद हो गए हैं, जिन्होंने सही दृष्टिकोण प्राप्त कर लिया है, जिन्होंने गुरु के उपदेश को समझ लिया है—उनकी चिंतन शक्ति, जहाँ तक तीन निम्न चरणों का संबंध है, शीघ्रता से विकसित होती है।

वे सहजता से कार्य करते हैं। परन्तु उच्चतर स्तरों के संदर्भ में उन्हें कठिनाई होती है और वे धीमी गति से कार्य करते हैं। ऐसा क्यों है? क्योंकि इन तीन स्तरों के संदर्भ में उनके मन स्पष्ट हो चुके हैं, और उनमें अभी भी कुछ कमियाँ (जिन्हें उच्चतर स्तरों में दूर किया जाना है) मौजूद हैं। यह एक विशाल बांस के चलने के समान है जिसका तना तीसरी गांठ तक साफ है, परन्तु उसके ऊपर उसकी शाखाएँ जटिल रूप से उलझी हुई हैं। चिकने तने के संदर्भ में तो वह घसीटने पर आसानी से चल सकता है, परन्तु ऊपरी शाखाओं के संदर्भ में वह हठपूर्वक अटक जाता है। यही दूसरे प्रकार के मन हैं।

22. 'इनमें से तीसरे वर्ग को अलग करना है। हे राजा, जो सकाद् आगामिन हैं, जिनमें काम, द्वेष और भ्रम न्यूनतम हो गए हैं, उनकी सोचने की शक्ति, निम्न पाँच स्तरों के संबंध में, शीघ्रता से सक्रिय हो जाती है और वे सहजता से कार्य करते हैं। परन्तु उच्च स्तरों के संबंध में, वे कठिनाई से सक्रिय होते हैं और धीमी गति से कार्य करते हैं। ऐसा क्यों है? क्योंकि उनके मन उन पाँच स्तरों के संबंध में स्पष्ट हो चुके हैं, और उनमें (उच्च स्तरों में पराजित होने वाली) कमियाँ अभी भी शेष हैं। यह एक विशाल बांस की गति के समान है जिसका तना पाँचवें भाग तक साफ है, परन्तु उसके ऊपर उसकी शाखाएँ जटिल रूप से उलझी हुई हैं। चिकने तने के संबंध में, उसे घसीटने पर वह आसानी से चल सकता है, परन्तु उसकी ऊपरी शाखाओं के संबंध में, उसे हिलाना कठिन होगा। यही तीसरे वर्ग के मन हैं।'

23. 'इनमें से चौथे वर्ग को अलग करना है। हे राजा, जो अनागामिन हैं, जिन्होंने पाँच निम्न बंधनों से पूर्णतः मुक्ति पा ली है, उनकी चिंतन शक्ति दस अवस्थाओं के संदर्भ में शीघ्रता से सक्रिय हो जाती है और वे सहजता से कार्य करते हैं। परन्तु उच्चतर अवस्थाओं के संदर्भ में वे कठिनाई से सक्रिय होती हैं और धीमी गति से कार्य करती हैं। ऐसा क्यों है? क्योंकि उनके मन उन दस अवस्थाओं के संदर्भ में स्पष्ट हो चुके हैं, और उनमें अभी भी कुछ दोष (जिन्हें उच्चतर अवस्थाओं में दूर किया जाना है) शेष हैं। यह एक विशाल बांस की गति के समान है जिसका तना दसवें भाग तक चिकना है, परन्तु उसके ऊपर उसकी शाखाएँ जटिल रूप से उलझी हुई हैं। यही चौथे वर्ग के मन हैं।'

24. 'इनमें से पाँचवाँ वर्ग अलग है। हे राजा, वे अरहत हैं जिनमें चारों महापाप समाप्त हो गए हैं, जिनके दाग धुल गए हैं, जिनकी बुराई की प्रवृत्ति त्याग दी गई है, जिन्होंने जीवन जीया है, अपना कार्य पूरा किया है, हर बोझ उतार दिया है और अच्छाई को प्राप्त किया है, जिनके लिए किसी भी प्रकार के भविष्य के जीवन की लालसा का बंधन टूट गया है, जिन्होंने उच्चतर अंतर्दृष्टि प्राप्त कर ली है, और जो हृदय की उन सभी अवस्थाओं के संबंध में शुद्ध हो गए हैं जिनमें एक

एक श्रोता शुद्ध हो सकता है—शिष्य जो कुछ भी हो सकता है या कर सकता है, उसके बारे में उसकी चिंतन शक्ति शीघ्रता से सक्रिय हो जाती है और वह सहजता से कार्य करता है। परन्तु जो बातें पक्केका-बुद्धों (जो स्वयं बुद्ध हैं, परन्तु अपने लिए) की पहुँच में हैं, उनके बारे में उसकी चिंतन शक्ति कठिनाई से सक्रिय होती है और वह धीमी गति से कार्य करता है। ऐसा क्यों है? क्योंकि श्रोता के दायरे में आने वाली सभी बातों के संबंध में वह शुद्ध हो चुका है, परन्तु उन बातों के संबंध में नहीं जो बुद्धों (यद्यपि वे केवल अपने लिए) की पहुँच में हैं। यह एक विशाल बांस की गति के समान है जिसकी सभी गांठों से निकली शाखाओं को काट दिया गया है—और इसलिए, जब उसे घसीटा जाता है, तो वह अपनी चिकनी सतह और वनस्पति की जंगली वृद्धि से मुक्त होने के कारण तेजी से और सहजता से चलता है। यह पाँचवाँ प्रकार का मन है।

25. 'इनमें से छठे वर्ग को अलग करना है। हे राजा, जो पक्केका-बुद्ध हैं, जो केवल स्वयं पर निर्भर हैं, जिन्हें किसी गुरु की आवश्यकता नहीं है, जो गैंडे के एक सींग के समान अकेले रहते हैं, जिनका अपने उच्च जीवन के संबंध में हृदय शुद्ध और निर्मल है, उनकी चिंतन शक्ति, अपने क्षेत्र के संबंध में, शीघ्रता से सक्रिय हो जाती है और सहजता से कार्य करती है। परन्तु जो कुछ विशेष रूप से पूर्ण बुद्ध (जो स्वयं बुद्ध हैं, अर्थात् प्रबुद्ध हैं, परन्तु दूसरों को प्रकाश की ओर ले जा सकते हैं) के क्षेत्र में आता है, उसमें उनकी चिंतन शक्ति कठिनाई से सक्रिय होती है और वे धीमी गति से कार्य करते हैं। ऐसा क्यों है? क्योंकि वे अपने क्षेत्र के सभी पहलुओं में शुद्ध हैं, और सर्वज्ञ बुद्धों के क्षेत्र की विशालता के कारण। हे राजा, यह उस व्यक्ति के समान है जो निर्भय होकर, और अपनी इच्छा से,

दिन हो या रात, वह अपनी ही ज़मीन पर एक उथली सी धारा को बहाता है। लेकिन जब उसके सामने विशाल, गहरा, चौड़ा और निरंतर गतिमान सागर आता है और उसे आगे कोई किनारा दिखाई नहीं देता, तो वह झिझकता और भयभीत होकर खड़ा रह जाता है और उसे पार करने का प्रयास भी नहीं करता। और क्यों? क्योंकि वह अपने सागर से भली-भांति परिचित है और सागर की विशालता के कारण। यही छठी श्रेणी के मन हैं।

26. 'इनमें से सातवीं श्रेणी को अलग करना है। हे राजा, जो पूर्ण बुद्ध हैं, सर्वज्ञानी हैं, अपने भीतर दस प्रकार की अंतर्दृष्टि की दस गुना शक्ति धारण किए हुए हैं, न्यायपूर्ण आत्म-विश्वास के चार गुणों में दृढ़ हैं, बुद्ध के अठारह गुणों से संपन्न हैं, जिनकी महारत की कोई सीमा नहीं है, जिनकी पकड़ से कुछ भी छिपा नहीं है, उनकी चिंतन शक्ति हर बिंदु पर शीघ्रता से कार्य करती है और सहजता से कार्य करती है। मान लीजिए, हे राजा, एक अच्छी तरह से चमकाया हुआ, जंग रहित, बिल्कुल चिकना, तेज धार वाला, सीधा, बिना किसी टेढ़ेपन या दोष के बाण एक शक्तिशाली धनुष पर लगा हो। क्या इसकी क्रिया में कोई अनाड़ीपन होगा, इसकी गति में कोई रुकावट आएगी, यदि इसे एक शक्तिशाली व्यक्ति द्वारा महीन लिनेन, सूती कपड़े या नाजुक ऊन के काम पर चलाया जाए?'

'बिल्कुल नहीं, महोदय। और क्यों? क्योंकि सामग्री बहुत उत्तम है, और बाण बहुत उच्च स्तर पर तपा हुआ है, और इसका विस्फोट बहुत शक्तिशाली है।'

'और ठीक इसी प्रकार, हे महाराज, मैंने जिन बुद्धों का वर्णन किया है, उनकी चिंतन शक्तियाँ शीघ्रता से सक्रिय हो जाती हैं और सहजता से कार्य करती हैं।'

[पैराग्राफ जारी है] और क्यों? क्योंकि वे हर तरह से शुद्ध हैं। यह सातवीं श्रेणी के मन हैं।'

27. हे महाराज, इन सब में से अंतिम—सर्वज्ञ बुद्धों की चिंतन शक्ति—अन्य छह शक्तियों से कहीं श्रेष्ठ है, और अपने उच्च गुण में इतनी स्पष्ट और सक्रिय है कि हमारी समझ से परे है। भगवान बुद्ध का मन इतना स्पष्ट और सक्रिय है कि हे महाराज, वे दोहरा चमत्कार प्रदर्शित करते हैं। इससे हमें, हे महाराज, उनकी मानसिक शक्तियों की स्पष्टता और सक्रियता का ज्ञान होता है। और उन चमत्कारों के लिए कोई और कारण नहीं बताया जा सकता। (फिर भी) हे महाराज, सर्वज्ञ बुद्धों के मन के कारण होने वाले उन चमत्कारों को न तो गिना जा सकता है, न ही गणना की जा सकती है, न ही विभाजित किया जा सकता है, न ही अलग किया जा सकता है, क्योंकि हे महाराज, भगवान बुद्ध का ज्ञान चिंतन पर निर्भर है, और चिंतन के माध्यम से ही वे जो कुछ जानना चाहते हैं, जान लेते हैं। (पर) यह ऐसा है जैसे कोई व्यक्ति अपने एक हाथ में रखी वस्तु को दूसरे हाथ में दे दे, या मुँह खुला रखकर कोई ध्वनि निकाले, या मुँह में रखा भोजन निगल ले, या बंद आँखों को खोले, या खुली बाहों को बंद करे, या मुड़ी हुई बांह को फैलाए, या फैली हुई बांह को मोड़े—हे महाराज, इससे भी अधिक तीव्र और सहज है भगवान बुद्ध का सर्वव्यापी ज्ञान, और इससे भी अधिक तीव्र है उनका चिंतन। और यद्यपि वे चिंतन से ही जो कुछ जानना चाहते हैं, जान लेते हैं, फिर भी जब वे

जो लोग ईश्वरीय बोध को प्रतिबिंबित नहीं कर रहे हैं, वे भी सर्वज्ञता के सिवा कुछ और नहीं हैं।

लेकिन, आदरणीय नागसेन, चिंतन का उद्देश्य उस चीज़ की खोज करना है जो चिंतन शुरू होने पर स्पष्ट नहीं होती। अब मुझे इस मामले में कुछ तर्क देकर समझाइए।

'मान लीजिए, हे राजा, एक धनी व्यक्ति है, जो धन और संपत्ति में समृद्ध है—जिसके पास सोने, चांदी और कीमती वस्तुओं का भंडार है, और हर प्रकार के गेहूं का भंडार है; जिसके पास चावल, धान, जौ, सूखा अनाज, तिलहन, सेम, मटर और हर प्रकार के खाने योग्य बीज हैं; जिसके पास घी, तेल, मक्खन, दूध, दही, शहद, चीनी और गुड़ है, और ये सब भंडारगृहों में घड़ों, बर्तनों और हर प्रकार के पात्रों में भरा हुआ है। अब यदि कोई यात्री आता है, जो आतिथ्य सत्कार के योग्य है और भोजन की उम्मीद कर रहा है; और घर में तैयार किया

गया सारा भोजन समाप्त हो चुका है, और वे घड़े से कुछ पके हुए चावल निकालकर उसके लिए भोजन तैयार करते हैं। क्या उस धनी व्यक्ति को केवल उस असामान्य समय में खाने-पीने की चीजों की कमी के कारण गरीब या जरूरतमंद कहना उचित होगा?'

'बिल्कुल नहीं, महोदय। यहां तक कि एक शक्तिशाली राजाओं के राजा के महल में भी समय से पहले भोजन तैयार नहीं होता, तो एक साधारण आदमी के घर में ऐसा होना कितना मुश्किल होगा।'

'ठीक वैसे ही, हे महाराज, तथागत के सर्वव्यापी ज्ञान के साथ, जब केवल चिंतन की आवश्यकता होती है; लेकिन चिंतन करने पर वे जो चाहें ग्रहण कर लेते हैं। अब मान लीजिए, हे महाराज, एक फलदार वृक्ष है, जिसकी शाखाएँ फलों के गुच्छों के भार से इधर-उधर झुकी हुई हैं, परन्तु उस पर से एक भी फल नहीं गिरा है।'

[पैराग्राफ जारी है] क्या उस पेड़ को, मामले की परिस्थितियों में, केवल इसलिए बंजर कहा जा सकता है क्योंकि उस पर कोई फल नहीं गिरा है?

'नहीं, महोदय। क्योंकि फल का गिरना उसका आनंद लेने के लिए एक पूर्व शर्त है, लेकिन एक बार जब वह गिर जाता है तो कोई भी जितना चाहे उतना ले सकता है।'

'हे महाराज, इसी प्रकार, यद्यपि तथागत के ज्ञान के लिए चिंतन एक आवश्यक शर्त है, फिर भी चिंतन करने पर तथागत वह सब कुछ जान लेता है जो वह जानना चाहता है।'

'क्या ऐसा हमेशा होता है, नागसेना, चिंतन के क्षण में?'

'जी हां, हे राजा। जिस प्रकार राजाओं के पराक्रमी राजा (कक्कवत्ती) अपने विजयचक्र का स्मरण करते हुए उसे प्रकट करने की इच्छा करते हैं, और स्मरण करते ही वह प्रकट हो जाता है—ठीक उसी प्रकार तथागत का ज्ञान चिंतन के द्वारा निरंतर प्राप्त होता है।'

'नागसेना, आपने बुद्ध के सर्वज्ञ होने का जो कारण बताया है, वह बहुत ठोस है। मुझे पूरा विश्वास है कि ऐसा ही है।'

[यहाँ बुद्ध की सर्वज्ञता के चिंतन पर निर्भर होने का प्रश्न समाप्त होता है।] [देवदत्त को संघ में क्यों प्रवेश दिया गया?]

28. 'आदरणीय नागसेना, देवदत्त को संघ में किसने प्रवेश दिया था?'

'हे राजा, वे छह युवा कुलीन, भद्दिया, अनुरुद्ध, आनंद, भागु, किंबिला और देवदत्त, और सातवें उपाली नाई—जब गुरु बुद्ध को प्राप्त हुए, तो वे सभी उनसे प्रसन्न होकर शाक्य घर छोड़कर भगवान बुद्ध का अनुसरण करते हुए संसार का त्याग कर गए। अतः भगवान बुद्ध ने उन सभी को संघ में प्रवेश दिया।'

लेकिन क्या यह देवदत्त ही नहीं थे जिन्होंने संघ में प्रवेश करने के बाद उसके भीतर फूट डाल दी थी?

'जी हां। कोई भी गृहस्थ फूट नहीं डाल सकता, न ही संघ की कोई सदस्य, न ही प्रारंभिक प्रशिक्षण प्राप्त कर रही कोई सदस्य, न ही किसी भी लिंग का कोई नौसिखिया। यह फूट केवल एक भिक्षु द्वारा ही डाली जा सकती है, जो किसी भी प्रकार से अक्षम न हो, पूर्ण रूप से संघ से जुड़ा हो और सह-निवासी हो।'

'और एक विधर्मी व्यक्ति को कौन सा कर्म प्राप्त होता है?'

'ऐसा कर्म जो कल्प (बहुत लंबी अवधि) तक कार्य करता रहता है।'

'तो फिर, नागसेना! क्या बुद्ध को इस बात का ज्ञान था कि देवदत्त संघ में प्रवेश करने के बाद एक फूट उत्पन्न करेगा, और ऐसा करने पर उसे एक कल्प के लिए नरक में यातना भोगनी पड़ेगी?'

'जी हां, तथागत यह बात जानते थे।'

लेकिन, नागसेन, यदि ऐसा है, तो यह कथन कि बुद्ध दयालु और करुणामय थे, कि वे दूसरों का भला चाहते थे, कि वे हानि करने वाले को दूर करने वाले और सभी प्राणियों का भला करने वाले थे—यह कथन गलत होना चाहिए। यदि ऐसा नहीं है—यदि वह यह नहीं जानता था कि देवदत्त

संघ में प्रवेश करने के बाद यदि कोई फूट उत्पन्न करता है, तो वह सर्वज्ञ नहीं हो सकता। यह दूसरी जटिल समस्या आपके समक्ष प्रस्तुत है। इस पेचीदा रहस्य को सुलझाइए, विरोधियों के तर्कों का खंडन कीजिए। भविष्य में आपके समान ज्ञानवान भिक्षु मिलना कठिन होगा। इसलिए, इसमें अपनी कुशलता दिखाइए!

29. हे राजा, भगवान अत्यंत दयालु और सर्वज्ञानी थे। जब भगवान ने अपनी दया और ज्ञान से देवदत्त के जीवन इतिहास का अध्ययन किया, तब उन्हें यह ज्ञान हुआ कि कर्मों का संचय करते-करते वह अनंत काल तक कष्टों से कष्टों और विनाशों से विनाशों की ओर अग्रसर होते रहेंगे। भगवान यह भी जानते थे कि संघ में प्रवेश करने के कारण उस व्यक्ति के अनंत कर्म सीमित हो जाएंगे और पिछले कर्मों से उत्पन्न दुःख भी सीमित हो जाएगा। परन्तु यदि वह मूर्ख व्यक्ति संघ में प्रवेश न करे तो वह कर्मों का संचय करता रहेगा जो एक कल्प तक ही चलेगा। और यह जानते हुए ही उन्होंने अपनी दया से उसे संघ में प्रवेश दिया।

'तो, नागसेन, बुद्ध पहले एक आदमी को घायल करते हैं और फिर घाव पर तेल डालते हैं, पहले एक आदमी को खाई में फेंक देते हैं और फिर उसकी सहायता के लिए हाथ बढ़ाते हैं, पहले उसे मार डालते हैं और फिर उसे जीवन देने का प्रयास करते हैं, पहले दर्द देते हैं और फिर दिए गए दर्द में आनंद जोड़ते हैं।'

हे राजा, तथागत लोगों को घायल तो करते हैं, पर उनके हित में; उन्हें गिराते तो उनके लाभ के लिए; उन्हें मारते तो उनके फायदे के लिए। ठीक वैसे ही जैसे हे राजा, माता-पिता अपने बच्चों को चोट पहुँचाते हैं और यहाँ तक कि उन्हें गिरा भी देते हैं, यह सोचकर कि उनके

अच्छा; इसलिए जिस भी विधि से जीवों के सद्‌गुणों में वृद्धि की जा सकती है, उसी विधि से वह उनके कल्याण में योगदान देता है। हे राजा, यदि देवदत्त संघ में प्रवेश न करते, तो गृहस्थ के रूप में वे अनेक कर्म संचित करते, जिससे उन्हें दुख की अवस्थाओं का सामना करना पड़ता, और इस प्रकार लाखों कल्पों तक कष्ट से दुःख और एक विनाश से दूसरे विनाश की अवस्था में निरंतर पीड़ा भोगते। यह जानकर ही भगवान ने अपनी कृपा से देवदत्त को संघ में प्रवेश दिया। यह सोचकर कि भगवान के उपदेशों के अनुसार संसार का त्याग करने से देवदत्त का दुःख अविभाज्य हो जाएगा, उन्होंने अपनी कृपा से उनके भारी दुःख को हल्का करने का यह उपाय अपनाया।

30. हे राजा, जैसे कोई प्रभावशाली व्यक्ति अपने धन, प्रतिष्ठा, समृद्धि या जन्म के बल पर, जब राजा द्वारा अपने किसी मित्र या रिश्तेदार पर कोई गंभीर दंड लगाया जाता है, तो उस पर रखे गए भरोसे से उत्पन्न सामर्थ्य के बल पर उसे हल्का कर देता है; ठीक उसी प्रकार भगवान बुद्ध ने उन्हें संघ में प्रवेश देकर और धर्म, ध्यान, ज्ञान और हृदय की मुक्ति के प्रभाव से देवदत्त के भारी दुःख को हल्का कर दिया, जिसे लाखों कल्पों तक कष्ट भोगना पड़ता। हे राजा, जैसे कोई चतुर चिकित्सक और सर्जन किसी शक्तिशाली औषधि की सहायता से किसी गंभीर बीमारी को हल्का कर देता है, ठीक उसी प्रकार भगवान बुद्ध ने उचित साधन के ज्ञान से देवदत्त को संघ में प्रवेश देकर और दया की शक्ति से परिपूर्ण धर्म की औषधि से उनके गंभीर दुःख को हल्का कर दिया। तब, हे राजा,

क्या भगवान ने देवदत्त को अत्यधिक दुःखग्रस्त व्यक्ति से कम दुःखग्रस्त व्यक्ति में परिवर्तित करके कोई पाप किया है?

'जी नहीं, बिल्कुल नहीं। उन्होंने कोई गलती नहीं की, जरा सी भी नहीं।'

'तो हे महाराज, इसे पूर्णतः स्वीकार कीजिए, यही वह कारण है जिसके लिए भगवान बुद्ध ने देवदत्त को संघ में प्रवेश दिया।'

31. हे महाराज, भगवान बुद्ध द्वारा देवदत्त को स्वीकार किए जाने का एक और कारण सुनिए। मान लीजिए कि कुछ लोग किसी दुष्ट डाकू को पकड़कर राजा के सामने लाते हैं और कहते हैं, "यह वही दुष्ट डाकू है, महाराज। इसे वह दंड दीजिए जो आपको उचित लगे!" तब राजा उनसे कहते हैं, "हे मेरे दूतों, इस डाकू को नगर के बाहर ले जाओ और वहाँ फाँसी के स्थान पर इसका सिर काट दो।" राजा के आदेशानुसार वे उस व्यक्ति को फाँसी के स्थान की ओर ले जाते हैं। तभी राजा के निकट उच्च पदस्थ, प्रतिष्ठित, धनी और संपत्ति से संपन्न कोई व्यक्ति, जिसकी वाणी का बहुत महत्व हो और जिसका प्रभाव बहुत अधिक हो, उसे देखता है। वह उस पर दया करता है और उन लोगों से कहता है, "रुको, हे सज्जनों। इसका सिर काटने से तुम्हारा क्या भला होगा? इसे जीवित छोड़ दो और केवल एक हाथ या

पैर काट दो। मैं राजा से इसकी ओर से बात करूँगा।" और उन्होंने उस प्रभावशाली व्यक्ति के कहने पर ऐसा किया। अब क्या वह अधिकारी, जिसने उसके प्रति ऐसा व्यवहार किया था, उस लुटेरे का उपकारक होता?

'वह अपनी जान बचा लेता, महोदय। और ऐसा करने के बाद वह क्या नहीं करता?'

लेकिन क्या हाथ या पैर कटने पर उस व्यक्ति को जो पीड़ा हुई, उसके कारण उसने कोई गलती नहीं की होगी?

'महोदय, चोर को जो पीड़ा सहनी पड़ी, वह उसकी अपनी गलती थी। लेकिन जिस व्यक्ति ने उसकी जान बचाई, उसने उसे कोई नुकसान नहीं पहुंचाया।'

'हे महाराज, यह उनकी कृपा ही थी कि भगवान ने देवदत्त को प्रवेश दिया, इस ज्ञान के साथ कि इससे उसका दुःख कम हो जाएगा।'

32. हे राजा, देवदत्त का दुःख कम हो गया। क्योंकि देवदत्त ने अपनी मृत्यु के समय, अपने शेष जन्मों के लिए उसकी शरण ली और कहा:

"जो सर्वश्रेष्ठ में भी सबसे श्रेष्ठ है, देवताओं का देवता, देवताओं और मनुष्यों का मार्गदर्शक, जो सब कुछ देखता है और अच्छाई के सौ चिह्नों को धारण करता है, उसी में मैं अपने सभी जन्मों में शरण लेता हूँ।"

'हे राजा, यदि आप इस कल्प को छह भागों में विभाजित करें, तो पहले भाग के अंत में ही देवदत्त ने संघ में फूट डाली थी। अन्य पाँच भागों में नरक भोगने के बाद वह मुक्त हो जाएगा और अत्तिसार नाम से पक्केका-बुद्ध बन जाएगा।'

नागसेना, भगवान बुद्ध ने देवदत्त को जो वरदान दिया है, वह महान है। तथागत

जिसने उसे पक्केका-बुद्ध की अवस्था तक पहुँचाया है, उसने उसके लिए क्या नहीं किया है?'

लेकिन हे राजा, देवदत्त ने संघ में फूट डालकर नरक में कष्ट भोगा है, तो क्या भगवान ने उसके साथ अन्याय नहीं किया?

'नहीं, श्रीमान। यह देवदत्त की स्वयं की गलती है; और भगवान ने, जिन्होंने उनके कष्टों को कम किया है, उन्हें कोई हानि नहीं पहुंचाई है।'

'तो हे राजा, इसे पूर्णतः इस कारण के रूप में स्वीकार करो कि भगवान ने देवदत्त को संघ में प्रवेश दिया।'

33. हे राजा, उसके ऐसा करने का एक और कारण सुनो। मान लो कि एक ऐसे घाव का उपचार करते समय, जो मवाद और खून से भरा हो, जिसके गहरे गड्ढे में घाव करने वाला हथियार ही रह गया हो, जिसमें सड़े हुए मांस की दुर्गंध आ रही हो, और जो लगातार बदलते लक्षणों, तापमान में उतार-चढ़ाव और तीनों दोषों—वात, पित्त और कफ—के मिश्रण से बढ़ते दर्द के कारण और भी बदतर हो गया हो, एक कुशल चिकित्सक और सर्जन सूजन को शांत करने के लिए उस पर एक खुरदुरा, तीखा, कड़वा और चुभने वाला मरहम लगाए। और जब सूजन कम हो जाए और घाव में मिठास आ जाए, तो मान लो कि वह उसे एक लैंसेट से काटे और उस पर कास्टिक से जलाए। और जब उसने घाव को दाग दिया, मान लीजिए कि वह क्षारीय घोल से धोने की सलाह दे और घाव भरने और बीमार व्यक्ति के स्वास्थ्य में सुधार के लिए उस पर कोई दवा लगाए - तो हे राजा, मुझे बताइए, क्या सर्जन द्वारा इस प्रकार मरहम लगाना, लैंसेट से काटना और दागना क्रूरता होगी?

क्या उन्होंने कास्टिक की छड़ी से नमकीन घोल से धोया?

'बिल्कुल नहीं, महोदय; वह अपने हृदय में दया भाव और उस व्यक्ति के कल्याण की इच्छा से ही ये सब कार्य करेगा।'

'और उपचार के प्रयासों से उत्पन्न होने वाले दर्द की भावनाओं के संबंध में क्या सर्जन किसी प्रकार का अपराध नहीं करेगा?'

'ऐसा कैसे? नेक इरादे से और उस व्यक्ति के कल्याण के लिए कार्य करते हुए, वह इसमें कैसे गलत हो सकता है? बल्कि यह तो स्वर्गिक आनंद की बात है कि वह दयालु सर्जन इसके योग्य हो।'

'हे महाराज, यही उनकी कृपा थी कि भगवान ने देवदत्त को अपने पास स्वीकार किया, ताकि अंत में उन्हें पीड़ा से मुक्ति मिल सके।'

34. हे राजा, एक और कारण सुनो, कि भगवान बुद्ध ने ऐसा क्यों किया। मान लो कि किसी व्यक्ति को कांटा चुभ गया है। और कोई दूसरा व्यक्ति दयालुता से और उसकी भलाई के लिए उस जगह के चारों ओर एक और नुकीले कांटे या छुरी से चीरता है, और खून बहते हुए उस कांटे को निकालता है। तो क्या उसका ऐसा करना क्रूरता होगी?

'बिल्कुल नहीं, महोदय। क्योंकि उन्होंने नेक इरादे से और उस व्यक्ति की भलाई के लिए ऐसा किया। और अगर उन्होंने ऐसा न किया होता तो वह व्यक्ति मर सकता था, या उसे इतना दर्द हो सकता था कि वह मौत के कगार पर पहुँच जाता।'

'हे महाराज, तथागत की कृपा से ही तथागत ने देवदत्त को अपने गर्भ में प्रवेश दिया, ताकि उसे उसके कष्टों से मुक्ति मिल सके। यदि उन्होंने ऐसा न किया होता, तो देवदत्त को लाखों-लाखों कल्पों के क्रम में नरक में कष्ट भोगना पड़ता।'

'जी हां, नागसेन, तथागत ने देवदत्त को, जो बाढ़ में बह रहा था, धारा की ओर सिर करके मोड़ा; जब देवदत्त जंगल में खो गया था, तब उसे फिर से रास्ता दिखाया; जब देवदत्त खाई में गिर रहा था, तब उसे सहारा दिया; जब देवदत्त निराशा में डूब गया था, तब उसे शांति प्रदान की। लेकिन इन बातों का कारण और अर्थ, नागसेन, कोई नहीं बता सकता था, जब तक कि वह तुम्हारे समान बुद्धिमान न हो!'

[देवदत्त के बारे में दुविधा यहीं समाप्त होती है।] [वेसंतारा का भूकंप।]

35. आदरणीय नागसेन, भगवान बुद्ध ने ऐसा कहा: "हे भिक्षुओं, भयंकर भूकंप के ये आठ कारण हैं, चाहे वे निकट हों या दूर।" यह एक व्यापक कथन है, एक ऐसा कथन जिसमें किसी भी बात को जोड़ने की गुंजाइश नहीं है, एक ऐसा कथन जिसमें कोई व्याख्या नहीं जोड़ी जा सकती। भूकंप का कोई नौवां कारण नहीं हो सकता। यदि होता, तो भगवान बुद्ध ने उसका उल्लेख अवश्य किया होता। यही कारण है कि कोई अन्य कारण नहीं था, इसलिए उन्होंने उसका उल्लेख नहीं किया। लेकिन हमें एक और, और नौवां कारण, तब मिलता है जब हमें बताया जाता है कि वेसंतारा के दान से पृथ्वी सात बार कांपी। यदि, नागसेन, भूकंप के आठ कारण हैं, तो वेसंतारा के दान से आए भूकंप के बारे में जो हमने सुना है वह असत्य है। और यदि यह सत्य है, तो आठ कारणों के बारे में दिया गया कथन गलत है।

भूकंप के कारणों के बारे में कही गई बात गलत है। यह दोहरा प्रश्न भी सूक्ष्म, सुलझाने में कठिन, अंधकारमय और गहन है। अब यह आपके सामने है। कम ज्ञान वाला कोई भी व्यक्ति इसे हल नहीं कर सकता, केवल आप जैसा बुद्धिमान ही कर सकता है।

36. 'हे राजा, जिस कथन का आप उल्लेख कर रहे हैं, वह भगवान बुद्ध ने कहा था, फिर भी वेसंतारा की उदारता से पृथ्वी सात बार कांपी। परन्तु वह समय से बाहर था, वह एक पृथक घटना थी, वह आठ सामान्य कारणों में शामिल नहीं थी, और इसलिए उसे उनमें से एक नहीं गिना गया। हे राजा, यह न्यायसंगत है, क्योंकि संसार में तीन प्रकार की सुप्रसिद्ध वर्षाएँ होती हैं - वर्षा ऋतु की, शीत ऋतु की, और आषाढ़ और सावन ऋतुओं की। यदि इनके अतिरिक्त कोई अन्य वर्षा होती है, तो उसे सामान्य वर्षाओं में नहीं गिना जाता, बल्कि उसे "समय से बाहर की वर्षा" कहा जाता है।' और फिर, हे राजा, जैसे हिमालय से पाँच सौ नदियाँ बहती हैं, परन्तु नदियों की गणना में केवल दस ही गिनी जाती हैं—गंगा, यमुना, अकीरावती, सरभू, माही, सिंधु, सरस्वती, वेत्रावती, वीतंसा और कंदभागा—अन्य नदियाँ अनियमित प्रवाह के कारण गणना में शामिल नहीं की जातीं। और फिर, हे राजा, जैसे राजा के अधीन एक सौ दो सौ अधिकारी होते हैं, परन्तु उनमें से केवल छह ही राजकीय अधिकारी गिने जाते हैं—सेनापति, प्रधानमंत्री, मुख्य न्यायाधीश, उच्च कोषाध्यक्ष, राजकीय छत्रवाहक और राजकीय तलवारवाहक। और क्यों? क्योंकि उन्हें राजसी विशेषाधिकार प्राप्त हैं। बाकी गिने नहीं जाते, उन्हें केवल अधिकारी कहा जाता है। हे महान राजा, इन सभी मामलों की तरह, वेसंतारा की कृपा से सात बार आया भूकंप भी एक अलग और असाधारण घटना थी।

यह एक सामान्य घटना है, और आठ सामान्य घटनाओं से अलग है, और उन आठ कारणों में इसकी गणना नहीं की जाती है।

37. 'हे राजा, क्या आपने हमारे धर्म के इतिहास में किसी ऐसे धार्मिक कार्य के बारे में सुना है जिसका प्रतिफल आपको इसी जीवन में प्राप्त हुआ हो, और जिसकी प्रसिद्धि देवताओं तक पहुंची हो?'

'जी प्रभु, मैंने इनके बारे में सुना है। ऐसे कार्यों के सात मामले हैं।'

'ये सब काम करने वाले लोग कौन थे?'

'माला बनाने वाला सुमना, ब्राह्मण एका-सातक, किराए का सेवक पुन्ना, रानी मल्लिका, गोपाल की माता के रूप में जानी जाने वाली रानी, भक्त सुप्पिया और दासी पुन्ना। ये सातों ऐसे थे जिन्होंने भक्ति के ऐसे कार्य किए जिनका फल इस जीवन में भी मिला और जिनकी प्रसिद्धि देवताओं तक भी पहुंची।'

'हे राजा, क्या आपने दूसरों के बारे में सुना है, जो अपने मानव शरीर में रहते हुए भी, महान तैंतीस के पवित्र निवास तक पहुंचे?'

'हां, मैंने भी उनके बारे में सुना है।'

और वे कौन थे?

'संगीतकार गुट्टिला, राजा साधीना, राजा निमि और राजा मंधाता—ये चारों। बहुत समय पहले यह गौरवशाली और कठिन कार्य संपन्न हुआ था।'

लेकिन क्या आपने कभी सुना है, हे राजा, कि पृथ्वी एक बार, दो बार या तीन बार कांपी हो, चाहे अभी हो या अतीत में, जब कोई उपहार दिया गया हो?

'नहीं, महोदय, मैंने इसके बारे में नहीं सुना है।'

और हे राजा—यद्यपि मैंने भी—यद्यपि मैंने परंपराएँ ग्रहण की हैं, अध्ययन में, विधि को सुनने में, उसे याद करने में, और शिष्यत्व की योग्यताओं को प्राप्त करने में, तथा यद्यपि मैं सीखने में, प्रश्न पूछने और उत्तर देने में, तथा शिक्षकों के चरणों में बैठने में तत्पर रहा हूँ—फिर भी मैंने कभी नहीं सुना

ऐसी घटना का मैंने केवल वेसंतारा नामक तेजस्वी राजा के असाधारण दान के अलावा कहीं और उल्लेख नहीं किया है। और भगवान कस्सपा और शाक्य ऋषि के समय के बीच लाखों वर्ष बीत चुके हैं, परन्तु उस पूरे कालखंड में मैंने ऐसा कोई मामला नहीं सुना। हे राजा, यह कोई साधारण प्रयास या संघर्ष नहीं है जिससे विशाल पृथ्वी हिलती है। यह तब होता है जब धर्म के भार से, परम पवित्रता की गवाही देने वाले अच्छे कर्मों के बोझ से दबकर, विशाल पृथ्वी कांप उठती है, थरथराने लगती है और हिल जाती है। तब ऐसा होता है जैसे किसी रथ पर अत्यधिक भार लाद दिया जाए, और उसका केंद्र और तीलियां फट जाएं, और धुरी दो टुकड़ों में टूट जाए। तब ऐसा लगता है जैसे हवा से चलने वाले तूफ़ान के पानी से भरा आकाश, घने वर्षा बादलों के बोझ से दबा हुआ, बवंडर के आगमन पर गरजता, कांपता और प्रचंड होता है। हे महाराज, ऐसा ही हुआ जब विशाल पृथ्वी, राजा वेसंतारा की उदारता के विशाल और व्यापक प्रभाव के असहनीय भार को सहन न कर पाने के कारण, कांप उठी और हिल गई। क्योंकि राजा वेसंतारा का हृदय न तो कामवासना, न द्वेष, न सुस्ती, न अहंकार, न भ्रम, न पाप, न विवाद, न असंतोष की ओर झुका था, बल्कि वह पूरी तरह से उदारता की ओर मुड़ा हुआ था। और यह सोचते हुए कि, "जो लोग चाहते हैं और अभी तक नहीं आए हैं, वे अब आ जाएं! जो भी आएं, उन्हें उनकी इच्छा की हर चीज मिले और वे तृप्त हो जाएं!" उनका मन निरंतर और अनंत दान देने में लगा रहा। और हे राजा, उनका मन हृदय की इन दस अवस्थाओं पर ही केंद्रित था—आत्मसंयम पर, आंतरिक शांति पर, और

उन्होंने धीरज, आत्मसंयम, संयम, पुण्य व्रतों के प्रति स्वैच्छिक समर्पण, क्रोध और क्रूरता के सभी रूपों से मुक्ति, सत्यवादिता और हृदय की पवित्रता पर ध्यान केंद्रित किया। हे राजा, उन्होंने अपनी पशुवत वासनाओं की पूर्ति की सभी खोजों का त्याग कर दिया था; उन्होंने भविष्य के जीवन की सभी लालसाओं पर विजय प्राप्त कर ली थी; उनका सारा प्रयास केवल उच्चतर जीवन की ओर ही लगा हुआ था। हे राजा, उन्होंने स्वयं की चिंता छोड़ दी थी और तब से केवल दूसरों की देखभाल में ही अपना जीवन व्यतीत किया। उनका मन इस विचार पर अडिग था: "मैं सभी प्राणियों को शांति, स्वास्थ्य, समृद्धि और दीर्घायु कैसे प्रदान करूँ?" और जब, हे राजा, वह दान दे रहा था, तो उसने किसी गौरवशाली पुनर्जन्म की इच्छा से नहीं दिया, न ही धन की लालसा से, न ही प्रतिफल पाने की लालसा से, न ही चापलूसी की लालसा से, न ही अपने लिए दीर्घायु की लालसा से, न ही उच्च कुल की लालसा से, न ही सुख की लालसा से, न ही शक्ति की लालसा से, न ही प्रसिद्धि की लालसा से, न ही पुत्र-पुत्रियों की लालसा से—बल्कि उसने परम ज्ञान और उसके खजाने की लालसा से इतना विशाल, इतना अतुलनीय, इतना अद्वितीय दान दिया। जब उसने उस परम ज्ञान को प्राप्त कर लिया, तब उसने यह श्लोक कहा:

"गाली, मेरा पुत्र, और काला मृग, मेरी पुत्री, और मेरी रानी, मेरी पत्नी, मद्दी, मैंने इन सबको बिना सोचे-समझे त्याग दिया— और यह सब मैंने बुद्धत्व प्राप्त करने के लिए किया।"

38. 'हे राजा, महान राजा वेसंतारा ने क्रोधी पुरुष को नम्रता से, दुष्ट पुरुष को दयालुता से और लालची पुरुष को उदारता से पराजित किया।'

और उसने झूठ बोलने वाले को सत्य से, और समस्त बुराई को धर्म से परास्त किया। जब वह इस प्रकार दान कर रहा था—वह जो धर्म का अनुयायी था, जिसने धर्म को अपना लक्ष्य बनाया था—तब पृथ्वी को स्थिर रखने वाली तीव्र हवाएँ उसकी उदारता के प्रभाव से पूरी शक्ति से व्याकुल हो उठीं, और धीरे-धीरे, एक-एक करके, तीव्र हवाएँ बेकाबू होकर बहने लगीं, और पृथ्वी ऊपर-नीचे और हर ओर डगमगाने लगी, और मिट्टी में जड़े विशाल वृक्ष लड़खड़ाने लगे, और आकाश में बादलों का समूह उमड़ पड़ा, और धूल से भरी भयानक हवाएँ चलने लगीं, और आकाश में हलचल मच गई, और तूफान ज़ोरदार झटकों के साथ चलने लगे, और एक भयंकर और प्रचंड शोर सुनाई दिया। और उन तेज हवाओं के प्रचंड चलने से जल धीरे-धीरे हिलने लगा, और जल की हलचल से बड़ी मछलियाँ और शल्कमय जीव विचलित हो गए, और लहरें दोहरी लहरों के रूप में उठने लगीं, और जल में रहने वाले जीव भयभीत हो गए, और जैसे ही लहरें जोड़े में टकराईं, सागर का दहाड़ तेज हो गया, और फुहार उग्र हो गई, और झाग की मालाएँ उठ उठीं, और विशाल सागर अपनी गहराई में खुल गया, और जल इधर-उधर बहने लगा, उनकी उग्र लहरों की चोटियाँ इधर-उधर टकराने लगीं; और असुर, गरुल, यक्ष और नाग भय से कांप उठे, और अपनी घबराहट में सोचने लगे: "अब क्या! अब क्या! क्या विशाल सागर उलट-पुलट हो रहा है?"

और भयभीत मन से वे बचने का रास्ता खोजने लगे। जिस जल पर यह टिका हुआ था, वह व्याकुल और अशांत हो उठा, जिससे विशाल पृथ्वी कांप उठी, और उसके साथ ही पर्वत श्रृंखलाएं और समुद्र की गहराई भी कांप उठी, और सिनेरु घूमने लगा, और उसकी पथरीली पर्वत चोटी मुड़ गई। पृथ्वी के कांपने से सर्प, नेवले, बिल्लियां, सियार, सूअर, हिरण और पक्षी बहुत व्याकुल हो गए, और कम शक्ति वाले यक्ष रोने लगे, जबकि अधिक शक्ति वाले यक्ष प्रसन्न हुए।

39. हे राजा, जैसे जब पानी से भरे और चावल के दानों से लदे हुए एक विशाल और शक्तिशाली कड़ाहे को भट्टी में रखा जाता है, तो नीचे जलती हुई आग सबसे पहले कड़ाहे को गर्म करती है, और जब वह गर्म हो जाता है तो पानी उबलने लगता है, और जैसे-जैसे पानी उबलता है, चावल के दाने गर्म होकर पानी में इधर-उधर उछलते हैं, और बुलबुलों का एक समूह उठता है, और झाग की एक माला बन जाती है—ठीक उसी प्रकार, हे राजा, राजा वेसंतारा ने संसार में जो कुछ भी देना सबसे कठिन माना जाता है, उसे दान कर दिया, और उनकी उदारता के कारण नीचे की तेज हवाएँ पूरी तरह से उत्तेजित होने से खुद को रोक नहीं पाईं, और तेज हवाओं के अशांत होने पर जल कांप उठा, और जल के अशांत होने पर विशाल पृथ्वी कांप उठी, और इस प्रकार हवाएँ, जल और पृथ्वी तीनों, मानो, उस विशाल और शक्तिशाली प्रभाव से एक हो गए।

उस महान दान का परिणाम यही था। और हे राजा, महान राजा वेसंतारा की उस उदारता के समान शक्ति रखने वाला कोई दूसरा दान कभी नहीं हुआ।

40. हे राजा, जिस प्रकार पृथ्वी पर अनेक बहुमूल्य रत्न पाए जाते हैं—नीलम, बड़ा नीलम, मनोकामना पूरी करने वाला रत्न, काँटे की आँख, सन का रत्न, बबूल का रत्न, मोहक रत्न, सूर्य का प्रिय रत्न, चंद्रमा का प्रिय रत्न, क्रिस्टल, कग्गोपक्कमक, पुखराज, माणिक्य और मसार पत्थर—परन्तु राजाओं के राजा का तेजस्वी रत्न इन सब में श्रेष्ठ और सबसे बढ़कर माना जाता है, क्योंकि हे राजा, उस रत्न की चमक चारों ओर एक मील तक फैलती है—ठीक उसी प्रकार, हे राजा, उन सभी उपहारों में जो

पृथ्वी पर आज तक दिए गए सभी उपहारों में, यहाँ तक कि सबसे महान और अद्वितीय उपहारों में भी, अच्छे राजा वेसंतारा का वह उपहार उन सभी से श्रेष्ठ माना जाता है। और हे राजा, उस उपहार के दिए जाने पर ही विशाल पृथ्वी सात बार काँपी।

41. हे नागसेन, बुद्धों में यह एक अद्भुत और अत्यंत आश्चर्यजनक बात है कि तथागत बुद्ध बोधिसत्व अवस्था में भी संसार में अद्वितीय, सौम्य और दयालु थे, तथा उनके लक्ष्य और प्रयास इतने ऊंचे और महान थे। हे नागसेन, आपने बोधिसत्वों की शक्ति को प्रकट किया है, आपने विजेताओं की पूर्णता पर अत्यंत स्पष्ट प्रकाश डाला है, आपने दिखाया है कि समस्त देवी-देवताओं के संसार में तथागत अपने श्रेष्ठ जीवन के अभ्यास में सर्वोच्च और सर्वश्रेष्ठ हैं। हे पूज्य नागसेन, आपने बहुत अच्छा कहा। विजेता के सिद्धांत का महिमामंडन हुआ है, विजेता की पूर्णता का गुणगान हुआ है, विरोधियों के तर्कों की गुत्थी सुलझ गई है, विरोधियों के सिद्धांतों का घड़ा

चकनाचूर हो गया है, गहन दुविधा स्पष्ट हो गई है, जंगल खुला मैदान बन गया है, विजेता के बच्चों को उनके दिल की इच्छा पूरी हो गई है। हे श्रेष्ठ धर्मगुरु, जैसा आपने कहा है, वैसा ही है, और मैं आपकी बात स्वीकार करता हूँ!

[यहाँ वेसंतारा के उपहार स्वरूप आए भूकंप को लेकर दुविधा समाप्त होती है।]

[राजा शिव]

42. 'आदरणीय नागसेन, आपके लोग कहते हैं: "राजा शिव ने अपनी आँखें उस व्यक्ति को दे दीं जिसने उनसे आँखें माँगी थीं, और जब वह अंधा हो गया, तो उसे स्वर्ग से नई आँखें मिलीं।" यह कथन स्वीकार्य नहीं है, यह वक्ता को निंदा का पात्र बनाता है, यह त्रुटिपूर्ण है। क्योंकि सूत्र में कहा गया है: "जब कारण पूरी तरह से नष्ट हो जाता है, जब कोई कारण, कोई आधार शेष नहीं रहता, तब दिव्य दृष्टि उत्पन्न नहीं हो सकती।" अतः यदि उन्होंने अपनी आँखें दे दीं, तो यह कथन कि उन्हें नई (दिव्य) आँखें प्राप्त हुईं, असत्य है; और यदि उन्हें दिव्य आँखें प्राप्त हुईं; तो यह कथन कि उन्होंने अपनी आँखें दे दीं, असत्य है। यह दुविधा भी दोधारी है, गाँठ से भी अधिक पेचीदा, तीर से भी अधिक भेदी, जंगल से भी अधिक उलझी हुई। अब यह आपके समक्ष प्रस्तुत है। अपने भीतर उस कार्य को पूरा करने की इच्छा जागृत कीजिए जो आपको सौंपा गया है, ताकि आप विरोधियों का खंडन कर सकें!'

'हे राजा, राजा सिवी ने अपनी आँखें त्याग दीं। इस बात पर संदेह न करें। और उनके स्थान पर दिव्य आँखें उनके लिए उत्पन्न की गईं। इस बात पर भी आपको संदेह नहीं करना चाहिए।'

लेकिन फिर, नागसेन, क्या दिव्य दृष्टि तब उत्पन्न हो सकती है जब उसका कारण पूरी तरह से नष्ट हो गया हो, जब उसका कोई कारण, कोई आधार शेष न रह जाए?

'बिल्कुल नहीं, हे राजा।'

तो फिर वह कौन सा कारण है जिसके चलते यह इस मामले में उत्पन्न हुआ, जबकि इसका मूल कारण पूरी तरह से नष्ट हो चुका था और इसका कोई आधार या कारण शेष नहीं था? अब मुझे इस बात का कारण समझाइए।

43. 'तो फिर, हे राजा? क्या संसार में सत्य जैसी कोई वस्तु है, जिसके कथन से सच्चे विश्वासी सत्य का कार्य कर सकते हैं?'

'जी प्रभु, ऐसा है। और इसके द्वारा सच्चे विश्वासी वर्षा करवाते हैं, आग बुझाते हैं, जहर के प्रभावों को दूर करते हैं और कई अन्य काम पूरे करते हैं जो वे करना चाहते हैं।'

'तो, हे महान राजा, यह बात बिल्कुल सही बैठती है, यह पूरी तरह से मेल खाती है। सत्य की शक्ति से ही राजा सिवि के लिए वे दिव्य नेत्र उत्पन्न हुए थे। सत्य की शक्ति से ही दिव्य नेत्र उत्पन्न हुए, जबकि कोई अन्य कारण मौजूद नहीं था, क्योंकि उस स्थिति में सत्य स्वयं ही उनके उत्पन्न होने का कारण था। मान लीजिए,

[पैराग्राफ जारी है] हे राजा, यदि कोई सिद्ध (सिद्ध पुरुष) मंत्र का उच्चारण करके और यह कहकर: "अब भयंकर वर्षा हो!" भारी वर्षा उत्पन्न कर दे, तो क्या उस स्थिति में आकाश में वर्षा का कोई ऐसा कारण होगा जिससे वर्षा हो सके?

'नहीं, महोदय। इसका कारण स्वयं आकर्षण ही होगा।'

'हे महाराज, इस मामले में ऐसा ही है। कोई साधारण कारण नहीं होगा। स्वयं सत्य ही दिव्य दृष्टि के विकास के लिए पर्याप्त कारण होगा!'

44. 'अब मान लीजिए, हे राजा, कि एक सिद्ध किसी मंत्र का उच्चारण करे और कहे: "अब इस भयंकर, प्रचंड अग्नि के गोले को पीछे हटने दो!" और जैसे ही मंत्र दोहराया जाए, वह पीछे हट जाए—क्या कोई ऐसा कारण बताया जा सकता है जिससे यह परिणाम उत्पन्न हो?'

'नहीं, महोदय। इसका कारण स्वयं आकर्षण ही होगा।'

'हे महाराज, हमारे मामले में भी कोई साधारण कारण नहीं होगा। सत्य की शक्ति ही अपने आप में पर्याप्त कारण होगी!'

45. 'अब मान लीजिए, हे राजा, कि उन सिद्धों में से कोई एक मंत्र का उच्चारण करे और फिर कहे: "यह घातक विष एक औषधि बन जाए!" और जैसे ही मंत्र दोहराया जाए, ऐसा ही हो जाए—क्या उस प्रभाव को उत्पन्न करने के लिए कोई पूर्व-निर्धारित कारण होगा?'

'बिल्कुल नहीं, महोदय। वह मंत्र स्वयं ही उस घातक विष को दूर भगा देगा।'

'ठीक इसी प्रकार, हे महान राजा, राजा सिवी के मामले में, किसी साधारण कारण के बिना, स्वयं सत्य ही उनकी आँखों के पुनरुत्पादन के लिए पर्याप्त कारण था।'

46. हे राजा, अब चार आर्य सत्यों की प्राप्ति का कोई अन्य कारण नहीं है। ये केवल सत्य कर्म के द्वारा ही प्राप्त होते हैं। हे राजा, चीन देश में एक राजा है, जो जब विशाल सागर को वश में करना चाहता है, तो चार महीने के अंतराल पर सत्य कर्म करता है, और फिर अपने सिंहों द्वारा खींचे गए राज रथ पर सवार होकर विशाल सागर में एक मील की दूरी तक प्रवेश करता है। तब उसके रथ के आगे विशाल लहरें पीछे हट जाती हैं, और जब वह लौटता है तो वे फिर से उसी स्थान पर बहने लगती हैं। लेकिन क्या सभी देवताओं और मनुष्यों की संयुक्त साधारण शारीरिक शक्ति से सागर को इस प्रकार पीछे हटाया जा सकता है?

'महोदय, एक छोटे से टैंक का पानी भी इस तरह पीछे नहीं हट सकता, विशाल महासागर के पानी की तो बात ही क्या!'

'इससे सत्य की शक्ति का ज्ञान होता है। ऐसी कोई जगह नहीं है जहाँ यह न पहुँचे।'

47. हे राजा, जब धर्मात्मा राजा अशोक एक दिन पाटलिपुत्त नगर में नगरवासियों, देशवासियों, अपने अधिकारियों, सेवकों और राज्य मंत्रियों के बीच खड़े थे, तब उन्होंने पहाड़ियों से बहकर आई बाढ़ से भरी हुई, लबालब भरी और उफान मारती गंगा नदी को देखा—वह विशाल नदी जिसकी लंबाई पाँच सौ मील और चौड़ाई एक मील थी—तो उन्होंने अपने अधिकारियों से कहा: "हे मेरे मित्रों, क्या कोई ऐसा है जो इस महान गंगा को विपरीत दिशा में और ऊपर की ओर बहा सके?"

"नहीं, महाराज, यह असंभव है," उन्होंने कहा।

नदी किनारे भीड़ में बिंदूमती नाम की एक वेश्या थी, और उसने लोगों को राजा द्वारा पूछे गए प्रश्न को दोहराते हुए सुना। तब उसने मन ही मन कहा: "मैं यहाँ हूँ, एक

हे वेश्या, पातलिपुत्त के इस नगर में, मैं अपने शरीर को बेचकर जीविका कमाती हूँ, मैं सबसे नीच पेशा अपनाती हूँ। राजा को मुझ जैसी स्त्री द्वारा किए गए सत्य के कार्य की शक्ति देखनी चाहिए। और उसने सत्य का कार्य किया। और उसी क्षण शक्तिशाली गंगा नदी, गरजती और उग्र होती हुई, सभी लोगों के सामने वापस ऊपर की ओर बहने लगी!

'तब जब राजा ने शक्तिशाली गंगा के भंवरों की लहरों की गर्जना और शोर सुना, तो वह चकित और विस्मय से भर गया और उसने अपने अधिकारियों से कहा: "यह कैसे संभव है कि महान गंगा उल्टी दिशा में बह रही है?"'

और उन्होंने उसे सब कुछ बताया। तब भावुक होकर राजा स्वयं शीघ्रता से गया और वेश्या से पूछा: "क्या यह सच है कि तुम्हारे सत्य कर्म के कारण ही गंगा उल्टी दिशा में बहने लगी है?"

"जी हां, महाराज," उसने कहा।

और राजा ने पूछा, "इस मामले में तुम्हें इतनी शक्ति कहाँ से मिली? या कौन है जो तुम्हारी बातों को दिल से मानता है (और उन पर अमल करता है)? किस अधिकार से तुम, जो तुच्छ हो, इस विशाल नदी को उल्टी दिशा में बहाने में सक्षम हो गए हो?"

और उसने उत्तर दिया: "यह सत्य की शक्ति से ही संभव है, महान राजा।"

लेकिन राजा ने कहा: "तुम्हारे अंदर वह शक्ति कैसे हो सकती है—तुम तो दुष्ट और व्यभिचारी स्त्री हो?"

क्या वे लोग सद्‌गुणहीन, संयमहीन, पापी हैं जिन्होंने सभी सीमाएँ पार कर ली हैं, और जो अपराधों से भरे हुए हैं, और मूर्खों की लूट पर जीते हैं?

"हे राजा, आपकी बात सत्य है। मैं ठीक वैसा ही प्राणी हूँ। लेकिन मुझ जैसे प्राणी में भी सत्य के कार्य की शक्ति इतनी महान है कि मैं इसके द्वारा देवताओं और मनुष्यों के पूरे संसार को उलट-पुलट कर सकता हूँ।"

तब राजा ने कहा, "यह सत्य का कार्य क्या है? अब मुझे इसके बारे में बताओ।"

"हे महाराज, जो कोई भी मुझे सोना देता है—चाहे वह कुलीन हो, ब्राह्मण हो, व्यापारी हो या सेवक—मैं उन सभी को एक समान मानता हूँ। जब मैं देखता हूँ कि वह कुलीन है तो मैं उसके प्रति कोई भेदभाव नहीं करता। यदि मैं जानता हूँ कि वह दास है तो मैं उसका तिरस्कार नहीं करता। चापलूसी और द्वेष से मुक्त होकर मैं उसकी सेवा करता हूँ जिसने मुझे खरीदा है। महाराज, यही सत्य के उस कार्य का आधार है जिसके बल पर मैंने गंगा को वापस मोड़ दिया।"

48. 'हे राजा, यही कारण है कि सत्य के प्रति दृढ़ रहने वालों को सब कुछ प्राप्त हो जाता है। इसलिए राजा शिवी ने अपनी आँखें उस व्यक्ति को दे दीं जिसने उनसे आँखें माँगी थीं, और उन्हें स्वर्ग से आँखें प्राप्त हुईं, और यह उनके सत्य कर्म के फलस्वरूप हुआ। परन्तु सूत्र में जो कहा गया है कि जब देहधारी आँख नष्ट हो जाती है, और उसका कारण, उसका आधार, हटा दिया जाता है, तब कोई दिव्य आँख उत्पन्न नहीं हो सकती, वह केवल उस आँख, उस अंतर्दृष्टि के बारे में कहा गया है, जो चिंतन से उत्पन्न होती है। और हे राजा, आपको इसी प्रकार इसे ग्रहण करना चाहिए।'

'बहुत खूब कहा, नागसेना! आपने सराहनीय काम किया है।'

आपने मेरी दुविधा का समाधान कर दिया है; आपने उस बिंदु को सही ढंग से समझाया है जिसमें मैंने आपको गलत साबित करने की कोशिश की थी; आपने अपने प्रतिद्वंद्वी को पूरी तरह से परास्त कर दिया है। बात यही है, और मैं इसे इसी रूप में स्वीकार करता हूँ।

[यहाँ राजा सिवी के सत्य के कार्य से संबंधित दुविधा समाप्त होती है।]

गर्भाधान संबंधी दुविधा।

49. यह दुविधा विस्तृत है, जिसके बारे में पाली भाषा में बेहतर जानकारी मिल सकती है।

[विश्वास की अवधि।]

55. आदरणीय नागसेना, भगवान बुद्ध ने कहा है: "परन्तु अब, आनंद, यह उत्तम विधि केवल पाँच सौ वर्षों तक ही स्थिर रहेगी।" परन्तु दूसरी ओर, भगवान बुद्ध ने ठीक पहले घोषणा की।

उनकी मृत्यु सुभद्दा संन्यासी के इस प्रश्न के उत्तर में हुई: "पर यदि इस प्रणाली में बंधुओं को परिपूर्ण जीवन प्राप्त हो, तो संसार अरहतों से वंचित नहीं रहेगा।" यह अंतिम वाक्य पूर्ण और सर्वव्यापी है; इसे नकारा नहीं जा सकता। यदि पहला कथन सत्य है, तो दूसरा भ्रामक है, और यदि दूसरा सही है, तो पहला असत्य है। यह भी एक दोधारी प्रश्न है, जो जंगल से भी अधिक उलझा हुआ, बलवान पुरुष से भी अधिक शक्तिशाली और गाँठ से भी अधिक पेचीदा है। अब यह प्रश्न आपसे पूछा जाता है। अपने ज्ञान की शक्ति का विस्तार दिखाइए, जैसे समुद्र के बीच में विशालकाय जीव।

56. 'हे राजा, भगवान बुद्ध ने वे दोनों कथन कहे हैं जिनका आपने उल्लेख किया है। परन्तु वे भाव और शाब्दिक अर्थ दोनों में एक दूसरे से भिन्न हैं। एक कथन धर्म की अवधि की सीमा से संबंधित है, दूसरा धार्मिक जीवन के अभ्यास से - ये दो बातें एक दूसरे से उतनी ही अलग हैं जितनी आकाश पृथ्वी की सतह से, स्वर्ग नरक से, अच्छाई बुराई से और सुख दुख से। परन्तु ऐसा होने पर भी, कहीं आपका प्रश्न व्यर्थ न हो जाए, इसलिए मैं इस विषय को इसके मूल संदर्भ में और अधिक स्पष्ट करूँगा।'

57. जब भगवान बुद्ध ने कहा कि अच्छा विधान केवल पाँच सौ वर्षों तक ही कायम रहेगा, तो उन्होंने इसके विनाश का समय घोषित करते हुए, इसके शेष अस्तित्व को सीमित कर दिया। क्योंकि उन्होंने कहा: "अच्छा विधान, आनंद, एक हजार वर्षों तक कायम रहेगा यदि इसमें किसी स्त्री को प्रवेश न दिया गया होता।"

[पैराग्राफ जारी है] व्यवस्था। लेकिन अब, आनंद, यह केवल पाँच सौ वर्षों तक ही चलेगी। लेकिन ऐसा कहकर, हे राजा, क्या भगवान ने अच्छे विधान के लुप्त होने की भविष्यवाणी की, या उसके स्पष्ट ज्ञान पर दोष मढ़ा?

'बिल्कुल नहीं, महोदय।'

'बिल्कुल सही। यह किए गए नुकसान की घोषणा थी, शेष बचे हुए की सीमा का ऐलान था। जैसे कोई व्यक्ति जिसकी आमदनी कम हो गई हो, सार्वजनिक रूप से यह घोषणा करता है कि उसके पास क्या बचा है: "मैंने इतनी संपत्ति खो दी है; इतना बचा है"— उसी प्रकार भगवान बुद्ध ने देवताओं और मनुष्यों को यह बताया कि क्या बचा है, जब उन्होंने यह घोषणा की कि क्या खो गया है: "आनंद, अब यह उत्तम धर्म पाँच सौ वर्षों तक कायम रहेगा।" ऐसा कहकर वे धर्म की सीमा निर्धारित कर रहे थे। लेकिन जब सुभद्दा से बात करते हुए, और सच्चे समनों की पहचान बताते हुए, उन्होंने कहा: "लेकिन यदि इस व्यवस्था में भाई पूर्ण जीवन व्यतीत करें, तो संसार अरहतों से वंचित नहीं होगा"—ऐसा कहकर वे यह बता रहे थे कि धर्म किसमें निहित है। आपने किसी वस्तु की सीमा को उसके वास्तविक स्वरूप के कथन से भ्रमित कर दिया है। लेकिन यदि आप चाहें तो मैं आपको इन दोनों के बीच का वास्तविक संबंध बताऊँगा। ध्यान से सुनिए, और मेरी बातों पर विश्वासपूर्वक विचार कीजिए।'

58. 'हे राजा, मान लीजिए कि एक जलाशय ताजे ठंडे पानी से पूरी तरह भरा हुआ है, जो किनारे तक छलक रहा है, लेकिन उसका आकार सीमित है और उसके चारों ओर एक तटबंध बना हुआ है। अब यदि उस जलाशय में पानी कम न हुआ हो, और एक विशाल बादल लगातार बारिश करे, और उसमें पहले से मौजूद पानी पर अतिरिक्त वर्षा करे, तो क्या जलाशय में पानी की मात्रा कम हो जाएगी या वह समाप्त हो जाएगा?'

'बिल्कुल नहीं, महोदय।'

'लेकिन क्यों नहीं, हे राजा?'

'लगातार हो रही भारी बारिश के कारण।'

"हे राजा, ठीक इसी प्रकार, विजेता बुद्ध की शिक्षाओं के उत्तम नियम का गौरवशाली भंडार कर्तव्य, सद्गुण, नैतिकता और जीवन की पवित्रता के अभ्यास के निर्मल, शीतल जल से भरा रहता है और सर्वोच्च स्वर्ग तक भी निरंतर बहता रहता है। और यदि बुद्ध के संतान निरंतर इसमें जल बरसाते रहें, और इसके अतिरिक्त, कर्तव्य, सद्गुण, नैतिकता और जीवन की पवित्रता के अभ्यास की वर्षा होती रहे, तो यह भंडार दीर्घकाल तक बना रहेगा और संसार अरहतों से वंचित नहीं होगा। गुरु के इन शब्दों का यही अर्थ था: "परन्तु हे सुभद्दा, यदि इस पद्धति में बंधुओं का जीवन पूर्ण होता रहे, तो संसार अरहतों से वंचित नहीं होगा।"

59. 'अब फिर से मान लो, हे राजा, कि लोग लगातार एक भयंकर भट्टी में सूखा गोबर, सूखी लकड़ियाँ और सूखे पत्ते डालते रहें—क्या वह आग बुझ जाएगी?'

'जी नहीं, बिल्कुल नहीं। बल्कि यह और भी अधिक प्रचंड होकर जलेगा और और भी अधिक चमकेगा।'

'हे महाराज, ठीक इसी प्रकार, कर्तव्य, सद्गुण, नैतिकता और पवित्र जीवन के अभ्यास से विजेता बुद्ध की महिमामयी शिक्षा दस हजार संसारों पर प्रकाशमान होती है। और हे महाराज, इसके अतिरिक्त, यदि बुद्ध के संतान पाँच प्रकार के आध्यात्मिक परिश्रम में स्वयं को समर्पित करते हुए उत्साहपूर्वक प्रयास करते रहें—यदि वे त्रिविध अनुशासन की लालसा रखते हुए उसमें स्वयं को प्रशिक्षित करें—'

यदि वे निरंतर सही आचरण का पूर्णतया पालन करें, सभी कुकर्मों से पूर्णतया दूर रहें और धार्मिक जीवन का अभ्यास करें, तो विजेता का यह गौरवशाली सिद्धांत वर्षों के बीतने के साथ-साथ और अधिक दृढ़ होता जाएगा, और संसार अरहतों से वंचित नहीं होगा। हे राजा, इसी संदर्भ में गुरु ने कहा था: "परन्तु हे सुभद्दा, यदि इस प्रणाली में बंधु परिपूर्ण जीवन जीते रहें, तो संसार अरहतों से वंचित नहीं होगा।"

60. 'हे राजा, मान लीजिए कि लोग पहले से ही चमकदार, अच्छी तरह से पॉलिश किए गए, चिकने और चमकदार बेदाग दर्पण को लगातार महीन मुलायम लाल पाउडर से पॉलिश करते रहें, तो क्या उसकी सतह पर गंदगी, धूल और कीचड़ जमा हो जाएगी?'

'जी नहीं, महोदय। बल्कि यह निश्चित रूप से पहले से भी अधिक बेदाग हो जाएगा।'

हे महाराज, ठीक इसी प्रकार, विजेता का गौरवशाली सिद्धांत स्वभाव से निष्कलंक और बुराई की धूल-मिट्टी से पूर्णतः मुक्त है। और यदि बुद्ध के संतानें इसे बुराई के निवारण, कर्तव्य, सद्गुण, नैतिकता और जीवन की पवित्रता के अभ्यास से उत्पन्न पुण्य द्वारा शुद्ध करें, तो यह गौरवशाली सिद्धांत दीर्घायु रहेगा और संसार अरहतों से वंचित नहीं होगा। इसी संदर्भ में भगवान बुद्ध ने कहा था: "परन्तु हे सुभद्दा, यदि इस सिद्धांत में बंधुओं का जीवन सदाचारपूर्ण बना रहे, तो संसार अरहतों से वंचित नहीं होगा।" क्योंकि हे महाराज, गुरु की शिक्षा का मूल आचरण में है, आचरण ही उसका सार है, और यह तब तक स्थिर रहती है जब तक आचरण में ढिलाई नहीं आती।

61. 'आदरणीय नागसेना, जब आप अच्छे धर्म के लुप्त होने की बात करते हैं, तो आपका इससे क्या तात्पर्य है?'

हे राजा, किसी धर्म-प्रणाली के लुप्त होने के तीन तरीके हैं। वे तीन क्या हैं? उस धर्म-प्रणाली की बौद्धिक समझ में कमी आना, उसके अनुरूप आचरण में कमी आना और उसके बाहरी स्वरूप में कमी आना। जब उसकी समझ समाप्त हो जाती है, तो उस धर्म-प्रणाली में सही आचरण करने वाले व्यक्ति को भी उसकी स्पष्ट समझ नहीं रहती। आचरण में कमी आने से अनुशासन के नियमों का प्रचार-प्रसार बंद हो जाता है, केवल धर्म का बाहरी स्वरूप ही शेष रह जाता है। जब बाहरी स्वरूप समाप्त हो जाता है, तो परंपरा का क्रम टूट जाता है। ये किसी धर्म-प्रणाली के लुप्त होने के तीन रूप हैं।

'हे पूज्य नागसेन, आपने इस गहन दुविधा को भली-भांति समझाया है और इसे स्पष्ट कर दिया है। आपने उलझन सुलझा दी है; आपने विरोधी के तर्कों को नष्ट कर दिया है, उन्हें टुकड़े-टुकड़े कर दिया है, उन्हें गलत साबित कर दिया है—हे श्रेष्ठ गुरुओं!'

[यहाँ आस्था की अवधि को लेकर दुविधा समाप्त होती है।] [बुद्ध का निष्पाप होना।]

62. 'आदरणीय नागसेन, क्या भगवान बुद्ध ने बुद्ध बनने पर अपने भीतर की सारी बुराई को जलाकर राख कर दिया था, या उनमें अभी भी कुछ बुराई शेष थी?'

'उसने सारी बुराई को जलाकर राख कर दिया था। अब कुछ भी शेष नहीं बचा था।'

'लेकिन कैसे, महाराज? क्या तथागत के शरीर में चोट नहीं लगी?'

जी हाँ, हे राजा। रागगृह में एक चट्टान का टुकड़ा उनके पैर में चुभ गया था, और एक बार उन्हें पेचिश हो गई थी, और एक बार जब उनके शरीर के रस असंतुलित हो गए थे तो उन्हें दस्त की दवा दी गई थी, और एक बार जब वे वात रोग से पीड़ित थे तो उनकी सेवा करने वाले बड़े (अर्थात आनंद) ने उन्हें गर्म पानी दिया था।

'तो, महोदय, यदि तथागत ने बुद्ध बनने पर अपने भीतर के सभी दोषों का नाश कर लिया था, तो उनके पैर में कांटा चुभने, पेचिश होने आदि का यह कथन असत्य होना चाहिए। परन्तु यदि ये सत्य हैं, तो वे दोषमुक्त नहीं हो सकते, क्योंकि कर्म के बिना कोई पीड़ा नहीं होती। सभी पीड़ाओं का मूल कर्म में है, कर्म के कारण ही दुख उत्पन्न होता है। यह दोधारी दुविधा आपके समक्ष है, और आपको इसका हल निकालना है।'

63. 'नहीं, हे राजा। सभी दुख कर्म से उत्पन्न नहीं होते। दुख उत्पन्न होने के आठ कारण हैं, जिनसे अनेक प्राणी पीड़ा भोगते हैं। और वे आठ कारण क्या हैं? वायु, पित्त और कफ की अधिकता, इन दोषों का मिश्रण, तापमान में उतार-चढ़ाव, और इनसे बचना।

विषमताएं, बाह्य कारक और कर्म। इनमें से प्रत्येक से कुछ न कुछ कष्ट उत्पन्न होते हैं, और ये आठ कारण हैं जिनसे अनेक प्राणी पीड़ा भोगते हैं। और जो कोई यह मानता है कि कर्म ही प्राणियों को हानि पहुँचाता है, और इसके अतिरिक्त पीड़ा का कोई अन्य कारण नहीं है, उसका यह कथन असत्य है।

लेकिन, महोदय, अन्य सात प्रकार के सभी दर्दों का मूल कारण भी कर्म ही है, क्योंकि वे सभी कर्म से ही उत्पन्न होते हैं।

हे महाराज, यदि समस्त रोग कर्म से उत्पन्न होते, तो उन्हें एक-दूसरे से अलग करने वाले कोई विशिष्ट लक्षण न होते। जब वायु में गड़बड़ी होती है, तो यह दस में से किसी एक कारण से होती है—शीतलन, ऊष्मा, भूख, प्यास, अधिक भोजन, लंबे समय तक खड़े रहना, अधिक परिश्रम, तेज चलना, चिकित्सा उपचार, या कर्म के फल स्वरूप। इन दस में से नौ कारण न तो भूतपूर्व जन्म में और न ही भविष्य के जन्म में कार्य करते हैं, बल्कि वर्तमान जन्म में ही कार्य करते हैं। इसलिए यह कहना उचित नहीं है कि समस्त पीड़ा कर्म के कारण होती है। हे महाराज, जब पित्त में गड़बड़ी होती है, तो यह तीन में से किसी एक कारण से होती है—शीतलन, ऊष्मा, या अनुचित भोजन से। जब कफ में गड़बड़ी होती है, तो यह शीत, ऊष्मा, या भोजन और पेय के कारण होती है। जब इन तीनों दोषों में से कोई भी असंतुलित या मिश्रित होता है, तो यह अपनी विशेष, विशिष्ट पीड़ा उत्पन्न करता है। फिर तापमान में बदलाव, विषमताओं से बचने और बाहरी कारकों से उत्पन्न होने वाले विशेष कष्ट होते हैं। और फिर कर्म का फल देने वाला कार्य और उस कार्य से उत्पन्न होने वाला कष्ट होता है। तो क्या?

कर्म के फल के रूप में उत्पन्न होने वाला कष्ट अन्य कारणों से उत्पन्न होने वाले कष्टों की तुलना में बहुत कम होता है। और अज्ञानी लोग यह कहकर अतिशयोक्ति करते हैं कि प्रत्येक कष्ट कर्म के फल के रूप में उत्पन्न होता है। बुद्ध की अंतर्दृष्टि के बिना कोई भी कर्म की क्रिया की सीमा निर्धारित नहीं कर सकता।

64. अब जब भगवान बुद्ध का पैर चट्टान के टुकड़े से छिल गया, तो उसके बाद जो पीड़ा हुई, वह मेरे द्वारा बताए गए आठ कारणों में से किसी अन्य कारण से नहीं, बल्कि केवल बाहरी कारण से हुई थी। हे राजा, देवदत्त ने लाखों जन्मों तक तथागत के प्रति घृणा रखी थी। अपनी घृणा के कारण ही उसने एक विशाल चट्टान को उठाया और उसे अपने सिर पर गिराने की आशा से धकेल दिया। परन्तु दो अन्य चट्टानें आपस में टकराईं और तथागत तक पहुँचने से पहले ही उसे रोक दिया; और उनके प्रभाव से चट्टान का एक टुकड़ा टूटकर भगवान बुद्ध के पैर पर गिरा और उससे लहूलुहान हो गया। अब यह पीड़ा भगवान बुद्ध को या तो उनके अपने कर्मों के फलस्वरूप या किसी अन्य के कर्मों के कारण हुई होगी। क्योंकि इन दो के अलावा किसी अन्य प्रकार की पीड़ा नहीं हो सकती। यह वैसा ही है जैसे कोई बीज अंकुरित नहीं होता—यह या तो मिट्टी की खराबी के कारण होता है, या बीज में किसी दोष के कारण। या यह वैसा ही है जैसे भोजन पचता नहीं—यह या तो पेट में किसी दोष के कारण होता है, या भोजन की गुणवत्ता में कमी के कारण।

65. यद्यपि भगवान बुद्ध ने कभी अपने कर्मों के फलस्वरूप पीड़ा सहन नहीं की, न ही उन्होंने किसी प्रकार की विषमता से मुक्ति पाई, फिर भी

उसे अन्य छह कारणों से भी पीड़ा सहनी पड़ी। और जिस पीड़ा को वह सहन कर सकता था, उससे उसका जीवन छीनना संभव नहीं था। हे राजा, हमारे इस शरीर में, जो चार तत्वों से बना है, सुखद और अप्रिय दोनों प्रकार की संवेदनाएँ उत्पन्न होती हैं। हे राजा, मान लीजिए कि मिट्टी का एक ढेला हवा में उछाला जाए और फिर जमीन पर गिर जाए। क्या यह उसके द्वारा पहले किए गए किसी कार्य का परिणाम होगा?

'नहीं, महोदय। इस विशाल पृथ्वी में ऐसी कोई कारण शक्ति नहीं है जिससे यह किसी अच्छे या बुरे कर्म के फल का अनुभव कर सके। कर्म से स्वतंत्र किसी वर्तमान कारण के कारण ही मिट्टी का ढेला पुनः पृथ्वी पर गिरेगा।'

'हे राजा, तथागत को विशाल पृथ्वी के समान समझा जाना चाहिए। जिस प्रकार मिट्टी का ढेला उस पर बिना किसी कर्म के गिरता है, उसी प्रकार तथागत के बिना ही चट्टान का वह टुकड़ा उसके पैर पर गिर पड़ा।'

66. 'हे राजा, मनुष्य फिर से धरती को जोतते और जोतते हैं। लेकिन क्या यह पहले किए गए किसी कार्य का परिणाम है?'

'बिल्कुल नहीं, महोदय।'

ठीक उसी प्रकार उस तिनके के गिरने के साथ हुआ। और उसे जो पेचिश हुई, वह भी किसी पूर्व कर्म का परिणाम नहीं थी, बल्कि तीनों दोषों के मिलन से उत्पन्न हुई थी। और उसे जो भी शारीरिक रोग हुआ, उसका कारण कर्म नहीं, बल्कि ऊपर बताए गए छह कारणों में से कोई एक था। क्योंकि हे राजा, भगवान बुद्ध ने, जो सभी देवताओं से श्रेष्ठ हैं, संयुत्त निकाय नामक गौरवशाली ग्रंथ में ऐसा कहा है।

मोलिया शिवक के नाम पर गद्य सूत्र: "हे शिवक, संसार में पित्त दोष से कुछ प्रकार के कष्ट उत्पन्न होते हैं। और आपको निश्चित रूप से यह जानना चाहिए कि वे क्या हैं, क्योंकि संसार में यह सर्वविदित है। परन्तु हे शिवक, वे समन और ब्राह्मण जो यह मत रखते हैं और यह

मत घोषित करते हैं कि मनुष्य को जो भी सुख, दुख या उदासीन अनुभूति होती है, वह सदा किसी पूर्व कर्म के कारण होती है—वे निश्चितता से परे जाते हैं, वे ज्ञान से परे जाते हैं, और इस बात में मैं कहता हूँ कि वे गलत हैं। और इसी प्रकार वे कष्ट भी जो कफ दोष से, या वायु दोष से, या तीनों के मिश्रण से, या तापमान में परिवर्तन से, या विषमता से बचने से, या बाह्य क्रिया से, या कर्म के फल स्वरूप उत्पन्न होते हैं। प्रत्येक स्थिति में आपको निश्चित रूप से यह जानना चाहिए कि वे क्या हैं, क्योंकि यह सर्वविदित है। परन्तु वे समन या ब्राह्मण जो... यह मत या विचार कि मनुष्य को जो भी सुख, दुख या उदासीनता का अनुभव होता है, वह हमेशा किसी पूर्व कर्म के कारण होता है—वे निश्चितता से परे हैं, वे सामान्य ज्ञान से परे हैं। और इसी में मैं कहता हूँ कि वे गलत हैं। अतः, हे राजा, सभी दुख कर्म का परिणाम नहीं होते। और आपको यह तथ्य स्वीकार करना चाहिए कि जब भगवान बुद्ध बने, तो उन्होंने अपने भीतर से सभी बुराइयों को जलाकर नष्ट कर दिया था।

'बहुत बढ़िया, नागसेना! ऐसा ही है; और मैं इसे आपके कहे अनुसार स्वीकार करता हूँ।'

[यहाँ बुद्ध के निष्पाप होने को लेकर दुविधा समाप्त होती है।]

[ध्यान के लाभों पर।]

67. 'आदरणीय नागसेना, आपके लोग कहते हैं कि तथागत को जो भी कार्य करना होता है, वह सब उन्होंने ज्ञान वृक्ष के चरणों में बैठकर ही पूरा कर लिया था। तब उन्हें कुछ भी करना बाकी नहीं था, न ही जो उन्होंने पहले ही कर लिया था उसमें कुछ जोड़ना था। लेकिन फिर यह भी कहा जाता है कि इसके तुरंत बाद वे तीन महीने तक समाधि-दर्शन में लीन रहे। यदि पहला कथन सही है, तो दूसरा असत्य होना चाहिए। और यदि दूसरा सही है, तो पहला असत्य होना चाहिए। जिसने अपना कार्य पूरा कर लिया है, उसे किसी चिंतन की आवश्यकता नहीं है। चिंतन तो उस व्यक्ति को करना चाहिए जिसका कार्य अभी शेष है। दवा की आवश्यकता बीमार व्यक्ति को होती है, स्वस्थ व्यक्ति को नहीं; भोजन की आवश्यकता भूखे व्यक्ति को होती है, भोजन की आवश्यकता उस व्यक्ति को नहीं जिसकी भूख मिट चुकी हो। यह भी एक दोधारी दुविधा है, और आपको इसे हल करना होगा!'

68. 'हे राजा, दोनों कथन सत्य हैं।'

इसमें अनेक गुण हैं। सभी तथागतों ने ध्यान के माध्यम से बुद्धत्व प्राप्त किया और इसके अच्छे गुणों को याद करते हुए इसका अभ्यास किया। उन्होंने ऐसा उसी प्रकार किया जैसे कोई व्यक्ति जिसे राजा से उच्च पद प्राप्त हुआ हो, उस पद के लाभों और उससे प्राप्त समृद्धि को याद करते हुए निरंतर उस राजा की सेवा में रहता है—ठीक उसी प्रकार जैसे कोई व्यक्ति जो किसी गंभीर बीमारी से पीड़ित और पीड़ाग्रस्त हो, दवा के प्रयोग से स्वस्थ हो जाने पर, उसी दवा का बार-बार प्रयोग करता है, उसके गुणों को याद करते हुए।

69. हे राजा, तथागतों ने ध्यान के इन अट्ठाईस गुणों का ज्ञान प्राप्त किया और उन्हीं गुणों के लिए वे ध्यान में समर्पित हो गए। वे गुण कौन-कौन से हैं? ध्यान करने वाले की रक्षा करता है, उसे दीर्घायु प्रदान करता है, उसे शक्ति से परिपूर्ण करता है, उसके दोषों को दूर करता है, उसकी बदनामी को दूर करके उसे यश प्रदान करता है, उसके असंतोष को नष्ट करके उसे संतोष से भर देता है, उसे सभी भय से मुक्त करके उसे आत्मविश्वास से भर देता है, उसके आलस्य को दूर करके उसे उत्साह से भर देता है, कामवासना, द्वेष और सुस्ती को दूर करता है, अहंकार का अंत करता है, सभी संदेहों को दूर करता है, उसके हृदय को शांत करता है, उसके मन को कोमल बनाता है, उसे प्रसन्न करता है, उसे गंभीर बनाता है, उसे बहुत लाभ दिलाता है, उसे आदर के योग्य बनाता है, उसे आनंद से भर देता है, उसे सभी मिश्रित वस्तुओं की क्षणभंगुर प्रकृति दिखाता है, पुनर्जन्म का अंत करता है, और उसे त्याग के सभी लाभ प्राप्त कराता है। हे राजा, ये तथागतों द्वारा ध्यान में लीन किए जाने वाले अट्ठाईस गुण हैं। परन्तु ऐसा इसलिए है क्योंकि

हे राजा, तथागत सिद्धि के आनंद, निर्वाण की शांत अवस्था के सुख की इतनी लालसा रखते हैं कि वे अपने मन को अपने लक्ष्य पर स्थिर रखते हुए ध्यान में लीन हो जाते हैं।

70. हे महाराज, तथागत ध्यान में चार कारणों से संलग्न होते हैं। वे चार कारण क्या हैं? हे महाराज, वे विश्राम करना चाहते हैं; ध्यान के अनेक लाभ हैं, जिनमें कोई दोष नहीं है; यह सभी श्रेष्ठ कार्यों का मार्ग है; और सभी बुद्धों ने इसकी प्रशंसा, स्तुति और महिमा की है। इन्हीं कारणों से तथागत ध्यान में संलग्न होते हैं। अतः, हे महाराज, वे ध्यान में इसलिए संलग्न नहीं होते कि उन्हें कुछ करना शेष है या जो उन्होंने पहले ही प्राप्त कर लिया है उसमें कुछ जोड़ना है, बल्कि इसलिए कि उन्होंने ध्यान के विविध लाभों को जान लिया है।

'बहुत बढ़िया, नागसेना! यह सच है, और मैं इसे आपके कहे अनुसार स्वीकार करता हूँ।'

[ध्यान को लेकर दुविधा यहीं समाप्त होती है।] [तीन महीने की सीमा।]

71. आदरणीय नागसेना, भगवान बुद्ध ने कहा है: "तथागत आनंद ने संतत्व के चारों मार्गों का गहन चिंतन, अभ्यास, विकास, संचय और सर्वथा सिद्धि प्राप्त की है, और उनमें इतनी महारत हासिल की है कि वे उनका उपयोग मानसिक उन्नति के साधन के रूप में और ज्ञानवर्धन के आधार के रूप में कर सकते हैं—और इसलिए, आनंद,

यदि वह चाहे तो एक कल्प तक, या कल्प के उस भाग तक जीवित रह सकता है जो अभी समाप्त होना बाकी है।" और फिर उन्होंने कहा: "इस समय से तीन महीने बाद तथागत की मृत्यु हो जाएगी।" यदि इनमें से पहला कथन सत्य होता, तो तीन महीने की सीमा असत्य होती। यदि दूसरा सत्य होता, तो पहला असत्य होता। तथागत बिना किसी कारण के अभिमान नहीं करते, क्योंकि भगवान बुद्ध भ्रामक शब्द नहीं बोलते, बल्कि सत्य बोलते हैं और ईमानदारी से बोलते हैं। यह भी एक दोधारी दुविधा है, गहन, सूक्ष्म, व्याख्या करने में कठिन। अब यह आपके समक्ष है। इस कुकर्म के जाल को चीर-फाड़ कर एक तरफ रख दें, शत्रु के तर्कों को चकनाचूर कर दें!

72. 'हे महाराज, ये दोनों कथन भगवान बुद्ध द्वारा कहे गए थे। परन्तु उस संदर्भ में कल्प का अर्थ मनुष्य का जीवनकाल है। और हे महाराज, जब उन्होंने ये कहा, तो वे अपनी शक्ति का गुणगान नहीं कर रहे थे, परन्तु संतत्व की शक्ति का गुणगान कर रहे थे। यह ऐसा था मानो किसी राजा के पास एक अत्यंत प्रचंड अश्व हो, जो हवा की तरह दौड़ सकता हो। और उसकी गति की शक्ति का गुणगान करने के लिए राजा अपने सभी दरबारियों, नगरवासियों, सैनिकों, योद्धाओं, ब्राह्मणों, कुलीनों और अधिकारियों की उपस्थिति में कहें: "यदि वह चाहे तो मेरा यह श्रेष्ठ अश्व एक पल में पृथ्वी को पार करके सागर की सीमा तक जा सकता है और वापस आ सकता है!"

[पैराग्राफ जारी है] यद्यपि उन्होंने दरबार में घोड़े की गति का परीक्षण करने का प्रयास नहीं किया, फिर भी उसमें वह गति थी, और वह वास्तव में एक पल में पृथ्वी को पार करके समुद्र की सीमा तक जा सकता था। ठीक इसी प्रकार, हे राजा, भगवान बुद्ध ने संतत्व की शक्ति की प्रशंसा करते हुए, देवताओं और मनुष्यों के बीच, और त्रिगुण और छहगुण अंतर्दृष्टि वाले पुरुषों—शुद्ध और निर्मल अरहतों—के बीच बैठे हुए कहा: "तथागत, आनंद ने संतत्व की चारों शक्तियों का चिंतन, अभ्यास, विकास, संचय और पराक्रमण किया है, और उन पर इस प्रकार महारत हासिल की है कि वे उनका उपयोग मानसिक उन्नति के साधन के रूप में, ज्ञानवर्धन के आधार के रूप में कर सकते हैं। इसलिए, हे आनंद, यदि वे चाहें, तो एक कल्प, या कल्प के उस भाग तक जीवित रह सकते हैं जो अभी समाप्त होना बाकी है।" और हे राजा, तथागत में वह शक्ति थी कि वे उस समय तक जीवित रह सकते थे, फिर भी उन्होंने उस सभा के बीच उस शक्ति का प्रदर्शन नहीं किया। हे राजा, भगवान सभी भावी जीवन की परिस्थितियों के संबंध में इच्छा से मुक्त हैं और उन्होंने उन सभी की निंदा की है। क्योंकि हे राजा, भगवान ने कहा है: "हे भिक्षुओं, जैसे मल की थोड़ी सी मात्रा भी दुर्गंधयुक्त होती है, वैसे ही मुझे भावी जीवन की सबसे छोटी अवस्था में भी कोई सुंदरता नहीं दिखती, यहाँ तक कि क्षणभंगुर अवस्था में भी नहीं।" अब हे राजा, जो भावी जीवन की सभी प्रकार और परिस्थितियों को इस प्रकार देखते हैं, वे क्या कहेंगे?

क्या गोबर ने भी, केवल अपनी इद्धि शक्ति के कारण, भविष्य के जीवन के लिए तीव्र इच्छा धारण की है?

'बिल्कुल नहीं, महोदय।'

'तो फिर उसने इद्धि की शक्ति को महिमामंडित करने के लिए ही ऐसा घमंड भरा कथन किया होगा।'

'बहुत बढ़िया, नागसेना! ऐसा ही है, और मैं इसे आपके कहे अनुसार स्वीकार करता हूँ।'

[तीन महीने की अवधि को लेकर दुविधा यहीं समाप्त होती है।]

पहला अध्याय यहीं समाप्त होता है।
टिपिटक >> सुत्त पिटक >> खुद्दाक निकाय >> मिलिंदपन्हा >> पुस्तक VI: दुविधाओं का समाधान - मेंडका पन्हा अध्याय 2

अनुवादक: टी.डब्ल्यू. राइस डेविड्स

पिछला <<<<-----||-10-||----->>>> अगला

1. आदरणीय नागसेना, भगवान बुद्ध ने कहा है: "हे भिक्षुओं, मैं अंतर्दृष्टि से ही धर्म का उपदेश देता हूँ, बिना अंतर्दृष्टि के नहीं।" दूसरी ओर, विनय के नियमों के विषय में उन्होंने कहा: "मेरे जाने के बाद, हे आनंद, यदि संघ चाहे तो सभी छोटे-छोटे नियमों को निरस्त कर दे।" तो क्या ये छोटे-छोटे नियम गलत थे, या अज्ञानता में और बिना उचित कारण के स्थापित किए गए थे, कि भगवान बुद्ध ने अपनी मृत्यु के बाद इन्हें निरस्त करने की अनुमति दी? यदि पहला कथन सत्य होता, तो दूसरा असत्य होता। यदि दूसरा कथन वास्तव में कहा गया था, तो पहला असत्य था। यह भी एक दोधारी समस्या है, सूक्ष्म, पेचीदा, गहन, गंभीर और व्याख्या करने में कठिन। अब यह आपके समक्ष प्रस्तुत है, और आपको इसका हल निकालना है।

2. 'हे राजा, दोनों ही मामलों में भगवान ने वही कहा है जो आपने कहा है। लेकिन दूसरे मामले में उन्होंने भिक्षुओं की परीक्षा लेने के लिए ऐसा कहा था, यह जानने के लिए कि यदि उन्हें अनुमति दी जाए, तो क्या वे उनकी मृत्यु के बाद छोटे-मोटे नियमों को रद्द कर देंगे या उनका पालन करते रहेंगे। ऐसा लगता है जैसे...

राजाओं के राजा ने अपने पुत्रों से कहा: "मेरे बच्चों, यह महान देश चारों ओर से समुद्र तक फैला हुआ है। हमारे पास जो सेना है, उससे इसे संभाले रखना मुश्किल है। इसलिए मेरे जाने के बाद, मेरे बच्चों, बेहतर होगा कि तुम सीमावर्ती क्षेत्रों को छोड़ दो।" अब, हे राजा, क्या राजकुमार अपने पिता की मृत्यु पर उन बाहरी क्षेत्रों, उन प्रांतों को छोड़ देंगे जो पहले से ही उनके अधिकार में हैं?

'जी नहीं, बिल्कुल नहीं। राजा लालची होते हैं। सत्ता की लालसा में राजकुमार अपने कब्जे वाले क्षेत्र से दोगुने या तिगुने बड़े क्षेत्र पर कब्जा कर सकते हैं, लेकिन वे अपने कब्जे वाले क्षेत्र को कभी नहीं छोड़ेंगे।'

'हे राजा, तथागत ने भिक्षुओं की परीक्षा लेने के लिए कहा था: "मेरे जाने के बाद, हे आनंद, यदि संघ चाहे तो सभी छोटे-मोटे नियमों को समाप्त कर सकता है।" परन्तु हे राजा, बुद्ध के पुत्र धर्म के प्रति आसक्ति और दुःख से मुक्ति की लालसा में ढाई सौ नियमों का पालन तो कर सकते हैं, परन्तु सामान्यतः निर्धारित किसी भी नियम का त्याग नहीं करते।'

3. 'हे पूज्य नागसेन, जब भगवान बुद्ध ने "छोटे और गौण उपदेशों" का उल्लेख किया, तो यह प्रजा भ्रमित हो सकती है, संदेह में पड़ सकती है, विमर्श का विषय पा सकती है और इस दुविधा में पड़ सकती है कि कौन से उपदेश छोटे हैं और कौन से गौण।'

"हे राजा, आचरण में छोटी-छोटी गलतियाँ छोटी आज्ञाएँ हैं, और वाणी में छोटी-छोटी गलतियाँ गौण आज्ञाएँ हैं; अतः ये दोनों मिलकर 'छोटी और गौण आज्ञाएँ' बनाती हैं।"

हे राजा, प्राचीन काल के प्रमुख बुजुर्ग भी इस विषय पर संशय में थे, और शास्त्रों के पाठ को निर्धारित करने के लिए आयोजित परिषद में वे इस मुद्दे पर एकमत नहीं थे। और परमेश्वर ने इस समस्या के उत्पन्न होने की भविष्यवाणी कर दी थी।

'फिर नागसेन, विजेताओं का यह अंधकारमय कथन, जो इतने लंबे समय से छिपा हुआ था, आज दुनिया के सामने उजागर हो गया है और सभी के लिए स्पष्ट हो गया है।'

[नियमों को निरस्त करने से संबंधित समस्या यहीं समाप्त होती है।] [गूढ़ शिक्षा।]

4. हे पूज्य नागसेन, भगवान बुद्ध ने कहा: "सत्य के विषय में, आनंद, तथागत गुरुओं में ऐसा कोई स्वभाव नहीं है कि वे किसी बात को छुपा कर रखें।" परन्तु दूसरी ओर उन्होंने मालंक्य स्त्री के पुत्र के प्रश्न का उत्तर नहीं दिया। नागसेन, यह समस्या दो छोरों में से एक पर टिकी होगी, क्योंकि उन्होंने या तो अज्ञानता के कारण, या कुछ छुपाने की इच्छा से उत्तर देने से परहेज किया होगा। यदि पहला कथन सत्य है, तो यह अज्ञानता के कारण ही हुआ होगा।

यदि वह जानता था, और फिर भी उसने जवाब नहीं दिया, तो पहला कथन असत्य होना चाहिए। यह भी एक जटिल समस्या है। अब यह आपके सामने है, और आपको इसे हल करना है।'

5. हे राजा, भगवान बुद्ध ने आनंद से वह पहला कथन कहा, और उन्होंने मालुंक्य-पुत्त के प्रश्न का उत्तर नहीं दिया। परन्तु यह न तो अज्ञानता के कारण था, न ही कुछ छिपाने के लिए। किसी समस्या को समझाने के चार तरीके होते हैं। और वे चार कौन से हैं? एक वह

समस्या है जिसका सीधा और अंतिम उत्तर दिया जा सकता है। एक वह समस्या है जिसका उत्तर विस्तार से जाकर दिया जा सकता है। एक वह समस्या है जिसका उत्तर किसी और से पूछकर दिया जा सकता है। और एक वह समस्या है जिसे एक तरफ रखा जा सकता है।

और हे राजा, वह कौन सी समस्या है जिसका सीधा और अंतिम समाधान दिया जा सकता है? यह कुछ इस प्रकार है—"क्या रूप क्षणभंगुर है?" "क्या संवेदना क्षणभंगुर है?" "क्या विचार क्षणभंगुर है?" "क्या रचनाएँ क्षणभंगुर हैं?" "क्या चेतना क्षणभंगुर है?"

और वह कौन सी समस्या है जिसका उत्तर विस्तार से जाकर दिया जा सकता है? यह कुछ इस प्रकार है—"क्या रूप इस प्रकार क्षणभंगुर है?" इत्यादि।

और वह कौन सी समस्या है जिसका उत्तर किसी दूसरे से पूछकर दिया जा सकता है? यह कुछ इस प्रकार है—"तो फिर क्या? क्या आँख सभी चीजों को देख सकती है?"

और वह कौन सी समस्या है जिसे एक तरफ रखा जा सकता है? यह कुछ इस प्रकार है—"क्या ब्रह्मांड शाश्वत है?" "क्या यह शाश्वत नहीं है?" "क्या इसका कोई अंत है?" "क्या इसका कोई अंत नहीं है?" "क्या यह अनंत और अनंत दोनों है?" "क्या यह न तो अनंत है और न ही अनंत?" "क्या आत्मा और शरीर एक ही हैं?"

क्या आत्मा शरीर से भिन्न है? क्या तथागत मृत्यु के बाद विद्यमान रहते हैं? क्या वे मृत्यु के बाद विद्यमान नहीं रहते? क्या वे मृत्यु के बाद विद्यमान भी रहते हैं और विद्यमान नहीं भी रहते? क्या वे मृत्यु के बाद न तो विद्यमान रहते हैं और न ही विद्यमान नहीं रहते?

'अब, यह एक ऐसा प्रश्न था जिसे एक तरफ रख देना चाहिए था, और इसी प्रश्न का उत्तर भगवान बुद्ध ने मालुंक्य-पुत्र को नहीं दिया। और ऐसे प्रश्न को एक तरफ क्यों रख देना चाहिए? क्योंकि इसका उत्तर देने का कोई कारण या उद्देश्य नहीं है। इसीलिए इसे एक तरफ रख देना चाहिए। क्योंकि भगवान बुद्ध बिना कारण और बिना उद्देश्य के अपनी वाणी नहीं उठाते।'

'बहुत बढ़िया, नागसेना! ऐसा ही है, और मैं इसे आपकी बात मानकर स्वीकार करता हूँ?'

[कुछ बातें छुपाने की दुविधा यहीं समाप्त होती है।] [मृत्यु।]

6. हे पूज्य नागसेन, भगवान बुद्ध ने यह भी कहा था: "सभी मनुष्य दंड से कांपते हैं, सभी मृत्यु से भयभीत होते हैं।" लेकिन फिर उन्होंने कहा: "अरहत सभी भय से परे हो गए हैं।" तो फिर, नागसेन, अरहत दंड के भय से कैसे कांपते हैं? या क्या नरक में रहने वाले प्राणी, जब उन्हें जलाया, उबाला, झुलसाया और यातना दी जा रही होती है, उस मृत्यु से भयभीत होते हैं जो उन्हें उस भयानक दुख के जलते हुए गड्ढे से मुक्ति दिलाएगी? यदि भगवान बुद्ध, नागसेन,

अगर सचमुच अरहत ने कहा है कि सभी मनुष्य दंड से कांपते हैं और सभी मृत्यु से भयभीत होते हैं, तो यह कथन कि अरहत भय से परे हो गए हैं, असत्य है। लेकिन अगर यह अंतिम कथन सचमुच उनका है, तो दूसरा कथन असत्य होगा। यह दोधारी समस्या अब आपके समक्ष प्रस्तुत है, और आपको इसे हल करना है।

7. हे राजा, जब भगवान बुद्ध ने कहा था, "सभी मनुष्य दंड से कांपते हैं, सभी मृत्यु से भयभीत होते हैं," तो उन्होंने अरहतों के विषय में यह नहीं कहा था। अरहत इस कथन का अपवाद हैं, क्योंकि अरहत से भय का सर्वथा मिट गया है। उन्होंने उन प्राणियों की बात की थी जिनमें अभी भी बुराई विद्यमान है, जो अभी भी आत्म-मोह में डूबे हुए हैं, जो अभी भी सुख-दुख से ऊपर उठते और नीचे गिरते हैं। हे राजा, अरहत के लिए सभी अवस्थाओं में पुनर्जन्म का अंत हो गया है, भविष्य के चारों प्रकार नष्ट हो गए हैं, सभी पुनर्जन्म समाप्त हो गए हैं, जीवन रूपी भवन की छतें टूट गई हैं और पूरा भवन ध्वस्त हो गया है, सभी अशुद्धियाँ जड़विहीन हो गई हैं, अच्छाई और बुराई का अंत हो गया है, अज्ञान नष्ट हो गया है, चेतना का अब कोई बीज नहीं है (जिससे उसका नवीनीकरण हो सके), सभी पाप जलकर भस्म हो गए हैं और सभी सांसारिक अवस्थाओं पर विजय प्राप्त हो गई है। इसलिए अरहत किसी भी भय से विचलित नहीं होते।

8. 'मान लीजिए, हे राजा, एक राजा के चार मुख्य मंत्री हों, जो निष्ठावान, प्रसिद्ध और विश्वसनीय हों, तथा उच्च पदों पर आसीन हों। और किसी आपात स्थिति में राजा अपने राज्य के सभी लोगों को एक आदेश जारी करे, जिसमें वह कहे: "सभी लोग अब कर अदा करें, और आप, मेरे चारों अधिकारियों के रूप में, इस आपात स्थिति में जो आवश्यक हो, वह करें।" अब मुझे बताइए, हे राजा, क्या कर के भय से उत्पन्न होने वाला डर उन मंत्रियों के हृदयों में भी उत्पन्न होगा?'

'नहीं, महोदय, ऐसा नहीं होगा।'

'लेकिन क्यों नहीं?'

'उन्हें राजा द्वारा उच्च पद पर नियुक्त किया गया है। कर उन पर लागू नहीं होता, वे कर से परे हैं। राजा ने जब यह आदेश दिया था, "सभी कर अदा करें," तब उन्होंने विश्राम करने वालों का ही जिक्र किया था।'

'हे राजा, ठीक इसी प्रकार यह कथन भी है कि सभी मनुष्य दंड से कांपते हैं, सभी मृत्यु से भयभीत होते हैं। इसी प्रकार अरहत सभी भयों से मुक्त हो जाते हैं।'

9. 'परन्तु, नागसेन, "सभी" शब्द समावेशी है, इसके प्रयोग में किसी को भी छोड़ा नहीं जाता। इस बात को सिद्ध करने के लिए मुझे एक और कारण दीजिए।'

हे राजा, मान लीजिए कि किसी गाँव में गाँव का मुखिया उद्घोषक को आदेश दे, "उठो, उद्घोषक, सभी ग्रामीणों को मेरे सामने जल्दी से इकट्ठा करो।" और वह उस आदेश का पालन करते हुए गाँव के बीच में खड़ा हो और तीन बार पुकारे, "सभी ग्रामीण तुरंत स्वामी के समक्ष एकत्रित हों!" और वे जल्दी से एकत्रित हों और स्वामी को यह सूचना दें, "हे महाराज, सभी ग्रामीण एकत्रित हो गए हैं। अब आप जो चाहें करें।" अब जब स्वामी, हे राजा, इस प्रकार सभी गाँवों के मुखियाओं को बुला रहा हो...

वह सभी ग्रामीणों को आदेश देता है, लेकिन आदेश का पालन करने के लिए वे लोग एकत्रित नहीं होते; बल्कि गृहों के मुखिया एकत्रित होते हैं। और स्वामी इससे संतुष्ट होता है, क्योंकि वह जानता है कि उसके ग्रामीणों की संख्या इतनी ही है। बहुत से अन्य लोग नहीं आते—स्त्रियाँ और पुरुष, दासियाँ और दासियाँ, श्रमिक, नौकर, किसान, बीमार लोग, बैल, भैंस, भेड़ और बकरियाँ, और कुत्ते—परन्तु वे सब गिनती में नहीं आते। गृहों के मुखियाओं के संदर्भ में ही यह आदेश दिया गया था, "सभी एकत्रित हों।" हे राजा, यह अरहतों के कारण नहीं है कि सभी मृत्यु से भयभीत होते हैं। अरहत उस कथन में शामिल नहीं है, क्योंकि अरहत वह है जिसमें भय उत्पन्न करने का कोई कारण नहीं रह गया है।

10. 'हे राजा, एक ऐसा भाव है जिसका अर्थ समावेशी नहीं है, और एक ऐसा भाव है जिसका अर्थ समावेशी है; एक ऐसा भाव है जिसका अर्थ समावेशी नहीं है, और एक ऐसा भाव है जिसका अर्थ समावेशी है। और प्रत्येक मामले में, अर्थ को तदनुसार स्वीकार किया जाना चाहिए। और अर्थ को जानने के पाँच तरीके हैं - संबंध द्वारा, रुचि द्वारा, शिक्षकों की परंपरा द्वारा, अर्थ द्वारा, और तर्कों की प्रचुरता द्वारा। और यहाँ "संबंध" का अर्थ सूत्र में निहित अर्थ है, "रुचि" का अर्थ है कि यह अन्य सूत्रों के अनुरूप है, "शिक्षकों की परंपरा" का अर्थ है उनका मत, "अर्थ" का अर्थ है उनका विचार, और "तर्कों की प्रचुरता" का अर्थ है इन चारों का संयोजन।'

11. 'बहुत खूब, नागसेन! मैं आपकी बात मान लेता हूँ। अरहत इस मामले में अपवाद हैं, बाकी सभी प्राणी भय से भरे हुए हैं।' लेकिन नरक में पड़े वे प्राणी, जिनके बारे में मैंने बात की, जो पीड़ादायक, तीव्र और भयंकर कष्ट सह रहे हैं, जिनके शरीर और अंगों पर जलन हो रही है, जिनके मुख विलाप, दया की गुहार, रोने-धोने और विलाप से भरे हैं, जो असहनीय पीड़ा से व्याकुल हैं, जिन्हें न कोई शरण मिलती है, न कोई सुरक्षा, न कोई सहायता, जो असीम रूप से पीड़ित हैं, जो सबसे बुरी और निम्नतम परिस्थितियों में भी निश्चित रूप से और अधिक पीड़ा के लिए नियत हैं, जो गर्म, तीव्र, भयंकर और क्रूर लपटों से जल रहे हैं, जो भय और आतंक से उत्पन्न शक्तिशाली चीखें और कराहें निकाल रहे हैं, जो छहों दिशाओं से उनके चारों ओर लिपटी हुई ज्वालाओं की मालाओं से घिरे हुए हैं, और हर तरफ सौ मील तक आग की गति से चमक रही हैं - क्या वे बेचारे जलते हुए अभागे मृत्यु से डर सकते हैं?

'हाँ वे कर सकते हैं।'

लेकिन, आदरणीय नागसेन, क्या नरक निश्चित पीड़ा का स्थान नहीं है? और यदि ऐसा है, तो उसमें रहने वाले प्राणी मृत्यु से क्यों भयभीत होते हैं, जो उन्हें उस निश्चित पीड़ा से मुक्ति दिलाएगी? क्या! क्या वे नरक के शौकीन हैं?

'नहीं, बिलकुल नहीं। उन्हें यह पसंद नहीं है। वे इससे मुक्ति पाने के लिए तरसते हैं। वे मृत्यु की शक्ति से भयभीत हैं।'

'अब, नागसेना, मुझे इस बात पर विश्वास नहीं हो रहा है कि जो लोग मुक्ति चाहते हैं, उन्हें पुनर्जन्म से डरना चाहिए।'

[पैराग्राफ जारी है] हे नागसेना, वे निश्चित रूप से उस स्थिति की संभावना पर प्रसन्न होंगे जिसकी वे कामना करते हैं। मुझे कुछ और कारण बताकर आश्वस्त कीजिए।

12. 'हे महाराज, मृत्यु एक ऐसी अवस्था है जिससे सत्य को न जानने वाले भयभीत होते हैं। इस प्रजा में मृत्यु को लेकर चिंता और भय व्याप्त है। जो कोई भी काले सर्प, हाथी, शेर, बाघ, तेंदुआ, भालू, लकड़बग्घा, जंगली भैंस, गायल, आग, पानी, कांटों, नुकीली चीज़ों या तीरों से भयभीत होता है, वास्तव में वह मृत्यु से ही भयभीत होता है और इसीलिए उनसे डरता है। हे महाराज, यही मृत्यु के मूल स्वरूप की महिमा है। और पाप से मुक्त न होने वाले सभी प्राणी इसकी महिमा से भयभीत और कांपते हैं। इसी अर्थ में, नरक में रहने वाले प्राणी भी, जो इससे मुक्ति पाने की लालसा रखते हैं, मृत्यु से भयभीत होते हैं।'

13. 'हे राजा, मान लीजिए किसी व्यक्ति के शरीर पर मवाद से भरा फोड़ा हो जाए, और वह उस बीमारी से पीड़ित होकर, उससे छुटकारा पाने के लिए, किसी चिकित्सक और सर्जन को बुलाए। सर्जन बुलावा स्वीकार करके, उसकी बीमारी को दूर करने के लिए कोई उपाय करे—जैसे कि कोई नुकीला लैंसेट तैयार करवाए, या दागने के लिए आग में तपी हुई लकड़ियाँ तैयार करवाए, या किसी पत्थर पर पीसी हुई कोई चीज तैयार करवाकर नमक के लेप में मिलाए। अब क्या रोगी नुकीले लैंसेट के चुभने, या दागने वाली लकड़ियों के जलने, या जलन पैदा करने वाले लेप के लगने से डरने लगेगा?'

'हां, वह करेगा।'

लेकिन यदि बीमार व्यक्ति, जो अपनी बीमारी से मुक्ति चाहता है, दर्द के भय से भयभीत हो सकता है, तो ठीक उसी प्रकार नरक में फंसे प्राणी, यद्यपि वे उससे मुक्ति पाने की लालसा रखते हैं, मृत्यु के भय से भयभीत हो सकते हैं।

14. 'और मान लीजिए, हे राजा, एक व्यक्ति जिसने राजगद्दी के विरुद्ध अपराध किया हो, जब उसे जंजीरों में बांधकर कालकोठरी में डाल दिया जाए, तो वह रिहाई की कामना करे। और राजा उसे रिहा करना चाहे, तो उसे बुलवाए। अब क्या वह व्यक्ति, जिसने ऐसा अपराध किया हो और जानता हो, राजा से मिलने से भयभीत नहीं होगा?'

'जी श्रीमान।'

लेकिन अगर ऐसा है, तो नरक में फंसे प्राणी भी, भले ही वे इससे मुक्ति पाने की लालसा रखते हों, फिर भी मृत्यु से भयभीत हो सकते हैं।

'मुझे कोई दूसरा उदाहरण दीजिए जिससे मैं (इस स्पष्ट विसंगति को) सुलझा सकूं।'

'मान लीजिए, हे राजा, एक व्यक्ति को विषैले साँप ने काट लिया है और वह डर के मारे गिर पड़े, तड़पने लगे और इधर-उधर लुढ़कने लगे। फिर कोई दूसरा व्यक्ति किसी शक्तिशाली मंत्र का जाप करके उस विषैले साँप को पास आने और विष चूसने के लिए विवश कर दे। अब जब साँप से ग्रस्त व्यक्ति उस विषैले साँप को अपनी ओर आते हुए देखे, भले ही वह उसका इलाज करने के उद्देश्य से आ रहा हो, तो क्या वह फिर भी उससे भयभीत नहीं होगा?'

'जी श्रीमान।'

'खैर, नरक में फंसे प्राणियों के साथ भी ऐसा ही होता है।'

[पैराग्राफ जारी है] मृत्यु एक ऐसी चीज है जिससे सभी प्राणी घृणा करते हैं। इसलिए वे इससे भयभीत रहते हैं, भले ही वे नरक से मुक्ति पाना चाहते हों।'

'बहुत बढ़िया, नागसेना! यह सच है, और मैं इसे आपके कहे अनुसार स्वीकार करता हूँ।'

[यहाँ मृत्यु के भय से संबंधित दुविधा समाप्त होती है।] [पिरिट।]

15. हे पूज्य नागसेना, भगवान बुद्ध ने कहा:

न आकाश में, न सागर के मध्य में, न ही सबसे एकांत पर्वतीय दर्रे में, न ही पूरे विश्व में वह स्थान है जहाँ खड़े होकर कोई मृत्यु के जाल से बच सकता है।

लेकिन दूसरी ओर, भगवान बुद्ध द्वारा पीरित सेवा का प्रचार किया गया था - अर्थात् रत्न सूत्र, खंड-परित्ता, मोरा-परित्ता, धगग्ग-परित्ता, अतनातिया-परित्ता और अंगुली-माला-परित्ता। हे नागसेन, यदि कोई व्यक्ति न तो स्वर्ग जाकर, न ही समुद्र के बीच जाकर, और न ही ऊंचे महलों के शिखरों पर जाकर मृत्यु के जाल से बच सकता है,

अगर यह अनुष्ठान पहाड़ों की गुफाओं, कंदराओं, ढलानों, दरारों या छेदों में भी नहीं किया जाता, तो पिरित अनुष्ठान व्यर्थ है। लेकिन अगर इससे मृत्यु से बचने का कोई रास्ता है, तो मेरे द्वारा उद्धृत श्लोक में दिया गया कथन असत्य है। यह भी एक जटिल समस्या है, गाँठ से भी अधिक पेचीदा। अब यह आपके सामने है, और आपको इसे हल करना होगा।'

16. हे राजा, भगवान बुद्ध ने वह श्लोक कहा है जिसका आपने उल्लेख किया है, और उन्होंने पिरित को मान्यता दी है। परन्तु यह केवल उन लोगों के लिए है जिनका जीवन अभी शेष है, जो पूर्ण आयु के हैं, और कर्म के दोषों से स्वयं को रोकते हैं। और जिसका नियत जीवनकाल समाप्त हो चुका है, उसके जीवन को बढ़ाने के लिए कोई अनुष्ठान या कृत्रिम साधन नहीं है। हे राजा, ठीक उसी प्रकार जैसे एक सूखे और मृत लट्ठे के साथ, जो निष्फल और रसहीन है, जिसमें से सारा जीवन निकल चुका है, जिसका नियत जीवनकाल समाप्त हो चुका है, — आप उस पर हजारों घड़े पानी डाल दें, परन्तु वह फिर कभी हरा नहीं होगा, न ही उसमें अंकुर निकलेंगे, न ही पत्ते उगेंगे। ठीक उसी प्रकार कोई अनुष्ठान या कृत्रिम साधन, कोई औषधि और कोई पिरित नहीं है, जो जिसका नियत जीवनकाल समाप्त हो चुका है, उसके जीवन को बढ़ा सके। हे राजा, ऐसे व्यक्ति के लिए संसार की सारी औषधियाँ व्यर्थ हैं, परन्तु पिरित उन लोगों के लिए रक्षक और सहायक हैं जिनका जीवन अभी शेष है, जो जीवन से परिपूर्ण हैं और कर्म के बुरे प्रभावों से स्वयं को रोकते हैं। और इसी उद्देश्य से पिरित को नियुक्त किया गया था।

[पैराग्राफ जारी है] हे भगवान, हे राजा, जिस प्रकार एक किसान पके और मुरझाए हुए अनाज को पानी से बचाकर उसकी रक्षा करता है, और जब वह छोटा और बादल के समान गहरा रंग का होता है, तब उसे पानी देकर बढ़ाता है—ठीक उसी प्रकार, हे राजा, पिरित अनुष्ठान को उस व्यक्ति के मामले में छोड़ देना चाहिए और उपेक्षित कर देना चाहिए जिसने अपना निर्धारित जीवनकाल पूरा कर लिया है, लेकिन जिनके पास अभी भी जीवन शेष है और जो शक्ति से परिपूर्ण हैं, उनके लिए पिरित औषधि को दोहराया जा सकता है, और वे इसके उपयोग से लाभान्वित होंगे।

17. 'परन्तु, नागसेन, यदि वह व्यक्ति जीवित रहेगा जिसका जीवन अभी शेष है, और वह व्यक्ति जिसकी कोई आयु शेष नहीं है, मर जाएगा, तो औषधि और पिरित दोनों ही निरर्थक हैं।'

'हे राजा, क्या आपने कभी ऐसा मामला देखा है जिसमें दवा से कोई बीमारी ठीक हो गई हो?'

'हां, कई सौ बार।'

'तो, हे राजा, पिरित और चिकित्सा की अक्षमता के संबंध में आपका कथन अवश्य ही गलत होगा।'

'मैंने देखा है, नागसेना, कि चिकित्सक दवाइयाँ काढ़े या बाहरी अनुप्रयोग के माध्यम से देते हैं, और इस प्रकार रोग शांत हो जाता है।'

और जब, हे राजा, पिरित का जाप करने वालों की आवाज़ सुनाई देती है, तो जीभ सूख सकती है, हृदय की धड़कन धीमी हो सकती है, और गला बैठ सकता है, परन्तु उस जाप से सभी रोग दूर हो जाते हैं, सभी विपत्तियाँ टल जाती हैं। फिर, हे राजा, क्या आपने कभी किसी ऐसे व्यक्ति को देखा है जिसे साँप ने काटा हो और उसका विष किसी मंत्र (जिस साँप ने काटा हो) द्वारा अवशोषित हो गया हो या किसी विषनाशक से नष्ट हो गया हो या घाव के ऊपर या नीचे कोई लोशन लगाया गया हो?

'जी हां, यह आज भी दुनिया भर में एक आम प्रथा है।'

तो फिर आपने जो कहा कि पिरित और दवा दोनों ही बेकार हैं, वह गलत है। और जब किसी व्यक्ति पर पिरित का पाठ किया जाता है, तो काटने के लिए तैयार सांप उसे नहीं काटता, बल्कि अपने जबड़े बंद कर लेता है—लुटेरे उसे मारने के लिए जो लाठी उठाते हैं, वह

कभी वार नहीं करती; वे उसे गिरा देते हैं और उसके साथ नरमी से पेश आते हैं—उसकी ओर दौड़ता हुआ क्रोधित हाथी अचानक रुक जाता है—उसकी ओर बढ़ती हुई जलती हुई आग बुझ जाती है—उसने जो घातक जहर खाया है, वह बेअसर हो जाता है और भोजन बन जाता है—उसे मारने आए हत्यारे उसके सेवकों के समान हो जाते हैं—और जिस जाल में वह फंसा है, वह उसे पकड़ नहीं पाता।

18. 'हे राजा, क्या आपने उस शिकारी के बारे में कभी नहीं सुना, जो सात सौ वर्षों तक उस मोर पर जाल नहीं फेंक पाया जिसने पिरित को पकड़ लिया था, लेकिन जिस दिन उसने ऐसा करने में चूक की, उसी दिन उसे पकड़ लिया?'

'हां, मैंने इसके बारे में सुना है। इसकी प्रसिद्धि पूरी दुनिया में फैल चुकी है।'

'तो फिर पिरित और औषधि दोनों के एक समान बेकार होने के बारे में आपका कहना गलत होगा। और क्या आपने कभी उस दानव के बारे में नहीं सुना जिसने अपनी पत्नी की रक्षा के लिए...'

उसने उसे एक डिब्बे में बंद कर दिया और उसे निगलकर अपने पेट में इधर-उधर ले जाने लगा। फिर एक विद्याधर उसके मुंह में घुस गया और उसकी पत्नी के साथ खेल खेलने लगा। जब दानव को इसका पता चला, तो उसने डिब्बा उगल दिया और उसे खोल दिया, और जैसे ही उसने ऐसा किया, विद्याधर भाग निकला।

'हां, मैंने यह सुना है। इसकी प्रसिद्धि भी पूरी दुनिया में फैल चुकी है।'

'क्या विद्याधर पिरित की शक्ति से बंदी बनने से नहीं बच गए थे?'

'हां, ऐसा ही था।'

'तो फिर पिरित में जरूर शक्ति होगी। और क्या तुमने उस दूसरे विद्याधर के बारे में सुना है जो बनारस के राजा के हरम में घुस गया, और मुख्य रानी के साथ व्यभिचार किया, पकड़ा गया, फिर अदृश्य हो गया और भाग गया?'

'हां, मैंने वह कहानी सुनी थी।'

'अच्छा, क्या वह भी पिरित की शक्ति से बंदी बनने से नहीं बच निकला था?'

'जी श्रीमान।'

'तो फिर, हे राजा, पिरित में अवश्य ही शक्ति होगी।'

19. 'आदरणीय नागसेना, क्या पिरित सबका रक्षक है?'

'कुछ लोगों को, दूसरों को नहीं।'

'तो क्या यह हमेशा उपयोगी नहीं होता?'

'क्या भोजन सभी लोगों को जीवित रखता है?'

'केवल कुछ, बाकी नहीं।'

'लेकिन क्यों नहीं?'

'क्योंकि कुछ लोग उसी भोजन का अधिक सेवन करके हैजा से मर जाते हैं।'

'तो क्या यह सभी मनुष्यों को जीवित नहीं रखता?'

'दो कारण हैं जिनसे यह जीवन को नष्ट कर देता है - इसका अत्यधिक सेवन और पाचन की कमजोरी। और यहां तक कि जीवनदायी भोजन भी बुरी नज़र से विषैला हो सकता है।'

हे राजा, पिरित भी कुछ प्राणियों की रक्षा करता है और कुछ की नहीं। इसके विफल होने के तीन कारण हैं—कर्म, पाप और अविश्वास। जो पिरित प्राणियों की रक्षा करता है, वही प्राणी अपने कर्मों से अपनी रक्षा शक्ति खो देता है। हे राजा, ठीक वैसे ही जैसे एक माता प्रेम से अपने गर्भ में आए पुत्र का पालन-पोषण करती है और उसे बड़े ध्यान से जन्म देती है। जन्म के बाद वह उसे गंदगी, दाग-धब्बों और बलगम से साफ रखती है, उसे उत्तम और कीमती इत्र लगाती है, और जब दूसरे उसे गाली देते हैं या मारते हैं, तो वह उन्हें पकड़कर उत्तेजित होकर स्वामी के सामने घसीटती है। परन्तु जब उसका पुत्र शरारती होता है या देर से आता है, तो वह उसे अपने घुटने पर या हाथों से लाठी या डंडे से मारती है। अब, ऐसा होने पर क्या वह खुद पकड़ी जाएगी और स्वामी के सामने पेश होगी?

'नहीं, महोदय।'

'लेकिन क्यों नहीं?'

'क्योंकि गलती लड़के की थी।'

'ठीक उसी प्रकार, हे राजा, पिरित जो प्राणियों का रक्षक है, फिर भी, उनके अपने दोष के कारण, उनके विरुद्ध हो जाएगा।'

'बहुत बढ़िया, नागसेना! समस्या का समाधान हो गया है, जंगल साफ हो गया है, अंधेरा उजाला में बदल गया है, विधर्म का जाल खुल गया है - और यह सब आपके द्वारा हुआ है, हे विद्यालयों के सर्वश्रेष्ठ नेता!'

[पिरित के बारे में दुविधा यहीं समाप्त होती है।] [मारा, दुष्ट आत्मा।]

20. 'आदरणीय नागसेन, आपके लोग कहते हैं: "तथागत को संन्यासी के लिए आवश्यक वस्तुएँ निरंतर प्राप्त होती थीं - वस्त्र, भोजन, आवास और बीमारों के लिए आवश्यक वस्तुएँ।" और फिर वे कहते हैं: "जब तथागत पंच साल वृक्षों के ब्राह्मण गाँव में गए, तो उन्हें कुछ भी प्राप्त नहीं हुआ और उन्हें अपना कुंड पहले की तरह साफ करके लौटना पड़ा।" यदि पहला कथन सत्य है तो दूसरा असत्य है, और यदि दूसरा कथन सत्य है तो पहला असत्य है। यह भी एक दोधारी समस्या है, एक जटिल पहेली जिसे सुलझाना कठिन है। अब यह आपके समक्ष प्रस्तुत है। इसे हल करना आपका कार्य है।'

21. 'दोनों कथन सत्य हैं, लेकिन जब उसे उस दिन कुछ नहीं मिला, तो वह दुष्ट मारा का काम था।'

तो फिर, नागसेन, ऐसा कैसे हुआ कि भगवान बुद्ध द्वारा अनगिनत युगों में संचित पुण्य उस दिन समाप्त हो गया? ऐसा कैसे हुआ कि मारा, जो अभी-अभी उत्पन्न हुआ था, उस पुण्य की शक्ति और प्रभाव पर विजय प्राप्त कर सका? उस स्थिति में, नागसेन, दोष दो में से किसी एक पर ही पड़ेगा।

दो ही तरीके हैं—या तो पुण्य से अधिक शक्तिशाली होना चाहिए, या मारा की शक्ति बुद्ध की शक्ति से अधिक होनी चाहिए। पेड़ की जड़ उसके शीर्ष से भारी होनी चाहिए, या पापी पुण्य सृजित करने वाले से अधिक बलवान होना चाहिए।

22. 'महाराज, यह आपके दोनों विकल्पों में से किसी एक को भी साबित करने के लिए पर्याप्त नहीं है। इस मामले में एक कारण निश्चित रूप से वांछनीय है।'

हे राजा, मान लीजिए कि एक व्यक्ति राजाओं के राजा के लिए एक उपहार लेकर आता है—शहद या मधुकोश या इसी तरह की कोई वस्तु। और राजा का द्वारपाल उससे कहता है, "यह राजा के पास आने का सही समय नहीं है। इसलिए, हे मेरे मित्र, अपना उपहार जितनी जल्दी हो सके ले जाओ और राजा द्वारा जुर्माना लगाए जाने से पहले वापस चले जाओ।" तब वह व्यक्ति भयभीत होकर अपना उपहार उठाता है और बड़ी जल्दी से लौट जाता है। अब क्या राजाओं का राजा, केवल इस तथ्य के कारण कि वह व्यक्ति अपना उपहार गलत समय पर लाया, द्वारपाल से कम शक्तिशाली हो जाएगा, या उसे फिर कभी कोई उपहार नहीं मिलेगा?

'नहीं, महोदय। द्वारपाल ने अपने चिड़चिड़े स्वभाव के कारण उस उपहार के दाता को वापस भेज दिया, और किसी अन्य युक्ति से एक लाख गुना अधिक मूल्यवान उपहार लाया जा सकता था।'

'हे राजा, ठीक इसी प्रकार, अपने स्वभाव की ईर्ष्या के कारण ही दुष्ट मारा ने पंच साल वृक्षों के पास ब्राह्मणों और गृहस्थों को अपने वश में कर लिया था। और लाखों अन्य देवता बुद्ध को स्वर्ग से शक्ति प्रदान करने वाला अमृत अर्पित करने के लिए आए और हाथ जोड़कर उनका आदर करने लगे, यह सोचते हुए कि इस प्रकार वे उन्हें शक्ति प्रदान करेंगे।'

23. 'ऐसा हो सकता है, नागसेना। धन्य

[पैराग्राफ जारी है] संसार के श्रेष्ठ संन्यासी के लिए चारों आवश्यक वस्तुएँ प्राप्त करना आसान था, और देवताओं और मनुष्यों के अनुरोध पर उन्होंने सभी आवश्यक वस्तुओं का आनंद लिया। फिर भी, भगवान बुद्ध को भोजन की आपूर्ति रोकने का मारा का इरादा अब तक पूरा हो चुका था। महोदय, यहीं मेरा संदेह दूर नहीं हुआ है। मैं अब भी इस बारे में उलझन और दुविधा में हूँ। मेरा मन स्पष्ट नहीं है कि तथागत, अरहत, सर्वोच्च बुद्ध, देवताओं और मनुष्यों के संसार में श्रेष्ठ, जिनके पास पुण्य का इतना गौरवशाली खजाना था, अद्वितीय, बेजोड़ और अतुलनीय, मारा जैसा नीच, तुच्छ, तुच्छ, पापी और दुष्ट प्राणी उनके लिए दान के मार्ग में बाधा कैसे डाल सकता है।

24. हे राजा, चार प्रकार की बाधाएँ होती हैं—एक बाधा किसी विशेष व्यक्ति के लिए अभिप्रेत दान में, दूसरी किसी विशेष व्यक्ति के लिए अलग रखे गए दान में, तीसरी तैयार दान में, और चौथी दान के उपभोग में। पहली बाधा तब उत्पन्न होती है जब कोई व्यक्ति किसी ऐसी वस्तु के वास्तविक दान में बाधा डालता है जिसे दान के लिए तैयार किया गया हो, लेकिन किसी विशेष दानग्राही को ध्यान में रखकर या देखे बिना—उदाहरण के लिए, यह कहकर बाधा उत्पन्न करना: "इसे किसी और को देने का क्या लाभ?" दूसरी बाधा तब उत्पन्न होती है जब कोई व्यक्ति किसी निर्दिष्ट व्यक्ति को दिए जाने वाले भोजन के वास्तविक दान में बाधा डालता है। तीसरी बाधा तब उत्पन्न होती है जब कोई व्यक्ति ऐसे दान में बाधा डालता है जो तैयार तो हो चुका हो, लेकिन अभी तक स्वीकार नहीं किया गया हो। चौथी बाधा तब उत्पन्न होती है जब कोई व्यक्ति पहले से दिए गए दान (और इस प्रकार दानग्राही की संपत्ति) के उपभोग में बाधा डालता है।

25. 'अब जब दुष्ट मारा ने पर अधिकार कर लिया,

[पैराग्राफ जारी है] पंच साल वृक्षों पर रहने वाले ब्राह्मणों और गृहस्थों के लिए, उस समय भोजन न तो भगवान बुद्ध की संपत्ति था, न उनके लिए तैयार किया गया था, और न ही उनके लिए विशेष रूप से तैयार करने का इरादा था। [157] बाधा किसी ऐसे व्यक्ति के रास्ते में डाली गई थी जो अभी आने वाला था, जो अभी तक नहीं आया था, और जिसके लिए कोई दान नहीं था। यह केवल भगवान बुद्ध के विरुद्ध नहीं था। बल्कि उस दिन जो भी लोग गाँव से बाहर गए थे और गाँव आ रहे थे, उन्हें भिक्षा नहीं मिली। हे राजा, मैं मनुष्यों और देवताओं के संसार में किसी को नहीं जानता, न मारों को, न ब्रह्माओं को, न ब्राह्मणों को, न संन्यासियों को, जो भगवान बुद्ध के लिए अभिप्रेत, तैयार या पहले से दी गई भिक्षा के रास्ते में कोई बाधा डाल सके। और यदि कोई ईर्ष्या के कारण उस समय कोई बाधा उत्पन्न करे, तो उसका सिर सौ या हजार टुकड़ों में फट जाएगा।

26. हे महाराज, तथागतों से जुड़ी चार ऐसी बातें हैं जिन्हें कोई हानि नहीं पहुँचा सकता। वे चार बातें क्या हैं? भगवान बुद्ध के लिए अभिप्रेत और सृजित दान, उनके चारों ओर फैले एक फादम लंबे प्रभामंडल, उनके सर्वज्ञ ज्ञान का भंडार और उनका प्राण। हे महाराज, ये सभी बातें सार में एक हैं—वे दोषरहित, अचल, अन्य प्राणियों द्वारा अजेय और अन्य परिस्थितियों से अप्रभावित हैं। और जब मार ने पंच साल वृक्षों पर ब्राह्मणों और गृहस्थों को अपने वश में किया, तो वह घात लगाकर, दृष्टिहीन अवस्था में था। हे महाराज, यह ऐसा था जैसे लुटेरे...

सीमा के उस पार दुर्गम इलाकों में छिपकर, वे राजमार्गों पर घात लगाए बैठे थे। लेकिन अगर राजा की नज़र उन पर पड़ गई, तो क्या आपको लगता है कि वे लुटेरे सुरक्षित रह पाएंगे?

'नहीं, महोदय, वह उन्हें कुल्हाड़ी से सौ या हजार टुकड़ों में कटवा सकता है।'

"खैर, बात कुछ ऐसी ही थी, छुपकर मारा ने उन्हें अपने वश में कर रखा था। यह ठीक वैसे ही था जैसे कोई विवाहित स्त्री घात लगाकर, छुपकर अपने प्रेमी से मिलने जाती है। लेकिन हे राजा, यदि वह अपने पति की उपस्थिति में अपनी साजिशें रचे, तो क्या आपको लगता है कि वह सुरक्षित रहेगी?"

'नहीं, महोदय, वह उसे मार सकता है, घायल कर सकता है, उसे जंजीरों में बांध सकता है या उसे गुलाम बना सकता है।'

'खैर। ऐसा ही था, छुपकर, मारा ने उन्हें अपने वश में कर रखा था। लेकिन हे राजा, यदि उसने भगवान बुद्ध के लिए अभिप्रेत, तैयार या उनके पास मौजूद किसी भी दान के मामले में कोई बाधा उत्पन्न की होती, तो उसका सिर सौ या हजार टुकड़ों में फट जाता।'

'यह सच है, नागसेन। दुष्ट मार ने लुटेरों की तरह काम किया, वह पंच साल वृक्षों के ब्राह्मणों और गृहस्थों पर घात लगाकर बैठा रहा। लेकिन यदि वही दुष्ट मार भगवान बुद्ध के लिए अभिप्रेत या तैयार किए गए किसी भी दान में हस्तक्षेप करता, या उनके उसे ग्रहण करने में बाधा डालता, तो उसका सिर सौ या हजार टुकड़ों में बंट जाता, या उसका शरीर भूसे की तरह बिखर जाता।'

'बहुत बढ़िया, नागसेना! यह सच है, और मैं इसे आपके कहे अनुसार स्वीकार करता हूँ।'

यहां मारा द्वारा भिक्षावृत्ति में हस्तक्षेप करने की दुविधा समाप्त होती है।

[अचेतन अपराध।]

27. 'आदरणीय नागसेन, आपके लोग कहते हैं: "जो कोई अनजाने में किसी जीव का प्राण छीन लेता है, वह गंभीर पाप का भागी होता है।" परन्तु दूसरी ओर भगवान बुद्ध ने विनय में लिखा है: "अज्ञान में कर्म करने वाले को कोई अपराध नहीं होता।" यदि पहला कथन सत्य है, तो दूसरा असत्य होना चाहिए; और यदि दूसरा सत्य है, तो पहला असत्य होना चाहिए। यह भी एक दोधारी समस्या है, जिस पर महारत हासिल करना कठिन है, जिस पर विजय पाना कठिन है। अब यह आपके समक्ष प्रस्तुत है, और आपको इसे हल करना है।'

28. हे महाराज, आपने जिन दोनों अंशों का उल्लेख किया है, वे दोनों ही बुद्ध द्वारा कहे गए हैं। परन्तु दोनों के अर्थ में अंतर है। और वह अंतर क्या है? एक प्रकार का अपराध मन की सहभागिता के बिना किया जाता है, और दूसरा प्रकार का अपराध मन की सहभागिता से किया जाता है। यह पहले वाले के संबंध में था।

दो बातें जो भगवान ने कही हैं: "'अज्ञानता में कार्य करने वाले को कोई अपराध नहीं होता।'"

'बहुत बढ़िया, नागसेना! यह सच है, और मैं इसे आपके कहे अनुसार स्वीकार करता हूँ।'

[अज्ञानता से होने वाले पापों के बारे में दुविधा यहीं समाप्त होती है।] [बुद्ध और उनके अनुयायी।]

29. आदरणीय नागसेना, भगवान बुद्ध ने कहा था: "आनंद, तथागत यह नहीं मानते कि उन्हें ही भिक्षु समुदाय का नेतृत्व करना चाहिए, या यह कि संघ उन पर निर्भर है।" परन्तु दूसरी ओर, भगवान बुद्ध ने मेत्तेय के गुणों और स्वभाव का वर्णन करते हुए कहा: "वह हजारों सदस्यों वाले भिक्षु समुदाय के नेता होंगे, जैसे मैं अब सैकड़ों सदस्यों वाले भिक्षु समुदाय का नेता हूँ।" यदि पहला कथन सही है, तो दूसरा गलत है। यदि दूसरा कथन सही है, तो पहला गलत होना चाहिए। यह भी अब आपके समक्ष एक दोधारी समस्या है, और आपको इसे हल करना है।

30. 'हे महाराज, आपने दोनों अंशों का सही उद्धरण दिया है। लेकिन आपने जो दुविधा प्रस्तुत की है, उसमें एक अंश का अर्थ व्यापक है, जबकि दूसरे का नहीं। हे महाराज, तथागत अनुयायियों की खोज नहीं करते, बल्कि अनुयायी उनकी खोज करते हैं।'

[पैराग्राफ जारी है] हे राजा, यह केवल एक आम धारणा है कि "यह मैं हूँ" या "यह मेरा है", यह कोई दिव्य सत्य नहीं है। तथागत ने आसक्ति को त्याग दिया है; उन्होंने मोह को त्याग दिया है; वे "यह मेरा है" के भ्रम से मुक्त हैं; वे केवल दूसरों की सहायता करने के लिए जीते हैं। हे राजा, जिस प्रकार पृथ्वी संसार के प्राणियों का सहारा और आश्रय है, और वे उस पर निर्भर हैं, परन्तु विशाल पृथ्वी को उनके लिए "ये मेरे हैं" की लालसा नहीं है—ठीक उसी प्रकार तथागत सभी प्राणियों का सहारा और आश्रय हैं, परन्तु उन्हें उनके लिए "ये मेरे

हैं" की लालसा नहीं है। और हे राजा, जिस प्रकार एक विशाल वर्षा बादल अपनी वर्षा बरसाता है, घास और वृक्षों, पशुओं और मनुष्यों को पोषण देता है, और उनकी वंश परंपरा को बनाए रखता है, और ये सभी प्राणी अपनी आजीविका के लिए उसकी वर्षा पर निर्भर रहते हैं, परन्तु बादल को इस विचार से कोई लालसा नहीं होती कि "ये मेरे हैं"—ठीक उसी प्रकार तथागत सभी प्राणियों को अच्छे गुणों का ज्ञान देते हैं और उन्हें अच्छाई में बनाए रखते हैं, और सभी प्राणियों का जीवन उनमें निहित है, परन्तु तथागत को इस विचार से कोई लालसा नहीं होती कि "ये मेरे हैं।" और ऐसा क्यों है? क्योंकि उन्होंने आत्म-सम्मान का त्याग कर दिया है।

बहुत बढ़िया, नागसेना! आपने अनेक उदाहरणों से समस्या का अच्छा समाधान कर दिया है। जंगल खुल गया है, अंधेरा छंट गया है।

प्रकाश में आने से विरोधियों के तर्क ध्वस्त हो गए हैं, विजेता के पुत्रों में अंतर्दृष्टि जागृत हो गई है।

[यहाँ बुद्ध और उनके अनुयायियों को लेकर दुविधा समाप्त होती है।] [विभाजन।]

31. 'हे आदरणीय नागसेन, आपके लोग कहते हैं: "तथागत एक ऐसे व्यक्ति हैं जिनके अनुयायी कभी विखंडित नहीं हो सकते।" और फिर वे कहते हैं: "देवदत्त ने एक ही झटके में पाँच सौ भाइयों को बहकाया।" यदि पहला कथन सत्य है तो दूसरा असत्य है, और यदि दूसरा सही है तो पहला गलत है। यह भी एक दोधारी समस्या है, गहन, सुलझाने में कठिन, गाँठ से भी अधिक पेचीदा। इसके द्वारा ये लोग ढके हुए, अवरुद्ध, अवरुद्ध, घिरे हुए और घिरे हुए हैं। इसमें विरोधियों के तर्कों के विरुद्ध अपनी कुशलता प्रकट कीजिए।'

32. 'हे राजा, दोनों कथन सही हैं। परन्तु दूसरा कथन दरार पैदा करने वाले की शक्ति के कारण है। जहाँ दरार पैदा करने वाला होता है, वहाँ माँ अपने बेटे से अलग हो जाती है और बेटा माँ से अलग हो जाता है, या पिता अपने बेटे से और बेटा अपने पिता से, या भाई बहन से और बहन भाई से, या मित्र मित्र से अलग हो जाता है। हर तरह की लकड़ियों से बना जहाज़ लहरों के प्रचंड बल से टूट जाता है, और रस से लदे और फलते-फूलते पेड़ हवा के प्रचंड बल से उखड़ जाते हैं, और उत्तमतम सोना भी टुकड़ों में बँट जाता है।

कांस्य। लेकिन बुद्धिमानों का यह इरादा नहीं है, बुद्धों की यह इच्छा नहीं है, विद्वानों की यह कामना नहीं है कि तथागत का अनुसरण भंग हो। और यह बात एक विशेष अर्थ में कही जाती है कि ऐसा संभव नहीं है। जहाँ तक मुझे ज्ञात है, यह एक अनसुनी बात है कि तथागत के किसी भी कार्य, किसी भी अप्रिय शब्द, किसी भी गलत कर्म, किसी भी अन्याय से उनका अनुसरण भंग हो सकता है, चाहे उनका आचरण कहीं भी और किसी भी प्रकार का हो। इस अर्थ में उनका अनुसरण अभेद्य है। और आप स्वयं, क्या आप बुद्ध के नौ वरणों में ऐसा कोई उदाहरण जानते हैं जिसमें किसी बोधिसत्व द्वारा किए गए किसी कार्य से तथागत का अनुसरण भंग हुआ हो?

'नहीं, महाराज। ऐसी बात न तो दुनिया में कभी देखी गई है और न ही सुनी गई है। नागसेना, आपकी बात बहुत अच्छी है और मैं इसे स्वीकार करता हूँ।'

[विभाजन को लेकर दुविधा यहीं समाप्त होती है।]

यहां दूसरा अध्याय समाप्त होता है।
तिपिटक >> सुत्त पिटक >> खुद्दाक निकाय >> मिलिंदपन्हा >> पुस्तक VI: दुविधाओं का समाधान - मेंडका पन्हा अध्याय 3

अनुवादक: टी.डब्ल्यू. राइस डेविड्स

पिछला <<<<-----||-11-||----->>>> अगला

1. आदरणीय नागसेना, भगवान बुद्ध ने कहा है: "हे वासेत्थ, धम्म ही 'संसार में सर्वश्रेष्ठ' है, चाहे वह वर्तमान में दिखाई दे या भविष्य में। लेकिन (आपके अनुयायियों के अनुसार) वह धर्मनिष्ठ गृहस्थ जिसने श्रेष्ठ मार्ग में प्रवेश किया है, जिसके लिए किसी भी दुःखदायी स्थान में पुनर्जन्म की संभावना समाप्त हो गई है, जिसने अंतर्दृष्टि प्राप्त कर ली है और जिसे सिद्धांत का ज्ञान है, उसे भी संघ के किसी भी सदस्य को, चाहे वह नौसिखिया हो या न हो, आदरपूर्वक प्रणाम करना चाहिए और अपनी सीट से उठना चाहिए। अब यदि धम्म सर्वश्रेष्ठ है तो यह आचार नियम गलत है, लेकिन यदि यह सही है तो पहला कथन गलत होगा।"

[पैराग्राफ जारी है] यह भी एक दोतरफा समस्या है। अब यह आपके सामने रखी गई है, और आपको इसे हल करना है।'

2. भगवान बुद्ध ने वही कहा है जो आपने उद्धृत किया है, और आपने आचरण के नियम का सही वर्णन किया है। लेकिन उस नियम का एक कारण है, और वह यह है। ये बीस व्यक्तिगत गुण हैं, जो एक समना के समनात्व का निर्माण करते हैं, और ये दो बाहरी लक्षण हैं, जिनके कारण समना अभिवादन, आदर और श्रद्धा के योग्य होता है। और वे क्या हैं? आत्म-संयम का सर्वोत्तम रूप, आत्म-नियंत्रण का उच्चतम स्तर, सही आचरण, शांत स्वभाव, (अपने कर्मों और शब्दों पर) नियंत्रण, (अपनी इंद्रियों पर) वशीकरण, धीरज, सहानुभूति।

एकांतवास का अभ्यास, एकांतवास से प्रेम, ध्यान, विनम्रता और कुकर्म के भय से मुक्ति, उत्साह, लगन, उपदेशों का पालन, शास्त्रों का पाठ, धम्म और विनय के ज्ञाताओं से प्रश्न पूछना, शीलों और अन्य नैतिक नियमों में आनंद लेना, सांसारिक वस्तुओं से आसक्ति से मुक्त होना, उपदेशों का पालन करना—पीला वस्त्र धारण करना और मुंडा होना। इन सभी बातों का अभ्यास करते हुए संघ का सदस्य जीवन व्यतीत करता है। इन सभी में से किसी में भी अपूर्ण न रहकर, सभी में परिपूर्ण, सभी में सिद्ध और सभी गुणों से युक्त होकर वह अर्हतत्व की अवस्था की ओर अग्रसर होता है, उस अवस्था की ओर जिसे सीखने के लिए कुछ भी शेष नहीं रहता; वह सभी लोकों में सर्वोच्च लोक की ओर अग्रसर होता है। अत: क्योंकि वह उसे योग्य पुरुषों (अरहतों) की संगति में देखता है, इसलिए उत्तम मार्ग पर चल पड़ा हुआ गृहस्थ उसके लिए यह उचित समझता है कि वह भी उसका अनुसरण करे।

भिक्षु के प्रति श्रद्धा और आदर प्रदर्शित करना, भले ही वह अभी तक परिवर्तित न हुआ हो। ऐसा इसलिए है क्योंकि वह भिक्षु को उन लोगों की संगति में देखता है जिनमें सभी बुराइयाँ नष्ट हो चुकी हैं, क्योंकि वह स्वयं ऐसी संगति में नहीं है, इसलिए परिवर्तित गृहस्थ व्यक्ति अपवर्तित भिक्षु के प्रति श्रद्धा और आदर प्रदर्शित करना उचित समझता है। क्योंकि वह जानता है कि वह सर्वोच्च भिक्षु समुदाय में शामिल हो गया है, और वह स्वयं उस अवस्था तक नहीं पहुंचा है, इसलिए परिवर्तित गृहस्थ अपवर्तित भिक्षु के प्रति आदर और सम्मान दिखाना उचित समझता है—क्योंकि वह जानता है कि अपवर्तित भिक्षु पतिमोक्खा का पाठ सुनता है, जबकि वह स्वयं नहीं सुन सकता—क्योंकि वह जानता है कि अपवर्तित भिक्षु पुरुषों को संघ में शामिल करता है, और इस प्रकार विजेता के उपदेशों का विस्तार करता है, जो वह स्वयं करने में असमर्थ है—क्योंकि वह जानता है कि अपवर्तित भिक्षु असंख्य उपदेशों का पालन करता है, जिनका वह स्वयं पालन नहीं कर सकता—क्योंकि वह जानता है कि वह समनत्व के बाहरी चिन्ह धारण करता है, और बुद्ध के उद्देश्य का पालन करता है, जबकि वह स्वयं उससे बहुत दूर चला गया है—क्योंकि वह जानता है कि यद्यपि उसने अपने बाल और दाढ़ी त्याग दी है, और वह अभिषेक रहित है और कोई आभूषण नहीं पहनता है, फिर भी वह धर्म के सुगंध से अभिमंत्रित है, जबकि वह स्वयं आभूषणों और उत्तम वस्त्रों का शौकीन है—इसलिए परिवर्तित गृहस्थ भिक्षु ऐसा करना उचित समझता है। श्रद्धा व्यक्त करना और गैर-धर्मांतरित भिक्षु के प्रति आदर दिखाना।

3. और इसके अलावा, हे राजा, ऐसा इसलिए है क्योंकि वह जानता है कि भिक्षु में न केवल वे सभी बीस व्यक्तिगत गुण पाए जाते हैं जो एक समन बनाते हैं, बल्कि वे दो बाह्य लक्षण भी उसमें मौजूद होते हैं।

और दूसरों को भी उनमें प्रशिक्षित करता है, जिससे धर्मांतरित गृहस्थ, यह जानकर कि उस परंपरा में, उस धर्म के पालन में उसका कोई हिस्सा नहीं है, धर्मांतरित भिक्षु के प्रति आदर और सम्मान दिखाना उचित समझता है। हे राजा, जिस प्रकार एक राजकुमार अपने परिवार के पुरोहित ब्राह्मण के चरणों में बैठकर ज्ञान प्राप्त करता है और क्षत्रिय के कर्तव्यों का पालन करता है, कुछ समय बाद जब उसका राज्याभिषेक होता है, तो वह अपने गुरु को अपना गुरु और परिवार की परंपराओं का वाहक मानकर आदर और सम्मान करता है, उसी प्रकार धर्मांतरित भिक्षु के लिए भी धर्मांतरित भिक्षु के प्रति आदर और सम्मान करना उचित है।

4. और हे महाराज, आप इस तथ्य से भिक्षुओं की महानता और अद्वितीय महिमा जान लें—कि यदि कोई गृहस्थ, धर्म का शिष्य, जिसने उत्तम मार्ग का अनुसरण किया है, अरहतत्व की अनुभूति प्राप्त कर ले, तो उसके साथ दो में से एक ही परिणाम होगा, और कोई दूसरा नहीं—या तो वह उसी दिन प्राण त्याग देगा, या भिक्षु का पद ग्रहण कर लेगा। क्योंकि हे महाराज, त्याग की वह अवस्था अटल, गौरवशाली और सर्वोच्च है—मेरा तात्पर्य संघ का सदस्य होने की अवस्था से है!

'आदरणीय नागसेना, आपकी शक्तिशाली और महान बुद्धि ने इस सूक्ष्म समस्या का पूर्णतया समाधान कर दिया है। आपके समान बुद्धिमान हुए बिना कोई और इसे इस प्रकार हल नहीं कर सकता था।'

[धर्म की प्रधानता को लेकर यह समस्या यहीं समाप्त होती है]

[उपदेश देने के नुकसान।]

5. 'आदरणीय नागसेना, आप भिक्षु कहते हैं कि तथागत सभी प्राणियों को हानि से बचाते हैं और उनका भला करते हैं। और फिर आप कहते हैं कि जब वे जलती हुई अग्नि के उपमा पर आधारित प्रवचन दे रहे थे, तब लगभग साठ भिक्षुओं के मुख से गर्म रक्त निकला। उस प्रवचन से उन्होंने उन भिक्षुओं को हानि पहुँचाई, भला नहीं। अतः यदि पहला कथन सत्य है, तो दूसरा असत्य है; और यदि दूसरा सत्य है, तो पहला असत्य है। यह भी आपके समक्ष एक दोधारी समस्या है, जिसका हल आपको निकालना है।'

6. 'दोनों बातें सत्य हैं। उनके साथ जो कुछ हुआ वह तथागत की गलती नहीं थी, बल्कि उनकी अपनी गलती थी।'

लेकिन, नागसेन, यदि तथागत ने वह प्रवचन न दिया होता, तो क्या वे गर्म खून उगल देते?

नहीं। जब उन्होंने उसकी कही बात को गलत समझा, तब उनके भीतर एक तीव्र क्रोध भड़क उठा और उनके मुंह से गर्म खून निकल आया।

'तो फिर ऐसा अवश्य हुआ होगा, नागसेन, तथागत के कार्य से; तथागत ही उनके विनाश का मुख्य कारण रहे होंगे। मान लीजिए, नागसेन, एक सर्प दीमक के टीले में घुस गया हो, और मिट्टी की आवश्यकता से ग्रस्त कोई व्यक्ति उस दीमक के टीले को तोड़कर उसमें से मिट्टी निकाल ले। और उसके ऐसा करने से दीमक के टीले का प्रवेश द्वार बंद हो गया।'

अगर दरवाज़ा बंद हो जाता, तो साँप हवा न मिलने से मर जाता। क्या उस आदमी के इस कृत्य से साँप नहीं मर जाता?

'जी हां, हे राजा।'

'ठीक इसी प्रकार, नागसेन, तथागत ही उनके विनाश का प्रमुख कारण थे।'

7. हे राजा, जब तथागत प्रवचन देते थे, तो वे न तो चापलूसी से करते थे और न ही द्वेष से। वे दोनों से मुक्त होकर ही बोलते थे। जिन्होंने इसे सही ढंग से ग्रहण किया, वे ज्ञानी हो गए, परन्तु जिन्होंने इसे गलत ढंग से ग्रहण किया, वे गिर पड़े। हे राजा, जैसे कोई व्यक्ति आम के पेड़, जामुन के पेड़ या मेमने के पेड़ को हिलाता है, तो उस पर लगे वे फल जो रस से भरे होते हैं और पेड़ से मजबूती से जुड़े होते हैं, अविचलित रहते हैं, परन्तु वे फल जिनकी डंठल सड़ी हुई होती है और जो ढीले ढंग से जुड़े होते हैं, जमीन पर गिर जाते हैं— ठीक वैसे ही उनका उपदेश था। हे राजा, यह वैसा ही था जैसे कोई किसान गेहूँ की फसल उगाने के लिए खेत जोतता है, लेकिन उस जुताई से घास के सैकड़ों-हजारों तिनके नष्ट हो जाते हैं—या यह वैसा ही था जैसे लोग मिठास के लिए गन्ने को चक्की में पीसते हैं, और ऐसा करने से चक्की के मुँह में जाने वाले छोटे जीव भी कुचल जाते हैं—ठीक वैसे ही तथागत ने तैयार मन वालों को ज्ञान प्रदान करते हुए, चापलूसी और द्वेष रहित होकर धम्म का उपदेश दिया। और जिन्होंने इसे सही ढंग से ग्रहण किया, वे ज्ञानी हो गए, परन्तु जिन्होंने इसे गलत ढंग से ग्रहण किया, वे पतित हो गए।

8. तो क्या वे भिक्षु, नागसेन, उसी प्रवचन के कारण नहीं गिरे थे?

'तो फिर, एक बढ़ई लकड़ी के एक टुकड़े को बिना कुछ किए, बस उसे एक तरफ रखकर, उसे सीधा और उपयोग के योग्य कैसे बना सकता है?'

'नहीं, महोदय। अगर वह इसे सीधा और उपयोग के लिए तैयार रखना चाहता है, तो उसे इसमें से मोड़ हटाने होंगे।'

हे राजा, तथागत केवल अपने शिष्यों की देखरेख करके उन लोगों की आँखें नहीं खोल सकते थे जो देखने के लिए तैयार थे। परन्तु उन्होंने वचन को गलत ढंग से ग्रहण करने वालों को हटाकर उन लोगों को बचाया जो उद्धार पाने के लिए तैयार थे। और हे राजा, दुष्टों का पतन उनके अपने कर्मों के कारण हुआ; जैसे केले का वृक्ष, बांस या खच्चर अपने ही बच्चे के कारण नष्ट हो जाते हैं। और हे राजा, जैसे अपने कर्मों के कारण लुटेरे अपनी आँखें निकलवाने, सूली पर चढ़ाने या फांसी पर चढ़ने के लिए मजबूर होते हैं, वैसे ही दुष्ट अपने कर्मों के कारण नष्ट हो गए और विजेता के उपदेशों से विमुख हो गए।

9. 'और इस प्रकार उन साठ भिक्षुओं का पतन न तो तथागत के कारण हुआ और न ही किसी अन्य के कारण, बल्कि केवल उनके अपने कर्मों के कारण। मान लीजिए, हे राजा, एक व्यक्ति सभी लोगों को अमृत देता है, और वे उसे खाकर स्वस्थ, दीर्घायु और सभी शारीरिक रोगों से मुक्त हो जाते हैं। लेकिन एक व्यक्ति, उसे खाने पर, अपने खराब पाचन के कारण...'

मर जाए। तो क्या, हे राजा, अमृत दान करने वाला व्यक्ति इसमें किसी अपराध का दोषी होगा?

'नहीं, महोदय।'

हे महाराज, तथागत भी दस हजार लोकों में मनुष्यों और देवताओं को अमृत का उपहार देते हैं; और जो ऐसा करने में सक्षम होते हैं, वे उनके नियमों के अमृत से ज्ञानी हो जाते हैं, जबकि जो सक्षम नहीं होते, वे नष्ट हो जाते हैं और गिर जाते हैं। हे महाराज, भोजन सभी प्राणियों के जीवन को सुरक्षित रखता है। परन्तु कुछ लोग जो इसे खाते हैं, हैजा से मर जाते हैं। क्या भूखों को भोजन कराने वाला व्यक्ति इसमें किसी अपराध का दोषी है?

'नहीं, महोदय।'

'हे राजा, तथागत भी इसी प्रकार दस हजार लोकों में विराजमान मनुष्यों और देवताओं को अपना अमृत प्रदान करते हैं; और जो ऐसा करने में सक्षम होते हैं, वे उनके विधान के अमृत से ज्ञानी हो जाते हैं, जबकि जो सक्षम नहीं होते, वे नष्ट हो जाते हैं और पतन की ओर अग्रसर होते हैं।'

'बहुत बढ़िया, नागसेना! यह सच है, और मैं इसे आपके कहे अनुसार स्वीकार करता हूँ।'

[उपदेश देने से होने वाले नुकसान को लेकर दुविधा यहीं समाप्त होती है।] [तथागत के रहस्य।]

11. [यह दुविधा एक 'महान पुरुष' (महापुरुष) के तीस शारीरिक लक्षणों में से एक से संबंधित है, जो माना जाता है कि प्रत्येक तथागत में होता है, लेकिन चूंकि यह उन मामलों से संबंधित है जिन पर इस शताब्दी में आमतौर पर चर्चा नहीं की जाती है, इसलिए इसे मूल रूप में पढ़ना सबसे अच्छा है।] [मूर्ख व्यक्ति।]

15. 'आदरणीय नागसेना, धर्म के सेनापति, वरिष्ठ सारिपुत्त ने कहा: "

[पैराग्राफ जारी है] हे भाइयों, तथागत वाणी में परिपूर्ण हैं। तथागत की वाणी में ऐसा कोई दोष नहीं है जिसके बारे में उन्हें यह ध्यान रखना पड़े कि किसी और को इसका पता न चले। दूसरी ओर, तथागत ने कालन्द सुदिन्ना के अपराध के अवसर पर प्रथम पारगिका का प्रचार करते हुए, उन्हें कठोर शब्दों में संबोधित किया और उन्हें निकम्मा कहा। और वह वृहत्तर, ऐसा कहे जाने पर, अपने गुरु के भय से भयभीत और पश्चाताप से व्याकुल होकर, उत्तम मार्ग को समझने में असमर्थ रहा। अब यदि पहला कथन सही है, तो यह आरोप कि तथागत ने कालन्द सुदिन्ना को निकम्मा कहा, असत्य होना चाहिए। परन्तु यदि यह सत्य है, तो पहला कथन असत्य होना चाहिए। यह भी अब आपके समक्ष प्रस्तुत एक दोधारी समस्या है, और आपको इसे हल करना है।

16. 'हे महाराज, सारिपुत्त ने जो कहा वह सत्य है। और उस अवसर पर भगवान बुद्ध ने सुदिन्ना को निकम्मा कहा था। परन्तु यह उनकी अभद्रता के कारण नहीं था, बल्कि केवल उनके आचरण की वास्तविक प्रकृति को इस प्रकार इंगित करना था जिससे उन्हें कोई हानि न हो। और यहाँ जो तात्पर्य है वह यह है कि...'

[पैराग्राफ जारी है] "वास्तविक प्रकृति की ओर इशारा करते हुए।" हे राजा, यदि कोई व्यक्ति इस जन्म में चारों सत्यों की अनुभूति प्राप्त नहीं करता, तो उसका मनुष्यत्व (मनुष्य के रूप में जन्म लेना) व्यर्थ है, परन्तु यदि वह भिन्न कर्म करता है तो वह भिन्न हो जाएगा। इसीलिए उसे निष्फल कहा जाता है। और इस प्रकार भगवान बुद्ध ने कलंद सुदिन्ना को सत्य के शब्दों से संबोधित किया, न कि तथ्यों से भिन्न शब्दों से।

17. 'परन्तु, नागसेन, यद्यपि कोई व्यक्ति दूसरे को अपशब्द कहते समय सत्य बोलता है, तब भी हमें उस पर मामूली जुर्माना लगाना चाहिए। क्योंकि वह अपराध का दोषी है, यद्यपि उसने किसी वास्तविक कारण से अपशब्द कहे हों, फिर भी उसने ऐसे शब्दों का प्रयोग करके उसे अपशब्द कहे हों जिनसे शांति भंग हो सकती है।'

'हे राजा, क्या आपने कभी सुना है कि कोई जनता किसी अपराधी के सामने सिर झुकाती हो, या सम्मान में अपनी सीटों से उठती हो, या उसे आदर दिखाती हो, या उसके लिए (आमतौर पर अधिकारियों को दिए जाने वाले) उपहार लाती हो?'

नहीं, यदि किसी व्यक्ति ने किसी भी प्रकार का अपराध किया हो, और यदि वह वास्तव में निंदा और दंड का पात्र हो, तो वे उसका सिर कलम करना या उसे यातना देना अधिक पसंद करेंगे।

या तो उसे जमानत पर बांध दें, या उसे मौत के घाट उतार दें, या उसकी संपत्ति से वंचित कर दें।

'तो क्या हे राजा, भगवान ने न्यायपूर्वक कार्य किया या नहीं?'

'हे श्रीमान, न्यायपूर्वक और अत्यंत उचित तरीके से। और हे नागसेन, जब मनुष्य और देवता जगत को इसके बारे में पता चलेगा, तो उनका अंतरात्मा संवेदनशील हो जाएगा, वे पाप में पड़ने से डरेंगे, इसे देखकर भयभीत हो जाएंगे, और उससे भी अधिक भयभीत हो जाएंगे जब वे स्वयं पापियों के साथ संगति करेंगे या पाप करेंगे।'

18. 'हे राजा, क्या कोई चिकित्सक ऐसे मामले में औषधि के रूप में सुखद चीजें देगा, जब शरीर के सभी रस प्रभावित हों, और पूरा शरीर अव्यवस्थित और रोगग्रस्त हो?'

'नहीं। बीमारी को खत्म करने की इच्छा से वह तीखी और दर्दनाक दवाएं देता था।'

हे राजा, इसी प्रकार तथागत पाप के सभी रोगों को दूर करने के लिए उपदेश देते हैं। तथागत के कठोर वचन भी मनुष्यों को कोमल और दयालु बना देते हैं। हे राजा, जिस प्रकार गर्म पानी किसी भी कोमल वस्तु को नरम और दयालु बना देता है, उसी प्रकार तथागत के कठोर वचन भी लाभप्रद और करुणामय होते हैं, जैसे एक पिता अपने बच्चों के लिए कहता है। हे राजा, जिस प्रकार दुर्गंधयुक्त काढ़े का सेवन और हानिकारक औषधियों का सेवन मनुष्यों के शरीर की दुर्बलताओं को नष्ट कर देता है, उसी प्रकार तथागत के कठोर वचन भी लाभप्रद और करुणामय होते हैं।

हे राजा, जिस प्रकार रुई का गोला मनुष्य पर गिरने से कोई खरोंच नहीं आती, उसी प्रकार तथागत के शब्द, चाहे कितने भी कठोर हों, कोई हानि नहीं पहुंचाते।

'बहुत बढ़िया, नागसेना! आपने कई उपमाओं का प्रयोग करके इस समस्या को स्पष्ट कर दिया है।' यह बिल्कुल सही है, और मैं इसे आपके कहे अनुसार स्वीकार करता हूँ।'

[बुद्ध द्वारा सुदिन्ना को कहे गए कठोर शब्दों को लेकर दुविधा का अंत।] [वृक्ष बोल रहा है।]

19. 'आदरणीय नागसेना, तथागत ने कहा:

"ब्रह्मन! तुम एक निर्जीव वस्तु से, जो तुम्हें सुन नहीं सकती, यह क्यों पूछते हो कि वह आज कैसी है? सक्रिय, बुद्धिमान और जीवन से परिपूर्ण, तुम इस निर्जीव वस्तु - इस जंगली पलाश वृक्ष - से कैसे बात कर सकते हो?"

और दूसरी ओर उन्होंने कहा:

और तब एस्पेन वृक्ष ने उत्तर दिया: 'मैं, भारद्वाज, भी बोल सकता हूँ। मेरी बात सुनो।'

'अब, नागसेन, यदि वृक्ष एक अचेतन वस्तु है, तो यह कहना गलत होगा कि एस्पेन वृक्ष ने भारद्वाज से बात की थी। लेकिन यदि यह सच है, तो यह कहना गलत होगा कि वृक्ष अचेतन होता है। यह भी अब आपके सामने एक दोधारी समस्या है, और आपको इसे हल करना होगा।'

20. गुरु ने कहा, हे नागसेन, कि वृक्ष अचेतन होता है। और सर्प वृक्ष ने भारद्वाज से संवाद किया। परन्तु हे राजा, यह अंतिम कथन सामान्य भाषा में किया गया है। क्योंकि यद्यपि वृक्ष अचेतन होने के कारण बोल नहीं सकता, फिर भी "वृक्ष" शब्द का प्रयोग किया गया है।

जैसे कि उसमें निवास करने वाली अप्सरा का नामकरण होता है, और इसी अर्थ में "वृक्ष बोलता है" एक सुप्रसिद्ध मुहावरा है। हे राजा, जैसे अनाज से लदी गाड़ी को अनाज की गाड़ी कहते हैं। परन्तु वह अनाज की नहीं, लकड़ी की बनी होती है, फिर भी उसमें अनाज भरा होने के कारण लोग उसे "अनाज की गाड़ी" कहते हैं। या हे राजा, जैसे जब कोई व्यक्ति खट्टा दूध मथ रहा होता है तो आम कहावत है कि वह मक्खन मथ रहा है। परन्तु वह मक्खन नहीं, बल्कि दूध मथ रहा होता है। या हे राजा, जैसे जब कोई व्यक्ति कोई ऐसी वस्तु बना रहा होता है जो अस्तित्व में नहीं है, तो आम कहावत है कि वह ऐसी वस्तु बना रहा है जो अभी तक अस्तित्व में नहीं है, परन्तु लोग काम पूरा होने से पहले ही उसे पूर्ण मान लेते हैं। तथागत भी धम्म की व्याख्या करते समय आम बोलचाल की भाषा का प्रयोग करते हैं।

'बहुत बढ़िया, नागसेना! यह सच है, और मैं इसे आपके कहे अनुसार स्वीकार करता हूँ।'

[यहाँ बोलने वाले पेड़ को लेकर दुविधा समाप्त होती है।] [बुद्ध की अंतिम बीमारी।]

21. 'आदरणीय नागसेना, पाठ करने वाले बुजुर्गों ने कहा:

"जब उन्होंने कुंडा का भिक्षा ग्रहण किया, तांबे के कारीगर का, - ऐसा मैंने सुना है, - बुद्ध को वह भयानक बीमारी, वह तीव्र पीड़ा हुई जो मृत्यु तक ले जाती है।"

[पैराग्राफ जारी है] और उसके बाद भगवान बुद्ध ने कहा: "हे आनंद, ये दोनों भोजन की भेंटें, जो समान हैं, समान फल देती हैं और समान परिणाम देती हैं, अन्य सभी भेंटों से कहीं अधिक फलदायी और अधिक परिणामदायी हैं।" अब यदि भगवान बुद्ध नागसेन को कुंडा का भिक्षा ग्रहण करने के बाद तीव्र रोग हो गया और उन्हें इतना तीव्र दर्द हुआ कि उनकी मृत्यु हो गई, तो वह दूसरा कथन गलत होना चाहिए। लेकिन यदि वह सही है तो पहला कथन गलत होना चाहिए। हे नागसेन, वह भिक्षा कैसे फलदायी हो सकती है जब वह विष में परिवर्तित हो गई, रोग उत्पन्न किया, उनके जीवन का अंत कर दिया, उनकी जान ले ली? विरोधियों के खंडन के लिए मुझे इसकी व्याख्या कीजिए। लोग इस बात को लेकर असमंजस में हैं, उनका मानना है कि पेचिश उनके लालच में आकर अधिक खाने के कारण हुई होगी।

22.1 हे राजा, भगवान ने कहा कि दो प्रकार के दान समान, समान फलदायी और समान परिणाम वाले होते हैं, और एक अन्य दान से कहीं अधिक फलदायी और कहीं अधिक परिणामदायी होता है। एक वह दान है जिसे ग्रहण करने पर तथागत को परम बुद्धत्व (ज्ञान) प्राप्त होता है, और दूसरा वह दान है जिसे ग्रहण करने पर उनका पूर्ण संहार हो जाता है और कुछ भी शेष नहीं रहता। क्योंकि वह दान पुण्य और लाभ से परिपूर्ण है। हे राजा, देवताओं ने यह सोचकर हर्षोल्लास किया, "यह तथागत का अंतिम भोजन होगा," और उस कोमल आत्मा को पोषण की दिव्य शक्ति प्रदान की।

सूअर का मांस। और वह स्वयं अच्छी स्थिति में था, हल्का, स्वादिष्ट, स्वाद से भरपूर और पाचन के लिए अच्छा। यह इस वजह से नहीं था कि भगवान बुद्ध को कोई बीमारी हुई, बल्कि उनके शरीर की अत्यधिक कमजोरी और उनके जीवन के उस समय के कारण जो उन्होंने जी-जान से जी लिया था, यह बीमारी उत्पन्न हुई और बिगड़ती चली गई - ठीक वैसे ही जैसे, हे राजा, जब कोई साधारण आग जल रही हो, यदि उसमें नया ईंधन डाला जाए, तो वह और भी अधिक जल उठेगी - या जैसे जब कोई नदी सामान्य रूप से बह रही हो, यदि उसमें नया ईंधन डाला जाए

भारी बारिश होने पर यह एक प्रचंड नदी बन जाएगी जिसमें पानी का तेज बहाव होगा—या जैसे शरीर अपने सामान्य आकार में होता है, अधिक भोजन करने से वह पहले से अधिक चौड़ा हो जाता है। इसलिए, हे राजा, यह परोसे गए भोजन की गलती नहीं थी, और आप इसके लिए किसी प्रकार की हानि नहीं ठहरा सकते।

23. 'परन्तु, आदरणीय नागसेन, वे दो खाद्य दान इतने विशेष रूप से पुण्यकारी क्यों हैं?'

'क्योंकि उनसे प्राप्त होने वाली उच्चतर स्थितियों के कारण।'

'नागसेना, आप किन परिस्थितियों की बात कर रहे हैं?'

'नौ क्रमिक अवस्थाओं की प्राप्ति के बारे में, जिनसे पहले एक क्रम में और फिर विपरीत क्रम में गुजरा गया।'

'क्या ऐसा नहीं था, नागसेन, कि तथागत ने दो दिनों में ही सर्वोच्च अवस्था प्राप्त की थी?'

'जी हां, हे राजा।'

'हे नागसेना, यह अत्यंत अद्भुत और विचित्र बात है कि हमारे भगवान बुद्ध को दिए गए सभी महान और गौरवशाली उपहारों में से एक भी इन दो दानों के बराबर नहीं है। यह अत्यंत आश्चर्यजनक है कि यहाँ तक कि जब वे

नौ क्रमिक अवस्थाएँ गौरवशाली हैं, ठीक वैसे ही वे वरदान भी, जो अपनी महिमा के कारण अन्य सभी वरदानों से कहीं अधिक फलदायी और लाभदायक हैं। बहुत अच्छा, नागसेन! यह सच है, और मैं इसे आपकी बात मानकर स्वीकार करता हूँ।

[यहाँ बुद्ध की अंतिम बीमारी से संबंधित दुविधा समाप्त होती है।] [अवशेषों की आराधना।]

24. आदरणीय नागसेना, तथागत ने कहा: "आनंद, तथागत के अवशेषों का आदर करके स्वयं को बाधा न पहुँचाओ।" और दूसरी ओर उन्होंने कहा:

"उस व्यक्ति के अवशेष का सम्मान करो जो सम्मान के योग्य है, ऐसा करने से तुम इस दुनिया से स्वर्ग जाओगे।"

'अब यदि पहला आदेश सही था तो दूसरा गलत होना चाहिए, और यदि दूसरा सही है तो पहला गलत होना चाहिए। यह भी एक दोधारी समस्या है जो अब आपके सामने रखी गई है, और आपको इसे हल करना होगा।'

25. 'आपने जिन दोनों अंशों का उल्लेख किया है, वे भगवान बुद्ध द्वारा कहे गए थे। लेकिन यह सभी मनुष्यों के लिए नहीं, बल्कि विजेता के पुत्रों के लिए कहा गया था: "हे आनंद, तथागत के अवशेषों का आदर करके स्वयं को बाधित न करो।" आदर करना विजेता के पुत्रों का कार्य नहीं है, बल्कि सभी के सच्चे स्वरूप को समझना है।

जटिल विषयों का अध्ययन, चिंतन का अभ्यास, सतिपथाना के नियमों के अनुसार मनन, सभी चिंतन विषयों के वास्तविक सार को समझना, बुराई से संघर्ष करना और स्वयं के (आध्यात्मिक) कल्याण के प्रति समर्पण। ये वे कार्य हैं जो विजेता के पुत्रों को करने चाहिए, और देवताओं या मनुष्यों में से किसी पर भी आदर करने का दायित्व छोड़ देना चाहिए।

26. हे राजा, यह ठीक उसी प्रकार है जैसे पृथ्वी के राजकुमारों का काम हाथियों, घोड़ों, रथों, धनुषों, तलवारों, दस्तावेजों और संपत्ति के नियमों का ज्ञान प्राप्त करना, क्षत्रिय वंशों की परंपराओं को आगे बढ़ाना, स्वयं युद्ध करना और दूसरों को युद्ध में नेतृत्व करना है, जबकि अन्य साधारण वेस्स और सुद्दा लोगों का काम पशुपालन, व्यापार और पशुओं की देखभाल करना है। या जैसे ब्राह्मणों और उनके पुत्रों का काम ऋग्वेद, यगुर्वेद, सामवेद, अथर्ववेद, शुभ चिह्नों (शरीर पर) का ज्ञान, कथाएँ, पुराण, शब्दकोश, छंदशास्त्र, ध्वनिशास्त्र और श्लोकों का ज्ञान प्राप्त करना है। व्याकरण, व्युत्पत्ति, ज्योतिष, शकुनों और स्वप्नों और संकेतों की व्याख्या, छह वेदांगों का अध्ययन, सूर्य और चंद्रमा के ग्रहणों का अध्ययन, धूमकेतुओं की गति, देवताओं की गर्जना, ग्रहों के मिलन, उल्कापिंडों के गिरने, भूकंपों, अग्नि प्रलय और आकाश और पृथ्वी पर संकेतों से निकाले जाने वाले पूर्वानुमानों का अध्ययन, अंकगणित का अध्ययन, तर्कशास्त्र का अध्ययन।

कुत्तों, हिरणों, चूहों, तरल पदार्थों के मिश्रणों और पक्षियों की आवाज़ों और चीखों से शकुनों का अर्थ निकालना तथागतों का काम है, जबकि पशुपालन, व्यापार और पशुओं की देखभाल साधारण वेस्स और सुद्दाओं का काम है। हे राजा, तथागत का यही अर्थ था कि "जो काम तुम्हारा नहीं है, उसमें अपना समय और ध्यान लगाओ, बल्कि जो काम तुम्हारा है, उसमें लगाओ।" तथागत ने कहा था, "हे आनंद, तथागत के अवशेषों का आदर करके स्वयं को बाधित मत करो।" और हे राजा, यदि उन्होंने ऐसा न कहा होता, तो भिक्षु उनका कुंड और वस्त्र लेकर उनके द्वारा बुद्ध को श्रद्धा अर्पित करने में लग जाते!

'बहुत बढ़िया, नागसेना! यह सच है, और मैं इसे आपके कहे अनुसार स्वीकार करता हूँ।'

[यहाँ अवशेषों के प्रति श्रद्धा को लेकर दुविधा समाप्त होती है।] [चट्टान का टुकड़ा।]

27. आदरणीय नागसेना, आप भिक्षु कहते हैं कि: "जब भगवान बुद्ध चले, तो पृथ्वी ने, अपनी अचेतन अवस्था में ही, अपने गहरे स्थानों को भर दिया और अपने ऊबड़-खाबड़ स्थानों को समतल कर दिया।" और दूसरी ओर आप कहते हैं कि एक टुकड़े से

पत्थर का टुकड़ा उसके पैर को छूकर निकल गया। जब वह टुकड़ा उसके पैर पर गिर रहा था, तो वह हट क्यों नहीं गया? यदि यह सच है कि अचेतन पृथ्वी अपने गहरे स्थानों को उसके लिए भरा हुआ और ढलानों को समतल बना देती है, तो यह कहना असत्य होगा कि पत्थर के टुकड़े से उसके पैर में चोट लगी। लेकिन यदि बाद वाला कथन सत्य है, तो पहला असत्य होगा। यह भी एक दोधारी समस्या है जो अब आपके सामने रखी गई है, और आपको इसे हल करना है।

28. 'हे महाराज, दोनों कथन सत्य हैं। परन्तु वह चट्टान का टुकड़ा स्वतः नहीं गिरा, वह देवदत्त के कर्म से गिराया गया था। हे महाराज, देवदत्त लाखों जन्मों से भगवान बुद्ध से द्वेष रखता था। इसी द्वेष के कारण उसने एक विशाल चट्टान को उठाया और उसे इस आशा से धकेल दिया कि वह बुद्ध के सिर पर गिरेगी। परन्तु दो अन्य चट्टानें आपस में टकराईं और तथागत तक पहुँचने से पहले ही उसे रोक लिया, और उनके प्रभाव से एक टुकड़ा टूटकर इस प्रकार गिरा कि वह भगवान बुद्ध के चरणों में जा लगा।'

29. 'परन्तु, नागसेन, जिस प्रकार दो चट्टानों ने उस विशाल पिंड को रोका, उसी प्रकार वह टुकड़ा भी रोका जा सकता था।'

लेकिन हे राजा, यदि कोई चीज रोक दी जाए तो वह बच सकती है, फिसल सकती है या खो सकती है—जैसे पानी उंगलियों से फिसल जाता है जब उसे हाथ में लिया जाता है—या दूध, या छाछ, या शहद, या घी, या तेल, या मछली का करी।

या ग्रेवी—या जैसे बारीक, सूक्ष्म, छोटे-छोटे, धूल भरे रेत के कण उंगलियों से फिसल जाते हैं, अगर आप मुट्ठी बंद कर लें—या जैसे चावल कभी-कभी उंगलियों में लेने के बाद मुंह में डालते समय फिसल जाते हैं।

30. 'ठीक है, ऐसा ही सही, नागसेन। मैं मानता हूँ कि चट्टान को रोका गया था। लेकिन उस टुकड़े को कम से कम बुद्ध के प्रति उतना ही सम्मान दिखाना चाहिए था जितना पृथ्वी ने दिखाया।'

हे राजा, बारह प्रकार के व्यक्ति होते हैं जो किसी का लिहाज़ नहीं करते—वासना में डूबा हुआ व्यक्ति, द्वेष में क्रोधित व्यक्ति, मूर्खता में सुस्त व्यक्ति, अभिमान में घमंडी व्यक्ति, विवेकहीन दुष्ट व्यक्ति, आज्ञाकारिता की कमी में हठी व्यक्ति, तुच्छ व्यक्ति, घमंड में बातूनी व्यक्ति, क्रूरता में दुष्ट व्यक्ति, दुख में दुखी व्यक्ति, लोभ से ग्रस्त जुआरी और लाभ की खोज में व्यस्त व्यक्ति। परन्तु वह टुकड़ा, जैसे चट्टानों के टकराने से टूटकर गिरा था, संयोगवश ऐसी दिशा में गिरा कि वह भगवान बुद्ध के चरणों से जा टकराया—ठीक वैसे ही जैसे रेत के महीन, सूक्ष्म और छोटे कण हवा के बल से उड़कर संयोगवश किसी भी दिशा में बिखर जाते हैं। हे राजा, यदि वह किरच उस चट्टान से अलग न हुई होती जिसका वह हिस्सा थी, तो वह भी उनके आपस में टकराने से रुक जाती। परन्तु, जैसा कि वह थी, न तो वह पृथ्वी पर टिकी थी, न ही हवा में स्थिर रही, बल्कि जहाँ कहीं भी गिरी।

संयोगवश ही वह वस्तु भगवान बुद्ध के चरणों से टकराई—ठीक वैसे ही जैसे बवंडर में फंसकर सूखे पत्ते गिर जाते हैं। और उसके इस प्रकार उनके चरणों से टकराने का वास्तविक कारण उस कृतघ्न, दुष्ट देवदत्त का दुखद कर्म था।

'बहुत बढ़िया, नागसेना! यह सच है, और मैं इसे आपके कहे अनुसार स्वीकार करता हूँ।'

[यहाँ बुद्ध के पैर को छूकर निकल गई किरच का क्या अर्थ है, यह दुविधा समाप्त होती है।] [समाण।]

31. पूज्य नागसेन, भगवान ने कहा: "आसवों के विनाश से मनुष्य समना बन जाता है।" परन्तु दूसरी ओर उन्होंने कहा:

"जिस व्यक्ति में ये चारों गुण होते हैं, उसे ही संसार समना के नाम से जानता है।"

और उस अंश में जिन चार गुणों का उल्लेख किया गया है, वे हैं - धीरज, भोजन में संयम, त्याग और आसक्तियों से मुक्त होना (जो कामवासना, द्वेष और सुस्ती से उत्पन्न होती हैं)। अब ये चारों गुण उन लोगों में भी समान रूप से पाए जाते हैं जो अभी भी अपूर्ण हैं, जिनमें

[पैराग्राफ जारी है] आसव अभी तक पूरी तरह से नष्ट नहीं हुए हैं। इसलिए यदि पहला कथन सही है, तो दूसरा गलत है, और यदि दूसरा सही है तो पहला गलत होना चाहिए। यह भी एक दोधारी समस्या है जो अब आपके सामने रखी गई है, और आपको इसे हल करना होगा।'

32. 'हे महाराज, ये दोनों कथन भगवान बुद्ध द्वारा कहे गए हैं। परन्तु दूसरा कथन अमुक-अमुक पुरुषों के गुणों के बारे में है; पहला कथन व्यापक है—कि जिनमें आसव नष्ट हो जाते हैं, वे सभी समना हैं। और इसके अतिरिक्त, जो लोग बुराई के दमन से परिपूर्ण हो जाते हैं, यदि आप उन्हें क्रमानुसार एक-एक करके लें, तो वह समना जिसमें आसव नष्ट हो जाते हैं, सर्वोत्कृष्ट माना जाता है—हे महाराज, जैसे जल या भूमि पर उगने वाले सभी फूलों में चमेली सर्वोत्कृष्ट मानी जाती है, अन्य सभी प्रकार के फूल मात्र फूल हैं, और यदि उन्हें क्रमानुसार लें, तो चमेली सर्वोत्कृष्ट ही है जिसे लोग सबसे अधिक चाहते और पसंद करते हैं। या हे महाराज, जैसे सभी प्रकार के अनाजों में चावल सर्वोत्कृष्ट माना जाता है, अन्य सभी प्रकार के अनाज, चाहे वे किसी भी प्रकार के हों, [183] भोजन और शरीर के पोषण के लिए उपयोगी हैं, परन्तु यदि आप उन्हें क्रमानुसार लें, तो चावल सर्वोत्कृष्ट माना जाता है।'

'बहुत बढ़िया, नागसेना! यह सच है, और मैं इसे आपके कहे अनुसार स्वीकार करता हूँ।'

[यहाँ समना किसे कहते हैं, इस दुविधा का अंत होता है।]

[बुद्ध का उल्लास।]

33. आदरणीय नागसेन, भगवान ने कहा: "हे भिक्षुओं, यदि कोई मेरी, या हमारे धर्म (धम्म) की, या संघ की प्रशंसा करे, तो तुम प्रसन्नता, आनंद या उल्लास में मत लिप्त हो जाओ।" वहीं दूसरी ओर, सेला ब्राह्मण द्वारा दी गई प्रशंसा से तथागत इतने प्रसन्न, प्रसन्न और प्रफुल्लित हुए कि उन्होंने अपनी अच्छाई को और भी अधिक बढ़ाते हुए कहा:

"मैं राजा हूँ, सेला, धर्म का सर्वोच्च राजा। मैं धर्म के मार्ग पर राजसी रथ का पहिया चलाता हूँ—वह पहिया जिसे कोई वापस नहीं मोड़ सकता!"

अब यदि पहला उद्धृत अंश सही है तो दूसरा गलत होना चाहिए, लेकिन यदि वह सही है तो पहला गलत होना चाहिए। यह भी एक दोधारी समस्या है जो अब आपके सामने रखी गई है, और आपको इसे हल करना होगा।'

34. 'हे महाराज, आपके दोनों उद्धरण सही हैं। लेकिन पहला अंश भगवान बुद्ध ने सत्य, सटीकता, वास्तविकता और तथ्य के अनुरूप बताने के इरादे से कहा था, और

धम्म की वास्तविक प्रकृति, सार और विशिष्ट विशेषताओं के बारे में उन्होंने ज्ञान का वर्णन किया। और दूसरा कथन उन्होंने लाभ या प्रसिद्धि के लिए, न ही गुटबाजी के लिए, और न ही लोगों को अपना अनुयायी बनाने की लालसा में कहा था। बल्कि दया और प्रेम से, और दूसरों के कल्याण को ध्यान में रखते हुए, यह जानते हुए कि इससे तीन सौ युवा ब्राह्मण सत्य के ज्ञान को प्राप्त करेंगे, उन्होंने कहा: "मैं राजा हूँ, सेला, धर्म का सर्वोच्च राजा।"

'बहुत बढ़िया, नागसेना! यह सच है, और मैं इसे आपके कहे अनुसार स्वीकार करता हूँ।'

[यहाँ मन के उल्लास से संबंधित समस्या समाप्त होती है।] [दया और दंड।]

35. पूज्य नागसेना, भगवान ने कहा:

किसी को भी हानि न पहुँचाते हुए, प्रेम और दया से परिपूर्ण होकर संसार में निवास करो।

और दूसरी ओर उन्होंने कहा: "जो दंड का पात्र हो उसे दंड दो, जो कृपा के योग्य हो उस पर कृपा करो।" अब दंड, नागसेन, का अर्थ है हाथ या पैर काटना, कोड़े मारना, बंधनों में डालना, यातना देना, मृत्युदंड देना, पद में अवमूल्यन करना।

[पैराग्राफ जारी है] अतः ऐसा कथन भगवान बुद्ध के योग्य नहीं है, और उन्हें इसका प्रयोग नहीं करना चाहिए था। क्योंकि यदि पहला आदेश सही है तो यह गलत होना चाहिए, और यदि यह सही है तो किसी को भी हानि न पहुँचाने का आदेश, बल्कि संसार में प्रेम और दया से परिपूर्ण रहने का आदेश गलत होना चाहिए। यह भी अब आपके समक्ष एक दोधारी समस्या है, और आपको इसे हल करना है।'

36. हे महान राजा, भगवान बुद्ध ने वे दोनों आदेश दिए हैं जिनका आपने उल्लेख किया है। पहला आदेश, किसी को हानि न पहुँचाना, बल्कि संसार में प्रेम और दया से परिपूर्ण जीवन जीना—यह सभी बुद्धों द्वारा स्वीकृत सिद्धांत है। और वह श्लोक एक आज्ञा है, धम्म का विस्तार है, क्योंकि धम्म की विशेषता यह है कि वह किसी का हित नहीं बिगाड़ता। और यह कथन भी इससे पूर्णतः मेल खाता है। परन्तु दूसरे आदेश का, जिसका आपने उल्लेख किया है, वह शब्दों का विशेष प्रयोग है [जिसे आपने गलत समझा है। उनका वास्तविक अर्थ है: "जिसे वश में करना चाहिए उसे वश में करो, प्रयास करो, संवर्धन करो, जो प्रयास, संवर्धन और स्वीकृति के योग्य है उसका पक्ष लो"]। हे महान राजा, अहंकारी हृदय को वश में करना है और दीन हृदय को संवर्धित करना है—दुष्ट हृदय को वश में करना है और भले हृदय को संवर्धित करना है—विचारों की लापरवाही को वश में करना है। वश में रहो, और विचारों की सटीकता विकसित करो—जो गलत विचारों में लिप्त है उसे वश में करो, और जिसने सही विचारों को प्राप्त कर लिया है उसे विकसित करो—जो कुलीन नहीं है उसे वश में करो, और जो कुलीन है उसे...

सुसंस्कृत होना चाहिए—लुटेरे को वश में करना चाहिए, और ईमानदार भाई को सुसंस्कृत होना चाहिए।'

37. 'ऐसा ही हो, नागसेन। लेकिन अब, अपने उस आखिरी शब्द में, आपने स्वयं को मेरे वश में कर लिया है, आप उस अर्थ को समझ गए हैं जिसमें मैंने अपना प्रश्न पूछा था। क्योंकि, आदरणीय नागसेन, जो व्यक्ति लुटेरे को वश में करने का प्रयास करता है, वह उसे कैसे वश में कर सकता है?'

'इस प्रकार, हे महान राजा—यदि वह फटकार का पात्र हो तो उसे फटकार दी जाए, यदि जुर्माने का पात्र हो तो उस पर जुर्माना लगाया जाए, यदि निर्वासन का पात्र हो तो उसे निर्वासित किया जाए, यदि मृत्यु का पात्र हो तो उसे मृत्युदंड दिया जाए।'

'तो क्या, नागसेन, लुटेरों को मृत्युदंड देना तथागतों द्वारा प्रतिपादित सिद्धांत का हिस्सा है?'

'बिल्कुल नहीं, हे राजा।'

'तो फिर तथागतों ने यह नियम क्यों बनाया है कि लुटेरे को बेहतर शिक्षा दी जानी चाहिए?'

'हे महाराज, जिसे भी मृत्युदंड दिया जाता है, वह तथागतों द्वारा व्यक्त मत के कारण मृत्युदंड भोगता नहीं है। वह अपने कर्मों के फल भोगता है। परन्तु यद्यपि बुद्धों द्वारा धम्म का उपदेश दिया गया है, तो हे महाराज, क्या यह संभव है कि कोई ऐसा व्यक्ति जिसने कोई अपराध न किया हो और निर्दोष भाव से सड़कों पर चल रहा हो, किसी बुद्धिमान व्यक्ति द्वारा पकड़कर मृत्युदंड दे दिया जाए?'

'हरगिज नहीं।'

'लेकिन क्यों?'

'क्योंकि वह निर्दोष है।'

'हे महाराज, इसी प्रकार, चूंकि चोर को तथागत के वचन से नहीं, बल्कि उसके अपने कर्मों से मृत्युदंड दिया जाता है, तो इस कारण गुरु पर कोई दोष कैसे लगाया जा सकता है?'

'ऐसा नहीं हो सकता, महोदय।'

'तो आप देख सकते हैं कि तथागतों की शिक्षा एक धार्मिक शिक्षा है।'

'बहुत बढ़िया, नागसेना! यह सच है, और मैं इसे आपके कहे अनुसार स्वीकार करता हूँ।'

[यहाँ दया और दंड से संबंधित समस्या समाप्त होती है।] [वरिष्ठों की बर्खास्तगी।]

38. हे पूज्य नागसेना, भगवान बुद्ध ने कहा:

मैं न तो क्रोधित होता हूँ और न ही रूठता रखता हूँ।

लेकिन दूसरी ओर तथागत ने वरिष्ठ सारिपुत्त और मोग्गलाना को, साथ ही उनके शिष्यों के समूह में शामिल भाइयों को भी विदा कर दिया।

[पैराग्राफ जारी है] नागसेन, अब बताओ, तथागत ने शिष्यों को क्रोध में विदा किया था या प्रसन्नता में? कृपया मुझे समझाओ कि ऐसा कैसे हुआ। नागसेन, यदि उन्होंने क्रोध में विदा किया, तो तथागत ने अपने भीतर क्रोध की प्रवृत्ति को पूरी तरह से वश में नहीं किया था। लेकिन यदि यह प्रसन्नता में था, तो उन्होंने अज्ञानता में और बिना उचित कारण के ऐसा किया। यह भी अब तुम्हारे सामने एक दोधारी समस्या है, और तुम्हें इसका हल निकालना होगा।

39. हे राजा, भगवान ने कहा:

मैं न तो क्रोधित होता हूँ और न ही रूठा।

और उसने अपने शिष्यों समेत बुजुर्गों को विदा कर दिया। परन्तु यह क्रोध में नहीं था। हे राजा, मान लो कि कोई मनुष्य किसी जड़, खूंटी, पत्थर, मिट्टी के बर्तन के टुकड़े या ऊबड़-खाबड़ ज़मीन से ठोकर खाकर गिर पड़े। क्या यह होगा कि धरती उससे क्रोधित होकर उसे गिरा दे?

'जी नहीं, बिल्कुल नहीं, महोदय। विशाल पृथ्वी किसी मनुष्य के प्रति न तो क्रोध महसूस करती है और न ही प्रसन्नता। यह पूरी तरह से

द्वेष से मुक्त होने के कारण, न तो उसे किसी की चापलूसी करने की आवश्यकता होती है। यह उसकी स्वयं की लापरवाही के कारण ही हुआ होगा कि वह व्यक्ति ठोकर खाकर गिर गया।

'हे महाराज, तथागत भी किसी मनुष्य के प्रति न तो क्रोधित होते हैं और न ही अभिमानी। तथागत और अरहत-बुद्ध, दोनों ही किसी से द्वेष नहीं रखते और न ही किसी की चापलूसी करने की इच्छा रखते हैं। और उन शिष्यों को उनके कर्मों के फलस्वरूप ही विदा किया गया था। इसी प्रकार सागर किसी शव को अपने साथ नहीं रखता। यदि उसमें कोई मृत शरीर हो, तो वह उसे तुरंत ऊपर फेंक देता है और किनारे पर सूखा छोड़ देता है। परन्तु क्या वह क्रोधित होकर उसे ऊपर फेंकता है?'

'बिल्कुल नहीं, महोदय। विशाल सागर न तो किसी के प्रति क्रोधित होता है और न ही किसी से प्रसन्न होता है। यह किसी को प्रसन्न करने की जरा भी इच्छा नहीं रखता और किसी को हानि पहुंचाने की इच्छा से पूरी तरह मुक्त है।'

'हे महाराज, तथागत भी किसी मनुष्य के प्रति क्रोध नहीं रखते और न ही किसी मनुष्य पर विश्वास करते हैं। तथागत, अरहत-बुद्ध, किसी मनुष्य की सद्भावना प्राप्त करने या उसे हानि पहुँचाने की इच्छा से पूर्णतः मुक्त हैं। और उन्हीं के कर्मों के कारण उन शिष्यों को विदा किया गया था। हे महाराज, जिस प्रकार कोई मनुष्य ठोकर खाकर गिर जाता है, उसी प्रकार विजेता के उत्तम उपदेश में ठोकर खाने वाला विदा हो जाता है। जिस प्रकार सागर में शव तैरता है, उसी प्रकार विजेता के उत्तम उपदेश में ठोकर खाने वाला विदा हो जाता है। तथागत ने जब उन शिष्यों को विदा किया, तो यह उनके हित में था, और उनके

लाभ, सुख और शुद्धि के लिए, और ताकि इस प्रकार वे जन्म, बुढ़ापा, रोग और मृत्यु से मुक्त हो सकें।

'बहुत बढ़िया, नागसेना! यह सच है, और मैं इसे आपके कहे अनुसार स्वीकार करता हूँ।'

[यहाँ पर वरिष्ठों की बर्खास्तगी से संबंधित समस्या समाप्त होती है।]

तीसरा अध्याय यहीं समाप्त होता है।

टिपिटका >> सुत्त पिटक >> खुद्दक निकाय >> मिलिंदपन्हा >> पुस्तक VI: दुविधाओं का समाधान - मेंडका पन्हा अध्याय 4

अनुवादक: टी.डब्ल्यू. राइस डेविड्स

पिछला <<<<-----||-12-||----->>>> अगला

1. आदरणीय नागसेन, भगवान बुद्ध ने कहा है: "हे भिक्षुओं, यह मेरे शिष्यों में से इद्धि शक्ति से संपन्न प्रमुख हैं, मेरा तात्पर्य मोग्गलाना से है।" परन्तु दूसरी ओर, कुछ लोग कहते हैं कि उनकी मृत्यु गदाओं से पीट-पीटकर हुई, जिससे उनकी खोपड़ी टूट गई, हड्डियाँ चूर-चूर हो गईं और उनका सारा मांस और नसें कुचलकर चूर-चूर हो गईं। अब, नागसेन, यदि महान मोग्गलाना ने वास्तव में इद्धि की जादुई शक्ति में सर्वोच्चता प्राप्त कर ली थी, तो यह सत्य नहीं हो सकता कि उनकी मृत्यु गदाओं से पीट-पीटकर हुई। परन्तु यदि उनकी मृत्यु इस प्रकार हुई, तो यह कहना कि वे इद्धि शक्ति से संपन्न प्रमुख थे, गलत है। जो व्यक्ति अपनी इद्धि शक्ति से अपनी ही हत्या को नहीं रोक सका, वह फिर भी देवताओं और मनुष्यों के संसार का सहारा बनने योग्य कैसे हो सकता है? यह भी एक दोधारी समस्या है जो अब आपके सामने रखी गई है, और आपको इसे हल करना होगा।'

2. हे राजा, भगवान बुद्ध ने घोषणा की कि मोग्गलाना शिष्यों में शक्ति में श्रेष्ठ थे।

इद्धि का। और फिर भी उसे लाठियों से पीट-पीटकर मार डाला गया। लेकिन ऐसा इसलिए हुआ क्योंकि उस समय वह कर्म की और भी बड़ी शक्ति से ग्रसित था।

3. 'परन्तु, आदरणीय नागसेन, क्या इद्धि शक्ति रखने वाले व्यक्ति से संबंधित ये दोनों बातें—अर्थात उसकी शक्ति का विस्तार और उसके कर्मों का फल—दोनों ही अकल्पनीय नहीं हैं? और क्या अकल्पनीय को अकल्पनीय द्वारा रोका नहीं जा सकता? हे प्रभु, जिस प्रकार फल चाहने वाले बेल को बेल से या आम को आम से गिरा देते हैं, उसी प्रकार क्या अकल्पनीय को भी अकल्पनीय द्वारा नियंत्रित नहीं किया जाना चाहिए?'

'हे महाराज, कल्पना से परे की चीजों में भी, एक चीज दूसरी से अधिक शक्तिशाली होती है। हे महाराज, जिस प्रकार संसार के राजा एक समान स्वभाव के होते हैं, फिर भी उनमें से एक ऐसा होता है जो बाकियों पर विजय प्राप्त कर उन्हें अपने अधीन कर लेता है—ठीक उसी प्रकार, कल्पना से परे की चीजों में कर्म का फल सबसे अधिक शक्तिशाली होता है। कर्म का यही प्रभाव होता है जो सब पर विजय प्राप्त कर लेता है और उन्हें अपने अधीन कर लेता है; और जिस मनुष्य पर कर्म अपना अंतिम परिणाम दे रहा होता है, उस पर कोई अन्य प्रभाव व्यर्थ हो जाता है। हे महाराज, यह वैसा ही है जैसे किसी व्यक्ति ने कानून का उल्लंघन किया हो।'

[पैराग्राफ जारी है] न तो उसकी माँ, न उसके पिता, न उसकी बहनें, न उसका भाई, न उसके मित्र, न उसके घनिष्ठ सहयोगी तब उसकी रक्षा कर सकते हैं। वह राजा के अधीन हो गया है, जो उसके संबंध में अपना आदेश जारी करेगा। और ऐसा क्यों है? क्योंकि उसने गलत कार्य किया है। यही कर्म का प्रभाव है जो अन्य सभी प्रभावों पर विजय प्राप्त कर लेता है और उन्हें अपने वश में कर लेता है, और कोई अन्य प्रभाव उस व्यक्ति के लिए उपयोगी नहीं हो सकता जिस पर कर्म अपना अपरिहार्य अंत कर रहा है। यह ऐसा है जैसे जब पृथ्वी पर जंगल में आग लग जाती है, तो पानी के हजार घड़े भी उसे बुझाने में सक्षम नहीं होते, बल्कि आग सब पर हावी हो जाती है और उसे अपने वश में कर लेती है। और ऐसा क्यों है? क्योंकि उसकी गर्मी बहुत तीव्र होती है। यही कर्म का प्रभाव है जो अन्य सभी प्रभावों पर विजय प्राप्त कर लेता है और उन्हें अपने वश में कर लेता है; और कोई अन्य प्रभाव उस व्यक्ति के लिए उपयोगी नहीं हो सकता जिस पर कर्म अपना अपरिहार्य अंत कर रहा है। इसीलिए आदरणीय, महान राजा, महान मोग्गलाना, जब कर्म के प्रभाव में आकर गदाओं से पीट-पीटकर मारे जा रहे थे, तब भी वे अपनी इद्धि शक्ति का उपयोग करने में असमर्थ थे।

'बहुत बढ़िया, नागसेना! यह सच है, और मैं इसे आपके कहे अनुसार स्वीकार करता हूँ।'

[मोग्गलाना की हत्या से संबंधित समस्या यहीं समाप्त होती है।]

[गुप्त सिद्धांत पर।]

4. आदरणीय नागसेन, भगवान बुद्ध ने कहा है: "तथागत द्वारा प्रतिपादित धम्म और विनय (सिद्धांत और विधि) तभी प्रकाशमान होते हैं जब वे प्रकट होते हैं, न कि जब वे छिपे होते हैं।" परन्तु दूसरी ओर, पातिमोक्खा का पाठ और संपूर्ण विनय पिटक गुप्त रखे गए हैं। इसलिए, नागसेन, यदि आप (संघ के सदस्य) न्यायसंगत और उचित कार्य करें और विजेता बुद्ध की शिक्षाओं में आस्था रखें, तो विनय एक खुले विषय के रूप में प्रकाशमान होगा। और ऐसा क्यों होगा? क्योंकि उसमें निहित सभी शिक्षाएँ, अनुशासन, आत्म-संयम, नैतिक और सदाचारी आचरण संबंधी नियम, अपने सार में सत्य और धर्म से परिपूर्ण हैं और हृदय की मुक्ति की ओर ले जाते हैं। लेकिन यदि भगवान बुद्ध ने सचमुच कहा है कि तथागत द्वारा प्रतिपादित धम्म और विनय गुप्त रखने पर नहीं बल्कि प्रदर्शित करने पर ही प्रकाशमान होते हैं, तो यह कहना कि पातिमोक्खा का पाठ और संपूर्ण विनय गुप्त रखा जाना चाहिए, गलत होगा। और यदि यह सही है, तो भगवान बुद्ध का कथन गलत होगा। यह भी अब आपके समक्ष एक दोधारी समस्या है, और आपको इसका हल निकालना होगा।

5. हे महाराज, भगवान बुद्ध ने कहा है कि तथागत द्वारा प्रतिपादित धम्म और विनय

प्रदर्शित करने पर ही प्रकाशमान होते हैं, गुप्त रखने पर नहीं। वहीं दूसरी ओर, पातिमोक्खा का पाठ और संपूर्ण विनय पिटक गुप्त रखे जाते हैं। परन्तु यह बात सभी मनुष्यों पर लागू नहीं होती। इन्हें एक निश्चित सीमा तक ही गुप्त रखा जाता है। और पातिमोक्खा का पाठ उस निश्चित सीमा तक तीन कारणों से गुप्त रखा जाता है—पहला, क्योंकि यह पूर्व तथागतों की परंपरा है; दूसरा, सत्य (धम्म) के प्रति आदर के कारण; और तीसरा, संघ के सदस्य के पद के प्रति आदर के कारण।

6. 'और जहाँ तक पहले का सवाल है, हे महाराज, पूर्ववर्ती तथागतों की यह सर्वमान्य प्रथा थी कि पातिमोक्खा का पाठ केवल संघ के सदस्यों के बीच ही हो, अन्य सभी को छोड़कर। हे महाराज, जिस प्रकार क्षत्रिय गुप्त सूत्र (कुलीनों के) केवल कुलीनों के बीच ही संप्रेषित होते हैं, और यह या वह सत्य विश्व के कुलीनों के बीच सामान्य परंपरा है और अन्य सभी से गुप्त रखा जाता है— उसी प्रकार पूर्ववर्ती तथागतों की यह सर्वमान्य प्रथा थी कि पातिमोक्खा का पाठ केवल संघ के सदस्यों के बीच ही हो।

केवल संघ के सदस्यों के समक्ष ही इसका पाठ किया जाना चाहिए, और इसे अन्य सभी से गुप्त रखा जाना चाहिए। और फिर, हे राजा, जिस प्रकार संसार में अनेक वर्ग हैं, जैसे पहलवान, कलाबाज, बाजीगर, अभिनेता, बैले नर्तक और सूर्य-चंद्रमा, भाग्य की देवी और अन्य देवताओं के रहस्यमय संप्रदाय के अनुयायी। और इन सभी संप्रदायों के रहस्य संप्रदाय के भीतर ही हस्तांतरित किए जाते हैं, और अन्य सभी से गुप्त रखे जाते हैं। ठीक उसी प्रकार, सभी तथागतों की यह सार्वभौमिक प्रथा है कि पातिमोक्खा का पाठ केवल संघ के सदस्यों के समक्ष ही किया जाना चाहिए, और इसे अन्य सभी से गुप्त रखा जाना चाहिए। यही कारण है कि पूर्व तथागतों की परंपरा के अनुसार पातिमोक्खा का पाठ उस सीमा तक गुप्त रखा जाता है।

7. और यह कैसे संभव है कि धम्म के प्रति श्रद्धा के कारण पातिमोक्खा को उस हद तक गुप्त रखा जाता है? हे महाराज, धम्म आदरणीय और महत्वपूर्ण है। जिसने इसमें निपुणता प्राप्त कर ली है, वह दूसरे को इस प्रकार उपदेश दे सकता है: "इस सत्य से परिपूर्ण, इस उत्कृष्ट धम्म को उन लोगों के हाथों में न पड़ने दें जो इससे अनभिज्ञ हैं, जहाँ इसका तिरस्कार और अपमान किया जाएगा, इसे शर्मनाक माना जाएगा, इसका मजाक उड़ाया जाएगा और इसमें दोष निकाले जाएंगे। न ही इसे दुष्टों के हाथों में पड़ने दें जो इसके साथ हर तरह से वैसा ही बुरा व्यवहार करेंगे जैसा वे करते हैं।" हे महाराज, इसी प्रकार पातिमोक्खा का पाठ उस हद तक किया जाता है।

इसका विस्तार धम्म के प्रति श्रद्धावश गुप्त रखा गया है। क्योंकि यदि ऐसा न किया जाए, तो यह उत्तम, सबसे कीमती और सबसे दुर्लभ लाल चंदन की लकड़ी के समान होगा, जिसे सवारा (कंडालों के उस शहर) में लाए जाने पर तिरस्कृत और अपमानित किया जाता है, उसके साथ अपमानजनक व्यवहार किया जाता है, उसे खेल का मैदान बना दिया जाता है और उसमें कमियां निकाली जाती हैं।

8. और यह कैसे संभव है कि भिक्षु संघ के सदस्य की गरिमा के प्रति आदर के कारण पातिमोक्खा को उस हद तक गुप्त रखा जाता है? हे महान राजा, भिक्षु की स्थिति ऐसी महिमा में है जिसकी गणना वजन, माप या मूल्य से नहीं की जा सकती। कोई भी इसका मूल्य नहीं लगा सकता, इसे तौल नहीं सकता, इसे माप नहीं सकता। और पातिमोक्खा का पाठ केवल भिक्षुओं के समक्ष ही किया जाता है, ताकि उस पद पर आसीन कोई भी व्यक्ति सांसारिक लोगों के स्तर तक न गिर जाए। हे राजा, जिस प्रकार वस्त्र, कालीन, हाथी, घोड़े, रथ, सोना, चांदी, रत्न, मोती, स्त्री या उत्तम मादक पेय जैसी कोई भी वस्तु अमूल्य हो, वह सब राजाओं की संपत्ति है—ठीक उसी प्रकार, हे राजा, प्रशिक्षण, भगवान बुद्ध की परंपराओं, विद्या, आचरण और धर्म एवं आत्मसंयम जैसे गुणों में जो कुछ भी सबसे अमूल्य है—वह सब भिक्षु संघ की संपत्ति है। इसीलिए पातिमोक्खा का पाठ उस हद तक गुप्त रखा जाता है।

'बहुत बढ़िया, नागसेना! यह सच है, और मैं इसे आपके कहे अनुसार स्वीकार करता हूँ।'

[विनय को गुप्त रखने से संबंधित समस्या यहीं समाप्त होती है।] [झूठ के दो प्रकार।]

9. 'आदरणीय नागसेना, भगवान बुद्ध ने कहा है कि जानबूझकर झूठ बोलना सबसे बड़ा अपराध है (जिसमें संघ से निष्कासन शामिल है)।

[पैराग्राफ जारी है] और फिर उन्होंने कहा: "जानबूझकर झूठ बोलने से भिक्षु एक छोटा अपराध करता है, एक ऐसा अपराध जिसकी स्वीकारोक्ति संघ के किसी अन्य सदस्य के समक्ष की जानी चाहिए।" अब, पूज्य नागसेना, इसमें क्या अंतर है, क्या कारण है कि एक झूठ बोलने से भिक्षु संघ से निष्कासित कर दिया जाता है, और दूसरे झूठ बोलने से वह केवल एक ऐसे अपराध का दोषी होता है जिसका प्रायश्चित किया जा सकता है। यदि पहला निर्णय सही है, तो दूसरा गलत होना चाहिए; लेकिन यदि दूसरा सही है, तो पहला गलत होना चाहिए। यह भी अब आपके समक्ष रखी गई एक दोधारी समस्या है, और आपको इसे हल करना है।'

10. 'हे महाराज, आपके दोनों कथन सही हैं। परन्तु झूठ बोलना विषयवस्तु के अनुसार हल्का या गंभीर अपराध हो सकता है। क्योंकि हे महाराज, आप क्या सोचते हैं? मान लीजिए कोई व्यक्ति दूसरे को अपने हाथ से थप्पड़ मारे, तो आप उसे क्या दंड देंगे?'

'यदि दूसरा पक्ष इस मामले को नजरअंदाज करने से इनकार करता है, तो हमें भी उसके हमलावर को क्षमा नहीं करना चाहिए, बल्कि उस पर एक या दो पैसे का जुर्माना लगाना चाहिए।'

लेकिन दूसरी ओर, मान लीजिए कि यह आप होते

यदि उसने स्वयं को ही प्रहार किया होता, तो फिर उसकी सजा क्या होती?'

'हमें उसके हाथ और पैर काटकर उसे जिंदा ही उसकी खाल उतार देने की सजा देनी चाहिए, और हमें उसके घर का सारा सामान जब्त कर लेना चाहिए, और उसके परिवार के सभी लोगों को दोनों तरफ से सातवीं पीढ़ी तक मौत के घाट उतार देना चाहिए।'

'पर, हे महाराज, इसमें क्या भेद है? ऐसा क्यों है कि हाथ के एक थप्पड़ के लिए एक पैसे का मामूली जुर्माना है, जबकि आपको दिए गए एक थप्पड़ के लिए इतना भयानक दंड दिया जाता है?'

'जिस व्यक्ति पर हमला हुआ, उसमें अंतर होने के कारण।'

'अच्छा! ठीक इसी तरह, हे महाराज, झूठ बोलना परिस्थितियों के अनुसार हल्का या गंभीर अपराध होता है।'

'बहुत बढ़िया, नागसेना! यह सच है, और मैं इसे आपके कहे अनुसार स्वीकार करता हूँ।'

[झूठ बोलने में अपराध की गंभीरता से संबंधित समस्या यहीं समाप्त होती है।] [बोडिसैट का विचार।]

11. आदरणीय नागसेना, भगवान बुद्ध ने आवश्यक शर्तों पर अपने प्रवचन में कहा है: "बहुत पहले ही प्रत्येक बोदिसात के लिए उसके माता-पिता का निर्धारण हो चुका है, और उसे अपने बोदि वृक्ष के लिए किस प्रकार का वृक्ष चुनना है, यह भी निर्धारित हो चुका है।"

[पैराग्राफ जारी है] भिक्षु जो उनके दो प्रमुख शिष्य होंगे, और वह बालक जो उनका पुत्र होगा, और संघ का वह सदस्य जो उनका विशेष सेवक होगा।" लेकिन दूसरी ओर उन्होंने कहा: "जब बोधिसात तुषिता स्वर्ग में देवता की अवस्था में होते हैं, तब वे आठ महान जांच करते हैं - वे समय (कि क्या वह सही समय आ गया है जब उन्हें मनुष्य के रूप में पुनर्जन्म लेना चाहिए), और महाद्वीप (जिसमें उनका जन्म होना है), और देश (जहां उनका पुनर्जन्म होना है), और परिवार (जिससे वे संबंधित होंगे), और माता (जो उन्हें जन्म देंगी), और अवधि (जिस दौरान वे गर्भ में रहेंगे), और महीना (जिसमें उनका जन्मदिन आएगा), और उनका त्याग (कब होगा) की जांच करते हैं।" अब, नागसेन, ज्ञान के परिपक्व होने से पहले समझ नहीं होती, परन्तु जब वह अपने चरम पर पहुँच जाता है तो किसी विषय पर विचार करने की प्रतीक्षा करने की कोई आवश्यकता नहीं रहती, क्योंकि सर्वज्ञ मन की दृष्टि से कुछ भी परे नहीं है। तो फिर बोधिसात को समय की खोज क्यों करनी चाहिए, यह सोचते हुए कि "मैं किस क्षण जन्म लूँगा?" और इसी कारण उसे परिवार की खोज क्यों करनी चाहिए, यह सोचते हुए?

[पैराग्राफ जारी है] "मैं किस परिवार में जन्म लूँगा?" और यदि, नागसेना, यह पहले से ही तय है कि बोदिसात के माता-पिता कौन होंगे, तो यह कहना गलत होगा कि उसने "परिवार की जाँच की"। लेकिन यदि यह सच है, तो दूसरा कथन भी गलत होगा। यह भी अब आपके सामने एक दोधारी समस्या है, और आपको इसे हल करना होगा।'

12. हे महाराज, यह तो तय था कि बोदिसात के माता-पिता कौन होंगे, और उन्होंने इस बात की जाँच भी की कि उनका जन्म किस कुल में होगा। परन्तु उन्होंने यह कैसे किया? उन्होंने इस बात पर विचार किया कि उनके माता-पिता कुलीन हों या ब्राह्मण। हे महाराज, भविष्य के घटित होने से पहले आठ बातों की जाँच कर लेनी चाहिए। हे राजा, एक व्यापारी को सामान खरीदने से पहले उसकी जांच करनी चाहिए—एक हाथी को अपनी सूंड से उस रास्ते को आजमाना चाहिए जिस पर वह अभी तक नहीं चला हो—एक गाड़ीवान को उस नदी को आजमाना चाहिए जिसे उसने अभी तक पार नहीं किया हो—एक नाविक को उस किनारे का परीक्षण करना चाहिए जहां वह अभी तक नहीं पहुंचा हो, और इस प्रकार जहाज का मार्गदर्शन करना चाहिए—एक चिकित्सक को अपने रोगी के जीवन की अवधि का पता लगाना चाहिए, इससे पहले कि वह उसका इलाज करे—एक यात्री को बांस के पुल पर चढ़ने से पहले उसकी स्थिरता की जांच करनी चाहिए—एक भिक्षु को यह पता लगाना चाहिए कि सूर्य अस्त होने में कितना समय बचा है, इससे पहले कि वह अपना भोजन शुरू करे—और बोधिसत्वों को जन्म लेने से पहले इस प्रश्न की जांच करनी चाहिए कि क्या उनके लिए किसी कुलीन परिवार में जन्म लेना उचित होगा या किसी ब्राह्मण परिवार में।

[पैराग्राफ जारी है] ये आठ ऐसे अवसर हैं जिन पर कार्रवाई से पहले जांच होनी चाहिए।'

'बहुत बढ़िया, नागसेना! यह सच है, और मैं इसे आपके कहे अनुसार स्वीकार करता हूँ।'

[बोडिसैट के विचार से संबंधित समस्या यहीं समाप्त होती है।] [आत्महत्या पर।]

13. 'आदरणीय नागसेना, भगवान बुद्ध ने कहा है: "हे भिक्षुओं, किसी भाई को आत्महत्या नहीं करनी चाहिए। जो कोई ऐसा करेगा, उसके साथ विधि के अनुसार व्यवहार किया जाएगा।" और दूसरी ओर आप (संघ के सदस्य) कहते हैं: "भगवान बुद्ध शिष्यों को जिस भी विषय पर संबोधित करते थे, वे हमेशा विभिन्न दृष्टांतों के माध्यम से उन्हें जन्म, वृद्धावस्था, रोग और मृत्यु के नाश का उपदेश देते थे। और जो कोई जन्म, वृद्धावस्था, रोग और मृत्यु पर विजय प्राप्त करता था, उसे वे सर्वोच्च सम्मान देते थे।" अब यदि भगवान बुद्ध ने आत्महत्या का निषेध किया है, तो आपका यह कथन गलत होना चाहिए, लेकिन यदि नहीं, तो आत्महत्या का निषेध गलत होना चाहिए। यह भी अब आपके समक्ष एक दोधारी समस्या है, और आपको इसका हल निकालना होगा।'

14. 'हे महाराज, जिस नियम का आप उल्लेख कर रहे हैं, वह भगवान बुद्ध द्वारा निर्धारित किया गया था, और फिर भी हमारा वह कथन सत्य है जिसका आप जिक्र कर रहे हैं। और इसका एक कारण है,

जिस कारण से भगवान ने (जीवन के विनाश को) मना किया, और साथ ही (दूसरे अर्थ में) हमें इसके लिए प्रेरित भी किया।

'नागसेना, इसका कारण क्या हो सकता है?'

'हे राजा, सदाचार में परिपूर्ण, भला मनुष्य मनुष्यों के लिए औषधि के समान है, क्योंकि वह बुराई के विष का प्रतिकार है; वह मनुष्यों के लिए जल के समान है, क्योंकि वह बुरे स्वभाव की धूल और अशुद्धियों को दूर करता है; वह मनुष्यों के लिए रत्न-जगत के समान है, क्योंकि वह उन्हें धर्म के सभी गुणों से परिपूर्ण करता है; वह मनुष्यों के लिए नाव के समान है, क्योंकि वह उन्हें कामवासना, अहंकार, भ्रम और अज्ञान की चार उफनती धाराओं के पार ले जाता है; वह मनुष्यों के लिए कारवां स्वामी के समान है, क्योंकि वह उन्हें पुनर्जन्मों के रेतीले रेगिस्तान से पार ले जाता है; वह मनुष्यों के लिए शक्तिशाली वर्षा बादल के समान है, क्योंकि वह उनके हृदयों को संतोष से भर देता है; वह मनुष्यों के लिए शिक्षक के समान है, क्योंकि वह उन्हें सभी अच्छाइयों में प्रशिक्षित करता है; वह मनुष्यों के लिए अच्छे मार्गदर्शक के समान है, क्योंकि वह उन्हें शांति का मार्ग दिखाता है।' हे राजा, भगवान बुद्ध ने समस्त प्राणियों पर अपनी दया दिखाते हुए यह आदेश दिया, "हे भिक्षुओं, किसी भाई को आत्महत्या नहीं करनी चाहिए। जो भी ऐसा करेगा, उसके साथ विधि के अनुसार व्यवहार किया जाएगा।" इसी कारण भगवान बुद्ध ने (आत्महत्या) को निषिद्ध किया। और कहा गया, हे राजा,

वाक्पटु कुमार कस्सपा ने जब रागन्या पायासी को परलोक का वर्णन करते हुए कहा था, "जब तक सदाचारी जीवन जीने वाले और सुंदर चरित्र वाले समन और ब्राह्मण विद्यमान रहेंगे - चाहे वह समय कितना भी लंबा क्यों न हो - वे तब तक जनसमूह के लाभ और सुख के लिए, देवताओं और मनुष्यों के भले, लाभ और समृद्धि के लिए आचरण करते रहेंगे!"

15. हे भगवान बुद्ध ने हमें (जीवन समाप्त करने के लिए) क्यों प्रेरित किया? हे राजा, जन्म पीड़ादायक है, और वृद्धावस्था, रोग और मृत्यु भी। दुःख पीड़ादायक है, और विलाप, पीड़ा, शोक और निराशा भी। अप्रिय संगति पीड़ादायक है, और सुखद संगति से वियोग भी। माता की मृत्यु पीड़ादायक है, या पिता की, या भाई की, या बहन की, या पुत्र की, या पत्नी की, या किसी भी रिश्तेदार की। परिवार का विघटन पीड़ादायक है, और रोग का कष्ट, धन की हानि, सद्‌गुणों में गिरावट और अंतर्दृष्टि की हानि भी।

[पैराग्राफ जारी है] अत्याचारियों, लुटेरों, शत्रुओं, अकाल, आग, बाढ़, ज्वार-भाटे, भूकंप, मगरमच्छों या घड़ियालों से उत्पन्न भय पीड़ादायक होता है। स्वयं पर या दूसरों पर लगने वाले संभावित दोष का भय, दंड का भय, दुर्भाग्य का भय पीड़ादायक होता है। साथियों की सभाओं में शर्मिंदगी से उत्पन्न भय पीड़ादायक होता है, आजीविका के साधनों को लेकर चिंता पीड़ादायक होती है, मृत्यु का पूर्वाभास पीड़ादायक होता है। अपराधियों को दी जाने वाली सजाएँ पीड़ादायक होती हैं, जैसे कोड़ों से कोड़े मारना, डंडों से कोड़े मारना, हाथ काटना, पैर काटना, हाथ और पैर काटना, कान काटना, नाक काटना, कान और नाक काटना। देशद्रोहियों को दी जाने वाली यातनाएँ अत्यंत पीड़ादायक होती हैं—जैसे कि खिचड़ी में खिचड़ी डालना (अर्थात, सिर में खिचड़ी डालना जिसके ऊपर से खोपड़ी की हड्डी निकाल दी गई हो)—या शंख का मुकुट पहनाना (अर्थात, खोपड़ी को कंकड़ से तब तक रगड़ना जब तक वह पॉलिश किए हुए शंख की तरह चिकनी न हो जाए)—या राहु का मुख (अर्थात, मुंह को लोहे की कीलों से खुला रखना, उसमें तेल डालना और उसमें बाती जलाना)—या अग्नि माला या हाथ की मशाल (अर्थात, जीवित मशाल बनाना, पूरे शरीर को या केवल बाहों को तेल लगे कपड़ों में लपेटकर आग लगाना)—या साँप की पट्टियाँ (अर्थात, गर्दन से कूल्हों तक पट्टियाँ उतारना, जिससे त्वचा पैरों के चारों ओर पट्टियों में गिर जाए)—या छाल की पोशाक (अर्थात, गर्दन से नीचे तक जीवित ही खाल उतारना, और प्रत्येक पट्टी को

त्वचा को उतारते ही बालों से बांध दिया जाता है, ताकि ये पट्टियाँ चारों ओर एक घूंघट का रूप ले लें) - या चित्तीदार मृग (अर्थात, घुटनों और कोहनियों को एक साथ बांधकर लोहे की एक प्लेट पर बिठाया जाता है जिसके नीचे आग जलाई जाती है) - या मांस के हुक (अर्थात, लोहे के हुकों की एक पंक्ति पर लटकाया जाता है) - या पैसे (अर्थात, पूरे शरीर से पैसे के आकार के मांस के टुकड़े काटे जाते हैं) - या खारे पानी की दरारें (अर्थात, चाकू या नुकीली चीजों से पूरे शरीर पर कट लगाए जाते हैं, और फिर घावों पर नमक और कास्टिक तरल पदार्थ डाले जाते हैं) - या छड़ घुमाना (अर्थात, कान की जड़ से गुजरने वाली लोहे की छड़ से जमीन पर गाड़ दिया जाता है, और फिर पैर से गोल-गोल घसीटा जाता है) - या पुआल की सीट (अर्थात, डंडों से इतनी बुरी तरह पीटा जाता है कि

हड्डियाँ टूट जाती हैं और शरीर भूसे के ढेर जैसा हो जाता है)—या खौलते तेल से लेप किया जाता है, या कुत्तों द्वारा खाया जाता है, या जीवित सूली पर चढ़ाया जाता है, या सिर कलम कर दिया जाता है। हे राजा, जन्म-पुनर्जन्म के चक्र में फँसे प्राणी को ऐसे-ऐसे अनेक कष्ट सहने पड़ते हैं। हे राजा, जिस प्रकार हिमालय पर्वत पर बरसा जल गंगा में चट्टानों, कंकड़ों, भंवरों, जलप्रपातों और वृक्षों के ठूंठों और शाखाओं को पार करते हुए बहता है, जो उसके मार्ग में बाधा डालते हैं, ठीक उसी प्रकार जन्म-पुनर्जन्म के चक्र में फँसे प्रत्येक प्राणी को ऐसे-ऐसे अनेक कष्ट सहने पड़ते हैं। इसलिए, पुनर्जन्म का निरंतर चक्र पीड़ा से भरा है, और जब यह चक्र समाप्त होता है तो आनंद मिलता है। और उस अंत के लाभ, उस चक्र में निहित विपत्ति की ओर इशारा करते हुए, हे महान राजा, भगवान बुद्ध ने हमें जन्म, वृद्धावस्था, रोग और मृत्यु से परे जाकर, उस पुनर्जन्मों के चक्र के अंतिम लक्ष्य को जानने के लिए प्रेरित किया। हे राजा, यही वह भाव है जिसने भगवान बुद्ध को हमें (जीवन का अंत करने के लिए) प्रेरित करने के लिए प्रेरित किया।

'बहुत बढ़िया, नागसेना! मैंने जो पहेली रखी थी, वह अच्छी तरह से सुलझ गई है, आपने जो कारण बताए हैं, वे भी अच्छी तरह से स्पष्ट हैं। ऐसा ही है, और मैं इसे आपकी बात मानकर स्वीकार करता हूँ।'

[आत्महत्या से संबंधित समस्या यहीं समाप्त होती है।]

[एक स्नेही स्वभाव।]

16. [1981 'आदरणीय नागसेना, भगवान बुद्ध ने कहा है: "हे भाइयों, प्रेम की भावना से उत्पन्न हृदय की मुक्ति की ऊंचाइयों तक पहुँचने, इसे अभ्यास करने, आदत बनाने, अपने भीतर विस्तार करने, उन्नति के साधन के रूप में उपयोग करने और आचरण के आधार के रूप में अपनाने, इसका अनुसरण करने, इसे संचित करने और इस प्रकार ऊपर उठने से ग्यारह लाभ प्राप्त किए जा सकते हैं। और ये ग्यारह क्या हैं? जो ऐसा करता है वह शांति से सोता है और शांति से जागता है। वह कोई पापी स्वप्न नहीं देखता। वह मनुष्यों और अन्य प्राणियों का प्रिय हो जाता है। देवता उसकी रक्षा करते हैं। न तो आग, न विष, न तलवार उसे कोई हानि पहुँचाती है। वह शीघ्र ही शांत हो जाता

है। उसका चेहरा शांत होता है। वह मृत्यु का सामना निर्भीक होकर करता है, और यदि वह (अरहतत्व की) सर्वोच्च स्थिति तक नहीं पहुँचता है, तो वह ब्रह्मलोक में पुनर्जन्म के लिए निश्चित है।" लेकिन दूसरी ओर आप (सदस्यों)

(सम्विम) कहते हैं कि "राजकुमार साम, सभी प्राणियों के प्रति प्रेम भाव का अभ्यास करते हुए, जब वे (इसी कारण) हिरणों के झुंड के पीछे जंगल में भटक रहे थे, तो राजा पिलियाक्खा द्वारा चलाए गए विषैले बाण से उन्हें चोट लगी और वे वहीं बेहोश होकर गिर पड़े।" अब, पूज्य नागसेन, यदि भगवान बुद्ध के वचनों से उद्धृत अंश सही है, तो आपका यह कथन गलत होना चाहिए। लेकिन यदि राजकुमार साम की कहानी सही है, तो यह सत्य नहीं हो सकता कि जो सभी प्राणियों के प्रति प्रेम भाव का अभ्यास करता है, उसे न तो अग्नि, न विष और न ही तलवार हानि पहुँचा सकती है। यह भी एक दोधारी समस्या है, इतनी सूक्ष्म, इतनी जटिल, इतनी नाजुक और इतनी गहरी कि इसे सुलझाने का विचार भी सबसे सूक्ष्म मन वाले मनुष्य के शरीर पर पसीना ला सकता है। यह समस्या अब आपके समक्ष है। इस जटिल गुत्थी को सुलझाइए। इस मामले पर प्रकाश डालें ताकि भविष्य में उठने वाले विजेता के उन पुत्रों की इच्छा पूरी हो सके।

हे राजा, जैसा आपने उद्धृत किया है, भगवान बुद्ध ने कहा: प्रेम साधना में लीन राजकुमार समा, जब वन में भटक रहे थे और हिरणों का झुंड उनका पीछा कर रहा था, तभी राजा पिलियाक्खा द्वारा चलाए गए विषैले बाण से घायल हो गए और वहीं बेहोश होकर गिर पड़े। लेकिन इसका एक कारण है। और वह कारण क्या है? बस यही कि वे सद्‌गुण (जैसा कि आपने उद्धृत अंश में कहा है)

प्रेम का अभ्यस्त होना (जैसे प्रेम का अभ्यास करना) ऐसे गुण हैं जो प्रेम करने वाले के व्यक्तित्व से नहीं जुड़े होते, बल्कि उसके हृदय में जागृत प्रेम की वास्तविक उपस्थिति से जुड़े होते हैं। और जब राजकुमार साम जल-घड़ा उलट रहे थे, उसी क्षण वे प्रेम की वास्तविक भावना से विमुख हो गए। हे राजा, जिस क्षण किसी व्यक्ति को प्रेम का अहसास हो जाता है, उस क्षण न तो आग, न विष, न तलवार उसे हानि पहुँचा सकती है। यदि कोई उसे हानि पहुँचाने के इरादे से आए भी, तो वे उसे देख भी नहीं पाएँगे, न ही उन्हें उसे चोट पहुँचाने का अवसर मिलेगा। परन्तु हे राजा, ये गुण व्यक्ति में अंतर्निहित नहीं होते, बल्कि उसके हृदय में जागृत प्रेम की वास्तविक उपस्थिति में निहित होते हैं।

'मान लीजिए, हे राजा, कि कोई व्यक्ति अलौकिक शक्ति से युक्त एक लुप्त हो जाने वाली जड़ को अपने हाथ में ले ले; और जब तक वह जड़ उसके हाथ में रहे, कोई भी सामान्य व्यक्ति उसे देख न सके। तब वह गुण उस व्यक्ति में नहीं होगा। बल्कि वह गुण जड़ में ही निहित होगा कि सामान्य मनुष्यों की दृष्टि रेखा के समक्ष स्थित वस्तु भी अदृश्य हो जाए। हे राजा, ठीक यही गुण उस प्रेम की अनुभूति में निहित है जिसे मनुष्य अपने हृदय में जागृत करता है।'

या फिर यह उस व्यक्ति के मामले जैसा है जो एक सुगठित, मजबूत गुफा में प्रवेश कर चुका है। बारिश का कोई भी तूफान, चाहे वह कितना भी तेज क्यों न हो, उसे गीला नहीं कर पाएगा। लेकिन यह किसी अंतर्निहित गुण के कारण नहीं होगा।

उस मनुष्य में। गुफा का यह एक अंतर्निहित गुण होगा कि इतनी तेज बारिश भी उस मनुष्य को भिगो नहीं सकी। और ठीक यही गुण उस प्रेम की अनुभूति में निहित है जिसे मनुष्य ने अपने हृदय में जागृत किया है।

'यह कितना अद्‌भुत है, नागसेन, और कितना विचित्र है कि प्रेम की अनुभूति सभी बुरी मानसिक अवस्थाओं को दूर करने की शक्ति रखती है।'

'जी हां! प्रेम का अभ्यास अच्छे और बुरे दोनों ही प्राणियों में सभी सद्‌गुणी मानसिक अवस्थाओं को उत्पन्न करता है। चेतन अस्तित्व के बंधन में बंधे सभी प्राणियों के लिए प्रेम का यह अभ्यास अत्यंत लाभकारी है, और इसलिए इसका लगन से अभ्यास करना चाहिए।'

[प्रेम की शक्ति से संबंधित समस्या यहीं समाप्त होती है।] [देवदत्त।]

17. 'आदरणीय नागसेना, क्या अच्छे कर्म करने वाले और बुरे कर्म करने वाले दोनों को एक ही परिणाम भुगतना पड़ता है, या दोनों मामलों में कोई अंतर है?'

'हे राजा, अच्छे और बुरे में अंतर है। अच्छे कर्मों का फल सुखद होता है और वे सग्ग की ओर ले जाते हैं, जबकि बुरे कर्मों का फल दुखद होता है और वे निरय की ओर ले जाते हैं।'

लेकिन, आदरणीय नागसेना, आपके लोग कहते हैं कि देवदत्त पूरी तरह से दुष्ट और दुष्ट स्वभाव से परिपूर्ण था, और बोधिसात पूरी तरह से शुद्ध और शुद्ध स्वभाव से परिपूर्ण था। फिर भी, देवदत्त अपने-अपने जन्मों में न केवल बोधिसात के समतुल्य था, बल्कि कभी-कभी प्रतिष्ठा और अनुयायियों की संख्या दोनों में उससे श्रेष्ठ भी था।

18. 'इस प्रकार, नागसेन, जब देवदत्त बनारस नगर में राजा ब्रह्मदत्त के पुरोहित (कुलीन ब्राह्मण, राजसी पुरोहित) बने, तब बोधिसात एक दुष्ट कंदाल (अछूत) था जिसे एक मंत्र कंठस्थ था। और अपने मंत्र को बार-बार दोहराने से वह असमय आम उगा लेता था।'

यह एक ऐसा मामला है जिसमें बोदिसात जन्म से देवदत्त से हीन था, प्रतिष्ठा में भी उससे हीन था।

19. 'और फिर, जब देवदत्त राजा बना, पृथ्वी का एक शक्तिशाली सम्राट, जो सभी इंद्रिय सुखों का आनंद लेता था, तब बोधिसात एक हाथी था, जिसे राजा के उपयोग के लिए सभी प्रकार के आभूषणों से सजाया गया था। और राजा, उसकी सुंदर और मनमोहक चाल-ढाल देखकर क्रोधित हो गया और हाथी को मरवाने की आशा में हाथी प्रशिक्षक से कहा: "प्रशिक्षक, इस हाथी को ठीक से प्रशिक्षित नहीं किया गया है, इसे 'आकाश पर चलना' नामक करतब दिखाओ।" उस स्थिति में भी बोधिसात देवदत्त से हीन था, - वह केवल एक मूर्ख जानवर था।'

20. और फिर, जब देवदत्त अनाज फटककर जीविका कमाने वाला व्यक्ति बन गया, तब

बोधिसात एक बंदर था जिसे "विशाल पृथ्वी" कहा जाता था। यहाँ फिर से हमें पशु और मनुष्य के बीच का अंतर दिखाई देता है, और बोधिसात जन्म से देवदत्त से हीन था।

21. 'और फिर, जब देवदत्त पुरुष बने, जिनका नाम सोनुत्तरा था, जो एक नेसादा (आदिवासियों की एक बहिष्कृत जनजाति, जो शिकार करके जीवन यापन करती थी) थे, और हाथी के समान बलवान और शारीरिक रूप से शक्तिशाली थे, तब बोधिसात "छह दांत वाले" नाम से हाथियों के राजा थे। और उस जन्म में, शिकारी ने हाथी का वध किया। उस स्थिति में भी देवदत्त श्रेष्ठ थे।'

22. 'और फिर, जब देवदत्त मनुष्य बन गया, जंगलों में भटकने लगा, बेघर हो गया, तब बोधिसात एक पक्षी था, एक तीतर जो वैदिक मंत्रों का ज्ञाता था। और उस जन्म में भी लकड़हारे ने उस पक्षी को मार डाला। अतः उस स्थिति में भी देवदत्त जन्म से श्रेष्ठ था।'

23. 'और फिर, जब देवदत्त बनारस का राजा बना, जिसका नाम कलाबु था, तब बोधिसात एक तपस्वी था जो पशुओं के प्रति दया का उपदेश देता था। और राजा (जो खेल-कूद का शौकीन था), तपस्वी से क्रोधित होकर, उसके हाथ-पैर बांस की कोंपलों की तरह कटवा दिए। उस जन्म में भी, देवदत्त

वह जन्म और प्रतिष्ठा दोनों ही दृष्टि से पुरुषों में श्रेष्ठ था।

24. 'और फिर, जब देवदत्त मनुष्य बना, एक लकड़हारा, तब बोधिसत् नंदीय वानर राजा था। और उस जन्म में भी मनुष्य ने वानर को, उसकी माता को और उसके छोटे भाई को मार डाला। अतः उस स्थिति में भी देवदत्त ही जन्म से श्रेष्ठ था।'

25. 'और फिर, जब देवदत्त पुरुष बन गए, एक नग्न तपस्वी, जिनका नाम करम्भिया था, तब बोधिसात एक नागराज थे जिन्हें "पीला" कहा जाता था। अतः उस स्थिति में भी देवदत्त ही जन्म से श्रेष्ठ थे।'

26. 'और फिर, जब देवदत्त पुरुष बन गया, लंबे उलझे बालों वाला एक धूर्त तपस्वी, तब बोधिसात एक प्रसिद्ध सूअर था, जिसका नाम "बढ़ई" था। अतः उस स्थिति में भी देवदत्त ही जन्म से श्रेष्ठ था।'

27. 'और फिर, जब देवदत्त केत वंश में सुर परिकारा नामक राजा बना, जिसके पास मनुष्यों के सिर से ऊपर हवा में यात्रा करने की शक्ति थी, तब बोधिसात एक ब्राह्मण था।

जिसका नाम कपिला था। इसलिए उस स्थिति में भी देवदत्त ही जन्म और प्रतिष्ठा में श्रेष्ठ थे।

28. 'और फिर, जब देवदत्त साम नाम से पुरुष बने, तब बोधिसात हिरणों में रुरु नाम से राजा बने। अतः उस स्थिति में भी देवदत्त ही जन्म से श्रेष्ठ थे।'

29. 'और फिर, जब देवदत्त पुरुष बन गया, जंगल में भटकने वाला एक शिकारी, तब बोधिसात एक नर हाथी था, और उस शिकारी ने सात बार हाथी के दांत तोड़कर निकाल लिए। अतः उस स्थिति में भी देवदत्त ही अपने जन्म के वर्ग के अनुसार श्रेष्ठ था।'

30. 'और फिर, जब देवदत्त विश्व को जीतने की चाह रखने वाले सियार के समान बन गया और उसने भारत के सभी देशों के राजाओं को अपने अधीन कर लिया, तब बोधिसत् विदुर नामक एक बुद्धिमान व्यक्ति थे। अतः उस स्थिति में भी देवदत्त ही यश में श्रेष्ठ थे।'

31. 'और फिर, जब देवदत्त बने

जिस हाथी ने चीनी तीतर के बच्चे को मार डाला, बोदिसात भी एक हाथी था, जो अपने झुंड का सरदार था। तो उस मामले में वे दोनों बराबर थे।'

32. 'और फिर, जब देवदत्त अधर्मी नाम का यक्ष बन गया, तब बोधिसात भी धर्मी नाम का यक्ष बन गया। अतः उस स्थिति में भी वे दोनों समान थे।'

33. 'और फिर, जब देवदत्त नाविक बना, पाँच सौ परिवारों का मुखिया, तब बोदिसात भी नाविक बना, पाँच सौ परिवारों का मुखिया। अतः उस स्थिति में भी वे दोनों समान थे।'

34. 'और फिर, जब देवदत्त पांच सौ रथों का सरदार बनकर रथों का मुखिया बना, तब बोदिसात भी पांच सौ रथों का सरदार बनकर रथों का मुखिया बन गया। अतः उस स्थिति में भी वे दोनों समान थे।'

35. 'और फिर, जब देवदत्त हिरणों का राजा बना, जिसका नाम साखा था, तब बोधिसात हिरणों का राजा बना, जिसका नाम निग्रोध था। अतः उस स्थिति में भी वे दोनों समान थे।'

36. 'और फिर, जब देवदत्त साखा नाम से सेनापति बना, तब बोदिसात ने

निग्रोधा नाम का एक राजा था। इसलिए उस स्थिति में भी वे दोनों बराबर थे।

37. 'और फिर, जब देवदत्त ब्राह्मण बन गया, जिसका नाम खंडाहाल था, तब बोधिसात राजकुमार था, जिसका नाम कंद था। अतः उस स्थिति में खंडाहाल श्रेष्ठ था।'

38. 'और फिर, जब देवदत्त राजा बना, जिसका नाम ब्रह्मदत्त था, तब बोधिसात उसका पुत्र था, जिसे महा पद्मा राजकुमार कहा जाता था। उस समय राजा ने अपने पुत्र को सात बार उस चट्टान से नीचे फेंक दिया, जहाँ से डाकुओं को फेंका जाता था। और यद्यपि पिता अपने पुत्रों से श्रेष्ठ होते हैं, उस स्थिति में भी देवदत्त ही श्रेष्ठ था।'

39. 'और फिर, जब देवदत्त महा पटापा नाम से राजा बना, तब उसका पुत्र धम्मपाल बोधिसात था; और उस राजा ने अपने पुत्र के हाथ-पैर और सिर कटवा दिए। अतः उस मामले में भी देवदत्त श्रेष्ठ था।'

40. 'और अब फिर, इस जीवन में, वे शाक्य वंश में थे, और बोधिसात बुद्ध बन गए, सर्वज्ञानी, जगत के नेता, और देवदत्त ने संसार छोड़कर देवताओं के भी श्रेष्ठ, उनके द्वारा स्थापित संघ में शामिल हो गए, और इद्धि की शक्तियों को प्राप्त करके, स्वयं बुद्ध बनने की लालसा से भर गए। अब, हे परम पूज्य नागसेन! क्या मैंने जो कुछ कहा है वह सत्य, न्यायसंगत और सटीक नहीं है?'

41. 'हे महान राजा, आपने अब जो भी अनेक बातें प्रतिपादित की हैं, वे सब सत्य हैं, अन्यथा नहीं।'

'तो, नागसेन, यदि काला और सफेद एक ही प्रकार के न हों, तो यह निष्कर्ष निकलता है कि अच्छाई और बुराई का फल बराबर होता है।'

नहीं, ऐसा नहीं है, महाराज! अच्छाई और बुराई का परिणाम एक जैसा नहीं होता। देवदत्त का सबने विरोध किया। बोधिसात के प्रति कोई शत्रुता नहीं रखता था। और देवदत्त की बोधिसात के प्रति जो शत्रुता थी, वह प्रत्येक जन्म में परिपक्व होकर फलदायी हुई। और इसी प्रकार, जब देवदत्त विश्व के स्वामी बन गए, तो उन्होंने गरीबों की रक्षा की, लोगों के लिए पुल, न्यायलय और विश्रामगृह बनवाए, और अपनी इच्छा अनुसार सामंतों, ब्राह्मणों, गरीबों, जरूरतमंदों और यात्रियों को दान दिया। इसी आचरण के फलस्वरूप वे जन्म-जन्मांतर तक इतनी समृद्धि के भोगते रहे। हे महाराज, भला किसके बारे में यह कहा जा सकता है कि वह उदारता, संयम, आत्म-नियंत्रण और उपसथ के पालन के बिना समृद्धि प्राप्त कर सकता है?

और जब, हे राजा, आप कहते हैं कि देवदत्त और बोधिसात जन्म-जन्मांतर तक एक-दूसरे के साथ यात्रा करते थे, तो उनका यह मिलन केवल सौ, हज़ार या एक लाख जन्मों के अंत में ही नहीं हुआ, बल्कि वास्तव में अनंत काल तक निरंतर और बार-बार होता रहा। क्योंकि आपको इस मामले को भगवान बुद्ध द्वारा दिए गए तुलनात्मक अध्ययन के प्रकाश में देखना चाहिए।

अंधा कछुआ और मनुष्य का जन्म। और ऐसा मिलन केवल देवदत्त के साथ ही नहीं हुआ था। हे राजा, सारिपुत्त भी हजारों जन्मों से बोधिसात के पिता, दादा, चाचा, भाई, पुत्र, भतीजा या मित्र थे; और बोधिसात भी सारिपुत्त के पिता, दादा, चाचा, भाई, पुत्र, भतीजा या मित्र थे।

'हे राजा, वास्तव में सभी प्राणी, जो विभिन्न रूपों में जन्म-मृत्यु के चक्र में बहते हैं, उसमें घूमते हुए सुखद और अप्रिय साथियों से मिलते हैं—ठीक वैसे ही जैसे पानी धारा में घूमते हुए शुद्ध और अशुद्ध पदार्थों से, सुंदर और बदसूरत से मिलता है।'

और जब, हे राजा, देवदत्त, जो स्वयं देवता थे, ने अधर्म किया और दूसरों को भी अधर्म के मार्ग पर अग्रसर किया, तो उन्हें अनंत काल तक नरक में जलाया गया। परन्तु बोधिसात, जो स्वयं देवता थे, ने धर्मी थे और दूसरों को भी धर्मी मार्ग पर अग्रसर किया, उन्होंने भी अनंत काल तक स्वर्ग के समस्त आनंद में निवास किया। और इसी जीवन में, देवदत्त, जिन्होंने बुद्ध के विरुद्ध दंड का षड्यंत्र रचा और संघ में फूट डाली, तथागत पृथ्वी में समा गए।

सर्वज्ञान प्राप्त कर, बुद्धत्व की अंतर्दृष्टि प्राप्त की, और पुनर्जन्म की ओर ले जाने वाली हर चीज के विनाश से पूर्णतः मुक्त हो गए।

'बहुत बढ़िया, नागसेना! यह सच है, और मैं इसे आपके कहे अनुसार स्वीकार करता हूँ।'

[यहाँ देवदत्त की पूर्व जन्मों में बोधिसात से श्रेष्ठता को लेकर दुविधा समाप्त होती है।]

[महिलाओं की चालाकियाँ।]

42. हे पूज्य नागसेना, भगवान बुद्ध ने कहा है:

अवसर, गोपनीयता और सही प्रेमी के साथ, सभी महिलाएं गलत राह पर चली जाती हैं—हाँ, दूसरों को निराश करती हैं, यहाँ तक कि एक अपंग के साथ भी।

लेकिन दूसरी ओर यह भी कहा जाता है: "महोषधा की पत्नी अमरा, जब अपने पति के यात्रा पर जाने के दौरान गाँव में अकेली रह गई, तो वह एकांत में रही और अपने पति को एक पुरुष के अपने स्वामी के समान मानते हुए, उसने हजार सिक्कों के प्रलोभन में भी कोई कुकर्म करने से इनकार कर दिया।" अब यदि पहला कथन सही है, तो दूसरा गलत होना चाहिए; और यदि दूसरा सही है, तो पहला गलत होना चाहिए। यह भी एक दोधारी समस्या है जो अब आपके सामने रखी गई है, और आपको इसे हल करना है।

43. हे महाराज, जैसा आपने उद्धृत किया है, महोषधा की पत्नी अमरा के आचरण के विषय में ऐसा कहा जाता है। परन्तु प्रश्न यह है कि क्या वह उन हजार सिक्कों को प्राप्त करने पर सही पुरुष के साथ अनुचित व्यवहार करती? या यदि उसे अवसर, गोपनीयता की निश्चितता और एक उपयुक्त वर मिलता, तो क्या वह ऐसा नहीं करती? अब, इस मामले पर विचार करने पर, यह स्पष्ट है कि अमरा इनमें से किसी भी बात को लेकर निश्चित नहीं थी।

इन सब बातों के कारण, इस दुनिया में निंदा के भय से और परलोक में नरक की पीड़ाओं के भय से, उसे यह अवसर अनुपयुक्त लगा। और क्योंकि वह जानती थी कि कुकर्म का फल कितना कड़वा होता है, और क्योंकि वह अपने प्रियजन को खोना नहीं चाहती थी, और क्योंकि वह अपने पति का बहुत सम्मान करती थी, और क्योंकि वह अच्छाई का आदर करती थी और जीवन की नीचता से घृणा करती थी, और क्योंकि वह अपने पारंपरिक जीवन शैली को तोड़ना नहीं चाहती थी—इन सभी कारणों से उसे यह अवसर अनुपयुक्त लगा।

और, इसके अलावा, उसने गलत काम करने से इनकार कर दिया क्योंकि विचार करने पर उसे यकीन नहीं था कि वह इस बात को दुनिया से छिपा पाएगी। क्योंकि भले ही वह इसे मनुष्यों से छिपा सकती थी, फिर भी वह इसे आत्माओं से नहीं छिपा सकती थी—भले ही वह इसे आत्माओं से छिपा सकती थी, फिर भी वह इसे उन संन्यासियों से नहीं छिपा सकती थी जो दूसरों के विचारों को जान सकते हैं—भले ही वह इसे उनसे छिपा सकती थी, फिर भी वह इसे उन देवताओं से नहीं छिपा सकती थी जो मनुष्यों के हृदयों को पढ़ सकते हैं—भले ही वह इसे देवताओं से छिपा सकती थी, फिर भी वह स्वयं अपने पाप के ज्ञान से बच नहीं सकती थी—भले ही वह स्वयं इससे अनजान रहती, फिर भी वह इसे (परिणामस्वरूप होने वाले नियम) अधर्म से नहीं छिपा सकती थी। ऐसे थे

कई कारण थे जिनकी वजह से उसने गलत काम करने से परहेज किया क्योंकि वह गोपनीयता को लेकर आश्वस्त नहीं थी।

और, इसके अलावा, उसने गलत काम करने से इनकार कर दिया क्योंकि विचार करने पर उसे कोई सही वर नहीं मिला। हे राजा, ज्ञानी महोसाधा अट्ठाईस गुणों से संपन्न था। और वे अट्ठाईस गुण कौन से हैं? हे राजा, वह वीर और नम्र था, और गलत काम करने से लज्जित होता था; उसके कई अनुयायी और मित्र थे; वह क्षमाशील था; वह जीवन में ईमानदार था; वह सत्यवादी था; वह वचन, कर्म और हृदय से शुद्ध था; वह द्वेष से मुक्त था; वह अहंकारी नहीं था; उसमें ईर्ष्या नहीं थी; वह ऊर्जा से भरपूर था; वह सभी अच्छी चीजों के लिए प्रयासरत रहता था; वह सभी लोगों में लोकप्रिय था; वह उदार था; वह मित्रवत था; वह स्वभाव से विनम्र था; वह छल-कपट से मुक्त था; वह कपट से मुक्त था; वह अंतर्दृष्टि से परिपूर्ण था; उसकी प्रतिष्ठा बहुत अधिक थी; उसे बहुत ज्ञान था; वह अपने आश्रितों के कल्याण की कामना करता था; उसकी प्रशंसा सभी लोगों के मुख में थी; उसका धन विशाल था और उसकी प्रसिद्धि भी महान थी। हे महाराज, ये अट्ठाईस गुण थे जिनसे ज्ञानी महोषधा संपन्न थीं। और क्योंकि उन्हें उनके समान कोई वर नहीं मिला, इसलिए उन्होंने कोई अपराध नहीं किया।

'बहुत बढ़िया, नागसेना! यह सच है, और मैं इसे आपके कहे अनुसार स्वीकार करता हूँ।'

[यहाँ महिलाओं की दुष्टता को लेकर दुविधा समाप्त होती है।] [अरहतों की निर्भीकता पर।]

44. हे पूज्य नागसेना, भगवान बुद्ध ने कहा: "अरहतों ने सभी भय और कंपकंपी त्याग दी है।" परन्तु दूसरी ओर, जब रागगृह नगर में उन्होंने नर वध करने वाले हाथी धनपालक को भगवान बुद्ध पर टूट पड़ते देखा...

[पैराग्राफ जारी है] एक, सभी पाँच सौ अरहतों ने विजेता को त्याग दिया और भाग गए, केवल एक को छोड़कर, आनंद महापुरुष। अब, नागसेन, यह कैसे हुआ? क्या वे अरहत भय से भागे—या वे भगवान को नष्ट होने देने के लिए स्वेच्छा से भागे, और यह सोचकर भागे कि "(हमारा आचरण) उनके स्वयं के कार्यों से स्पष्ट हो जाएगा," या वे तथागत द्वारा प्रदर्शित विशाल और अद्वितीय शक्ति को देखने की आशा से भागे? यदि, नागसेन, तो क्या हुआ?

[पैराग्राफ जारी है] धन्य अल्लाह ने कहा, यदि अरहतों के भयहीन होने की बात सत्य है, तो यह कहानी असत्य होनी चाहिए। परन्तु यदि कहानी सत्य है, तो यह कथन कि अरहतों ने भय और कंपकंपी को त्याग दिया है, असत्य होना चाहिए। यह भी एक दोधारी समस्या है जो अब आपके समक्ष प्रस्तुत की गई है, और आपको इसे हल करना होगा।'

45. हे राजा, भगवान बुद्ध ने कहा है कि अरहतों ने सभी भय और भय का त्याग कर दिया है, और जैसा कि आप कहते हैं, जब उस दिन रागगृह में हाथी धनपालक तथागत पर टूट पड़ा, तो आनंद को छोड़कर पाँच सौ अरहत भाग गए। परन्तु यह न तो भय के कारण था, न ही भगवान बुद्ध के नाश होने की इच्छा से। क्योंकि जिस कारण से अरहतों में भय या भय उत्पन्न होता था, वह उनमें नष्ट हो गया है, और इसलिए वे भय और भय से मुक्त हैं। हे राजा, क्या विशाल पृथ्वी लोगों द्वारा उसमें खुदाई करने, उसे तोड़ने, या विशाल महासागरों और पर्वतों का भार वहन करने से भयभीत होती है?

'बिल्कुल नहीं, महोदय।'

'लेकिन क्यों नहीं?'

'क्योंकि इस विशाल पृथ्वी में ऐसा कोई कारण नहीं है जो भय या कंपन उत्पन्न कर सके।'

'बिल्कुल, हे राजा। और अरहतों में भी ऐसा कोई कारण नहीं है। और क्या कोई पर्वत शिखर टूटकर बिखरने, गिर जाने या आग से जलने से डरेगा?'

'बिल्कुल नहीं, महोदय।'

'लेकिन क्यों नहीं?'

'इसमें भय या कंपकंपी का कोई कारण मौजूद नहीं है।'

और हे राजा, अरहतों के साथ भी ठीक ऐसा ही है। यदि समस्त संसार में विभिन्न बाह्य रूपों वाले सभी प्राणी एक समान हों।

यदि समस्त ब्रह्मांड मिलकर एक अरहत पर आक्रमण करे ताकि उसे भयभीत कर सके, तब भी उसके हृदय में कोई परिवर्तन न आए। और क्यों? क्योंकि उसमें भय का कोई कारण या परिस्थिति नहीं है। बल्कि, हे राजा, उन अरहतों के मन में ये विचार उठे थे: "आज जब श्रेष्ठ पुरुष, विजेताओं में वीर, प्रसिद्ध नगर में प्रवेश कर चुके हैं, तो धनपालक हाथी सड़कों पर दौड़ पड़ेगा। परन्तु निश्चय ही उनका विशेष सेवक, जो देवों के भी पराक्रमी हैं, उनका साथ नहीं छोड़ेगा। परन्तु यदि हम यहाँ से न हटें, तो न आनंद की कृपा प्रकट होगी और न ही हाथी तथागत के पास आएगा। इसलिए हमें यहाँ से हट जाना चाहिए। इस प्रकार जनसमूह बुराई के बंधनों से मुक्त हो जाएगा और आनंद की कृपा प्रकट होगी।" जब अरहतों को इस बात का एहसास हुआ कि ऐसा करने से उन्हें ये लाभ प्राप्त होंगे, तभी वे चारों ओर पीछे हट गए।

'अच्छा, नागसेना, क्या तुमने पहेली सुलझा ली? बात यही है। अरहत न तो डरे और न ही कांपे। बल्कि उन्होंने जो लाभ पहले से देख लिए थे, उनके कारण वे चारों ओर से पीछे हट गए।'

[अरहतों की घबराहट से संबंधित समस्या यहीं समाप्त होती है।]

[सर्वज्ञ को अपना विचार बदलने के लिए प्रेरित करने पर।]

46. 'आदरणीय नागसेन, आपके लोग कहते हैं कि तथागत सर्वज्ञ हैं। और दूसरी ओर वे कहते हैं: "जब सारिपुत्त और मोग्गलाना की अध्यक्षता में संघ के सदस्यों के समूह को भगवान बुद्ध ने विदा कर दिया, तब कातुमा और ब्रह्मा सबनीपति के शाक्यों ने बीज और बछड़े के दृष्टांतों के माध्यम से बुद्ध को अपने वश में कर लिया, उनकी क्षमा प्राप्त की और उन्हें सही दृष्टि से समझाया।" अब यह कैसे हुआ, नागसेन? क्या वे दो दृष्टांत उन्हें ज्ञात नहीं थे कि वे उन्हें प्रसन्न कर लें, अपने पक्ष में कर लें और मामले को एक नए दृष्टिकोण से देखें? लेकिन यदि वे उन्हें पहले से नहीं जानते थे, तो, नागसेन, वे सर्वज्ञ नहीं थे। यदि वे उन्हें जानते थे, तो उन्होंने उन भाइयों को परखने के लिए उनके साथ कठोर और हिंसक व्यवहार किया होगा; और इसी में उसकी निर्दयता प्रकट होती है। यह भी एक दोधारी समस्या है जो अब आपके सामने रखी गई है, और आपको इसे हल करना होगा।'

47. हे राजा, तथागत सर्वज्ञानी थे, फिर भी उन दृष्टांतों से प्रसन्न होकर वे अपने भेजे हुए भाइयों को क्षमादान दे दिया।

दूर चले गए, और उन्होंने मामले को उस प्रकाश में देखा (जिस प्रकाश में उनके लिए मध्यस्थ उन्हें दिखाना चाहते थे)। हे महाराज, तथागत शास्त्रों के स्वामी हैं। तथागत द्वारा स्वयं दिए गए दृष्टांतों के द्वारा ही उन्होंने तथागत को प्रसन्न किया, उन्हें अपने वश में किया, और इस प्रकार प्रसन्न होने पर उन्होंने (उनकी बातों पर) अपनी स्वीकृति व्यक्त की। हे महाराज, यह वैसा ही था जैसे कोई पत्नी अपने पति को उसकी ही वस्तुओं के द्वारा प्रसन्न करती है, और पति उस पर अपनी स्वीकृति व्यक्त करता है। या फिर, हे राजा, यह वैसा ही था जैसे राजसी नाई राजा के सिर पर सोने की कंघी लगाकर उन्हें प्रसन्न करता है और राजा इस पर अपनी स्वीकृति देते हैं। या फिर, हे राजा, यह वैसा ही था जैसे कोई शिष्य अपने गुरु को उनके द्वारा स्वयं घर से लाए गए दान के भोजन से प्रसन्न करता है और गुरु इस पर अपनी स्वीकृति देते हैं।

'बहुत बढ़िया, नागसेना! यह सच है, और मैं इसे आपके कहे अनुसार स्वीकार करता हूँ।'

[यहाँ सर्वज्ञानी बुद्ध को मध्यस्थता द्वारा वश में करने की समस्या का अंत होता है।]

यहां चौथा अध्याय समाप्त होता है।

टिपिटका >> सुत्त पिटक >> खुद्दक निकाय >> मिलिंदपन्हा >> पुस्तक IV। दुविधाओं का समाधान - अध्याय 5

अनुवादक: टी.डब्ल्यू. राइस डेविड्स

पिछला <<<<-----||-13-||----->>>> अगला

1. पूज्य नागसेना, भगवान बुद्ध ने कहा: संसार के साथ मित्रता में चिंता उत्पन्न होती है, गृहस्थ जीवन में व्याकुलता की धूल उगती है, गृहस्थी और मित्रता के बंधनों से मुक्त अवस्था, यही संन्यासी का लक्ष्य है।

लेकिन दूसरी ओर उन्होंने कहा:

अत: बुद्धिमान व्यक्ति को अपने कल्याण का ध्यान रखते हुए, सुखद निवास स्थान बनवाने चाहिए और वहाँ विद्वानों को ठहराना चाहिए।

हे पूज्य नागसेन, यदि इन दोनों कथनों में से पहला वास्तव में तथागत द्वारा कहा गया था, तो दूसरा कथन गलत होगा। लेकिन यदि तथागत ने वास्तव में कहा था: "सुखद निवास स्थान बनवाओ," तो पहला कथन गलत होगा। यह भी एक दोधारी समस्या है, जो अब आपके समक्ष प्रस्तुत की गई है, जिसे आपको हल करना है।

2. हे महाराज, आपने जिन दोनों अंशों का उद्धरण दिया है, वे तथागत द्वारा कहे गए हैं। पहला अंश चीजों के स्वरूप के बारे में एक व्यापक कथन है, एक ऐसा कथन जिसमें किसी भी प्रकार की व्याख्या या स्पष्टीकरण की गुंजाइश नहीं है, जो एक संन्यासी के लिए उचित, उपयुक्त और न्यायसंगत हो, और एक संन्यासी को किस प्रकार का जीवन जीना चाहिए, किस मार्ग पर चलना चाहिए और किस प्रकार का अभ्यास करना चाहिए, इसके बारे में है। क्योंकि हे महाराज, जैसे जंगल में भटकता हुआ हिरण जहाँ चाहे सो जाता है, उसका कोई घर नहीं होता और न ही कोई ठिकाना।

निवास स्थान, इसलिए संन्यासी को भी यही राय रखनी चाहिए कि

संसार की मित्रता में चिंता का जन्म होता है, गृहस्थ जीवन में भटकाव की धूल उड़ती है।

3. परन्तु जब भगवान बुद्ध ने कहा:

"सुखद आवास बनवाओ, और वहां विद्वानों को ठहराओ।"

यह बात केवल दो बातों के संदर्भ में कही गई थी। और वे दो बातें क्या हैं? सभी बुद्धों ने निवास स्थान (विहार) के दान की प्रशंसा और अनुमोदन किया है, उसे सम्मान दिया है और उसकी बहुत प्रशंसा की है। और जो लोग ऐसा दान करते हैं, वे पुनर्जन्म, वृद्धावस्था और मृत्यु से मुक्त हो जाते हैं। यह निवास स्थान के दान का पहला लाभ है। और फिर, यदि एक साझा निवास स्थान (विहार) हो, तो संघ की बहनों के लिए मिलने का एक निश्चित स्थान होगा, और जो लोग (संघ के भाइयों से) मिलना चाहते हैं, उनके लिए ऐसा करना आसान होगा। जबकि यदि संघ के सदस्यों के लिए कोई घर न हो, तो उनसे मिलना कठिन होगा। यह निवास स्थान (विहार) के दान का दूसरा लाभ है। भगवान बुद्ध ने केवल इन्हीं दो बातों के संदर्भ में यह कहा था:

"सुखद आवास बनवाओ, और वहां विद्वानों को ठहराओ।"

और इससे यह निष्कर्ष नहीं निकलता कि बुद्ध के पुत्रों को गृहस्थ जीवन की लालसा रखनी चाहिए।

'बहुत बढ़िया, नागसेना! यह सच है, और मैं इसे आपके कहे अनुसार स्वीकार करता हूँ।'

[निवास स्थानों को लेकर दुविधा यहीं समाप्त होती है।]

[बयालीसवीं दुविधा। भोजन में संयम।]

4. पूज्य नागसेना, भगवान ने कहा:

"भीख मांगते समय (पालन किए जाने वाले नियमों के प्रति) लापरवाही न बरतें। पेट से संबंधित मामलों में संयम बरतें।"

लेकिन दूसरी ओर उन्होंने कहा:

अब कई दिन ऐसे भी थे, हे उदयिन, जब मैंने इस कटोरे को लबालब भरकर इसमें से खाया, और उससे भी अधिक खाया।

'यदि पहला नियम सत्य है, तो दूसरा कथन असत्य होना चाहिए। लेकिन यदि कथन सत्य है, तो पहले उद्धृत नियम गलत होना चाहिए।'

.

यह भी एक दोधारी समस्या है, जो अब आपके सामने रखी गई है, जिसे आपको हल करना होगा।'

5. 'हे महाराज, आपने जिन दोनों अंशों का उद्धरण दिया है, वे दोनों ही भगवान बुद्ध द्वारा कहे गए हैं। परन्तु पहला अंश चीजों के स्वरूप के बारे में एक कथन है, एक व्यापक कथन है, एक ऐसा कथन जिसमें किसी भी प्रकार की व्याख्या या स्पष्टीकरण की गुंजाइश नहीं है, एक ऐसा कथन जो सत्य, वास्तविक और तथ्यों के अनुरूप है, और जिसे गलत साबित नहीं किया जा सकता, एक घोषणा जो पैगंबरों, ऋषियों, शिक्षकों, अरहतों और स्वयं ज्ञानी बुद्धों (पक्केका-बुद्धों) द्वारा की गई है, एक घोषणा जो विजेताओं और सर्वज्ञानी लोगों द्वारा की गई है, और एक घोषणा जो तथागत, अरहत, स्वयं परमेश्वर बुद्ध द्वारा भी की गई है। हे राजा, जिस व्यक्ति में पेट के प्रति संयम नहीं है, वह जीवित प्राणियों का नाश करेगा, जो उसे नहीं दिया गया है उस पर अधिकार करेगा, व्यभिचारी होगा, झूठ बोलेगा, मादक पेय पिएगा, अपने माता-पिता की हत्या करेगा, अरहत का वध करेगा, संघ में फूट डालेगा, और यहाँ तक कि जानबूझकर तथागत को भी चोट पहुँचाएगा। हे राजा, क्या यह वही नहीं था, जब देवदत्त ने अपने पेट पर संयम न रखते हुए संघ को भंग किया और अपने लिए एक कल्प तक रहने वाला कर्म संचित किया? हे राजा, इसी बात और इसी प्रकार की अन्य अनेक बातों को याद करने पर भगवान बुद्ध ने कहा:

नियमों का पालन करने में लापरवाही न बरतें।

जब खड़े होकर (भोजन मांगने के लिए) खड़े हों, तो पेट से संबंधित मामलों में संयम बरतें।

6. 'और जो व्यक्ति पेट पर संयम रखता है, उसे चारों सत्यों की स्पष्ट समझ प्राप्त होती है, वह त्याग के जीवन के चारों फलों को जान पाता है, और चारों विवेक, आठ उपलब्धियों और छह प्रकार के उच्च ज्ञान पर महारत हासिल कर लेता है, और संन्यासी के जीवन के सभी पहलुओं को पूरा करता है। हे राजा, क्या तोते के बच्चे ने अपने पेट पर संयम रखकर तैंतीस महान देवताओं के स्वर्ग को भी हिला नहीं दिया और देवताओं के राजा सक्का को अपनी सेवा में नहीं बुलाया? हे राजा, इसी बात और इसी प्रकार की कई अन्य बातों को याद करके भगवान बुद्ध ने कहा:

"भीख मांगते समय (पालन किए जाने वाले नियमों के प्रति) लापरवाही न बरतें। पेट से संबंधित मामलों में संयम बरतें।"

7. परन्तु जब हे राजा, भगवान बुद्ध ने कहा: "हे उदयि, अनेक दिन ऐसे थे जब मैंने इस कटोरे को लबालब भरकर खाया, और उससे भी अधिक खाया," तो यह बात स्वयं स्वतंत्र तथागत ने अपने विषय में कही थी, जिसने अपना कार्य पूर्ण कर लिया था, जिसने अपने सभी कर्तव्य पूरे कर लिए थे, जिसने अपने लक्ष्य को प्राप्त कर लिया था, जिसने हर बाधा को पार कर लिया था।

[पैराग्राफ जारी है] हे राजा, जिस प्रकार किसी बीमार व्यक्ति को उल्टी कराने वाली दवा, दस्त या कुदाल दी गई हो, उसे टॉनिक देना उचित है; ठीक उसी प्रकार, हे राजा, जो व्यक्ति बुराई से भरा हुआ है और जिसने चार सत्यों को नहीं जाना है, उसे भोजन के मामले में संयम बरतना चाहिए। लेकिन हे राजा, जिस प्रकार उत्तम जल से बने और प्राकृतिक शुद्धता वाले हीरे को चमकाने, रगड़ने और शुद्ध करने की कोई आवश्यकता नहीं है; ठीक उसी प्रकार, हे राजा, तथागत के प्रति, उस व्यक्ति के प्रति जिसने बुद्ध के दायरे में आने वाली सभी बातों में पूर्णता प्राप्त कर ली है, उसके द्वारा किए जाने वाले कार्यों के संबंध में कोई प्रतिबंध नहीं है।

'बहुत बढ़िया, नागसेना! यह सच है, और मैं इसे आपके कहे अनुसार स्वीकार करता हूँ।'

[खाने-पीने में संयम बरतने की दुविधा यहीं समाप्त होती है।]

[तैंतालीसवीं दुविधा: बुद्ध पर बक्कुला की श्रेष्ठता।]

8. हे पूज्य नागसेना, भगवान बुद्ध ने कहा:

"हे बंधुओं, मैं एक ब्राह्मण हूँ, आत्म-त्यागी, सदा निर्मल हाथों वाला; यह शरीर जो मैं धारण करता हूँ, मेरा अंतिम शरीर है; मैं परम चिकित्सक और औषधदाता हूँ।"

लेकिन दूसरी ओर भगवान ने कहा:

"हे भाइयों, मेरे शिष्यों में शारीरिक स्वास्थ्य के मामले में सबसे श्रेष्ठ बक्कुला है।"

अब यह सर्वविदित है कि भगवान बुद्ध के शरीर में कई बार रोग उत्पन्न हुए। अतः यदि तथागत नागसेन सर्वोच्च थे, तो बक्कुला के शारीरिक स्वास्थ्य के बारे में उनका कथन गलत होना चाहिए। परन्तु यदि बक्कुला नामक वृहत्तर वास्तव में स्वस्थ लोगों में श्रेष्ठ थे, तो वह कथन जिसे मैंने पहले उद्धृत किया था, अवश्य ही गलत होगा।

गलत। यह भी एक दोधारी समस्या है, जो अब आपके सामने रखी गई है, जिसे आपको हल करना होगा।'

9. हे महाराज, आपने जो दोनों उद्धरण दिए हैं, वे सही हैं। परन्तु भगवान बुद्ध ने बक्कुला के विषय में जो कहा, वह उन शिष्यों के बारे में था जिन्होंने पवित्र वचनों को कंठस्थ कर लिया था, उनका अध्ययन किया था और परंपरा को आगे बढ़ाया था, जिनमें (प्रत्येक में किसी न किसी बिंदु पर) वे गुण थे जो स्वयं भगवान बुद्ध में पाए जाने वाले गुणों के अतिरिक्त थे। क्योंकि हे महाराज बुद्ध के कुछ शिष्य ऐसे थे जो "चलते-फिरते ध्यान करने वाले" थे, जो सारा दिन और रात ध्यान में इधर-उधर घूमते रहते थे। परन्तु भगवान बुद्ध दिन-रात ध्यान में बिताने के आदी थे, न केवल चलते-फिरते बल्कि बैठते और लेटते भी थे। अतः हे महाराज, ऐसे शिष्य जो "चलते-फिरते ध्यान करने वाले" थे, इस मामले में उनसे श्रेष्ठ थे। और हे महाराज बुद्ध के कुछ शिष्य ऐसे भी थे जो "एक ही बार में भोजन करने वाले" थे, जो अपने जीवन को बचाने के लिए भी दिन में एक से अधिक बार भोजन नहीं करते थे। परन्तु

[पैराग्राफ जारी है] भगवान बुद्ध को दूसरी या तीसरी बार भोजन करने की आदत थी। इसलिए, हे राजा, जो शिष्य एक ही बार में भोजन करते थे, वे इस मामले में उनसे श्रेष्ठ थे। इसी प्रकार, हे राजा, शिष्यों के बारे में अनेक बातें कही गई हैं। परन्तु हे राजा, भगवान बुद्ध सत्यनिष्ठा, ध्यान की शक्ति, ज्ञान, मोक्ष, मोक्ष के ज्ञान से उत्पन्न अंतर्दृष्टि और बुद्ध के सभी गुणों में उन सभी से श्रेष्ठ थे। हे राजा, इसी संदर्भ में उन्होंने कहा:

"हे बंधुओं, मैं एक ब्राह्मण हूँ, जो आत्म-त्यागी हूँ, सदा निर्मल हाथों वाला हूँ; यह शरीर जो मैं धारण करता हूँ, मेरा अंतिम शरीर है; मैं परम चिकित्सक और औषधदाता हूँ।"

10. 'हे महाराज, कोई व्यक्ति भले ही अच्छे कुल का हो, कोई धनी हो, कोई ज्ञानवान हो, कोई सुशिक्षित हो, कोई वीर हो, कोई कुशल हो; परन्तु इन सब से बढ़कर राजा ही सर्वोच्च माना जाता है। हे महाराज, इसी प्रकार भगवान बुद्ध सर्वोच्च, सबसे आदरणीय और समस्त प्राणियों में श्रेष्ठ हैं। और पूज्य बक्कुला का शरीर स्वस्थ था, वह उनके पिछले जन्म की एक मनोकामना के कारण था। क्योंकि, हे

महाराज, जब भगवान अनोमा-दस्सी को पेट में गैस की बीमारी हुई, और फिर जब भगवान विपस्सी और उनके अड़सठ हजार शिष्यों को रक्त की लालिमा की बीमारी हुई, तब भी उन्होंने...'

उस समय एक तपस्वी होने के नाते, उन्होंने विभिन्न औषधियों से उस बीमारी का इलाज किया था और (इस प्रकार) इस जीवन में शरीर की ऐसी तंदुरुस्ती प्राप्त की थी कि उनके बारे में कहा जाता था:

"हे भाइयों, मेरे शिष्यों में शारीरिक स्वास्थ्य के मामले में सबसे श्रेष्ठ बक्कुला है।"

11. 'परन्तु हे राजा, चाहे वह रोगग्रस्त हो या न हो; चाहे उसने नियम-कानूनों का पालन किया हो या न किया हो, वह व्यक्ति...'

विशेष व्रतों में से, भगवान बुद्ध के समान कोई नहीं है। हे राजा, यह बात देवताओं के देव, भगवान बुद्ध ने अपने उत्कृष्ट सम्युत्त निकाय में कही है।

"हे भाइयों, चाहे कोई भी प्राणी हो, चाहे वह बिना पैरों वाला हो, दो पैरों वाला हो या चार पैरों वाला हो, चाहे शरीर वाला हो या बिना शरीर वाला हो, चाहे चेतन हो या अचेतन हो या न चेतन हो—तथागत को ही सबका प्रधान, अरहत, परम बुद्ध माना जाता है।"

'बहुत बढ़िया, नागसेना! यह सच है, और मैं इसे आपके कहे अनुसार स्वीकार करता हूँ।'

[बक्कुला की बुद्ध से श्रेष्ठता का मुद्दा यहीं समाप्त होता है।]

[तैंतालीसवीं दुविधा: बुद्ध की शिक्षाओं की मौलिकता।]

12. 'हे पूज्य नागसेना, भगवान बुद्ध ने कहा है:

"हे बंधुओं, तथागत, अरहत, परम बुद्ध, एक अज्ञात मार्ग के खोजकर्ता हैं।"

लेकिन दूसरी ओर उन्होंने कहा:

"अब मुझे वह प्राचीन मार्ग, वह प्राचीन पथ दिखाई दिया, जिस पर पूर्वज बुद्ध चले थे।"

'यदि, नागसेन, तथागत ने किसी अनदेखे मार्ग की खोज की है, तो यह कहना गलत होगा कि वह एक प्राचीन मार्ग था, एक ऐसा प्राचीन पथ जिस पर पूर्व बुद्ध चले थे। लेकिन यदि वह मार्ग वास्तव में एक प्राचीन मार्ग था, तो यह कहना गलत होगा कि वह अज्ञात था। यह भी एक दोधारी समस्या है, जो अब आपके समक्ष प्रस्तुत की गई है, जिसे आपको हल करना है।'

13. 'हे महाराज, आपके दोनों कथन सही हैं। और दोनों कथन भी सत्य हैं। हे महाराज, जब पिछले तथागत लुप्त हो गए, तब कोई गुरु न होने के कारण उनका मार्ग भी लुप्त हो गया। और वह मार्ग—यद्यपि तब टूट चुका था, खंडित हो चुका था, खंडहर हो चुका था, बंद हो चुका था, अब पार करने योग्य नहीं था, दृष्टि से ओझल हो चुका था—तथागत ने, एक

उसे इसका पूर्ण ज्ञान था, उसने अपनी बुद्धि की दृष्टि से इसे देखा, (और जाना) कि यह वही मार्ग है जिस पर पूर्वज बुद्ध चले थे। इसीलिए उसने कहा:

"हे भाइयों, अब मुझे प्राचीन मार्ग, वह प्राचीन पथ दिखाई दिया जिस पर पूर्वज बुद्ध चले थे।"

और यह एक ऐसा मार्ग था—क्योंकि पिछले तथागतों के लुप्त हो जाने के कारण कोई गुरु शेष नहीं था—जो उस समय टूट चुका था, खंडित हो गया था, खंडहर बन चुका था, बंद हो गया था और दृष्टि से ओझल हो गया था, जिसे तथागत ने अब पुनः सुगम बना दिया। और इसीलिए उन्होंने कहा:

"हे बंधुओं, तथागत, अरहत, परम बुद्ध, एक अज्ञात मार्ग के खोजकर्ता हैं।"

14. 'मान लीजिए, हे राजा, कि एक संप्रभु अधिपति के लुप्त हो जाने पर, संप्रभुता का रहस्यमय रत्न पर्वत शिखर की एक दरार में छिपा हुआ था, और जब कोई दूसरा संप्रभु अधिपति अपने सर्वोच्च पद पर आसीन हुआ, तो वह रत्न उसे प्रकट हुआ। तब, हे राजा, क्या आप कहेंगे कि वह रत्न उसी ने उत्पन्न किया था?'

'बिल्कुल नहीं, महोदय! रत्न अपनी मूल अवस्था में ही होता। लेकिन मानो उसके माध्यम से उसे नया जन्म मिला हो।'

'हे राजा, ठीक इसी प्रकार, भगवान बुद्ध ने इसे अपनी आँखों से देखकर इसका पूर्ण ज्ञान प्राप्त कर लिया।'

उनकी बुद्धि ने पुनर्जीवित होकर, उस उत्कृष्ट अष्टांगिक मार्ग को उसके मूल स्वरूप में पुनः सुगम बना दिया, जिस पर पूर्व तथागत चलते थे—यद्यपि जब कोई गुरु नहीं बचा था, तो वह मार्ग खंडित हो गया था, बिखर गया था, खंडहर बन गया था, बंद हो गया था और दृष्टि से ओझल हो गया था। और इसीलिए उन्होंने कहा:

"हे बंधुओं, तथागत, अरहत, परम बुद्ध, एक अज्ञात मार्ग के खोजकर्ता हैं।"

15. हे राजा, यह ऐसा ही है जैसे कोई माता अपने गर्भ से पहले से ही गर्भ में पल रहे बच्चे को जन्म देती है, और तब कहा जाता है कि माता ने बच्चे को जन्म दिया है। ठीक इसी प्रकार, हे राजा, तथागत ने अपनी बुद्धि से इसका पूर्ण ज्ञान प्राप्त करके, उस मार्ग को पुनर्जीवित किया और पुनः सुगम बनाया जो पहले से ही मौजूद था, यद्यपि तब टूटा-फूटा, खंडित, खंडहर हो चुका था, अवरुद्ध हो गया था और दृष्टि से ओझल हो गया था।

यह वैसा ही है जैसे कोई व्यक्ति किसी खोई हुई वस्तु को ढूंढ निकालता है और लोग कहते हैं, "उसने इसे पुनर्जीवित कर दिया है।" और यह वैसा ही है जैसे कोई व्यक्ति जंगल साफ करके जमीन का एक टुकड़ा मुक्त करता है और लोग कहते हैं, "यह उसकी जमीन है।" लेकिन वह जमीन उसने नहीं बनाई है। क्योंकि उसने उस जमीन को उपयोग में लाया है, इसलिए उसे उस जमीन का स्वामी कहा जाता है। ठीक उसी प्रकार, हे राजा, तथागत ने अपनी बुद्धि की दृष्टि से उसका पूर्ण ज्ञान प्राप्त करके, पहले से मौजूद, टूटे-फूटे मार्ग को पुनर्जीवित किया और उसे फिर से चलने योग्य बना दिया।

दूर चला गया, खंडहर में तब्दील हो गया, चारों ओर से घिर गया, अब पार करना असंभव हो गया, और नज़रों से ओझल हो गया। और इसीलिए उसने कहा:

"हे बंधुओं, तथागत, अरहत, परम बुद्ध, अज्ञात मार्ग के खोजकर्ता हैं।"

'बहुत बढ़िया, नागसेना! यह सच है, और मैं इसे आपके कहे अनुसार स्वीकार करता हूँ।'

[निर्वाण के मार्ग को लेकर दुविधा यहीं समाप्त होती है।]

[पैंतालीसवीं दुविधा। बुद्ध की दयालुता।]

16. हे पूज्य नागसेना, भगवान बुद्ध ने कहा:

"पूर्व जन्मों में भी जब मैं मनुष्य था, तब से ही मैंने जीवित प्राणियों को हानि न पहुँचाने की आदत ग्रहण कर ली थी।"

लेकिन दूसरी ओर यह भी कहा जाता है:

जब वे लोमसा कस्सपा, ऋषि थे, तब उन्होंने सैकड़ों जीवित प्राणियों की हत्या करवाई और महान यज्ञ, 'विजयी पेय' अर्पित किया।

'अब, नागसेन, यदि बुद्ध का यह कथन सत्य है कि उन्होंने अपने पूर्व जन्मों में मनुष्य के रूप में किसी भी जीव को हानि नहीं पहुँचाई, तो यह कहना कि उन्होंने लोमसा कस्सपा के रूप में सैकड़ों जीवों का वध किया, असत्य है। परन्तु यदि उन्होंने ऐसा किया भी हो, तो यह

कहना कि उन्होंने किसी भी जीव को हानि नहीं पहुँचाई, असत्य है। यह भी एक दोधारी समस्या है, जो अब आपके समक्ष प्रस्तुत की गई है, जिसका हल आपको निकालना है।'

17. हे राजा, भगवान ने कहा कि पूर्व जन्मों में, जब वे मनुष्य थे, तब उन्होंने जीवों को हानि न पहुँचाने का नियम अपना लिया था। और ऋषि लोमसा कस्सपा ने सैकड़ों जीवों का वध किया और विजय-जयकार नामक महान यज्ञ किया। परन्तु यह उन्होंने कामवासना में व्याकुल होकर किया था, न कि सचेत अवस्था में।

'हे नागसेन, आठ प्रकार के मनुष्य हैं जो प्राणियों की हत्या करते हैं - कामवासना से ग्रस्त मनुष्य, क्रोध से क्रूर मनुष्य, मूर्खता से मंदबुद्धि मनुष्य, अभिमान से अभिमानी मनुष्य, लोभ से लालची मनुष्य, जीविका के लिए जरूरतमंद मनुष्य, मजाक में मूर्ख मनुष्य और दंड के रूप में राजा। हे नागसेन, ये आठ प्रकार के मनुष्य हैं जो प्राणियों की हत्या करते हैं। आदरणीय नागसेन, बोधिसात ने ऐसा करते समय अपनी स्वाभाविक प्रवृत्ति के अनुसार ही कार्य किया होगा।'

नहीं, हे राजा, बोदिसात ने जो किया वह उसके स्वभाव के अनुरूप नहीं था। यदि बोदिसात ने स्वाभाविक प्रवृत्ति से प्रेरित होकर महान बलिदान अर्पित किया होता, तो वह यह श्लोक न कहता।

"सारा संसार, सागर से घिरा हुआ, और उसे घेरने वाले सभी समुद्र और पहाड़, मैं शर्म के साथ-साथ पाना नहीं चाहूँगा।"

"हे राजा, यद्यपि बोधिसात ने ऐसा कहा था, फिर भी राजकुमारी कंदवती (चंद्र-चेहरे वाली) को देखते ही वह अपना आपा खो बैठा और प्रेम में व्याकुल हो गया। और इसी प्रकार अपने आपा खोकर, भ्रमित और व्याकुल होकर, अपने विचारों को अस्त-व्यस्त, बिखेरते और भटकते हुए, उसने महान यज्ञ, 'विजय का पेय' अर्पित किया—और वध किए गए पशुओं की गर्दन से रक्त का प्रचंड प्रवाह हुआ!"

'हे राजा, ठीक वैसे ही जैसे कोई पागल, जब होश खो बैठता है, तो धधकती भट्टी में कदम रख देता है, क्रोधित विषैले सांप को पकड़ लेता है, एक उग्र हाथी के पास चला जाता है, उस विशाल जल में छलांग लगा देता है जिसका दूर का किनारा उसे दिखाई नहीं देता, गंदे तालाबों और कीचड़ भरे स्थानों को रौंदता हुआ आगे बढ़ता है, कंटीली झाड़ियों में घुस जाता है, चट्टानों से नीचे गिर जाता है, गंदगी खाकर अपना पेट भरता है, नग्न होकर सड़कों पर घूमता है और अन्य कई अनुचित कार्य करता है—ठीक वैसे ही, हे राजा, राजकुमारी कंदवती को देखते ही बोधिसात अपना आपा खो बैठा, और तभी उसने वैसा ही किया जैसा मैंने कहा है।'

18. हे राजा, किसी पागल व्यक्ति द्वारा किया गया बुरा कार्य इस संसार में भी गंभीर अपराध नहीं माना जाता, न ही भविष्य में ऐसा माना जाता है।

भविष्य में मिलने वाले फल के प्रति सम्मान रखते हुए, हे राजा, मान लीजिए कि एक पागल व्यक्ति ने मृत्युदंड योग्य अपराध किया है, तो आप उसे क्या दंड देंगे?

'पागल व्यक्ति को क्या सजा दी जानी चाहिए? हमें उसे पीटकर छोड़ देने का आदेश देना चाहिए। यही उसके लिए एकमात्र सजा होगी।'

तो फिर, हे राजा, पागल व्यक्ति के अपराध के अनुसार कोई दंड नहीं होता। इससे यह स्पष्ट होता है कि पागल व्यक्ति द्वारा किया गया कार्य पाप नहीं है, बल्कि क्षमायोग्य है। और ठीक यही बात ऋषि लोमसा कस्सपा के विषय में भी है, जो राजकुमारी कंदवती को देखते ही अपना होश खो बैठे और प्रेम में व्याकुल हो गए। इसी प्रकार होश खो बैठे, भ्रमित और व्याकुल होकर, उन्होंने अपने विचारों को अस्त-व्यस्त, बिखरे हुए और भटकते हुए महान यज्ञ, "विजय ऋतु" का अर्पण किया - और वध किए गए पशुओं की गर्दन से रक्त का प्रचंड प्रवाह हुआ! परन्तु जब वे अपनी स्वाभाविक अवस्था में लौट आए और अपनी चेतना पुनः प्राप्त कर ली, तब उन्होंने संसार का त्याग कर दिया और अंतर्दृष्टि की पाँच शक्तियों को पुनः प्राप्त कर ब्रह्मा लोक में पुनर्जन्म के प्रति आश्वस्त हो गए।

'बहुत बढ़िया, नागसेना! यह सच है, और मैं इसे आपके कहे अनुसार स्वीकार करता हूँ।'

[लोमासा कस्सपा को लेकर दुविधा यहीं समाप्त होती है।]

[छियालीसवीं दुविधा। बुद्ध का उपहास।]

19. 'हे पूज्य नागसेना, छह दांतों वाले भगवान, हाथी के राजा ने कहा था,

जब उसने उसे मारने का प्रयास किया और अपनी सूंड से उस तक पहुँच गया, तो उसने पीले रंग का वस्त्र देखा, जो एक संन्यासी का प्रतीक था। तब, दर्द से तड़पते हुए भी, उसके हृदय में यह विचार आया, 'जो अरहतों के वस्त्र धारण करता है, वह अच्छे लोगों द्वारा अछूता और पवित्र माना जाएगा।'

लेकिन दूसरी ओर यह भी कहा जाता है:

"जब वह युवा ब्राह्मण गोतिपाला था, तब उसने भगवान कस्सपा, अरहत, सर्वोच्च बुद्ध को घृणित और कटु शब्दों से अपमानित और अपशब्द कहे, उन्हें मुंडा हुआ और निकम्मा भिक्षु कहा।"

'अब यदि नागसेन, बोधिसात, पशु रूप में भी पीले वस्त्र का आदर करते थे, [222] तो यह कथन कि गोतिपाल, एक ब्राह्मण के रूप में, उन्होंने उस समय भगवान का अपमान और अभिशाप किया, असत्य है। परन्तु यदि ब्राह्मण के रूप में उन्होंने भगवान का अपमान और अभिशाप किया, तो यह कथन कि जब वे छह दांतों वाले हाथी राजा थे, तब उन्होंने पीले वस्त्र का आदर किया, असत्य है। यदि बोधिसात पशु रूप में भी, भीषण, क्रूर और कड़वी पीड़ा सहते हुए भी, पीले वस्त्र का आदर करते थे, तब उन्होंने पीले वस्त्र का आदर किया।

उस शिकारी ने जो वस्त्र धारण किया था, यह कैसे संभव हुआ कि जब वह वयस्क हुआ, विवेकशील हुआ, अपने संपूर्ण ज्ञान से परिपूर्ण हुआ, तब भी उसने कासपा बुद्ध, अरहत, सर्वोच्च बुद्ध, दस शक्तियों से संपन्न, जगत के स्वामी, परम पूज्य, जिनके चारों ओर एक फार्क तक प्रकाश फैला हुआ था, और जो उत्कृष्ट, बहुमूल्य और कोमल बनारस के पीले वस्त्रों से सुशोभित थे, को देखकर श्रद्धापूर्वक प्रणाम नहीं किया? यह भी एक दोधारी समस्या है, जो अब आपके समक्ष प्रस्तुत की गई है, जिसका आपको हल निकालना है।

20. हे महाराज, आपने जिस श्लोक का उद्धरण दिया है, वह भगवान बुद्ध द्वारा कहा गया था। और भगवान कस्सपा, अरहत, परम बुद्ध, को युवा ब्राह्मण गोतिपाल ने घृणित और कटु शब्दों से अपमानित किया, उन्हें मुंडा हुआ और निकम्मा भिक्षु कहा। लेकिन यह उसके जन्म और पारिवारिक परिवेश के कारण था। क्योंकि हे महाराज, गोतिपाल अविश्वासी, आस्थाहीन परिवार से था। उसके माता-पिता, बहनें और भाई, दासियाँ और पुरुष, नौकर और आश्रित, सभी ब्रह्मा के उपासक और आदरणीय थे; और यह मानकर कि ब्राह्मण ही मनुष्यों में सर्वोच्च और सबसे सम्माननीय हैं, वे उन लोगों को अपमानित और घृणा करते थे जिन्होंने संसार का त्याग कर दिया था। उनकी बातें सुनकर ही गोतिपाला को जब कुम्हार घटिकारा ने गुरु से मिलने के लिए आमंत्रित किया, तो उसने उत्तर दिया: "उस निकम्मे, उस गंजे भिक्षु से मिलने से तुम्हें क्या लाभ होगा?"

21. 'हे राजा, जिस प्रकार अमृत भी विष में मिलकर खट्टा हो जाता है, जिस प्रकार शीतल जल भी अग्नि के संपर्क में आने पर गर्म हो जाता है, ठीक उसी प्रकार यह घटना घटी।'

यह सच है कि युवा ब्राह्मण गोतिपाल, जो अविश्वासी, आस्थाहीन लोगों के परिवार में पैदा हुआ और पला-बढ़ा था, उसने तथागत का अपने ही रिवाज के अनुसार अपमान और निंदा की। हे राजा, जिस प्रकार प्रचंड और प्रचंड अग्नि, अपनी चरम महिमा पर भी, यदि जल के संपर्क में आए, तो ठंडी पड़ जाती है, उसकी चमक और महिमा नष्ट हो जाती है, और वह सड़े हुए, मुरझाए फलों के समान राख में बदल जाती है, ठीक उसी प्रकार, हे राजा, गोतिपाल, जो पुण्य और आस्था से परिपूर्ण था, अपने ज्ञान की महिमा से परिपूर्ण था, फिर भी अविश्वासी, आस्थाहीन लोगों के परिवार में पुनर्जन्म लेकर, मानो अंधा हो गया और तथागत का अपमान और निंदा करने लगा। परन्तु जब वह उनके पास गया और बुद्धों के गुणों को जान लिया, तब वह उनका सेवक बन गया; संसार का त्याग करके और विजेता की पद्धति के अंतर्गत संघ में प्रवेश करके, उन्होंने अंतर्दृष्टि की पंचगुणी शक्ति और परमानंद ध्यान की अष्टगुणी शक्ति प्राप्त की, और ब्रह्मा स्वर्ग में पुनर्जन्म के प्रति आश्वस्त हो गए।

'बहुत बढ़िया, नागसेना! यह सच है, और मैं इसे आपके कहे अनुसार स्वीकार करता हूँ।'

[गोतिपाल को लेकर दुविधा यहीं समाप्त होती है।]

[सैंतालीसवीं दुविधा। बुद्ध की बेबसी।]

22. 'आदरणीय नागसेना, यह भी भगवान बुद्ध द्वारा कहा गया है:

"कुम्हार घटिकारा का निवास स्थान तीन महीने तक पूरी तरह से खुला रहा और उस पर एक बूंद भी बारिश नहीं हुई।"

लेकिन दूसरी ओर यह भी कहा जाता है:

"तथागत कस्सपा की कुटिया पर वर्षा हुई।"

'हे पूज्य नागसेन, यह कैसे हुआ कि एक तथागत की कुटिया, जिनके पुण्य के बीज इतने व्यापक रूप से फैले हुए थे, भीग गई? कोई सोचेगा कि तथागत के पास इसे रोकने की शक्ति होनी चाहिए। यदि, नागसेन, घटिकार कुम्हार की कुटिया, खुले आकाश में होने के बावजूद सूखी रहती थी, तो यह सत्य नहीं हो सकता कि एक तथागत की कुटिया भीग गई। लेकिन यदि वह भीग गई, तो यह असत्य है कि कुम्हार की कुटिया सूखी रहती थी। यह भी एक दोधारी समस्या है, जो अब आपके समक्ष प्रस्तुत की गई है, जिसे आपको हल करना है।'

23. 'हे महाराज, आपने जो दोनों कथन दिए हैं, वे सही हैं। कुम्हार घटिकारा एक नेक, सुंदर चरित्र वाला, पुण्यमय व्यक्ति था, जो अपने बूढ़े और अंधे माता-पिता का भरण-पोषण करता था। और जब वह अनुपस्थित था, तो लोगों ने बिना उसकी अनुमति लिए ही उसके घर की छत को उठाकर तथागत की कुटिया की छत में लगा दिया। फिर, अपनी छत के इस प्रकार हटाए जाने से अविचलित और अविचलित होकर, वह तथागत की कुटिया से और भी अधिक प्रसन्न हुआ।

एक अगाध और असीम आनंद से, जो अतुलनीय है, उनके हृदय में यह विचार उमड़ पड़ा: "विश्व के स्वामी, भगवान मुझ पर पूर्ण विश्वास रखें।" और इस प्रकार उन्होंने पुण्य अर्जित किया जिसका अच्छा फल उन्हें इसी जीवन में प्राप्त हुआ।

24. हे राजा, तथागत उस क्षणिक असुविधा (बारिश की) से विचलित नहीं हुए। हे राजा, जिस प्रकार पर्वतों के राजा शिनरु असंख्य तूफानों के प्रकोप से न तो हिलते हैं और न ही विचलित होते हैं—जिस प्रकार विशाल सागर, जो बड़े जल का घर है, असंख्य बड़ी नदियों के प्रवाह से न तो भरता है और न ही विचलित होता है—ठीक उसी प्रकार, हे राजा, तथागत क्षणिक असुविधा से विचलित नहीं होते।

तथागत की कुटिया पर वर्षा होना जनमानस के हित में हुआ। हे राजा, दो परिस्थितियाँ तथागतों को स्वयं अपनी किसी भी आवश्यकता की पूर्ति करने से रोकती हैं। वे दो परिस्थितियाँ क्या हैं? मनुष्य और देवता, बुद्ध को दान के योग्य गुरु मानकर उनकी आवश्यकताओं की पूर्ति करके, पुनर्जन्म के कष्टों से मुक्त हो जाते हैं। और ऐसा न हो कि दूसरे लोग यह कहकर दोषारोपण करें कि "वे चमत्कार करके अपनी जीविका कमाते हैं।" हे राजा, यदि सक्का या स्वयं ब्रह्मा भी उस कुटिया को सूखा रखते, तो भी वह कार्य दोषपूर्ण, अनुचित और निंदनीय होता।

तब लोग शायद कहेंगे: "ये बुद्ध प्रतिमाएँ

उनकी चतुराई से दुनिया मूर्ख बन जाती है और वे उस पर प्रभुत्व जमा लेते हैं। इसीलिए ऐसा कार्य न करना ही बेहतर होता। हे राजा, तथागत किसी लाभ की कामना नहीं करते; और यही कारण है कि वे कुछ नहीं मांगते, इसलिए उन्हें निर्दोष माना जाता है।

'बहुत बढ़िया, नागसेना! यह सच है, और मैं आपकी बात स्वीकार करता हूँ।'

[कुम्हार घटिकारा के बारे में दुविधा यहीं समाप्त होती है।]

[अड़तालीसवीं दुविधा: गौतम ने ब्राह्मण होने का दावा क्यों किया?]

[225] 25. 'आदरणीय नागसेना, यह भी भगवान बुद्ध द्वारा कहा गया था:

"हे भाइयों, मैं एक ब्राह्मण हूँ, जो आत्म-बलिदान के लिए समर्पित हूँ।"

लेकिन दूसरी ओर उन्होंने घोषणा की:

"मैं एक राजा हूँ, सेला।"

'हे नागसेन, यदि भगवान बुद्ध ब्राह्मण थे, तो राजा होने का दावा करते समय उन्होंने झूठ बोला होगा। लेकिन यदि वे राजा थे, तो ब्राह्मण होने का दावा करते समय उन्होंने झूठ बोला होगा। वे या तो क्षत्रिय रहे होंगे या ब्राह्मण। क्योंकि एक ही जन्म में वे दो जातियों के नहीं हो सकते थे। यह भी एक दोधारी समस्या है, जो अब आपके सामने रखी गई है, जिसे आपको हल करना है।'

26. 'हे महाराज, आपने जो दोनों उद्धरण दिए हैं, वे सही हैं। लेकिन तथागत के ब्राह्मण और राजा दोनों होने का अच्छा कारण है।'

'नागसेना, इसका कारण क्या हो सकता है?'

क्योंकि तथागत में सभी अगुण, जो पुण्य उत्पन्न नहीं करते, दमित, त्यागे, दूर किए, मिटाए, जड़ से उखाड़े, नष्ट किए, समाप्त किए, चले गए और मिट गए हैं, इसीलिए तथागत को ब्रह्म कहा जाता है। हे राजा, ब्रह्म का अर्थ है वह जो संकोच, उलझन और संदेह से परे हो गया हो। तथागत ने ये सब किया है, इसीलिए उन्हें ब्रह्म कहा जाता है। हे राजा, ब्रह्म का अर्थ है वह जो हर प्रकार और श्रेणी के स्वभाव से मुक्त हो गया हो, जो पूरी तरह से बुराई और कलंक से मुक्त हो, जो स्वयं पर निर्भर हो, और तथागत इन सभी गुणों से परिपूर्ण हैं, इसीलिए उन्हें ब्रह्म कहा जाता है। हे राजा, ब्रह्म का अर्थ है वह जो अपने भीतर श्रेष्ठ और सर्वोच्च गुणों का विकास करता हो।

हृदय की अवस्थाएँ। तथागत ऐसा करते हैं, इसीलिए उन्हें ब्राह्मण कहा जाता है। हे राजा, ब्राह्मण का अर्थ है वह जो पवित्र ग्रंथों के अध्ययन और अध्यापन, दान ग्रहण करने, इंद्रियों को वश में करने, आचरण में आत्म-संयम और कर्तव्य पालन से संबंधित प्राचीन शिक्षाओं की परंपरा को आगे बढ़ाता है। तथागत इन सभी विषयों के संबंध में विजेताओं द्वारा निर्धारित प्राचीन नियमों की परंपरा को आगे बढ़ाते हैं, इसीलिए उन्हें ब्राह्मण कहा जाता है। हे राजा, ब्राह्मण का अर्थ है वह जो परमानंद ध्यान के सर्वोच्च आनंद का अनुभव करता है। तथागत ऐसा करते हैं, इसीलिए उन्हें ब्राह्मण कहा जाता है। हे राजा, ब्राह्मण का अर्थ है वह जो सभी रूपों में जन्म-जन्म के चक्र और चक्र को जानता है। तथागत यह जानते हैं, इसीलिए उन्हें ब्राह्मण कहा जाता है। हे महाराज, भगवान बुद्ध को "ब्रह्मन" नाम न तो उनकी माता ने दिया, न उनके पिता ने, न उनके भाई ने, न उनकी बहन ने, न उनके मित्रों ने, न उनके रिश्तेदारों ने, न किसी भी प्रकार के आध्यात्मिक गुरुओं ने, यहाँ तक कि देवताओं ने भी नहीं। यह नाम बुद्धों, यानी भगवान बुद्धों की मुक्ति के कारण है। जिस क्षण उन्होंने ज्ञान वृक्ष के नीचे दुष्टों की सेनाओं को पराजित किया, अपने भीतर सभी निर्गुण गुणों को त्याग दिया और सर्वज्ञ ज्ञान को प्राप्त किया, उसी क्षण से उन्हें यह नाम प्राप्त हुआ।

[पैराग्राफ जारी है] एक बार, इस अंतर्दृष्टि की प्राप्ति से, उनमें इस ज्ञान के प्रकट होने से, उन्हें यह सही नाम दिया गया—"ब्रह्मन" नाम। और यही कारण है कि तथागत को ब्रह्म कहा जाता है।

27. 'तो फिर तथागत को राजा क्यों कहा जाता है?'

हे राजा, राजा का अर्थ है वह जो संसार पर शासन करता है और उसका मार्गदर्शन करता है, और भगवान दस हजार संसारों पर धर्मपूर्वक शासन करते हैं, वे समस्त संसार का मार्गदर्शन करते हैं, जिसमें मनुष्य और देवता, दुष्ट आत्माएँ और भली आत्माएँ, और उनके शिक्षक, चाहे वे सामंत हों या ब्राह्मण, सभी शामिल हैं। यही कारण है कि तथागत को राजा कहा जाता है। हे राजा, राजा का अर्थ है वह जो समस्त साधारण मनुष्यों से श्रेष्ठ है, जो अपने अनुयायियों को प्रसन्न करता है और विरोधियों को शोक में डुबो देता है; जो शुद्ध और निष्कलंक सफेद रंग की संप्रभुता की छतरी को, दृढ़ लकड़ी के हैंडल और सैकड़ों पसलियों के साथ, ऊँचा उठाता है - जो उसकी महान प्रसिद्धि और महिमा का प्रतीक है। और हे राजा, भगवान दुष्टों की सेना, जो झूठे सिद्धांतों में लिप्त हैं, को शोक में डुबो देते हैं; देवताओं और मनुष्यों में से जो सही सिद्धांतों के प्रति समर्पित हैं, उनके हृदयों को आनंद से भर देते हैं। वह दस हजार विश्व प्रणालियों के ऊपर अपनी संप्रभुता की छत्रछाया को उठाता है, जो मुक्ति की सफेदी में शुद्ध और निष्कलंक है।

सर्वोच्च ज्ञान से निर्मित सैकड़ों पसलियों से युक्त, धीरज के कारण दृढ़ और मजबूत हैंडल से युक्त, यह उनकी महान प्रसिद्धि और महिमा का प्रतीक है। यही कारण है कि तथागत को राजा कहा जाता है। राजा वह होता है जिसे उनके पास आने वाले असंख्य लोग सम्मान के योग्य मानते हैं। और हे राजा, भगवान बुद्ध को उनके पास आने वाले असंख्य प्राणी, चाहे देवता हों या मनुष्य, सम्मान के योग्य मानते हैं। यही कारण है कि तथागत को राजा कहा जाता है। राजा वह होता है जो किसी परिश्रमी सेवक से प्रसन्न होकर, अपनी इच्छा अनुसार, उस अधिकारी द्वारा चुने गए किसी भी बहुमूल्य उपहार से उसका हृदय प्रसन्न करता है। और हे राजा, भगवान बुद्ध किसी ऐसे व्यक्ति से प्रसन्न होकर, जिसने वचन, कर्म या विचार में परिश्रम किया हो, उसे एक विशेष उपहार के रूप में, सभी दुखों से परम

मुक्ति प्रदान करके उसका हृदय प्रसन्न करते हैं, जो सभी भौतिक उपहारों से कहीं अधिक है। इसी कारण तथागत को राजा कहा जाता है। राजा वह होता है जो अपराध करने वाले व्यक्ति को दंडित करता है, जुर्माना लगाता है या मृत्युदंड देता है।

राजसी आदेशों का पालन किया जाता है। इसलिए, हे राजा, जो व्यक्ति निर्लज्जता या असंतोष के कारण भगवान बुद्ध के आदेश का उल्लंघन करता है, जैसा कि उनके संप्रदाय के नियमों में निर्धारित है, वह तिरस्कृत, अपमानित और निंदा का पात्र होकर विजेता के धर्म से निष्कासित कर दिया जाता है। यही कारण है कि तथागत को राजा कहा जाता है। राजा वह होता है जो प्राचीन काल के धर्मात्मा राजाओं द्वारा निर्धारित निर्देशों के अनुसार नियमों और विनियमों की घोषणा करता है, और इस प्रकार धर्मपरायणता से अपना शासन चलाता है, जिससे वह लोगों का प्रिय और प्रिय बन जाता है, संसार में वांछित हो जाता है, और अपनी धर्मपरायणता के बल पर देश में अपने वंश को लंबे समय तक स्थापित करता है। हे राजा, भगवान तथागत प्राचीन काल के बुद्धों द्वारा दिए गए निर्देशों के अनुसार बारी-बारी से नियमों और विधियों का प्रचार करते हुए, धर्मपरायण होकर संसार के गुरु बन गए हैं। वे भी देवताओं और मनुष्यों के प्रिय हैं, उनके द्वारा वांछित हैं, और अपने धर्मपरायणता के बल पर उन्होंने अपने धर्म को इस धरती पर दीर्घकालिक रूप से कायम रखा है। यही कारण है कि तथागत को राजा कहा जाता है।

'इस प्रकार, हे राजा, तथागत के ब्रह्म और राजा दोनों होने के इतने कारण हैं कि सबसे योग्य भाई भी युगों में उन सभी को गिन नहीं सकते। तो फिर मुझे और विस्तार से क्यों बताना चाहिए? मैंने जो कहा है उसे संक्षेप में ही स्वीकार करें।'

'बहुत बढ़िया, नागसेना! यह सच है, और मैं इसे आपके कहे अनुसार स्वीकार करता हूँ।'

[यहाँ बुद्ध के दो जातियों से संबंधित होने की दुविधा समाप्त होती है।]

[उनतालीसवीं दुविधा। बुद्ध को भेंट।]

28. हे पूज्य नागसेना, भगवान बुद्ध ने कहा है:

पवित्र भजनों में जिन उपहारों का गुणगान किया जाता है, वे उपहार मुझे नहीं लेने चाहिए। सत्य को जानने वाले सभी लोग यही अभ्यास करते हैं। सभी बुद्धों ने वेतन के लिए भजन गाने से इनकार कर दिया; सत्य के प्रसार के दौरान, हर युग में उनका यही आचरण रहा।

लेकिन दूसरी ओर, भगवान बुद्ध सत्य का उपदेश देते या उसके विषय में बात करते समय तथाकथित "प्रारंभिक प्रवचन" से प्रारंभ करने की आदत रखते थे, जिसमें दान को प्रथम स्थान और भलाई को द्वितीय स्थान दिया जाता था। इसलिए जब देवताओं और मनुष्यों ने समस्त जगत के स्वामी, भगवान बुद्ध का यह प्रवचन सुना, तो उन्होंने दान तैयार करके दिया, और शिष्यों ने इस प्रकार प्राप्त दान को ग्रहण किया। अब, नागसेन, यदि यह सत्य है कि भगवान बुद्ध ने पवित्र मंत्रों के जाप से अर्जित कोई दान स्वीकार नहीं किया, तो भगवान बुद्ध द्वारा दान को इस प्रकार स्थान देना गलत था।

इसे प्रमुखता दी जानी चाहिए। लेकिन यदि उन्होंने दान देने पर इतना जोर देकर सही किया, तो यह सच नहीं है कि उन्होंने पवित्र वचनों के उच्चारण से अर्जित कोई दान स्वीकार नहीं किया। और ऐसा क्यों? क्योंकि यदि कोई दान के योग्य व्यक्ति आम लोगों को दान देने के अच्छे परिणामों के बारे में बताए, तो वे उस प्रवचन को सुनकर और उससे प्रसन्न होकर बार-बार दान देंगे। और फिर, जो कोई भी उस दान का आनंद लेता है, वह वास्तव में पवित्र वचनों के उच्चारण से अर्जित वस्तु का आनंद ले रहा होता है। यह भी एक दोधारी समस्या है, जो अब आपके सामने रखी गई है, जिसे आपको हल करना है।

29. हे महाराज, आपने जिस श्लोक का उल्लेख किया है, वह भगवान बुद्ध द्वारा कहा गया था। फिर भी वे अपने प्रवचन में दान को सर्वप्रथम रखते थे। परन्तु यह समस्त तथागतों की प्रथा है—प्रथम दान पर प्रवचन देकर श्रोताओं के हृदयों को दान की ओर प्रवृत्त करना, और फिर उन्हें धर्म की ओर प्रेरित करना। यह वैसा ही है जैसे हे महाराज, मनुष्य सर्वप्रथम छोटे बच्चों को खेलने के लिए खिलौने देते हैं—जैसे कि खिलौने वाले हल, छड़ी, खिलौने वाली पवनचक्की, पत्तों से बने नापने के बर्तन, खिलौने वाली गाड़ियाँ।

और धनुष-बाण—और फिर प्रत्येक को उसका अलग-अलग कार्य सौंप दें। या यह वैसा ही है जैसे कोई चिकित्सक पहले अपने रोगियों को चार-पाँच दिनों तक तेल पिलाता है ताकि वे मजबूत और कोमल हो जाएँ; और फिर बाद में दस्त करवाता है। हे राजा, हे दानवीर, धर्म के समर्थकों का हृदय इसी प्रकार कोमल, दयालु और प्रभावित होता है। इस प्रकार वे अपने दान रूपी नौका के सहारे, अपने दान रूपी मार्ग के सहारे पुनर्जन्म के सागर के दूसरे किनारे तक पहुँचते हैं। और (बुद्ध) इस (उपदेश विधि) से "संकेत" के दोषी नहीं हैं।

30. 'आदरणीय नागसेना, जब आप "संकेत" कहते हैं तो ये संकेत क्या होते हैं?'

हे महाराज, दो प्रकार के संकेत होते हैं—शारीरिक और मौखिक। एक शारीरिक संकेत गलत है और दूसरा नहीं; और एक मौखिक संकेत गलत है और दूसरा नहीं। कौन सा शारीरिक संकेत गलत है? मान लीजिए कि संघ का कोई सदस्य भिक्षा मांगने के लिए चक्कर लगाते समय, खड़े होने के लिए जगह चुनते समय, ऐसी जगह खड़ा हो जाए जहाँ जगह न हो, तो यह एक गलत शारीरिक संकेत है। संघ के सच्चे सदस्य इस प्रकार माँगे गए किसी भी भिक्षा को स्वीकार नहीं करेंगे, और ऐसा करने वाला व्यक्ति श्रेष्ठ जनों के धर्म में तिरस्कृत, अपमानित, अनादरित, निंदनीय, उपेक्षित और अपुष्ट माना जाता है; उसे

उन लोगों में से एक जिन्होंने अपनी आजीविका के साधनों के संबंध में प्रतिज्ञा तोड़ दी है। और फिर, हे राजा, मान लीजिए कि संघ का कोई सदस्य भिक्षा मांगने के लिए घूमते समय ऐसी जगह खड़ा हो जाए जहाँ जगह न हो, और मोर की तरह गर्दन फैलाकर लोगों को देखे, इस उम्मीद में कि "लोग मुझे इस तरह देखेंगे"—यह भी एक गलत शारीरिक संकेत है। सच्चे भाई इस प्रकार मांगी गई भिक्षा स्वीकार नहीं करेंगे, और ऐसा करने वाले को सबसे पीछे माना जाता है। और फिर, हे राजा, मान लीजिए कि संघ का कोई सदस्य अपने जबड़े, भौं या उंगली से कोई संकेत करे—यह भी एक गलत शारीरिक संकेत है। सच्चे भाई इस प्रकार मांगी गई भिक्षा स्वीकार नहीं करेंगे, और ऐसा करने वाले को भी उसी तरह माना जाता है।

31. और कौन सा शारीरिक संकेत गलत नहीं है? यदि कोई भाई भिक्षा मांगने के लिए निकलते समय संयमी, शांत और अपने कार्यों के प्रति सचेत हो; यदि वह जहाँ भी जाए, उचित स्थान पर खड़ा रहे; यदि वह वहाँ रुके जहाँ दान देने के इच्छुक लोग हों, और जहाँ वे दान देने के इच्छुक न हों, वहाँ से आगे बढ़ जाए; तो यह एक ऐसा शारीरिक संकेत है जो गलत नहीं है। इस प्रकार दान किए गए भिक्षा में संघ के सच्चे सदस्य भाग लेंगे; और इस प्रकार दान मांगने वाला व्यक्ति, श्रेष्ठ जनों के धर्म में प्रशंसित, उच्च कोटि का, सम्मानित और छल रहित आचरण और शुद्ध जीवन शैली वाले लोगों में गिना जाता है। क्योंकि समस्त देवताओं के स्वामी, भगवान बुद्ध ने ऐसा कहा है:

"सच्चे बुद्धिमान भीख नहीं मांगते, क्योंकि अरहत भीख मांगने से घृणा करते हैं। भले लोग अपने दान के लिए खड़े रहते हैं, वे इसी प्रकार भीख मांगते हैं।"

32. 'कौन सी मौखिक सूचना गलत है? हे राजा, यदि कोई भाई संघ के सदस्य के लिए आवश्यक वस्तुओं—वस्त्र, कटोरे, बिस्तर और बीमारों के लिए दवा—की मांग करे, तो यह एक गलत मौखिक सूचना है। संघ के सच्चे सदस्य (आरिया) इस प्रकार मांगी गई वस्तुओं को स्वीकार नहीं करेंगे; और श्रेष्ठ जनों के धर्म में ऐसा करने वाले व्यक्ति को तिरस्कृत, अपमानित, अनादरित, निंदनीय, उपेक्षित और अशोभनीय माना जाता है—उसे ऐसा समझा जाता है जैसे उसने अपनी आजीविका के साधनों का उल्लंघन किया हो। और फिर, हे राजा, यदि कोई भाई दूसरों के सामने इस प्रकार कहे: "मुझे अमुक वस्तु की आवश्यकता है;" और उसके द्वारा यह बात सुनने के बाद उसे वह वस्तु मिल जाए—तो यह भी एक गलत मौखिक सूचना है। संघ के सच्चे सदस्य इस प्रकार प्राप्त वस्तु का उपयोग नहीं करेंगे, और ऐसा करने वाला अंतिम माना जाता है। और फिर, हे राजा, यदि कोई भाई अपनी बातों को बढ़ा-चढ़ाकर पेश करते हुए अपने आस-पास के लोगों को यह समझाए कि "भिक्षुओं को इस प्रकार दान देना चाहिए,"

और यदि वे यह सुनकर अपने भंडार से उक्त वस्तु निकाल लें, तो यह भी एक गलत मौखिक संकेत है। संघ के सच्चे सदस्य इस प्रकार प्राप्त वस्तु का उपयोग नहीं करेंगे, और ऐसा करने वाला अंतिम माना जाता है। क्योंकि जब हे राजा, सूर्य अस्त होने के बाद रात्रि में सारिपुत्त बीमार पड़ गए और मोग्गलाना ने उनसे पूछा कि कौन सी औषधि उनके लिए लाभकारी होगी, तो उन्होंने मौन भंग किया; और उस मौन भंग के माध्यम से औषधि प्राप्त की - तो क्या सारिपुत्त ने मन ही मन यह नहीं कहा, "यह औषधि मौन भंग के माध्यम से प्राप्त हुई है; मेरी आजीविका संबंधी नियमों का पालन न टूटे," और उस औषधि को त्याग कर उसका उपयोग न किया? अतः यह भी एक गलत मौखिक संकेत है। संघ के सच्चे सदस्य इस प्रकार प्राप्त वस्तु का उपयोग नहीं करेंगे, और ऐसा करने वाला अंतिम माना जाता है।

33. और वह मौखिक सूचना क्या है जो उचित है? हे राजा, मान लीजिए कि किसी भाई को जब आवश्यकता हो, तो वह अपने परिवार के सदस्यों या उन परिवारों को, जिन्होंने उसे वास का समय बिताने के लिए आमंत्रित किया था, यह सूचित करे कि उसे औषधियों की आवश्यकता है—यह एक ऐसी मौखिक सूचना है जो गलत नहीं है। संघ के सच्चे सदस्य इस प्रकार मांगी गई वस्तुओं को ग्रहण करेंगे; और ऐसा करने वाला व्यक्ति, श्रेष्ठ जनों के धर्म में, प्रशंसित, उच्च कोटि का, सम्मानित और शुद्ध जीवनयापन करने वालों में गिना जाता है।

तथागतों, अरहतों, परम बुद्धों द्वारा अनुमोदित। और हे राजा, तथागत ने काशी-भारद्वग ब्राह्मण से जो भिक्षा ली थी, जिसे तथागत ने अस्वीकार कर दिया था, क्योंकि वह भिक्षा उन्हें एक जटिल पहेली से परखने के लिए प्रस्तुत की गई थी, ताकि उन्हें गुमराह किया जा सके, उनकी गलती का एहसास कराया जा सके और उन्हें अपनी गलती स्वीकार करने के लिए प्रेरित किया जा सके। इसीलिए तथागत ने वह भिक्षा अस्वीकार कर दी और उसे ग्रहण नहीं किया।

34. 'नागसेन, क्या तथागत जब भी भोजन करते थे, तब देवता स्वर्ग से जीवन का रस उनके कटोरे में डाल देते थे, या केवल उन दो व्यंजनों—नरम सूअर का मांस और दूध में उबली हुई चावल की दलिया—में ही वे रस डालते थे?'

'हे राजा, जब भी वह भोजन कर रहे होते थे, और भोजन के प्रत्येक निवाले को उठाते ही, ठीक उसी प्रकार जैसे राज रसोइया राजा के भोजन करते समय प्रत्येक निवाले पर चटनी डालता है। और इसी प्रकार वेरांगा में, जब तथागत सूखे जौ से बने केक खा रहे थे, तो देवताओं ने प्रत्येक केक को जीवन के रस से तर कर दिया, जैसे ही उन्होंने उसे रखा।

उनके पास। और इस प्रकार तथागत का शरीर पूर्णतः तरोताजा हो गया।

'हे नागसेन, यह उन देवताओं का सचमुच बड़ा सौभाग्य था कि वे तथागत के शरीर की देखभाल में सदा तत्पर रहते थे! बहुत अच्छा, नागसेन! यह सच है, और मैं इसे आपकी बात मानकर स्वीकार करता हूँ।'

[यहाँ बुद्ध की आजीविका के तरीके से संबंधित समस्या समाप्त होती है।]

[पचासवीं दुविधा। बुद्ध के बाद के संदेह पर।]

35. 'आदरणीय नागसेना, आपके लोग कहते हैं:

"तथागत ने लाखों वर्षों के दौरान, युगों-युगों तक धीरे-धीरे, जनता के विशाल जनसमूह के उद्धार के लिए अपनी सर्वज्ञ बुद्धि को पूर्णता तक पहुँचाया।"

लेकिन दूसरी ओर (वे कहते हैं):

सर्वज्ञता प्राप्त करने के तुरंत बाद ही उनका

हृदय सत्य के प्रचार की ओर नहीं, बल्कि शांति से विश्राम करने की ओर झुका हुआ है।

इसलिए, नागसेन, जैसे कोई धनुर्धारी या धनुर्धारी का शिष्य, जिसने युद्ध के उद्देश्य से अनेक दिनों तक धनुर्विद्या का अभ्यास किया हो, महायुद्ध का दिन आने पर पीछे हट जाए—ठीक वैसे ही तथागत, जिन्होंने असंख्य युगों तक जनसमूह को मोक्ष दिलाने के उद्देश्य से सर्वज्ञता को धीरे-धीरे परिपक्व किया था, उस सर्वज्ञता के प्राप्त होने पर सत्य का प्रचार करने से पीछे हट गए।

नागसेन, क्या तथागत भय के कारण पीछे हट गए थे, या उपदेश देने में असमर्थता के कारण, या कमजोरी के कारण, या इसलिए कि उन्होंने सर्वज्ञता प्राप्त नहीं की थी? इसका कारण क्या था? कृपया मुझे कारण बताइए, ताकि मेरे संदेह दूर हो जाएं। क्योंकि यदि उन्होंने इतने लंबे समय तक लोगों के उद्धार के उद्देश्य से अपनी बुद्धि को परिपूर्ण किया था, तो सत्य की घोषणा करने में उनके संकोच का कथन गलत होना चाहिए। लेकिन यदि यह सत्य है, तो दूसरा कथन भी गलत होना चाहिए। यह भी एक दोधारी तलवार जैसा प्रश्न है।

अब आपके सामने एक गंभीर समस्या रखी गई है, एक ऐसी गुत्थी जिसे सुलझाना मुश्किल है, और आपको इसे हल करना होगा।

36. हे राजा, आपने जिन दोनों अंशों का उल्लेख किया है, वे सही हैं। परन्तु उनका मन सत्य के प्रचार की ओर नहीं, बल्कि निष्क्रियता की ओर इसलिए झुका क्योंकि उन्होंने एक ओर तो देखा कि यह सिद्धांत कितना गहन और गूढ़ है, कितना समझना और आत्मसात करना कितना कठिन है, कितना सूक्ष्म है, कितना मर्मस्पर्शी है; और दूसरी ओर, मनुष्य अपनी वासनाओं की पूर्ति में कितने लीन हैं, व्यक्तिवाद की झूठी धारणाओं में कितने दृढ़ रूप से जकड़े हुए हैं। और इसलिए (वे) इस विचार से विचलित हुए: "मैं किसे सिखाऊँ? और मैं उसे कैसे सिखा सकता हूँ?"—उनका मन मनुष्यों में निहित भेदक क्षमताओं के विचार की ओर निर्देशित था।

हे राजा, जिस प्रकार एक कुशल चिकित्सक, जब किसी ऐसे रोगी के पास आता है जो अनेक रोगों से ग्रसित है, तो वह सोचता है: "इस व्यक्ति के रोग को ठीक करने के लिए क्या उपचार, क्या औषधि हो सकती है?" ठीक उसी प्रकार, हे राजा, जब तथागत ने यह याद किया कि पाप से उत्पन्न होने वाले सभी प्रकार के रोगों से मनुष्य कितने पीड़ित हैं, और यह सिद्धांत कितना गहन और गूढ़ है, कितना सूक्ष्म और कितना कठिन है, तब यह सोचकर कि "मैं किसे सिखाऊँ? और मैं उसे कैसे सिखाऊँ?" उनका मन उपदेश देने की बजाय निष्क्रियता की ओर अधिक झुक गया - उनका मन प्राणियों के भेदक गुणों की ओर उन्मुख था।

और हे राजा, एक राजा के रूप में, राजसी रक्त वाले, अभिषिक्त सम्राट के रूप में, जब वह अनेक बातों को याद करता है, तो वह न्यायसंगत है।

राजा पर निर्भर रहकर जीविका कमाने वाले लोग—पहरेदार और अंगरक्षक, दरबारी दल, व्यापारी, सैनिक और राज दूत, मंत्री और कुलीन लोग—यह सोचकर परेशान हो सकते हैं: "अब मैं इन सबको कैसे और किस तरह संतुष्ट कर पाऊँगा?" ठीक वैसे ही, जब तथागत को यह याद आया कि यह सिद्धांत कितना गहन और गूढ़ है, कितना सूक्ष्म और समझने में कितना कठिन है, और मनुष्य अपनी वासनाओं की पूर्ति में कितने लीन हैं, और व्यक्तिवाद की झूठी धारणाओं से कितने दृढ़ता से ग्रस्त हैं, तब यह सोचकर कि "मैं किसे उपदेश दूँ? और कैसे दूँ?" उनका मन उपदेश देने के बजाय निष्क्रियता की ओर झुक गया—उनका मन मनुष्यों में निहित अंतर्दृष्टि की ओर लगा हुआ था।

37. और यह भी सभी तथागतों का अंतर्निहित कर्तव्य है कि वे ब्रह्मा के अनुरोध पर ही धम्म का प्रचार करें। इसका कारण क्या है? उस समय के सभी मनुष्य, तपस्वी और भिक्षु, घुमंतू शिक्षक और ब्राह्मण, ब्रह्मा के उपासक और आदरशील थे, ब्रह्मा पर भरोसा रखते थे। इसलिए, इस विचार से कि "जब इतने शक्तिशाली और तेजस्वी, इतने प्रसिद्ध और विख्यात, इतने उच्च और महान व्यक्ति ने स्वयं को (धम्म की ओर) झुकाव दिखाया है, तो समस्त देवता और मनुष्य जगत भी इसकी ओर झुकाव दिखाएगा, इसे उचित समझेगा, इसमें विश्वास रखेगा"—हे राजा, इसी आधार पर तथागतों ने ब्रह्मा के अनुरोध पर धम्म का प्रचार किया। क्योंकि हे राजा, जिस प्रकार कोई स्वामी या राज्य मंत्री जिसका आदर करता है या जिसकी पूजा करता है, उसी प्रकार शेष मानव जाति भी उसका आदर करेगी।

इतने शक्तिशाली व्यक्तित्व को श्रद्धांजलि अर्पित करने के स्थान पर, उसी प्रकार, हे राजा, जब ब्रह्मा ने तथागतों को श्रद्धांजलि अर्पित की थी, तो समस्त देवी-देवता और मनुष्य जगत भी ऐसा ही करेंगे। क्योंकि हे राजा, संसार जिसकी पूजा की जाती है, उसकी पूजा करता है। इसीलिए ब्रह्मा समस्त तथागतों से इस सिद्धांत का प्रचार करने का अनुरोध करते हैं, और अनुरोध किए जाने पर वे इसका प्रचार करते हैं।

'बहुत बढ़िया, नागसेना! आपने पहेली को बखूबी सुलझा दिया है, आपकी व्याख्या अत्यंत सराहनीय रही है। यह सच है, और मैं इसे आपके कहे अनुसार स्वीकार करता हूँ।'

[यहाँ बुद्ध के इस सिद्धांत को सार्वजनिक करने में संकोच के मुद्दे का अंत होता है।]

यहां पांचवां अध्याय समाप्त होता है।

टिपिटका >> सुत्त पिटक >> खुद्दक निकाय >> मिलिंदपन्हा >> पुस्तक IV। दुविधाओं का समाधान - अध्याय 6

अनुवादक: टी.डब्ल्यू. राइस डेविड्स

पिछला <<<<-----||-14-||----->>>> अगला

1. आदरणीय नागसेना, यह भी भगवान बुद्ध द्वारा कहा गया है:

"मेरा कोई गुरु नहीं है, और मेरे समान कोई व्यक्ति अस्तित्व में नहीं है। देवताओं और मनुष्यों के पूरे संसार में मेरा कोई प्रतिद्वंद्वी नहीं मिल सकता।"

लेकिन दूसरी ओर उन्होंने कहा:

"तो हे भाइयों, जब आलारा कालामा मेरे गुरु थे और मैं उनका शिष्य था, तब उन्होंने मुझे अपने समान स्थान दिया और मुझे अत्यंत सम्मान से नवाजा।"

'अब यदि इनमें से पहला कथन सही है, तो दूसरा गलत होना चाहिए। लेकिन यदि दूसरा सही है, तो पहला गलत होना चाहिए। यह भी एक दोधारी समस्या है, जो अब आपके सामने रखी गई है, जिसे आपको हल करना है।'

2. 'हे महाराज, आपने जो दोनों उद्धरण दिए हैं, वे सही हैं। लेकिन जब उन्होंने आलारा कालामा को अपना गुरु बताया, तो यह इस तथ्य के संदर्भ में कहा गया था कि जब गौतम बोधिसत्व अवस्था में थे और उन्हें अंतर्दृष्टि और बुद्धत्व प्राप्त नहीं हुआ था, तब आलारा कालामा उनके गुरु थे; और हे महाराज, ऐसे पाँच गुरु थे जिनके मार्गदर्शन में बोधिसत्व ने विभिन्न स्थानों पर समय बिताया—वे गुरु थे जब गौतम बोधिसत्व अवस्था में थे और उन्हें अंतर्दृष्टि और बुद्धत्व प्राप्त नहीं हुआ था। और ये पाँच कौन थे?'

3. 'वे आठ ब्राह्मण जिन्होंने बोधिसत् के जन्म के तुरंत बाद उनके शरीर पर मौजूद चिह्नों पर ध्यान दिया - राम, धग, लक्खना, मंती, यञ्ञ, सुयामा, सुभोग और सुदत्त - जिन्होंने तब उनकी भावी महिमा का ज्ञान कराया और उन्हें सावधानीपूर्वक संरक्षित किए जाने योग्य बताया - ये उनके पहले गुरु थे।'

और फिर, हे राजा, उदिक्का देश के उच्च वंश के विशिष्ट ब्राह्मण सब्बामित्त, जो भाषाविद् और व्याकरणविद् थे, छह वेदांगों के ज्ञाता थे, जिन्हें बोधिसात के पिता राजा सुद्धोदन ने बुलवाया था, और एक स्वर्ण कलश से समर्पण का जल उंडेलकर बालक को उनके हवाले कर शिक्षा देने के लिए सौंप दिया था - यही उनके दूसरे शिक्षक थे।

और फिर, हे राजा, वह देवता जिसने बोधिसात के हृदय में हलचल उत्पन्न की, जिसके वाणी को सुनकर बोधिसात विचलित और चिंतित होकर उसी क्षण संसार से विमुख होकर विदा हो गए—यही उनके तीसरे गुरु थे।

और फिर, हे राजा, अलारा कलामा—वह उनके चौथे गुरु थे।

और फिर, हे राजा, राम के पुत्र उद्दक उनके पाँचवें गुरु थे।

हे राजा, ये पाँच गुरु हैं जो तथागत के बोधिसत्व काल में, अंतर्दृष्टि और बुद्धत्व प्राप्त करने से पहले, उनके गुरु थे। परन्तु वे सांसारिक ज्ञान के गुरु थे। और इस पारलौकिक सिद्धांत में, सर्वज्ञों के ज्ञान में प्रवेश करने में—कि तथागत से बढ़कर कोई उन्हें सिखाने वाला नहीं है। तथागत अपने ज्ञान के लिए स्वयं-निर्भर हैं, उनका कोई गुरु नहीं है, और इसीलिए तथागत ने कहा है:

"मेरा कोई गुरु नहीं है, और मेरे समान कोई व्यक्ति अस्तित्व में नहीं है। देवताओं और मनुष्यों के पूरे संसार में मेरा कोई प्रतिद्वंद्वी नहीं मिल सकता।"

'बहुत बढ़िया, नागसेना! यह सच है, और मैं इसे आपके कहे अनुसार स्वीकार करता हूँ।'

[यहाँ बुद्ध के शिक्षकों को लेकर दुविधा समाप्त होती है।]

[बावनवीं दुविधा। एक समय में केवल एक ही बुद्ध क्यों होने चाहिए?]

4. 'आदरणीय नागसेना, यह भी भगवान बुद्ध द्वारा कहा गया था:

"यह एक असंभव घटना है, एक ऐसी घटना जिसका कोई कारण नहीं हो सकता, कि एक ही दुनिया में दो सर्वोच्च अरहत बुद्ध एक ही समय में प्रकट हों - ऐसा किसी भी तरह से संभव नहीं है।"

लेकिन, नागसेन, जब वे उपदेश देते हैं, तो सभी तथागत अंतर्दृष्टि के सैंतीस मूल तत्वों का उपदेश देते हैं; जब वे बात करते हैं, तो वे चार आर्य सत्यों की बात करते हैं; जब वे उपदेश देते हैं, तो वे तीन प्रशिक्षणों का उपदेश देते हैं; जब वे शिक्षा देते हैं, तो वे उत्साह के अभ्यास का उपदेश देते हैं। यदि, नागसेन, सभी तथागतों का उपदेश एक है, उनकी बातें एक ही हैं, उनका प्रशिक्षण एक ही है, और उनकी शिक्षा

एक ही है, तो फिर दो तथागत एक ही समय में क्यों नहीं प्रकट हो सकते? एक बुद्ध के प्रकट होने से ही यह संसार प्रकाश से भर गया है। यदि दूसरा बुद्ध प्रकट हो, तो दोनों की महिमा से संसार और भी अधिक प्रकाशित हो जाएगा। जब वे उपदेश देते हैं, तो दो तथागत सहजता से उपदेश देते हैं; जब वे उपदेश देते हैं, तो दो तथागत सहजता से उपदेश देते हैं। मुझे इसका कारण बताइए, ताकि मेरा संदेह दूर हो जाए।

5. हे राजा, यह संसार एक बुद्ध पर निर्भर है; अर्थात् यह केवल एक तथागत के गुणों को ही सहन कर सकता है। यदि दूसरा तथागत प्रकट हो जाए तो संसार उसे सहन नहीं कर पाएगा, वह कांप उठेगा, इधर-उधर झुक जाएगा, बिखर जाएगा, टुकड़े-टुकड़े हो जाएगा, विलीन हो जाएगा, पूर्णतः नष्ट हो जाएगा। ठीक वैसे ही जैसे, हे राजा, एक नाव एक यात्री को पार ले जा सकती है। जब एक व्यक्ति सवार हो जाता है, तो नाव अच्छी तरह से सुसज्जित होकर उसका भार सहन कर सकती है। परन्तु यदि दूसरा व्यक्ति पहले व्यक्ति के समान आयु, जाति, बल, कद, तंदुरुस्ती और शारीरिक बनावट वाला हो, और वह भी नाव पर सवार हो जाए—तो क्या हे राजा, वह नाव उन दोनों को ले जा पाएगी?

'बिल्कुल नहीं, महोदय! यह कांप उठेगा; यह इधर-उधर झुक जाएगा; यह टुकड़ों में टूट जाएगा, चकनाचूर हो जाएगा, घुल जाएगा और पूरी तरह नष्ट हो जाएगा; यह लहरों में डूब जाएगा।'

'हे राजा, ठीक इसी प्रकार, यदि दूसरा तथागत प्रकट हो जाए। या मान लीजिए, हे राजा, कि एक व्यक्ति ने अपनी इच्छा अनुसार भरपेट भोजन कर लिया हो, यहाँ तक कि उसका पेट गले तक भर गया हो, और वह—इस प्रकार तृप्त, आनंदित, प्रसन्न होकर, और अधिक के लिए कोई स्थान न बचा हो, ऊंघता हुआ और एक ऐसी छड़ी की तरह अकड़ा हुआ जिसे मोड़ा न जा सके—फिर से उतना ही भोजन कर ले जितना उसने पहले किया था—तो क्या ऐसा व्यक्ति, हे राजा, तब शांत रहेगा?'

'बिल्कुल नहीं, महोदय! अगर वह एक बार भी खा ले तो उसकी मृत्यु हो जाएगी।'

'खैर, यह दुनिया दूसरे तथागत को सहन नहीं कर सकती, ठीक वैसे ही जैसे वह आदमी दूसरा भोजन सहन नहीं कर सकता।'

6. 'लेकिन यह कैसे संभव है, नागसेन? क्या पृथ्वी अच्छाई के अत्यधिक भार से कांप उठेगी?'

'मान लीजिए, हे राजा, दो गाड़ियाँ बहुमूल्य वस्तुओं से पूरी तरह भरी हुई हैं, और लोग एक गाड़ी से वस्तुएँ निकालकर दूसरी गाड़ी पर लादने लगें, तो क्या वह गाड़ी दोनों गाड़ियों का भार उठा पाएगी?'

'बिल्कुल नहीं, महोदय! इसके पहियों का केंद्र फट जाएगा, तीलियाँ टूट जाएँगी, परिधि टुकड़े-टुकड़े हो जाएगी और धुरी दो टुकड़ों में टूट जाएगी।'

लेकिन हे राजा, ऐसा कैसे हो सकता है? क्या सामान के अत्यधिक भार के कारण गाड़ी टूटकर बिखर जाएगी?

'हां, ऐसा होगा।'

7. 'अच्छा, हे राजा, ठीक इसी प्रकार पृथ्वी अत्यधिक सत्त्व के भार से कांप उठेगी। परन्तु यह तर्क बुद्धों की शक्ति को प्रकट करने के लिए दिया गया है। एक और उपयुक्त कारण सुनो कि दो बुद्ध एक ही समय में प्रकट क्यों नहीं हो सकते।'

समय। हे महाराज, यदि दो बुद्ध एक साथ प्रकट हों, तो उनके अनुयायियों में विवाद उत्पन्न हो जाएगा, और "आपके बुद्ध, हमारे बुद्ध" शब्दों पर वे दो गुटों में बँट जाएँगे—ठीक वैसे ही जैसे दो प्रतिद्वंद्वी शक्तिशाली राज्य मंत्रियों के अनुयायी बँट जाते हैं। हे महाराज, यही दूसरा कारण है कि दो बुद्ध एक ही समय में प्रकट नहीं हो सकते।

8. हे महाराज, एक और कारण सुनिए कि दो बुद्ध एक ही समय में प्रकट क्यों नहीं हो सकते। यदि ऐसा होता, तो यह कथन (शास्त्र का) असत्य हो जाता कि बुद्ध सर्वोपरि हैं, यह कथन असत्य हो जाता कि बुद्ध सर्वोपरि हैं, और यह कथन असत्य हो जाता कि बुद्ध सर्वोपरि हैं। अतः वे सभी कथन असत्य सिद्ध हो जाते जिनमें बुद्ध को सर्वोपरि, सर्वोपरि, सर्वोपरि, अद्वितीय, बेजोड़, अतुलनीय बताया गया है—वे सब असत्य सिद्ध हो जाते। इस कारण को भी सत्य मानिए कि दो बुद्ध एक साथ प्रकट क्यों नहीं हो सकते।

9. 'लेकिन इसके अलावा, हे राजा, यह बुद्धों, यानी भगवानों का एक स्वाभाविक गुण है कि संसार में केवल एक ही बुद्ध का जन्म होता है। और क्यों? सर्वज्ञ बुद्धों के गुणों की महानता के कारण। अन्य चीजों में भी, संसार में जो कुछ भी शक्तिशाली है, वह अद्वितीय है। हे राजा, विशाल पृथ्वी विशाल है और वह एक ही है। सागर विशाल है और वह एक ही है। पर्वतों के राजा सिनेरु विशाल हैं और वह एक ही हैं। आकाश विशाल है और वह एक ही है। सक्का (देवताओं के राजा) विशाल हैं और वह एक ही हैं। मारा (दुष्ट, मृत्यु) विशाल हैं और वह एक ही हैं। महाब्रह्मा विशाल हैं और वह एक ही हैं।'

[पैराग्राफ जारी है] तथागत, परम अरहत बुद्ध, महान हैं और वे संसार में अकेले हैं। जहाँ कहीं भी इनमें से कोई एक प्रकट होता है, वहाँ दूसरे के लिए कोई स्थान नहीं बचता। इसलिए, हे राजा, क्या यही कारण है कि संसार में एक समय में केवल एक ही तथागत, परम अरहत बुद्ध प्रकट हो सकते हैं?

नागसेन, आपने उपमाओं और तर्कों का प्रयोग करते हुए इस पहेली पर बहुत अच्छे से चर्चा की है। इसे सुनकर एक मूर्ख व्यक्ति भी संतुष्ट हो जाएगा; तो मुझ जैसे बुद्धिमान व्यक्ति का क्या ही भला होगा। बहुत बढ़िया, नागसेन! यह सच है, और मैं इसे आपकी बात मान लेता हूँ।

[यहाँ इस दुविधा का अंत होता है कि दुनिया में एक समय में केवल एक ही बुद्ध क्यों होना चाहिए।]

[तिरेपनवीं दुविधा। बुद्ध को उपहार देने के बजाय संघ को उपहार क्यों दिए जाने चाहिए?]

10. 'आदरणीय नागसेना, भगवान ने अपनी माता की बहन, गौतमी महा-पगपति से कहा, जब वह उन्हें बरसात के मौसम में उपयोग के लिए एक कपड़ा देने वाली थीं:

"हे गौतम, इसे संघ को दे दो। यदि तुम इसे संघ को भेंट करोगे, तो तुम संघ और मुझे दोनों को समान रूप से सम्मान अर्पित करोगे।"

'लेकिन नागसेना, क्या? क्या तथागत नहीं?'

यह कितना महत्व और वजन का है, और संघ के रत्नों से भी अधिक उपहार के योग्य है, यह कितनी अजीब बात है कि तथागत ने अपनी चाची को बरसाती मौसम के लिए एक लबादा भेंट करने से पहले, जिसे उन्होंने स्वयं संवारा, इस्त्री किया, पीटा, काटा और बुना था, कहा कि इसे संघ को दे दें! हे नागसेन, यदि तथागत वास्तव में संघ से ऊंचे, महान और श्रेष्ठ होते, तो वे जानते कि उन्हें दिया गया उपहार सबसे पुण्यकारी होगा, और इसलिए वे अपनी चाची को इसे संघ को देने के लिए नहीं कहते। लेकिन चूंकि तथागत, हे नागसेन, स्वयं को उपहारों के मार्ग में नहीं रखते, ऐसे उपहारों का कोई अवसर नहीं देते, इसलिए आप देख सकते हैं कि उन्होंने अपनी चाची से कहा कि वे उस लबादे को संघ को दे दें।

11. 'हे राजा, आपका कथन सही है, और भगवान बुद्ध ने अपनी चाची के उपहारों को इसी प्रकार निर्देशित किया था। परन्तु ऐसा इसलिए नहीं था कि स्वयं को दिया गया आदर व्यर्थ था, या इसलिए कि वे उपहार ग्रहण करने के अयोग्य थे, बल्कि दया और करुणा के कारण उन्होंने यह सोचकर कि "इस प्रकार मेरे जाने के बाद, आने वाले समय में संघ की उच्च प्रतिष्ठा होगी," संघ की वास्तविक श्रेष्ठता को बढ़ाते हुए कहा: "हे गौतमी, इसे संघ को दे दीजिए। यदि आप इसे संघ को भेंट करेंगे, तो आप संघ और मुझे समान रूप से सम्मान देंगे।" हे राजा, जिस प्रकार एक पिता अपने जीवित रहते हुए, मंत्रियों, सैनिकों और राज दूतों की सभा के बीच में अपने पिता की महिमा का बखान करता है,

संतरी, अंगरक्षक और दरबारी—जी हाँ, स्वयं राजा की उपस्थिति में—अपने पुत्र के उन गुणों का बखान करते हुए, जो वास्तव में उसमें विद्यमान हैं, यह सोचते हुए कि: "यदि वह यहाँ स्थापित हो जाए तो आने वाले समय में जनता द्वारा सम्मानित होगा;" इसी प्रकार दया और करुणा से प्रेरित होकर तथागत ने यह सोचते हुए कि: "इस प्रकार, मेरे जाने के बाद, आने वाले समय में संघ की उच्च प्रतिष्ठा होगी;" संघ की वास्तविक श्रेष्ठता का गुणगान करते हुए कहा: "हे गौतमी, इसे संघ को दे दो। यदि तुम इसे संघ को भेंट करोगी, तो तुम संघ और मुझे समान रूप से सम्मान अर्पित करोगी।"

12. 'हे राजा, मात्र वर्षा ऋतु के लिए एक लबादा भेंट करने मात्र से संघ तथागत से श्रेष्ठ या महान नहीं हो गया। हे राजा, क्या यह न्यायसंगत है कि जब माता-पिता अपने बच्चों को इत्र लगाते हैं, मालिश करते हैं, स्नान कराते हैं या शैम्पू करते हैं, तो क्या पुत्र मात्र उस सेवा से अपने माता-पिता से श्रेष्ठ या महान हो जाता है?'

'बिल्कुल नहीं, महोदय! माता-पिता अपने बच्चों के साथ जैसा चाहें वैसा व्यवहार करते हैं, चाहे बच्चों को पसंद हो या न हो। और इसीलिए वे उन्हें इत्र लगाते हैं, शैम्पू करते हैं या नहलाते हैं।'

और ठीक इसी प्रकार, हे राजा, उस दान के मात्र से संघ तथागत से बड़ा या श्रेष्ठ नहीं हो गया; और यद्यपि तथागत ने, संघ की इच्छा हो या न हो, अपनी चाची से कहा कि वह आवरण संघ को दे दे।

13. 'या मान लीजिए, हे राजा, कोई व्यक्ति राजा को भेंट लेकर आए, और राजा वह भेंट किसी और को दे दे—किसी सैनिक को या किसी और को।

क्या कोई दूत, चाहे वह सेनापति हो या पादरी, केवल इस तथ्य से राजा से बड़ा या श्रेष्ठ हो जाएगा कि उसे उपहार मिला है?

'बिल्कुल नहीं, महोदय! वह व्यक्ति राजा से अपना वेतन प्राप्त करता है, राजा से ही अपनी आजीविका कमाता है; राजा ने ही उसे उस पद पर नियुक्त किया है और उसे यह उपहार दिया है।'

और हे राजा, ठीक इसी प्रकार, उस दान के मात्र से संघ तथागत से श्रेष्ठ या उच्चतर नहीं हो गया। संघ तो मानो तथागत का सेवक है और तथागत के द्वारा ही अपनी जीविका कमाता है। तथागत ने ही संघ को इस पद पर स्थापित किया और दान दिलवाया।

14. हे राजा, तथागत ने ऐसा सोचा: "यह संघ अपने स्वभाव से ही दान के योग्य है। इसलिए मैं यह वस्तु, चाहे वह मेरी ही संपत्ति हो, इसे भेंट कर दूंगा," और इस प्रकार उन्होंने वह आवरण संघ को दे दिया। क्योंकि हे राजा, तथागत स्वयं को दान देने को महत्व नहीं देते, बल्कि संसार में जो भी दान के योग्य हो, उसे दान देने को महत्व देते हैं। हे राजा, यह बात समस्त देवताओं के स्वामी, भगवान बुद्ध ने, सबसे उत्तम मगधिमा निकाय [242] में, धम्म-दयाद नामक धार्मिक प्रवचन में कही है, जब वे अल्पता में संतोष प्राप्त करने की उपलब्धि का गुणगान कर रहे थे।

"वह मेरे भिक्षुओं में सबसे प्रथम, उपहारों और प्रशंसा के सबसे योग्य भिक्षु बनेंगे।"

15. और हे राजा, तीनों लोकों में ऐसा कोई नहीं है...

तथागत से अधिक उपहारों के योग्य, महान, उच्चतर या श्रेष्ठ कोई भी प्राणी नहीं है। तथागत ही महान, सर्वोच्च और सर्वश्रेष्ठ थे। जैसा कि हे राजा, परम श्रेष्ठ संयुत्त निकाय में भगवान बुद्ध के समक्ष देवताओं और मनुष्यों की सभा के बीच खड़े होकर देवता मानवगामिका ने कहा है:

रागगृह पर्वतों में विपुल पर्वत सर्वमान्य है, हिमालय में श्वेत पर्वत सर्वमान्य है, ग्रहों में सूर्य सर्वमान्य है, सभी जल का सागर सर्वोपरि है, नक्षत्रों में चंद्रमा सर्वोपरि है - समस्त देवी-देवताओं के संसार में बुद्ध ही सर्वमान्य भगवान हैं!

और हे राजा, मानव देवता के वे श्लोक सुशोभित थे, न कि असत्य, सुस्वीकृत थे, न कि असत्य, और भगवान बुद्ध द्वारा अनुमोदित थे। और क्या धर्म के सेनापति सारिपुत्त ने यह नहीं कहा था:

"केवल एक ही स्वीकारोक्ति है, एक ही सच्चा विश्वास है, हाथों को जोड़कर की जाने वाली एक ही आराधना है - जो उस परमेश्वर को अर्पित की जाती है जो शैतान को परास्त करता है, और हमें हमारी मुसीबतों के सागर को पार करने में मदद करता है!"

और यह बात स्वयं भगवान ने कही है, जो सभी देवताओं के प्रधान हैं:

"हे बंधुओं, एक ऐसा प्राणी है जो असंख्य लोगों के कल्याण और भलाई के लिए, संसार पर दया करके, देवताओं और मनुष्यों के लाभ, भलाई और कल्याण के लिए संसार में जन्म लेता है। और वह प्राणी कौन है? तथागत, परम अरहत बुद्ध।"

'बहुत बढ़िया, नागसेना! यह सच है, और मैं इसे आपके कहे अनुसार स्वीकार करता हूँ।'

[यहाँ बुद्ध पर संघ की श्रेष्ठता को लेकर दुविधा समाप्त होती है।] ______________________________

[चौवनवीं दुविधा। क्या एक आम आदमी बने रहना अधिक लाभदायक है, या किसी धार्मिक संगठन में शामिल होना?]

16. हे पूज्य नागसेना, भगवान बुद्ध ने कहा:

हे भाइयों, मैं गृहस्थ और संन्यासी दोनों में सर्वोच्च उपलब्धि की महिमा करता हूँ। हे भाइयों, चाहे वह गृहस्थ हो या संन्यासी, जिसने सर्वोच्च उपलब्धि प्राप्त कर ली है, वह सर्वोपरि है।

वह इसमें निहित सभी कठिनाइयों को पार कर लेगा और अरहत पद की उत्कृष्ट स्थिति तक पहुंच जाएगा।

'अब, नागसेन, यदि कोई गृहस्थ, श्वेत वस्त्र धारण किए हुए, इंद्रिय सुखों का आनंद लेते हुए, पत्नी और बच्चों से घिरे घर में रहते हुए, बनारस के चंदन, मालाओं, इत्रों और मलहमों का निरंतर उपयोग करते हुए, सोना और चांदी ग्रहण करते हुए, रत्नों और सोने से जड़ी पगड़ी धारण करते हुए, परम सिद्धि प्राप्त कर अरहतत्व की उत्तम अवस्था को प्राप्त कर सकता है—और यदि कोई संन्यासी, मुंडा सिर और पीले वस्त्र धारण किए हुए, अन्य मनुष्यों के भिक्षा पर निर्भर रहते हुए, चार प्रकार के नैतिक नियमों का पूर्णतः पालन करते हुए, डेढ़ सौ उपदेशों का पालन करते हुए,

तेरह अतिरिक्त व्रतों का पालन करते हुए, उनमें से किसी एक को भी न छोड़ते हुए, यदि कोई व्यक्ति परम सिद्धि प्राप्त कर अरहतत्व की उत्तम अवस्था को प्राप्त कर सकता है, तो फिर, हे महोदय, गृहस्थ और संन्यासी में क्या अंतर है? आपकी तपस्या व्यर्थ है, आपका त्याग निरर्थक है, आपके उपदेशों का पालन व्यर्थ है, आपके अतिरिक्त व्रतों का लेना व्यर्थ है। यदि इस प्रकार सुख की अवस्था को आराम से प्राप्त किया जा सकता है, तो अपने ऊपर दुखों का ढेर लगाने का क्या लाभ है?

17. हे महाराज, आपने भगवान बुद्ध के जो वचन उद्धृत किए हैं, वे बिल्कुल सही हैं। और यह सत्य है कि सर्वोच्च उपलब्धि प्राप्त करने वाला ही श्रेष्ठ होता है। हे महाराज, यदि कोई संन्यासी, यह जानते हुए भी कि वह संन्यासी है, उपलब्धियों की उपेक्षा करे, तो वह त्याग के फलों से, अर्हतत्व से कितना दूर हो जाता है—यदि कोई गृहस्थ, जो संसार के वस्त्र धारण किए हुए है, ऐसा करे तो और भी अधिक! परन्तु हे महाराज, चाहे वह गृहस्थ हो या संन्यासी, जो सर्वोच्च अंतर्दृष्टि, सर्वोच्च आचरण प्राप्त कर लेता है, वह भी अर्हतत्व की उत्तम स्थिति को प्राप्त कर लेगा।

18. फिर भी, हे राजा, संन्यासी ही त्याग के फल का स्वामी और स्वामी होता है। और हे राजा, संसार का त्याग लाभ से भरपूर है; इसके लाभ अनेक और अतुलनीय हैं; इसके लाभ की गणना कोई नहीं कर सकता। हे राजा, धन के मामले में, यह उतना ही न्यायसंगत है जितना कोई माप नहीं लगा सकता।

किसी मनोकामना पूरी करने वाले रत्न का मूल्य बताकर यह कहना कि "इस रत्न का मूल्य इतना है"—ठीक उसी प्रकार, हे राजा, संसार का त्याग करना अत्यंत लाभदायी है; इसके लाभ असंख्य और अतुलनीय हैं; इसके लाभ की गणना कोई मनुष्य नहीं कर सकता—हे राजा, ठीक उसी प्रकार जैसे कोई विशाल सागर की लहरों की संख्या गिनकर यह न कह सके कि "समुद्र में इतनी लहरें हैं!"

19. 'हे महाराज, संन्यासी को जो भी कार्य करना हो, वह बिना विलंब किए तुरंत पूरा कर लेता है। ऐसा क्यों है? हे महाराज, संन्यासी थोड़े में ही संतुष्ट रहता है, हृदय से प्रसन्न रहता है, संसार से विरक्त रहता है, समाज से अलग रहता है, लगन से कार्य करता है, निर्धन रहता है, आचरण में धर्मपरायण होता है, छल रहित होता है, कर्तव्य और ज्ञान में निपुण होता है—इसलिए जो भी कार्य उसे करना हो, वह बिना विलंब किए तुरंत पूरा कर लेता है—जैसे हे महाराज, आपका भाला इसलिए तीव्र गति से चलता है क्योंकि वह शुद्ध धातु का बना है, चिकना, चमकीला, सीधा और बेदाग है।'

'बहुत बढ़िया, नागसेना! यह सच है, और मैं इसे आपके कहे अनुसार स्वीकार करता हूँ।'

[यहाँ इस दुविधा का अंत होता है कि संन्यासी को आम आदमी पर कोई लाभ नहीं होता।]

[पचपनवीं दुविधा। तपस्या।]

20. 'आदरणीय नागसेन, जब बोधिसात तपस्या कर रहे थे, तब उनके समान परिश्रम, ऐसी शक्ति, बुराई के विरुद्ध ऐसा संघर्ष, दुष्टों की सेनाओं को परास्त करने की ऐसी क्षमता, भोजन में ऐसा संयम, जीवन की ऐसी तपस्या किसी और में नहीं देखी गई। परन्तु ऐसे संघर्ष में संतोष न पाकर उन्होंने यह विचार त्याग दिया और कहा:

"इस कठोर तपस्या से भी मैं उस विलक्षण क्षमता तक नहीं पहुँच पा रहा हूँ, जो मनुष्य की शक्ति से परे है और उचित एवं श्रेष्ठ ज्ञान की अंतर्दृष्टि से उत्पन्न होती है। क्या अब ज्ञान प्राप्त करने का कोई और मार्ग नहीं है?"

लेकिन फिर, जब उस मार्ग से ऊबकर उसने दूसरे मार्ग से सर्वज्ञता प्राप्त कर ली, तो उसने दूसरी ओर, अपने शिष्य को उस मार्ग पर (जिसे उसने छोड़ दिया था) फिर से इस प्रकार उपदेश और निर्देश दिया:

[245] "प्रयास करो, बलवान बनो, और बुद्धों द्वारा सिखाई गई आस्था के प्रति उत्साहपूर्वक समर्पित रहो। जैसे एक बलवान हाथी सरकंडों के घर को हिलाकर रख देता है, वैसे ही शैतान की सेनाओं को गिरा दो।"

'अब नागसेन, वह क्या कारण है कि तथागत ने अपने शिष्यों को उस मार्ग पर चलने के लिए प्रेरित किया और उनका नेतृत्व किया जिसे उन्होंने स्वयं त्याग दिया था, जिससे उन्हें घृणा थी?'

21. हे राजा, तब भी और अब भी, यही एकमात्र मार्ग है। और इसी मार्ग पर चलकर बोधिसात ने बुद्धत्व प्राप्त किया। हे राजा, यद्यपि बोधिसात ने परिश्रमपूर्वक भोजन कम कर दिया, यहाँ तक कि उसे पूरी तरह से त्याग दिया, और भोजन के इस त्याग से वे मानसिक रूप से दुर्बल हो गए, फिर भी जब उन्होंने धीरे-धीरे ठोस भोजन का सेवन फिर से शुरू किया, तो इसी मार्ग से शीघ्र ही उन्होंने बुद्धत्व प्राप्त किया। और यही वह मार्ग है जिस पर चलकर सभी तथागत सर्वज्ञता की अंतर्दृष्टि प्राप्त कर चुके हैं। जिस प्रकार भोजन सभी प्राणियों का आधार है, जिस प्रकार भोजन पर निर्भरता से ही सभी प्राणी सुखी जीवन जीते हैं, ठीक उसी प्रकार यही मार्ग सभी तथागतों के लिए सर्वज्ञता की अंतर्दृष्टि प्राप्त करने का मार्ग है। हे राजा, तथागत के तुरंत बुद्धत्व प्राप्त न कर पाने का दोष परिश्रम में, शक्ति में या बुराई के विरुद्ध किए गए युद्ध में नहीं था। लेकिन गलती भोजन के अनुपयोग में थी, और (मितव्ययिता का) मार्ग तो हमेशा उपयोग के लिए तैयार था।

22. 'हे राजा, मान लो कि कोई व्यक्ति बड़ी जल्दबाजी में किसी रास्ते पर चले और उस जल्दबाजी के कारण उसके शरीर के कुछ हिस्से फट जाएं।

यदि वह व्यक्ति लड़खड़ा जाए, या अपंग होकर जमीन पर गिर पड़े, हिलने-डुलने में असमर्थ हो जाए, तो क्या तब, हे राजा, इस विशाल पृथ्वी में कोई दोष होगा कि उस व्यक्ति के शरीर के किनारे लड़खड़ा गए?

'बिल्कुल नहीं, महोदय! विशाल पृथ्वी तो हमेशा तैयार रहती है। इसमें उसकी क्या गलती हो सकती है? गलती तो उस व्यक्ति के अपने उत्साह में थी जिसके कारण वह असफल हुआ।'

और हे महाराज, ठीक इसी प्रकार तथागत को तुरंत बुद्धत्व प्राप्त न होने का कारण परिश्रम, शक्ति या बुराई के विरुद्ध किए गए युद्ध में नहीं था। बल्कि दोष भोजन के अनुपयोग में था, और वह मार्ग तो सदा तैयार था—जैसे यदि कोई व्यक्ति वस्त्र पहने और उसे कभी न धोए, तो दोष जल में नहीं होगा, जो सदा उपयोग के लिए तैयार रहता है, बल्कि स्वयं व्यक्ति में होगा। इसीलिए तथागत ने अपने शिष्यों को उसी मार्ग पर चलने के लिए प्रेरित किया और उनका मार्गदर्शन किया। क्योंकि हे महाराज, वह मार्ग सदा तैयार है, सदा सही है।

'बहुत बढ़िया, नागसेना! यह सच है, और मैं इसे आपके कहे अनुसार स्वीकार करता हूँ।'

[मार्ग को लेकर दुविधा यहीं समाप्त होती है।]

[छप्पनवीं दुविधा। पथभ्रष्ट लोग।]

23. 'आदरणीय नागसेना, तथागतों का यह सिद्धांत महान, सारगर्भित, अनमोल, उत्कृष्ट, श्रेष्ठ, अद्वितीय, शुद्ध और निर्मल, स्पष्ट और दोषरहित है। केवल शिष्य बने गृहस्थ को संघ में प्रवेश देना उचित नहीं है। उसे तब तक गृहस्थ के रूप में ही शिक्षा दी जानी चाहिए, जब तक वह प्रथम मार्ग का फल प्राप्त न कर ले, और उसके बाद ही उसे संघ में प्रवेश दिया जाना चाहिए। और ऐसा क्यों है? जब ये लोग, जो अभी भी दुष्ट हैं, इतने शुद्ध धर्म में प्रवेश पा लेते हैं, तो वे इसे त्याग देते हैं और फिर से निम्न अवस्था में लौट जाते हैं, और उनके इस पतन से जनता यह सोचने पर मजबूर हो जाती है: "यह समना गौतम का धर्म व्यर्थ ही है, जिसे इन लोगों ने त्याग दिया है।" यही मेरे इस कथन का कारण है।'

24. 'मान लीजिए, हे राजा, एक स्नानकुंड है, जो शुद्ध, स्वच्छ और ठंडे पानी से भरा है। और कोई व्यक्ति, जो गंदा, दाग-धब्बों और कीचड़ से सना हुआ है, वहाँ आता है, और बिना स्नान किए वापस लौट जाता है, पहले की तरह ही गंदा। अब इस मामले में लोग किसे दोष देंगे, उस गंदे व्यक्ति को, या स्नानकुंड को?'

'लोग उस गंदे आदमी को ही दोषी ठहराएंगे, महोदय।'

यह कहते हुए: "यह आदमी स्नानघर में आया और पहले की तरह ही गंदा होकर वापस चला गया। स्नानघर अपने आप उस आदमी को कैसे साफ कर सकता है जिसने स्नान करने की परवाह ही नहीं की? स्नानघर में क्या खराबी है?"

हे राजा, तथागत ने भी इसी प्रकार मुक्ति के उत्तम जल से भरा एक स्नानकुंड बनवाया है, जो उत्तम धर्म का स्नान है। जो भी सचेत और विवेकशील प्राणी पाप के दागों से दूषित हो, वह उसमें स्नान करके अपने समस्त पापों को धो सकता है। और यदि कोई उस उत्तम धर्म के स्नानकुंड में जाकर उसमें स्नान न करे, बल्कि पहले की तरह ही दूषित होकर लौट आए और फिर से निम्न अवस्था में चला जाए, तो लोग उसी पर दोष लगाएंगे और कहेंगे, “इस व्यक्ति ने विजयों के सिद्धांत के अनुसार धर्म में प्रवेश किया, और उसमें विश्राम न पाकर फिर से निम्न अवस्था में लौट आया। विजयों का धर्म स्वयं उस व्यक्ति को कैसे शुद्ध कर सकता है जो अपने जीवन को उसके अनुसार नहीं ढालता? इस प्रणाली में क्या दोष है?”

25. 'या मान लीजिए, हे राजा, कि एक गंभीर बीमारी से पीड़ित व्यक्ति किसी ऐसे चिकित्सक के पास जाए जो रोग निदान में कुशल हो और इलाज का कारगर और स्थायी तरीका जानता हो, और वह व्यक्ति इलाज न करवाए, बल्कि पहले की तरह बीमार होकर वापस चला जाए। अब ऐसे में लोग किसे दोषी ठहराएंगे, बीमार व्यक्ति को या चिकित्सक को?'

वे बीमार आदमी को दोषी ठहराते हुए कहते थे, महोदय:

[पैराग्राफ जारी है] "चिकित्सक स्वयं इस व्यक्ति का इलाज कैसे कर सकता है, जो स्वयं अपना इलाज नहीं होने देता? डॉक्टर की क्या गलती है?"

हे राजा, तथागत ने अपने धर्म रूपी प्याले में निर्वाण का अमृत रखा है, जो पाप के सभी रोगों को पूरी तरह से दूर कर देता है। उन्होंने सोचा, “जो भी सजग प्राणी पाप के रोग से पीड़ित हैं, वे इस अमृत को पिएं और अपने सभी रोगों को दूर करें।” और यदि कोई इस अमृत को पिए बिना, अपने भीतर पाप को लिए हुए, फिर से निम्न अवस्था में लौट जाए, तो लोग उसी पर दोष लगाएंगे और कहेंगे, “इस व्यक्ति ने विजय प्राप्त करने वालों के उपदेशों के अनुसार धर्म में प्रवेश किया, और उसमें विश्राम न पाकर फिर से निम्न अवस्था में लौट गया। विजय प्राप्त करने वालों का धर्म स्वयं उसे कैसे ठीक कर सकता है जो अपने जीवन को उसके अनुसार नहीं ढालता? इस प्रणाली में क्या दोष है?”

26. 'या मान लीजिए, हे राजा, कि एक भूखा व्यक्ति ऐसे स्थान पर उपस्थित हो जहाँ दान के रूप में भोजन का भरपूर वितरण हो रहा हो, और फिर बिना कुछ खाए भूखा ही वापस चला जाए। तब लोग किसे दोष देंगे, भूखे व्यक्ति को या धर्मपरायणता के उस भोज को?'

वे भूखे आदमी को दोष देते हुए कहते, "यह आदमी भूख से तड़प रहा था, फिर भी जब उसके लिए धार्मिक भोज का प्रबंध किया गया, तो उसने कुछ भी नहीं खाया और पहले की तरह ही भूखा लौट गया। भला वह भोजन, जिसका वह

क्या वह अपने आप ही अपने मुंह में नहीं डाल सकता? भोजन में क्या दोष है?

हे राजा, तथागत ने समस्त वस्तुओं की अनित्यता के ज्ञान के उत्तम, उत्तम, शुभ, कोमल और अमृतमय भोजन को अपने धर्म रूपी पात्र में इस विचार से रखा है: “जो भी सजग प्राणी अपने भीतर पाप की पीड़ा का अनुभव करते हैं, जिनके हृदय भोग-विलास से ग्रस्त हैं, वे इस भोजन का सेवन करके भविष्य में किसी भी रूप में, किसी भी लोक में जीवन की अपनी सभी इच्छाओं को शांत कर लें।” और यदि कोई इस भोजन का आनंद लिए बिना, भोग-विलास के वश में होकर, फिर से निम्न अवस्था में लौट जाए, तो लोग उसी पर दोष लगाएंगे और कहेंगे: “इस व्यक्ति ने विजयों के सिद्धांत के अनुसार धर्म में प्रवेश किया, और उसमें विश्राम न पाकर फिर से निम्न अवस्था में लौट गया। विजयों का धर्म स्वयं उसे कैसे शुद्ध कर सकता है जो अपने जीवन को उसके अनुसार नहीं ढालता? इस प्रणाली में क्या दोष है?”

27. 'हे राजा, यदि तथागत किसी गृहस्थ को श्रेष्ठ मार्ग के प्रथम चरण में प्रशिक्षित होने के बाद ही संघ में प्रवेश देते, तो संसार का त्याग वास्तव में बुरे गुणों को दूर करने, हृदय की शुद्धि करने में सहायक नहीं रह जाता—तब त्याग का कोई लाभ नहीं रह जाता। यह ऐसा ही होता जैसे कोई व्यक्ति स्नान करने के लिए तालाब खुदवाए।'

सैकड़ों (श्रमिकों) के श्रम से, एक स्नानघर बनाया जाए, और फिर यह सार्वजनिक घोषणा की जाए: "कोई भी गंदा व्यक्ति इस स्नानघर में न उतरे! केवल वही लोग इस स्नानघर में उतरें जिनकी धूल और गंदगी धुल गई हो, जो शुद्ध और निर्मल हों!" हे राजा, क्या इस प्रकार शुद्ध और निर्मल लोगों के लिए वह स्नानघर किसी काम का होगा?

'बिल्कुल नहीं, महोदय! स्नान करने से उन्हें जो लाभ चाहिए था, वह तो उन्हें कहीं और मिल ही जाता। फिर स्नान करने का उन्हें क्या फायदा होता?'

'हे राजा, यदि तथागत ने यह विधान किया होता कि केवल वे गृहस्थ ही संघ में प्रवेश करें जो श्रेष्ठ मार्ग के प्रथम चरण में प्रवेश कर चुके हों, तो उन्हें इसमें जो लाभ चाहिए वह पहले ही प्राप्त हो चुका होता। तब उनके लिए त्याग का क्या लाभ होता?'

28. 'या मान लीजिए, हे राजा, कि एक चिकित्सक, जो प्राचीन ऋषियों का सच्चा अनुयायी हो, जो प्राचीन परंपराओं और श्लोकों को (अपनी स्मृति में) रखता हो, एक व्यावहारिक व्यक्ति हो, निदान में कुशल हो, और एक प्रभावी और दीर्घकालिक उपचार प्रणाली का ज्ञाता हो, जिसने (औषधीय जड़ी-बूटियों से) एक ऐसी औषधि संकलित की हो जो हर रोग को ठीक कर सके, यह घोषणा करे: "हे महोदय, कोई भी बीमार व्यक्ति मेरे पास न आए!

स्वस्थ और बलवान लोग मुझसे मिलने आते हैं! तो फिर, हे राजा, क्या वे रोग-मुक्त, स्वस्थ और प्रसन्न पुरुष उस चिकित्सक से अपनी मनचाही चीज़ प्राप्त कर सकेंगे?

'बिल्कुल नहीं, महोदय! लोगों को चिकित्सक से जो चाहिए, वह उन्हें कहीं और से मिल ही जाता। चिकित्सक उनके किस काम का होगा?'

'हे राजा, यदि तथागत ने यह विधान किया होता कि केवल उन्हीं गृहस्थों को संघ में प्रवेश दिया जाए जो श्रेष्ठ मार्ग के प्रथम चरण में प्रवेश कर चुके हों, तो वे जिन लाभों की तलाश कर रहे हैं, वे उन्हें कहीं और प्राप्त हो चुके होते। तब उनके लिए त्याग का क्या लाभ होता?'

29. 'या मान लीजिए, हे राजा, कि किसी ने उबले हुए दूध-चावल के सैकड़ों व्यंजन तैयार करवाए हों, और अपने आस-पास के लोगों को यह घोषणा करवाई जाए: 'महोदय, कोई भी भूखा व्यक्ति इस दान भोज में न आए। वे लोग आएं जिन्होंने भरपेट भोजन किया हो, जो संतुष्ट हों, तरोताज़ा हों और तृप्त हों, जिन्होंने दावत का आनंद लिया हो और प्रसन्न हों।' अब, हे राजा, क्या इस प्रकार भरपेट भोजन करने वाले, संतुष्ट, तरोताज़ा, तृप्त, दावत का आनंद लेने वाले और प्रसन्न लोगों को इस भोज से कोई लाभ होगा?'

'बिल्कुल नहीं, महोदय! वे दावत में जाकर जिस लाभ की तलाश कर रहे हैं, वह उन्हें कहीं और मिल चुका होता। दावत से उन्हें क्या फायदा होगा?'

'हे महाराज, तथागत ने ठीक इसी प्रकार यह विधान किया था कि'

केवल उन्हीं गृहस्थों को संघ में शामिल किया जाना चाहिए जो पहले ही श्रेष्ठ मार्ग के प्रथम चरण में प्रवेश कर चुके हों; अन्यथा वे जिन लाभों की तलाश कर रहे हैं, वे उन्हें कहीं और प्राप्त हो चुके होंगे। ऐसे में उनके लिए त्याग का क्या लाभ होगा?

30. परन्तु हे राजा, इसके बावजूद जो लोग निम्न अवस्था में लौटते हैं, वे इस प्रकार विजय प्राप्त करने वालों के धर्म में पाँच अत्यंत उत्तम गुणों को प्रकट करते हैं। वे पाँच गुण क्या हैं? वे दर्शाते हैं कि वह अवस्था कितनी गौरवशाली है (जिस अवस्था तक वे पहुँच चुके हैं जिन्होंने संघ में प्रवेश किया है), वह प्रत्येक दोष से कितनी शुद्ध है, पापियों के लिए उसमें (अच्छे लोगों के साथ) रहना कितना असंभव है, उसकी महिमा को प्राप्त करना कितना कठिन है, और उसमें कितने विवशों का पालन करना पड़ता है।

31. और वे उस राज्य की महान महिमा कैसे दर्शाते हैं? हे राजा, मान लीजिए कि कोई गरीब, नीच कुल का, साधारण, बुद्धिहीन व्यक्ति किसी महान और शक्तिशाली राज्य का स्वामी बन जाए, तो वह जल्द ही पराजित होकर पूरी तरह नष्ट हो जाएगा और उसकी महिमा छिन जाएगी। क्योंकि वह अपने सम्मान को बनाए रखने में असमर्थ होगा। और ऐसा क्यों? क्योंकि वह राज्य बहुत महान है। हे राजा, ठीक ऐसा ही है कि जो भी साधारण, गुणहीन और बुद्धिहीन हैं, जब वे विजेताओं के धर्म के अनुसार संसार का त्याग करते हैं, तो उस उत्तम त्याग को सहन न कर पाने के कारण, पराजित होकर, पतित होकर और अपनी महिमा खोकर वे निम्न अवस्था में लौट जाते हैं। क्योंकि वे

विजेताओं के सिद्धांत का पालन करो। और ऐसा क्यों? क्योंकि उस सिद्धांत से जो स्थिति उत्पन्न होती है, वह अत्यंत उत्कृष्ट होती है। हे राजा, इसी प्रकार वे उस राज्य की महान महिमा का प्रदर्शन करते हैं।

32. और वे कैसे दिखाते हैं कि वह अवस्था हर दाग से शुद्ध है? हे राजा, जैसे कमल पर गिरने पर जल बह जाता है, बिखर जाता है, विलीन हो जाता है, उस पर नहीं टिकता। और ऐसा क्यों? क्योंकि कमल हर दाग से शुद्ध होता है। ठीक वैसे ही, हे राजा, जब कोई भी कपटी, छल करने वाला, कपटी, विश्वासघाती और अधर्मी मत रखने वाला विजय प्राप्त करने वालों के धर्म में प्रवेश कर जाता है, तो वे जल्द ही बिखर जाते हैं, फैल जाते हैं और उस शुद्ध, निर्मल, निर्मल, सर्वोच्च और उत्कृष्ट धर्म से गिर जाते हैं, और उसमें कोई स्थान न पाकर, उससे विमुख होकर निम्न अवस्था में लौट जाते हैं। और ऐसा क्यों? क्योंकि विजय प्राप्त करने वालों का धर्म हर दाग से शुद्ध है। इस प्रकार, हे राजा, वे उस अवस्था की हर दाग से शुद्धि को प्रकट करते हैं।

33. और वे कैसे दिखाते हैं कि पापी लोगों का भले लोगों के साथ उसमें रहना कितना असंभव है? हे राजा, न्याय करो, जैसे विशाल सागर अपने भीतर किसी मृत शरीर को रहने नहीं देता, बल्कि जो भी शव सागर में हो, उसे वह तुरंत किनारे पर लाकर सूखी भूमि पर फेंक देता है। और ऐसा क्यों? क्योंकि सागर

शक्तिशाली प्राणियों का निवास स्थान। हे राजा, ठीक इसी प्रकार, जब पापी, मूर्ख, उत्साहहीन, दुखी, अपवित्र और दुष्ट लोगों को विजेताओं के धर्म में प्रवेश दिया जाता है, तो वे जल्द ही उस धर्म को त्याग देते हैं और उसमें निवास न करते हुए—शक्तिशाली अरहतों के निवास स्थान, जो शुद्ध और महापापों से मुक्त हैं—निम्न अवस्था में लौट जाते हैं। और ऐसा क्यों? क्योंकि दुष्टों के लिए विजेताओं के धर्म में रहना असंभव है। इस प्रकार, हे राजा, वे यह दर्शाते हैं कि पापी लोगों के लिए अच्छे लोगों के साथ उसमें रहना असंभव है।

34. और वे कैसे दर्शाते हैं कि इस अवस्था को समझना कितना कठिन है? हे राजा, ठीक वैसे ही जैसे अनाड़ी, अप्रशिक्षित, अज्ञानी और कौशलहीन धनुर्धारी बाल-फाड़ की बारीक कला दिखाने में असमर्थ होते हैं, बल्कि लक्ष्य से चूक जाते हैं और निशाने से बाहर तीर मारते हैं। और ऐसा क्यों? क्योंकि घोड़े के बाल बहुत बारीक और सूक्ष्म होते हैं। ठीक वैसे ही, हे राजा, जब कोई मूर्ख, बेवकूफ, मंदबुद्धि, सुस्त और मंदबुद्धि होता है।

जो लोग विजय प्राप्त करने वालों के सिद्धांत के अनुसार संसार का त्याग करते हैं, वे चार सत्यों के अत्यंत सूक्ष्म भेदों को समझने में असमर्थ होकर, उनसे भटककर, शीघ्र ही निम्नतम अवस्था में लौट जाते हैं। ऐसा क्यों? क्योंकि सत्यों की सूक्ष्मता और बारीकियों को समझना अत्यंत कठिन है। इस प्रकार वे सत्य की प्राप्ति की कठिनाई को दर्शाते हैं।

35. और वे कैसे दिखाते हैं कि इसमें कितने नियम-कानूनों का पालन करना है? हे राजा, ठीक वैसे ही जैसे कोई व्यक्ति किसी ऐसे स्थान पर जाता है जहाँ भयंकर युद्ध चल रहा हो, और जब वह शत्रु की सेनाओं से चारों ओर से घिरा हुआ पाता है और देखता है कि सशस्त्र सेनाएँ उस पर टूट पड़ रही हैं, तो वह पीछे हट जाता है, वापस मुड़ जाता है और भाग जाता है। ऐसा क्यों? क्योंकि उसे डर होता है कि इतने भयंकर युद्ध के बीच वह बच न पाए। ठीक वैसे ही, हे राजा, जब कोई भी दुष्ट, बेलगाम, निर्लज्ज, मूर्ख, द्वेषपूर्ण, चंचल, अस्थिर, नीच और बेवकूफ, विजेताओं की व्यवस्था के तहत संसार का त्याग करता है, तो वे अनेक उपदेशों का पालन करने में असमर्थ होकर

पीछे हट जाते हैं, वापस मुड़ जाते हैं और भाग जाते हैं, और इस प्रकार शीघ्र ही निम्न अवस्था में लौट जाते हैं। ऐसा क्यों? क्योंकि विजेताओं के धर्म में पालन किए जाने वाले नियमों का स्वरूप अनेक प्रकार का है। इस प्रकार, हे राजा, वे पालन किए जाने वाले प्रतिबंधों की विविधता को दर्शाते हैं।

36. हे राजा, जैसे उत्तम पुष्पवृंत, दोहरी चमेली पर कभी-कभी ऐसे फूल होते हैं जिन्हें कीड़ों ने छेद दिया हो और उनकी कोमल डंठलें कटकर टुकड़े-टुकड़े हो गई हों, और वे गिर जाते हों। परन्तु उनके गिरने से चमेली की झाड़ी अपमानित नहीं होती। क्योंकि जो फूल उस पर शेष रहते हैं, वे अपनी उत्तम सुगंध से हर दिशा में फैल जाते हैं। ठीक उसी प्रकार, हे राजा, जो कोई भी विजय प्राप्त करने वालों की व्यवस्था के अधीन संसार का त्याग करके निम्न अवस्था में लौट आता है, वह चमेली के फूलों के समान, जिन्हें कीड़ों ने काट लिया हो और जिनका रंग और सुगंध छीन ली गई हो, अपने व्यवहार में मानो रंगहीन और विकासहीन हो जाता है। परन्तु उनके पतन से विजय प्राप्त करने वालों का धर्म लज्जित नहीं होता। क्योंकि जो पंथ के सदस्य धर्म में बने रहते हैं, वे अपने उत्तम आचरण की उत्तम सुगंध से देवताओं और मनुष्यों के संसार को भर देते हैं।

37. स्वस्थ और लाल रंग के धान के पौधों के बीच करुम्भक नामक एक प्रकार का धान का पौधा उग सकता है, जो कभी-कभी मुरझा जाता है। परन्तु उसके मुरझाने से लाल धान के पौधे अपमानित नहीं होते। क्योंकि जो पौधे बचे रहते हैं, वे राजाओं का भोजन बनते हैं। ठीक उसी प्रकार, हे राजा, जो कोई भी विजय प्राप्त करने वालों की व्यवस्था के अधीन संसार का त्याग करके फिर से निम्न अवस्था में लौट आता है, वह लाल धान के पौधों के बीच करुम्भक पौधों की तरह न तो बढ़ पाता है, न ही विकास प्राप्त कर पाता है, और कभी-कभी निम्न अवस्था में भी लौट जाता है। परन्तु उनके इस पतन से विजय प्राप्त करने वालों का धर्म लज्जित नहीं होता।

जो भाई दृढ़ रहते हैं, वे अरहत पद के योग्य भी हो जाते हैं।

38. हे राजा, इच्छा पूरी करने वाले रत्न के एक तरफ खुरदरापन आ सकता है। परन्तु उस खुरदरेपन से रत्न की अपंगता नहीं होती। क्योंकि रत्न में जो पवित्रता बनी रहती है, वह लोगों को आनंद से भर देती है। और ठीक इसी प्रकार, हे राजा, जो कोई विजय प्राप्त करने वालों की व्यवस्था के अधीन संसार का त्याग करके फिर से निम्न अवस्था में लौट आता है, वह धर्म में पथभ्रष्ट और पतित हो सकता है। परन्तु उनके पतन से विजय प्राप्त करने वालों का धर्म लज्जित नहीं होता, क्योंकि जो भाई दृढ़ रहते हैं, वे देवताओं और मनुष्यों के हृदयों में आनंद का कारण बनते हैं।

39. हे महाराज, शुद्धतम लाल चंदन भी किसी न किसी भाग से सड़ कर गंधहीन हो सकता है। परन्तु इससे चंदन की लज्जा नहीं होती। क्योंकि जो भाग स्वच्छ और सुगंधित रहता है, वह अपनी सुगंध चारों ओर फैलाता है। ठीक इसी प्रकार, हे महाराज, जो कोई विजय प्राप्त करने वालों की व्यवस्था के अधीन संसार का त्याग करके फिर से निम्न अवस्था में लौट आता है, वह चंदन के सड़े हुए भाग के समान धर्म में तिरस्कृत हो सकता है। परन्तु उनके इस पतन से विजय प्राप्त करने वालों का धर्म लज्जित नहीं होता। क्योंकि जो भाई दृढ़ रहते हैं, वे अपने उत्तम आचरण की चंदन जैसी सुगंध से देवताओं और मनुष्यों के संसार को सुशोभित करते हैं।

'बहुत बढ़िया, नागसेना! एक के बाद एक उपयुक्त उपमाओं और सही सादृश्यों से आपने अत्यंत उत्कृष्ट ढंग से बात स्पष्ट कर दी है।'

हमने विजेताओं की व्यवस्था की निर्दोषता को दर्शाया है और उसे दोषरहित साबित किया है। यहाँ तक कि जो लोग पथभ्रष्ट हो गए हैं, वे भी यह स्पष्ट करते हैं कि वह व्यवस्था कितनी उत्कृष्ट है।

(यहाँ उन लोगों के बारे में दुविधा समाप्त होती है जो पथभ्रष्ट हो गए हैं।)

[सत्तावनवीं दुविधा। अरहतों को अपने शरीर पर कोई नियंत्रण क्यों नहीं है?]

40. 'आदरणीय नागसेना, आपके (संगठन के सदस्यों) का कहना है:

"अरहत को केवल एक ही प्रकार का दर्द होता है, शारीरिक दर्द, मानसिक दर्द नहीं।"

'यह कैसे हो सकता है, नागसेन? अरहत अपने शरीर के माध्यम से अपने मन को चलाए रखते हैं। क्या अरहत का शरीर पर कोई प्रभुत्व, कोई अधिकार, कोई शक्ति नहीं है?'

'नहीं, उसने ऐसा नहीं किया है, हे राजा।'

'महोदय, यह उचित नहीं है कि जिस शरीर से वह अपने मन को चलाता है, उस पर उसका न तो प्रभुत्व हो, न ही अधिकार हो, न ही शक्ति हो। महोदय, एक पक्षी भी अपने घोंसले का स्वामी, मालिक और शासक होता है।'

41. हे राजा, शरीर में ये दस गुण अंतर्निहित हैं, जो मानो शरीर के साथ-साथ चलते हैं और जन्म-जन्म में उसके साथ रहते हैं। वे दस गुण क्या हैं? सर्दी और गर्मी, भूख और प्यास।

मल त्याग की आवश्यकता, थकान और नींद आना, बुढ़ापा, बीमारी और मृत्यु। और इस मामले में अरहत का कोई प्रभुत्व नहीं है, कोई अधिकार नहीं है, कोई शक्ति नहीं है।

'आदरणीय नागसेना, इसका क्या कारण है कि अरहत के आदेशों का उसके शरीर पर कोई प्रभाव नहीं पड़ता, और न ही उस पर उसका कोई नियंत्रण है? मुझे इसका कारण बताइए।'

'हे राजा, न्यायप्रिय! जो भी प्राणी इस भूमि पर निर्भर हैं, वे सब इसी पर निर्भर होकर चलते-फिरते, निवास करते और अपना व्यवसाय करते हैं। परन्तु क्या उनके आदेशों में कोई शक्ति है, क्या उनका प्रभुत्व इस पर व्याप्त है?'

'बिल्कुल नहीं, महोदय!'

'हे राजा, अरहत ठीक इसी प्रकार अपने मन को शरीर के माध्यम से संचालित रखता है। फिर भी उसके आदेशों का इस पर कोई अधिकार या शक्ति नहीं है।'

42. 'आदरणीय नागसेना, ऐसा क्यों है कि साधारण मनुष्य शारीरिक और मानसिक दोनों प्रकार की पीड़ा भोगता है?'

हे राजा, उसके अशिक्षित मन के कारण। हे राजा, जैसे भूख से कांपते हुए बैल को घास या लता की कमजोर, नाजुक और पतली रस्सी से बांध दिया जाता है। लेकिन अगर बैल उत्तेजित हो जाए तो वह रस्सी को घसीटते हुए भाग जाएगा। ठीक वैसे ही, हे राजा, जब अशिक्षित मन वाले व्यक्ति को पीड़ा आती है, तो उसका मन उत्तेजित हो जाता है, और उत्तेजित मन उसके शरीर को इधर-उधर झुकाता है और उसे जमीन पर घसीटता है, और वह अशिक्षित मन से कांपता है, रोता है और भयानक चीखें निकालता है।

आहें। इसीलिए, हे राजा, साधारण मनुष्य को शरीर और मन दोनों में पीड़ा सहनी पड़ती है।'

43. 'तो फिर, महोदय, अरहत को केवल एक ही प्रकार का दर्द क्यों होता है—अर्थात शारीरिक दर्द, मानसिक दर्द नहीं?'

'हे बादशाह, अरहत का मन प्रशिक्षित, सुशिक्षित, वश में किया हुआ, आज्ञाकारी और आज्ञाकारी होता है, और वह उनके वचन को सुनता है। जब वह पीड़ा से ग्रस्त होते हैं, तो वे सभी चीजों की अनित्यता के विचार को दृढ़ता से ग्रहण कर लेते हैं, अपने मन को मानो ध्यान के स्तंभ से बांध लेते हैं, और ध्यान के स्तंभ से बंधा हुआ उनका मन अविचलित, स्थिर और दृढ़ रहता है, भटकता नहीं है—यद्यपि उनका शरीर पीड़ा के कारण इधर-उधर झुकता और कराहता रहता है। इसीलिए अरहत केवल एक ही प्रकार की पीड़ा सहते हैं—शारीरिक पीड़ा, मानसिक नहीं।'

44. आदरणीय नागसेन, यह वास्तव में अत्यंत आश्चर्यजनक बात है कि जब शरीर कांप रहा हो तब भी मन विचलित न हो। मुझे इसका कारण बताइए।

'हे राजा, मान लीजिए एक विशाल वृक्ष है, जिसका तना, शाखाएँ और पत्तियाँ बहुत बड़ी हैं। और जब हवा के बल से उसकी शाखाएँ हिलती हैं, तो क्या उसका तना भी हिलेगा?'

'बिल्कुल नहीं, महोदय!'

'हे महाराज, अरहत का मन उस महान वृक्ष के तने के समान है।'

'नागसेना, यह बहुत ही अद्भुत और साथ ही बहुत ही विचित्र भी है!'

[पैराग्राफ जारी है] मैंने पहले कभी कानून का ऐसा दीपक नहीं देखा जो इतने लंबे समय तक इतनी चमक से जलता रहा हो।'

[यहाँ अरहत के अपने शरीर पर नियंत्रण को लेकर दुविधा समाप्त होती है।]

[अठावनवीं दुविधा। आम आदमी का पाप।]

45. आदरणीय नागसेना, मान लीजिए कि एक गृहस्थ ने पारगिक अपराध किया हो और कुछ समय बाद संघ में प्रवेश कर ले। न तो उसे स्वयं इस बात का ज्ञान हो कि गृहस्थ रहते हुए उसने ऐसा अपराध किया था, और न ही किसी अन्य व्यक्ति द्वारा उसे यह सूचित किया जाए कि "गृहस्थ रहते हुए आपने ऐसा अपराध किया था।" अब यदि वह अरहतत्त्व प्राप्ति के लिए स्वयं को समर्पित कर दे, तो क्या वह सत्य को इस प्रकार समझ पाएगा कि श्रेष्ठ मार्ग पर चल सके?

'नहीं, हे राजा, वह ऐसा नहीं करेगा।'

'लेकिन क्यों नहीं, महोदय?'

'उसमें वह क्षमता, जो सत्य को समझने का कारण बन सकती थी, नष्ट हो चुकी है। इसलिए अब उसे सत्य का ज्ञान नहीं हो सकता।'

46. 'आदरणीय नागसेना, आपके लोग कहते हैं:

जो व्यक्ति (अपराध से) अवगत होता है, उसे

पश्चाताप। जब पश्चाताप उत्पन्न होता है तो हृदय में अवरोध उत्पन्न हो जाता है। जिसका हृदय अवरुद्ध होता है, उसे सत्य की समझ नहीं होती।

'जो व्यक्ति अपने अपराध से अनभिज्ञ है, पश्चाताप नहीं करता, और शांत मन से रहता है, उसे यह बात क्यों समझ में नहीं आनी चाहिए? यह दुविधा दो परस्पर विरोधी कथनों को छूती है। इसका हल निकालने से पहले अच्छी तरह सोच लें।'

47. 'हे राजा, क्या चयनित बीज, अच्छी तरह से जोती गई, अच्छी तरह से सींची गई, उपजाऊ मिट्टी में सफलतापूर्वक बोए जाने पर, परिपक्व हो पाएंगे?'

'जी हां, महोदय!'

लेकिन क्या वही बीज चट्टान की मोटी परत की सतह पर उग पाएगा?

'बिल्कुल नहीं।'

'तो फिर वही बीज कीचड़ में क्यों उगता है, चट्टान पर क्यों नहीं?'

'क्योंकि चट्टान पर उसके विकास का कोई कारण नहीं होता। बिना कारण के बीज उग नहीं सकते।'

'हे राजा, ठीक उसी प्रकार, जिस कारण से उसे सत्य का ज्ञान (उसका धर्म परिवर्तन) हो सकता था, वह कारण उसमें जड़ से उखाड़ दिया गया है। बिना कारण के धर्म परिवर्तन नहीं हो सकता।'

48. '[मुझे एक और उपमा दीजिए, महोदय।']

'खैर, हे राजा, क्या लाठियाँ, मिट्टी के ढेले और डंडे काम आएंगे?'

और क्या क्लब हवा में भी उसी तरह विश्राम स्थान पाते हैं जैसे वे जमीन पर पाते हैं?'

'नहीं, महोदय।'

लेकिन वे पृथ्वी पर विश्राम करने क्यों आते हैं, जबकि वे हवा में खड़े नहीं हो सकते?

'उनकी स्थिरता का कोई ठोस कारण नहीं है, और बिना किसी कारण के वे टिक नहीं पाएंगे।'

'हे राजा, ठीक इसी प्रकार, उसके उस दोष के कारण ही उसके धर्म परिवर्तन का कारण समाप्त हो गया है। और बिना कारण के कोई धर्म परिवर्तन नहीं हो सकता। अब, हे राजा, क्या आग पानी में उसी प्रकार जलेगी जैसे वह भूमि पर जलती है?'

'नहीं, महोदय।'

'लेकिन क्यों नहीं?'

'क्योंकि पानी में जलने के लिए आवश्यक परिस्थितियाँ मौजूद नहीं होतीं। और उनके बिना जलना संभव नहीं है।'

'हे राजा, ठीक उसी प्रकार उसके उस अपराध के कारण उसमें धर्म परिवर्तन के लिए आवश्यक परिस्थितियाँ नष्ट हो गई हैं। और जब वे परिस्थितियाँ नष्ट हो जाती हैं जो धर्म परिवर्तन को संभव बनाती हैं, तो धर्म परिवर्तन संभव ही नहीं है।'

49. 'आदरणीय नागसेना, इस मामले पर एक बार फिर विचार करें। मैं अभी भी इससे सहमत नहीं हूँ। मुझे किसी कारण से समझाएँ कि जो व्यक्ति अपने अपराध से अनभिज्ञ है और इसलिए पश्चाताप नहीं करता, उसके मामले में ऐसी बाधा कैसे उत्पन्न हो सकती है।'

'हे राजा, क्या हलाहल विष, यदि खाया जाए तो?'

जिस व्यक्ति को पता ही नहीं था कि उसने इसे खा लिया है, क्या उसकी जान ले ली जाए?

'जी श्रीमान।'

'हे राजा, क्या सत्य को समझने में उसी प्रकार बाधा उत्पन्न होती है, जिसने अनजाने में पाप किया हो? और क्या आग, हे राजा, उस व्यक्ति को जला देगी जो अनजाने में उसमें प्रवेश कर गया हो?'

'जी श्रीमान।'

'ठीक है, जैसा आपने बताया वैसा ही। या फिर क्या कोई विषैला सांप, अगर किसी आदमी को बिना उसकी जानकारी के काट ले, तो उसे मार डालेगा?'

'जी श्रीमान।'

"ठीक है, जैसा आपने बताया, वैसा ही है। क्या यह सच नहीं है कि कलिंग के राजा समना कोलञ्ञ, जब एक संप्रभु शासक के सात खजानों से घिरे हुए, अपने राजसी हाथी पर सवार होकर अपने रिश्तेदारों से मिलने गए, तो वे ज्ञान के वृक्ष को पार नहीं कर पाए, जबकि उन्हें यह पता भी नहीं था कि वह वृक्ष वहाँ स्थित है? ठीक इसी तरह, जो व्यक्ति कोई अपराध करता है, भले ही उसे इसका पता न हो, फिर भी वह सत्य के ज्ञान तक पहुँचने में असमर्थ होता है।"

'सचमुच, नागसेन, यही विजेता का वचन होना चाहिए। इसमें कोई दोष निकालना व्यर्थ होगा। और यही (तुम्हारी व्याख्या) इसका अर्थ होना चाहिए। मैं इसे तुम्हारे कहे अनुसार स्वीकार करता हूँ।'

[यहाँ आम आदमी के पाप की दुविधा समाप्त होती है।]

[उनसठवीं दुविधा। दोषी एकांतवासी।]

50. 'आदरणीय नागसेना, एक गृहस्थ जिसने पाप किया है और एक समन (संगठन का सदस्य) जिसने पाप किया है, उनमें क्या अंतर है? क्या दोनों का पुनर्जन्म एक ही स्थिति में होगा? क्या दोनों को एक ही दंड मिलेगा? या कोई अंतर है?'

'हे राजा, दस गुण ऐसे हैं जो दोषी समना में प्रचुर मात्रा में पाए जाते हैं, जो उसे दोषी गृहस्थ से अलग करते हैं। और इसके अलावा, समना दस तरीकों से उसे दिए जाने वाले उपहारों को शुद्ध करता है।'

51. और वे दस गुण कौन से हैं जो दोषी समना में प्रचुर मात्रा में पाए जाते हैं, जो उसे दोषी गृहस्थ से अलग करते हैं? हे महाराज, दोषी समना बुद्ध, धर्म, संघ और अपने सहपाठियों के प्रति श्रद्धा से परिपूर्ण होता है; वह पवित्र ग्रंथों के बारे में प्रश्न पूछने और उनका पाठ करने में तत्पर रहता है; वह पाप करने के बावजूद भी विद्या के प्रति समर्पित रहता है। फिर, हे महाराज, दोषी समना सभा में प्रवेश करते समय शालीन वस्त्र पहनकर प्रवेश करता है, वह निंदा के भय से शरीर और मन दोनों से स्वयं को सुरक्षित रखता है, उसका मन अरहतत्व प्राप्ति के लिए तत्पर रहता है, वह भिक्षुओं की संगति में रहता है। और हे महाराज, यदि वह पाप भी करता है तो वह विवेकपूर्ण जीवन जीता है। हे महाराज, जिस प्रकार एक विवाहित स्त्री गुप्त रूप से और एकांत में पाप करती है, उसी प्रकार दोषी समना अपने पाप में विवेकपूर्ण आचरण करता है। हे महाराज, ये दस गुण दोषी समना में पाए जाते हैं, जो उसे दोषी गृहस्थ से अलग करते हैं।

52. 'और वे दस तरीके कौन से हैं, इसके अलावा,

क्या वह अपने द्वारा दिए गए उपहार को इस प्रकार पवित्र करता है? वह इसे इस प्रकार पवित्र करता है कि वह अभेद्य कवच धारण करता है; कि वह प्राचीन ऋषियों द्वारा अपनाए जाने वाले त्याग के विशिष्ट चिह्न के अनुसार अपने बाल मुंडवाता है; कि वह भाइयों के समूह में शामिल है; कि उसने बुद्ध, धर्म और संघ की शरण ली है; कि वह (अरहत पद के बाद) परिश्रम के लिए उपयुक्त एकांत स्थान पर निवास करता है; कि वह विजेताओं की शिक्षाओं के खजाने की खोज करता है; कि वह सबसे उत्तम धर्म (धम्म) का प्रचार करता है; कि उसका अंतिम भाग्य सत्य के द्वीप में पुनर्जन्म लेना है; कि वह इस दृढ़ विश्वास से परिपूर्ण है कि बुद्ध सभी प्राणियों के श्रेष्ठ हैं; कि उसने उपोसथ दिवस का पालन करने का दायित्व अपने ऊपर लिया है। हे राजा, ये दस तरीके हैं जिनसे वह अपने द्वारा दिए गए उपहार को पवित्र करता है।

53. हे राजा, पूर्णतः पतित होने पर भी, एक पापी समना धर्म के समर्थकों के दान को पवित्र कर देता है—जैसे पानी, चाहे कितना भी गाढ़ा हो, कीचड़, गंदगी और दाग धो देता है—जैसे गर्म, यहाँ तक कि उबलता हुआ पानी भी भयंकर आग को बुझा देता है—जैसे भोजन, चाहे कितना भी बेस्वाद हो, भूख को शांत कर देता है। क्योंकि हे राजा, समस्त देवताओं के अधिपति ने उत्तम मगधिमा निकैया के "दान पर" अध्याय में यही कहा है:

जब भी कोई नेक व्यक्ति, विश्वासपूर्ण हृदय से, अपने कर्मों से अर्जित धन को अधर्मियों को भेंट करता है, इस विश्वास के साथ कि इस नेक कार्य का फल अवश्य मिलेगा, तो ऐसा दान देने वाले द्वारा पवित्र हो जाता है।

'हे नागसेन, अत्यंत अद्भुत और विचित्र! हमने आपसे एक साधारण सा प्रश्न पूछा था, और आपने तर्क और उपमाओं से उसका उत्तर देकर मानो श्रोता को निर्वाण के मधुर स्वाद से भर दिया। जैसे कोई रसोइया या उसका शागिर्द साधारण जायफल लेकर, उसमें विभिन्न सामग्रियाँ मिलाकर राजा के लिए व्यंजन तैयार करता है—वैसे ही, हे नागसेन, जब हमने आपसे एक साधारण सा प्रश्न पूछा, तो आपने तर्क और उपमाओं से उसका उत्तर देकर श्रोता को निर्वाण के मधुर स्वाद से भर दिया।'

[दोषी संन्यासी के संबंध में दुविधा यहीं समाप्त होती है।]

[साठवीं दुविधा। जल में आत्मा।]

54. 'हे आदरणीय नागसेन, जब यह जल अग्नि पर उबलता है तो अनेक प्रकार की ध्वनियाँ उत्पन्न करता है, फुफकारता और उबलता हुआ। तो क्या, नागसेन, यह जल सजीव है? क्या यह खेल-खेल में चिल्ला रहा है? या यह अपने ऊपर हो रही पीड़ा पर विलाप कर रहा है?'

'हे राजा, यह जीवित नहीं है; जल में कोई आत्मा या अस्तित्व नहीं है। यह आग की भीषण गर्मी के कारण ही आवाजें, फुफकार और सुलगने की आवाजें निकालता है।'

'हे पूज्य नागसेना, कुछ झूठे शिक्षक हैं जो इस आधार पर कि जल जीवित है, ठंडे पानी के उपयोग को अस्वीकार करते हैं, और जल को गर्म करके विभिन्न प्रकार के गुनगुने भोजन से अपना पेट भरते हैं।'

'ये लोग आप पर दोष लगाते हैं और आपकी निंदा करते हुए कहते हैं: "शाक्यपुत्रीय समना एक ही प्रकार के प्राणों को हानि पहुँचाते हैं।" उनकी इस निंदा और दोष को दूर करो, हटाओ, इससे छुटकारा पाओ।'

55. 'हे राजा, जल सजीव नहीं है। न ही उसमें कोई आत्मा है और न ही कोई अस्तित्व। और यह है...'

आग की भीषण गर्मी का ज़ोरदार झटका उसे ध्वनि उत्पन्न करने, फुफकारने और उबलने के लिए मजबूर करता है। यह ज़मीन में बने गड्ढों, तालाबों, झीलों, जलाशयों, दरारों और खाइयों, कुओं, निचले इलाकों और कमल-कुंडों में मौजूद पानी के समान है, जो गर्म हवाओं के ज़ोरदार प्रहार से इतना प्रभावित होता है कि सूख जाता है। परन्तु हे राजा, क्या उस स्थिति में पानी फुफकारते और उबलते हुए अनेक ध्वनियाँ उत्पन्न करता है?

'बिल्कुल नहीं, महोदय।'

लेकिन, अगर पानी जीवित होता, तो वह भी कुछ आवाज़ करता। इसलिए, हे राजा, जान लो कि पानी में न तो आत्मा है, न ही अस्तित्व; और पानी की तीव्र गर्मी के कारण ही वह आवाज़ उत्पन्न करता है।

56. 'और हे राजा, इसी बात का एक और कारण सुनो। हे राजा, यदि पानी में चावल के दाने डालकर उसे एक बर्तन में भरकर ढक दिया जाए, परन्तु चूल्हे के ऊपर न रखा जाए, तो क्या उसमें से ध्वनि निकलेगी?'

'नहीं, महोदय। यह शांत और अविचलित रहेगा।'

लेकिन अगर आप उसी पानी को, जैसा कि वह बर्तन में है, एक अंगीठी के ऊपर रख दें और फिर आग जला दें, तो क्या पानी शांत और स्थिर रहेगा?

'बिल्कुल नहीं, महोदय। यह हिलने लगेगा, व्याकुल हो जाएगा, अशांत हो जाएगा और पूरी तरह से हलचल मच जाएगी, इसमें लहरें उठेंगी, यह ऊपर-नीचे और हर दिशा में दौड़ेगा, यह लुढ़क जाएगा और उबल उठेगा, और इसके ऊपर झाग की एक माला बन जाएगी।'

'लेकिन ऐसा क्यों, हे राजा, जबकि जल अपनी सामान्य अवस्था में शांत और स्थिर रहता है?'

'आग की ऊष्मा के प्रबल आवेग के कारण ही पानी, जो आमतौर पर इतना शांत रहता है, कई तरह की आवाजें निकालता है, जैसे कि बुलबुले उठना और फुफकारना।'

'तो हे राजा, इस प्रकार जान लो कि जल में न तो आत्मा है, न ही अस्तित्व; और यह आग की तीव्र ऊष्मा ही है जिसके कारण यह ध्वनि उत्पन्न करता है।'

57. 'और हे राजा, इसी बात का एक और कारण सुनो। क्या हर घर में पानी ऐसे घड़ों में नहीं रखा जाता जिनके मुंह बंद हों?'

'जी श्रीमान।'

'अच्छा, क्या वह पानी हिलता है, क्या वह अशांत है, व्याकुल है, हलचल में है, क्या वह लहरों का रूप लेता है, क्या वह ऊपर-नीचे और हर दिशा में बहता है, क्या वह लुढ़कता है और पलटता है, क्या वह झाग से ढका हुआ है?'

'नहीं! वह पानी अपनी सामान्य अवस्था में है। वह स्थिर और शांत रहता है।'

'लेकिन क्या आपने कभी सुना है कि यह सब विशाल महासागर के पानी के बारे में भी सच है? और यह कि उफान मारते हुए यह एक जोरदार गर्जना के साथ तट से टकराता है?'

'हां, मैंने इसके बारे में सुना भी है और खुद भी देखा है—कि कैसे विशाल महासागर का पानी सौ-दो सौ क्यूबिट ऊंचा आकाश की ओर उठता है।'

लेकिन ऐसा क्यों होता है कि जहां पानी अपनी सामान्य अवस्था में स्थिर और गतिहीन रहता है, वहीं महासागर का पानी गतिमान होने के साथ-साथ गर्जना भी करता है?

'यह उस प्रचंड शक्ति के कारण है

हवा चलने लगती है, लेकिन घड़ों में रखा पानी न तो हिलता है और न ही कोई आवाज करता है, क्योंकि उसे कोई हिलाता नहीं है।

'ठीक इसी तरह, उबलते पानी से निकलने वाली आवाजें भी आग की अत्यधिक गर्मी का ही परिणाम होती हैं।'

58. 'क्या लोग ढोल के सूखे हुए मुँह को सूखे गाय के चमड़े से नहीं ढकते?'

'हाँ वे करते हैं।'

'हे राजा, क्या ढोल में कोई आत्मा या प्राणी होता है?'

'बिल्कुल नहीं, महोदय।'

'तो फिर ढोल से आवाज कैसे निकलती है?'

'किसी स्त्री या पुरुष के कार्य या प्रयास से।'

''जिस प्रकार ढोल बजता है, उसी प्रकार आग की गर्मी के प्रभाव से पानी भी ध्वनि उत्पन्न करता है। और इसी कारण हे राजा, आपको यह भी जान लेना चाहिए कि जल में न तो आत्मा है, न ही अस्तित्व; और यह आग की गर्मी ही है जिसके कारण जल ध्वनि उत्पन्न करता है।''

59. 'और हे राजा, मुझे भी आपसे कुछ और पूछना है—इस प्रकार इस पहेली का पूरी तरह से समाधान हो जाएगा। यह कैसे है? क्या यह हर प्रकार के बर्तन के लिए सच है कि उसमें गर्म किया गया पानी आवाज करता है, या केवल कुछ प्रकार के बर्तनों के लिए?'

'सभी के नहीं, महोदय। केवल कुछ के।'

लेकिन फिर, हे राजा, आपने स्वयं ही अपना रुख त्याग दिया है। आप मेरे पक्ष में आ गए हैं - कि जल में न तो आत्मा है, न ही कोई अस्तित्व। क्योंकि यदि यह किसी भी चीज़ में शोर करता है तो ही ऐसा होगा।

अगर किसी बर्तन को गर्म किया जाए तो क्या यह कहना सही होगा कि उसमें आत्मा है? पानी दो प्रकार का नहीं हो सकता—एक वह जो बोलता है, जो जीवित है, और दूसरा वह जो नहीं बोलता और निर्जीव है। यदि सारा पानी जीवित होता, तो वह पानी जिसे विशाल हाथी, जब वे प्रजनन के लिए तैयार होते हैं, अपनी सूंड में भरकर अपने विशाल शरीर पर उंडेलते हैं, या अपने मुँह में भरकर सीधे अपने पेट में ले जाते हैं—वह पानी भी, जब उनके दाँतों के बीच कुचला जाता, तो ध्वनि उत्पन्न करता। और विशाल जहाज, सौ हाथ लंबे, भारी माल

से लदे, सैकड़ों सामान के पैकेटों से भरे, जब समुद्र पर चलते हैं—तो उनके द्वारा कुचला गया पानी भी ध्वनि उत्पन्न करता। और विशाल मछलियाँ, सैकड़ों मील लंबे शरीर वाले विशालकाय जीव, क्योंकि वे विशाल महासागर में, उसकी गहराई में डूबे रहते हैं, इसलिए उसमें रहते हुए, लगातार अपने मुँह में महासागर का पानी भरते और उगलते रहते होंगे—और वह पानी भी, जब उनके गलफड़ों के बीच या उनके पेट में कुचला जाता, तो ध्वनि उत्पन्न करता। लेकिन चूंकि इतनी शक्तिशाली चीजों के पीसने और कुचलने से पीड़ित होने पर भी जल कोई ध्वनि नहीं उत्पन्न करता, इसलिए, हे राजा, आप यह मान सकते हैं कि जल में न तो आत्मा है और न ही अस्तित्व।

बहुत खूब, नागसेना! तुमने बड़ी समझदारी से पहेली सुलझाई है। नागसेना, ठीक वैसे ही जैसे किसी कुशल, निपुण और प्रशिक्षित सुनार के हाथों में आया कोई अनमोल रत्न, किसी दुर्लभ मोती की तरह, उचित सराहना, सम्मान और प्रशंसा पाता है।

मोतियों के व्यापारी के हाथों में, कपड़े के व्यापारी के हाथों में बुने हुए बढ़िया कपड़े का टुकड़ा, या इत्र बनाने वाले के हाथों में लाल चंदन—ठीक उसी तरह, आपके सामने रखी गई इस पहेली को उचित विवेक के साथ हल किया गया है।

[जल-जीवन से संबंधित दुविधा यहीं समाप्त होती है।]

यहां छठा अध्याय समाप्त होता है।
टिपिटका >> सुत्त पिटक >> खुद्दक निकाय >> मिलिंदपन्हा >> पुस्तक IV। दुविधाओं का समाधान - अध्याय 7

अनुवादक: टी.डब्ल्यू. राइस डेविड्स

पिछला <<<<-----||-15-||----->>>> अगला

1. पूज्य नागसेना, भगवान ने कहा:

"हे भाइयों, उस चीज़ में समर्पित होकर जियो और आनंद लो जिसमें कोई पापंका (मन की वे अवस्थाएँ नहीं जो मनुष्य के आध्यात्मिक विकास में विलंब या बाधा डालती हैं) न हों।"

'वह क्या है जिसमें पापांका नहीं होते?'

'हे राजा, रूपांतरण के फल में पापंका नहीं होते; उस मार्ग की अवस्था का फल जिसमें वे लोग रहते हैं जिनका केवल एक बार पुनर्जन्म होगा, या सभी का पुनर्जन्म नहीं होगा; अरहतत्व के फल में पापंका नहीं होते।'

लेकिन अगर ऐसा है, नागसेना, तो फिर भाई लोग प्रवचनों, गद्य-पद्य की मिश्रित रचनाओं, व्याख्याओं, कविताओं, भावों के उद्गारों, "इस प्रकार उन्होंने कहा" से शुरू होने वाले अंशों, जन्म-कथाओं, आश्चर्य की कहानियों और विस्तृत ग्रंथों के पाठ और उन पर प्रश्न पूछने में क्यों रुचि रखते हैं? वे नए भवनों, संघ को दिए जाने वाले उपहारों और भेंटों के बारे में क्यों परेशान होते हैं?

2. हे महाराज, जो लोग ये सब कार्य करते हैं, वे पापंकाओं से मुक्ति (अर्थात अरहतत्व) प्राप्त करने की दिशा में कार्य कर रहे हैं। क्योंकि हे महाराज, भाइयों में से जो स्वभाव से शुद्ध हैं, जिनके हृदय पर पिछले जन्म में किए गए अच्छे कर्मों का प्रभाव पड़ा है, वे क्षण भर में पापंकाओं से मुक्त होकर अरहत बन सकते हैं, परन्तु जिनके मन बुराई से अंधकारमय हैं, वे केवल इन्हीं उपायों से अरहत बन सकते हैं।

3. हे राजा, न्यायोचित, जैसे एक व्यक्ति खेत में बीज बोकर उसे उगा लेता है और बिना किसी प्राचीर या बाड़ के अपनी शक्ति से फसल काट लेता है, जबकि दूसरा व्यक्ति बीज उगाने के बाद जंगल में जाकर लकड़ियाँ और डालियाँ काटकर बाड़ बनाता है और तभी फसल काट पाता है। ठीक उसी प्रकार, जो स्वभाव से शुद्ध हैं, जिनके हृदय पर पिछले जन्म में किए गए अच्छे कर्मों का प्रभाव है, वे पल भर में अरहत बन सकते हैं, जैसे वह व्यक्ति जो बिना बाड़ के फसल काट लेता है। परन्तु वे लोग, जिनका मन उनके द्वारा किए गए बुरे कर्मों से अंधकारमय हो गया है, केवल ऐसे साधनों से ही अरहत बन सकते हैं, जैसे वह व्यक्ति जो बाड़ बनाकर ही अपनी फसल काट सकता है।

4. 'या फिर, हे राजा, जैसे किसी ऊँचे आम के पेड़ की चोटी पर फलों का गुच्छा हो। तब

जिसके पास इद्धि की शक्ति होती है, वह उन फलों को प्राप्त कर सकता है, परन्तु जिसके पास यह शक्ति नहीं होती, उसे पहले लकड़ियाँ और लताएँ काटकर सीढ़ी बनानी पड़ती है, और उसके सहारे पेड़ पर चढ़कर फल प्राप्त करना पड़ता है। इसी प्रकार, जो स्वभाव से शुद्ध होते हैं और जिनके हृदय पर पिछले जन्म में किए गए अच्छे कर्मों का प्रभाव होता है, वे पल भर में अर्हतत्व प्राप्त कर लेते हैं, जैसे वह व्यक्ति जो इद्धि की शक्ति से फल प्राप्त करता है। परन्तु दूसरी ओर, जिनके मन उनके द्वारा किए गए बुरे कर्मों से अंधकारमय हो जाते हैं, वे केवल इन्हीं साधनों से अर्हत बन सकते हैं, जैसे वह व्यक्ति जो अपनी बनाई सीढ़ी के सहारे ही फल प्राप्त करता है।

5. हे राजा, न्यायोचित उदाहरण दीजिए, जैसे एक चतुर व्यापारी अपने स्वामी के पास जाकर अपना काम निपटा लेता है, वहीं दूसरा धनी व्यक्ति अपने धन का उपयोग करके दूसरों को अपनी सेवा में लगाता है और उनकी सहायता से अपना काम पूरा करवाता है—और वह काम के लिए ही दूसरों की सहायता लेता है। इसी प्रकार, जो स्वभाव से शुद्ध हैं, जिनके हृदय पर पिछले जन्म में किए गए अच्छे कर्मों का प्रभाव है, वे क्षण भर में छह दिव्य गुणों की प्राप्ति कर सकते हैं, जैसे वह व्यक्ति जो अपना काम स्वयं करता है। वहीं, जिन भाइयों का मन अपने किए गए बुरे कर्मों से अंधकारमय हो गया है, वे केवल ऐसे साधनों से ही त्याग के लाभ प्राप्त कर सकते हैं, जैसे वह व्यक्ति जो दूसरों की सहायता से अपना काम पूरा करता है।

6. 'हे राजा, पाठ करना अत्यंत लाभकारी है, प्रश्न पूछना, भवन निर्माण कार्य की देखरेख करना, दान-पुण्य का प्रबंध करना भी अत्यंत लाभकारी है—ये सभी कार्य भाइयों द्वारा प्राप्त किए जाने वाले आध्यात्मिक उद्देश्यों में से किसी न किसी की पूर्ति के लिए किए जाते हैं। हे राजा, जिस प्रकार कोई मंत्री, सैनिक, दूत, संतरी, अंगरक्षक या सेवक विशेष रूप से राजा के लिए उपयोगी होता है, परन्तु जब राजा को कोई कार्य सौंपा जाता है तो वे सब उसकी सहायता करते हैं—ठीक उसी प्रकार ये सभी वस्तुएँ उन उद्देश्यों की प्राप्ति में सहायक होती हैं। हे राजा, जब सभी मनुष्य स्वभाव से शुद्ध हो जाएँगे, तब शिक्षक के लिए कुछ भी शेष नहीं रहेगा। परन्तु जब तक शिष्यत्व की आवश्यकता रहेगी, तब तक हे राजा, स्वयं सारिपुत्त जैसे व्यक्ति (यद्यपि वे असंख्य युगों तक पुण्य में विलीन रहने के कारण ज्ञान के शिखर पर पहुँच चुके थे) भी शिष्यत्व के बिना अरहतत्व प्राप्त नहीं कर सकेंगे।' इसलिए, हे राजा, शास्त्रों को सुनना, उनका पाठ करना और उनसे संबंधित प्रश्न पूछना उपयोगी है। और इसीलिए जो लोग शास्त्रों के प्रति आसक्त हैं, उनके लिए भी यह उपयोगी है।

ये वस्तुएँ, इनमें निहित बाधाओं से मुक्त होकर, अरहतत्व प्राप्त करती हैं।

'ठीक है, नागसेना, आपने मुझे यह पहेली अच्छी तरह समझा दी है। यह सच है, और मैं इसे आपके कहे अनुसार स्वीकार करता हूँ।'

[बाधाओं को लेकर दुविधा यहीं समाप्त होती है।]

[बासठवीं दुविधा। ऋषि अरहत।]

7. 'आदरणीय नागसेना, आपके लोग कहते हैं:

"जो कोई भी गृहस्थ रहते हुए अरहत पद प्राप्त कर लेता है, उसके लिए दो ही स्थितियाँ संभव हैं, और कोई दूसरी नहीं—या तो वह उसी दिन संघ में प्रवेश कर जाता है, या उसका निधन हो जाता है, क्योंकि उस दिन के बाद वह जीवित नहीं रह सकता।"

'अब, हे नागसेन, यदि वह उस दिन कोई शिक्षक या गुरु, या कुंड और वस्त्रों का समूह प्राप्त न कर सके, तो क्या वह, एक अरहत होने के नाते, स्वयं को प्रवेश देगा, या वह उस दिन जीवित रहेगा, या क्या कोई अन्य अरहत इद्धि की शक्ति से अचानक प्रकट होकर उसे प्रवेश देगा, या क्या वह मर जाएगा?'

'हे राजा, वह स्वयं को प्रवेश नहीं दे सकता, क्योंकि वह एक अरहत है। क्योंकि जो कोई भी स्वयं को प्रवेश देता है...'

यह संप्रदाय चोरी का दोषी है। और वह उस दिन से आगे नहीं टिक सकता था। चाहे कोई दूसरा अरहत आए या न आए, उसी दिन उसका अंत हो जाएगा।

'तो, नागसेन, चाहे चाहे जिस भी तरीके से अरहतत्व की पवित्र स्थिति प्राप्त की जाए, वह भी उससे नष्ट हो जाती है, क्योंकि उसमें जीवन का विनाश निहित है।'

8. 'हे महाराज, गृहस्थ अवस्था ही दोषपूर्ण है। उस दोषपूर्ण अवस्था में, और उस अवस्था की कमजोरी के कारण, जो गृहस्थ अवस्था में ही अरहत पद प्राप्त कर लेता है, उसे या तो उसी दिन संघ में प्रवेश करना होगा या मर जाना होगा। हे महाराज, यह अरहत पद का दोष नहीं है। दोष गृहस्थ अवस्था का है, क्योंकि वह पर्याप्त रूप से मजबूत नहीं है।'

'हे राजा, जिस प्रकार भोजन, जो सभी प्राणियों के विकास और जीवन की रक्षा करता है, अपच के कारण उस व्यक्ति की मृत्यु हो जाती है जिसका पेट उसे सहन नहीं कर पाता, जिसकी आंतरिक अग्नि कम और दुर्बल होती है—ठीक उसी प्रकार यदि कोई गृहस्थ उस स्थिति में रहते हुए अरहतत्व प्राप्त कर लेता है जब वह इसके लिए अनुपयुक्त है, तो उस स्थिति की कमजोरी के कारण उसे उसी दिन या तो संघ में प्रवेश करना होगा या मर जाना होगा।'

या फिर, हे राजा, जैसे किसी छोटी सी घास पर भारी चट्टान रखे जाने पर वह अपनी कमजोरी के कारण टूटकर बिखर जाती है—ठीक वैसे ही जब कोई गृहस्थ अरहत पद प्राप्त कर लेता है, तो उस स्थिति में अरहत पद को संभालने में असमर्थ होने के कारण उसे उसी दिन या तो संघ में प्रवेश करना होगा या मर जाना होगा।

या फिर, हे राजा, एक गरीब, कमजोर, निम्न कुल और कम क्षमता वाले व्यक्ति के रूप में, यदि वह अधिकार प्राप्त कर ले तो

एक महान और शक्तिशाली राज्य भी उसकी गरिमा को बनाए रखने में असमर्थ होगा—ठीक उसी प्रकार यदि कोई गृहस्थ अरहत पद प्राप्त कर ले, तो वह उस स्थिति में उसकी गरिमा को बनाए रखने में असमर्थ होगा। [266] और यही कारण है कि उसे उसी दिन या तो संघ में प्रवेश करना होगा या मृत्यु को प्राप्त होना होगा।'

'बहुत बढ़िया, नागसेना! यह सच है, और मैं इसे आपके कहे अनुसार स्वीकार करता हूँ।'

[आम अरहत के बारे में दुविधा यहीं समाप्त होती है।]

[दुविधा 3 तिरसठवां. अरहतों की गलतियाँ।]

9. 'आदरणीय नागसेना, क्या कोई अरहत विचारहीन हो सकता है?'

'हे राजा, अरहतों ने लापरवाही को अपने से दूर रखा है। वे कभी भी अनभिज्ञ नहीं होते।'

लेकिन क्या कोई अरहत किसी अपराध का दोषी हो सकता है?

'जी हां, हे राजा।'

'किस संदर्भ में?'

'अपनी कोठरी के निर्माण में, या (दूसरे लिंग के साथ) अपने यौन संबंध में, या (दोपहर के भोजन के लिए) गलत समय को सही समय समझने में'

समय, या जब उसे (भोजन के लिए) आमंत्रित किया गया हो और वह निमंत्रण भूल गया हो, या बचे हुए भोजन को "बचा हुआ" समझकर खा रहा हो जबकि वह बचा हुआ भोजन न हो।

लेकिन, आदरणीय नागसेना, आपके लोग कहते हैं:

"अपराध करने वाले दो कारणों में से किसी एक के कारण ऐसा करते हैं, या तो लापरवाही से या अज्ञानता से।"

'क्या अरहत इस बात से लापरवाह है कि वह अपराध करता है?'

'नहीं, हे राजा।'

'यदि अरहत अपराध करता है, और फिर भी लापरवाह नहीं है, तो वह निश्चित रूप से विचारहीनता में सक्षम होगा।'

'वह अविवेकी होने में सक्षम नहीं है, फिर भी अरहत अपराधों के दोषी हो सकते हैं।'

'तो मुझे एक कारण बताकर समझाओ। इसका कारण क्या है?'

10. 'हे राजा, दो प्रकार के पाप होते हैं—एक वे जो सामान्य नैतिक नियम का उल्लंघन करते हैं, और दूसरे वे जो नियमों (व्यवस्था) का उल्लंघन करते हैं। और सामान्य नैतिक नियम का उल्लंघन क्या है? दस प्रकार के बुरे कर्म (हत्या, चोरी,

व्यभिचार, झूठ, निंदा, कठोर भाषा, व्यर्थ की बातें, लोभ, द्वेष और झूठी शिक्षा। ये बातें नैतिक नियमों के विरुद्ध हैं। और नियमों का उल्लंघन क्या है? वे सभी बातें जो संसार में समन धर्म के अनुयायियों के लिए अनुचित और अनुपयुक्त मानी जाती हैं, परन्तु सामान्य लोगों के लिए गलत नहीं हैं—वे बातें जिनके विषय में भगवान बुद्ध ने अपने शिष्यों के लिए नियम बनाए थे, और उन्हें जीवन भर उनका उल्लंघन नहीं करना था। हे राजा, सूर्यास्त के बाद भोजन करना संसार में रहने वालों के लिए गलत नहीं है, परन्तु विजय प्राप्त करने वालों के धर्म (पंथ) में रहने वालों के लिए गलत है। वृक्षों और झाड़ियों को हानि पहुँचाना संसार की दृष्टि में कोई अपराध नहीं है, परन्तु धर्म में गलत है। जल में क्रीड़ा करना सामान्य व्यक्ति के लिए कोई अपराध नहीं है, परन्तु धर्म में गलत है। और इसी प्रकार की अनेक अन्य बातें, हे राजा, संसार में सही हैं, परन्तु विजय प्राप्त करने वालों के धर्म में गलत हैं। नियमों के उल्लंघन से मेरा यही तात्पर्य है। अब अरहत (जिनमें महादुष्टियाँ नष्ट हो जाती हैं) नैतिक नियमों के विरुद्ध पाप करने में असमर्थ हैं, परन्तु वे अनजाने में संघ के नियमों का उल्लंघन कर सकते हैं। प्रत्येक अरहत के लिए सब कुछ जानना संभव नहीं है, न ही यह उनकी शक्ति में है। वे किसी स्त्री या पुरुष के व्यक्तिगत या पारिवारिक नाम से अनभिज्ञ हो सकते हैं। वे पृथ्वी पर किसी मार्ग से अनभिज्ञ हो सकते हैं। परन्तु प्रत्येक अरहत मोक्ष के विषय में ज्ञात होगा, और पारलौकिक ज्ञान के छह गुणों से संपन्न अरहत उनके दायरे में आने वाले ज्ञान को जानेंगे, और हे राजा, सर्वज्ञ तथागत सर्वज्ञानी होंगे।

'बहुत बढ़िया, नागसेना! यह सच है, और मैं इसे आपके कहे अनुसार स्वीकार करता हूँ।'

[यहाँ अरहतों की गलतियों को लेकर दुविधा समाप्त होती है।]

[चौंसठवीं दुविधा। वह क्या है, लेकिन दुनिया में नहीं है।]

11. 'आदरणीय नागसेना, संसार में बुद्ध, पक्केका-बुद्ध, तथागतों के शिष्य, संप्रभु अधिपति, एक देश के राजा, देवता और मनुष्य देखे जा सकते हैं;—हमें धनी और गरीब, सुखी और दुखी, सभी मिलते हैं;—हमें ऐसे पुरुष मिलते हैं जो स्त्री बन गए हैं, और ऐसी स्त्रीयाँ जो पुरुष बन गई हैं—अच्छे कर्म और बुरे कर्म, और ऐसे प्राणी जो अपने सद्गुण या अवगुण के फल भोग रहे हैं;—हमें अंडों से, जल में, तलछट में, या मात्र आभास से जीवन में उत्पन्न होने वाले प्राणी मिलते हैं; बिना पैरों वाले जीव, दो पैरों वाले और चार पैरों वाले जीव, और अनेक पैरों वाले जीव;--हमें यक्ष, राक्षस, कुम्भंड, असुर, दानव, गंधर्व, पेट, पिशाच, किन्नर, महोरग, नाग, सुपन्न, और जादूगर और तांत्रिक मिलते हैं;--हाथी, घोड़े, गाय, भैंस, ऊंट, गधे, बकरी, भेड़, हिरण, सूअर, शेर, बाघ, तेंदुए, भालू, भेड़िये, लकड़बग्घे, कुत्ते, सियार, और अनेक प्रकार के पक्षी हैं;--सोना, चांदी, मोती, और

हीरा, चौक, चट्टान, मूंगा, माणिक, मसारा पत्थर, कैट्स-आई, क्रिस्टल, क्वाट्र्ज, लौह अयस्क, तांबा, पीतल और कांसा; अलसी, रेशम, कपास, भांग और ऊन; चावल, धान, जौ, बाजरा, कुद्रूस, सेम, गेहूं, तिलहन और वेच; जड़ों, रस, गूदे, छाल, पत्तियों, फूलों, फलों और अन्य सभी प्रकार की चीजों से बने इत्र; घास, लताएँ, झाड़ियाँ, पेड़, औषधीय जड़ी-बूटियाँ, जंगल, नदियाँ, पहाड़, समुद्र, मछलियाँ और कछुए - सब कुछ संसार में है। महोदय, मुझे बताइए, फिर ऐसा क्या है जो संसार में नहीं है?

12. 'हे राजा, तीन ऐसी चीजें हैं जो आपको संसार में नहीं मिलेंगी। और वे तीन चीजें क्या हैं? वह जो चाहे चेतन हो या अचेतन, क्षय और मृत्यु के अधीन नहीं है—वह आपको नहीं मिलेगी। किसी भी चीज (जैविक या अजैविक) का वह गुण जो क्षणभंगुर नहीं है—वह आपको नहीं मिलेगा। और उच्चतम अर्थ में, अस्तित्व से युक्त होने जैसी कोई चीज नहीं है।'

'बहुत बढ़िया, नागसेना! यह सच है, और मैं इसे आपके कहे अनुसार स्वीकार करता हूँ।'

[यहाँ दुनिया में क्या नहीं है, इस पहेली का अंत होता है।]

[पैंसठवीं दुविधा। बिना कारण की बातें।]

13. 'आदरणीय नागसेना, संसार में ऐसे प्राणी पाए जाते हैं जो कर्म के फलस्वरूप अस्तित्व में आए हैं, कुछ कारण के परिणाम स्वरूप हैं, और कुछ ऋतुओं के द्वारा उत्पन्न हुए हैं। मुझे बताइए—क्या ऐसा कोई प्राणी है जो इन तीनों श्रेणियों में से किसी एक के अंतर्गत न आता हो?'

'हे महाराज, ऐसी दो चीजें हैं। और वे दो क्या हैं? हे महाराज, आकाश और निर्वाण।'

'हे नागसेन, विजेताओं के वचन को विकृत मत करो, और बिना जाने किसी प्रश्न का उत्तर मत दो!'

'हे राजा, मैंने ऐसा क्या कहा है कि आप मुझसे इस प्रकार बात कर रहे हैं?'

आदरणीय नागसेना, आपने अंतरिक्ष के संबंध में जो कहा वह बिल्कुल सही है। लेकिन इसके सैकड़ों कारण हैं।

क्या भगवान बुद्ध ने अपने शिष्यों को निर्वाण प्राप्ति का मार्ग बताया था? और फिर भी आप कहते हैं कि निर्वाण किसी कारण का परिणाम नहीं है!

'हे राजा, निःसंदेह भगवान बुद्ध ने हमें निर्वाण प्राप्ति के मार्ग पर चलने के सैकड़ों कारण बताए। लेकिन उन्होंने कभी भी उस कारण का उल्लेख नहीं किया जिससे निर्वाण उत्पन्न हो सके।'

14. 'अब, नागसेन, हम इस विषय में अंधकार से और भी गहरे अंधकार में, जंगल से घने जंगल में, झाड़ी से और भी गहरी झाड़ी में प्रवेश कर चुके हैं—क्योंकि आप कहते हैं कि निर्वाण की प्राप्ति का कारण तो है, पर वह कारण नहीं जिससे निर्वाण उत्पन्न हो सके। नागसेन, यदि निर्वाण की प्राप्ति का कोई कारण है, तो हमें निर्वाण की उत्पत्ति का कारण भी अवश्य खोजना चाहिए।' नागसेन, जिस प्रकार पुत्र का पिता होता है, उसी प्रकार यह मानना उचित है कि उस पिता का भी पिता रहा होगा—या शिष्य का गुरु होता है, उसी प्रकार यह मानना उचित है कि उस गुरु का भी गुरु रहा होगा—या पौधा बीज से उत्पन्न हुआ है, उसी प्रकार यह मानना उचित है कि बीज भी बीज से ही उत्पन्न हुआ होगा—ठीक उसी प्रकार, नागसेन, यदि निर्वाण की प्राप्ति का कोई कारण है, तो उसकी उत्पत्ति का भी कोई कारण अवश्य होगा—जैसे यदि हम किसी वृक्ष या लता का शीर्ष भाग देखें, तो हम यह निष्कर्ष निकालेंगे कि उसका मध्य भाग और जड़ भी है।

'हे राजा, निर्वाण अउत्पादक है, और इसके उद्भव का कोई कारण नहीं बताया गया है।'

'अब बताओ, नागसेना, मुझे इसका कारण बताओ। तर्क से मुझे समझाओ, ताकि मैं जान सकूँ कि कैसे।'

यह इस प्रकार है कि यद्यपि निर्वाण की प्राप्ति का एक कारण अवश्य है, परन्तु निर्वाण की प्राप्ति का कोई कारण अवश्य नहीं है।

15. 'तो, हे महाराज, ध्यान से सुनिए, और मैं आपको इसका कारण बताता हूँ। क्या कोई मनुष्य, हे महाराज, अपनी साधारण शक्ति से यहाँ से पर्वतों के राजा हिमालय तक जा सकता है?'

'जी हां, महोदय, वह कर सकता है।'

लेकिन क्या कोई मनुष्य अपनी साधारण शक्ति से हिमालय पर्वतमाला को यहाँ ला सकता है?

'बिल्कुल नहीं, महोदय।'

तो फिर, क्या निर्वाण की प्राप्ति का कारण तो बताया जा सकता है, पर उसकी उत्पत्ति का कारण नहीं। और हे राजा, क्या कोई मनुष्य अपनी साधारण शक्ति से विशाल सागर को पार करके उसके दूसरे किनारे तक जा सकता है?

'जी हां, महोदय, वह कर सकता है।'

लेकिन क्या कोई मनुष्य अपनी साधारण शक्ति से समुद्र के उस पार के किनारे को यहाँ ला सकता है?

'बिल्कुल नहीं, महोदय।'

'अच्छा! तो बात यह है कि निर्वाण की प्राप्ति का कारण तो बताया जा सकता है, लेकिन उसकी उत्पत्ति का कारण नहीं बताया जा सकता। और क्यों नहीं? क्योंकि निर्वाण किसी भी गुण से मिलकर नहीं बना है।'

16. 'क्या, महोदय! क्या यह जुड़ा हुआ नहीं है?'

नहीं, हे महाराज। यह अविभाज्य है, किसी भी चीज से बना नहीं है। हे महाराज, निर्वाण के बारे में यह नहीं कहा जा सकता कि यह उत्पन्न हुआ है, या उत्पन्न नहीं हुआ है, या उत्पन्न किया जा सकता है, कि यह भूतकाल है, भविष्यकाल है या वर्तमान काल है, कि यह आंख, कान, नाक, जीभ या स्पर्श इंद्रिय द्वारा अनुभव किया जा सकता है।

लेकिन अगर ऐसा है, नागसेना, तो आप सिर्फ दिखावा कर रहे हैं।

हमें यह बताएं कि निर्वाण एक ऐसी अवस्था है जिसका कोई अस्तित्व नहीं है। निर्वाण जैसी कोई चीज हो ही नहीं सकती।

'हे महाराज, निर्वाण विद्यमान है। और यह मन द्वारा प्रत्यक्ष है। अपने शुद्ध, परिष्कृत और निर्मल हृदय से, बाधाओं से मुक्त, नीच इच्छाओं से मुक्त, वह शिष्य जिसने पूर्ण रूप से निर्वाण प्राप्त कर लिया है, निर्वाण को देख सकता है।'

17. 'तो फिर, महोदय, निर्वाण क्या है? मेरा तात्पर्य ऐसे निर्वाण से है जिसे उपमाओं द्वारा समझाया जा सके। मुझे तर्क से समझाइए कि इसके अस्तित्व को उपमाओं द्वारा किस हद तक समझाया जा सकता है।'

'हे राजा, क्या हवा जैसी कोई चीज होती है?'

'हाँ बिल्कुल।'

'हे राजा, मैं आपसे विनती करता हूँ, मुझे वह दिखाइए—चाहे उसके रंग से, या उसके आकार से, चाहे वह पतला हो या मोटा, या छोटा हो या लंबा!'

लेकिन हे नागसेन, हवा को उस तरह से इंगित नहीं किया जा सकता। यह ऐसी प्रकृति की नहीं है कि इसे हाथ में लिया जा सके या निचोड़ा जा सके। लेकिन यह फिर भी विद्यमान है।

'अगर तुम मुझे हवा नहीं दिखा सकते, तो ऐसी कोई चीज हो ही नहीं सकती।'

लेकिन मुझे पता है, नागसेना। वह हवा

मुझे पूरा यकीन है कि वह मौजूद है, हालांकि मैं इसे आपको दिखा नहीं सकता।

'अच्छा! हे राजा, निर्वाण भी ठीक इसी प्रकार विद्यमान है, यद्यपि इसे आपको रंग या रूप में नहीं दिखाया जा सकता।'

'बहुत बढ़िया, नागसेना! यह सच है, और मैं इसे आपके कहे अनुसार स्वीकार करता हूँ।'

[निर्वाण को लेकर दुविधा यहीं समाप्त होती है।]

[छियासठवीं दुविधा। उत्पादन के तरीके।]

18. 'आदरणीय नागसेन, इस संदर्भ में जिन्हें "कर्म-जनित", "कारण-जनित" और "ऋतु-जनित" कहा जाता है, वे कौन हैं? और वह क्या है जो इनमें से कोई नहीं है?'

हे राजा, सभी सचेत प्राणी कर्म से उत्पन्न होते हैं (कर्म के फलस्वरूप अस्तित्व में आते हैं)। अग्नि और बीजों से उत्पन्न होने वाली सभी वस्तुएँ कारण से उत्पन्न होती हैं (पूर्व-प्रसिद्ध भौतिक कारण का परिणाम)। पृथ्वी, पहाड़, जल और वायु—ये सभी ऋतुओं से उत्पन्न होते हैं (इनका अस्तित्व मौसम से संबंधित कारणों पर निर्भर करता है)। आकाश और निर्वाण कर्म और कारण दोनों से स्वतंत्र रूप से विद्यमान हैं।

और ऋतुओं के अनुसार। हे राजा, निर्वाण के बारे में यह नहीं कहा जा सकता कि यह कर्म से उत्पन्न है, कारण से उत्पन्न है या ऋतुओं से उत्पन्न है; कि यह हो चुका है, नहीं हुआ है या उत्पन्न किया जा सकता है, कि यह भूतकाल है, भविष्यकाल है या वर्तमान काल है, कि यह आँख, नाक, कान, जीभ या स्पर्श इंद्रिय से प्रत्यक्ष है। परन्तु हे राजा, यह मन से प्रत्यक्ष है। अपने शुद्ध, परिष्कृत और निर्मल हृदय से, जो बाधाओं से मुक्त है, नीच इच्छाओं से मुक्त है, वह शिष्य जो पूर्णतः निर्वाण प्राप्त कर चुका है, निर्वाण को देख सकता है।

'हे पूज्य नागसेना, इस रमणीय पहेली का भली-भांति विश्लेषण किया गया है, संदेह दूर किए गए हैं और निश्चितता प्राप्त की गई है। हे विद्यालयों के सर्वोत्कृष्ट नेता, आपसे परामर्श लेते ही मेरी उलझन का समाधान हो गया!'

[उत्पादन के तरीकों को लेकर दुविधा यहीं समाप्त होती है।]

[सठवीं दुविधा। मृत राक्षस।]

19. 'आदरणीय नागसेन, क्या संसार में यक्खा (राक्षस) जैसी कोई वस्तु होती है?'

'जी हां, हे राजा।'

क्या वे कभी उस स्थिति से बाहर निकल पाते हैं (अस्तित्व के उस चरण से बाहर आ पाते हैं)?

'हाँ वे करते हैं।'

लेकिन अगर ऐसा है, तो उन मृत यक्खों के अवशेष कभी क्यों नहीं मिलते, और न ही उनके शवों की कोई गंध आती है?

'हे महाराज, उनके अवशेष मिले हैं और उनके मृत शरीरों से दुर्गंध आ रही है। दुष्ट यक्षों के अवशेष निम्न रूप में देखे जा सकते हैं।'

कीड़े, भृंग, चींटियाँ, पतंगे, साँप, बिच्छू, कनखजूरे, पक्षी और जंगली जानवर।

'हे नागसेन, तुम्हारे जैसे बुद्धिमान के सिवा और कौन इस पहेली को सुलझा सकता था!'

[मृत राक्षसों के बारे में दुविधा यहीं समाप्त होती है।]

[अड़ियलपन की अड़सठवीं समस्या। नियमों को लागू करने की विधि।]

20. आदरणीय नागसेन, बीते समय में चिकित्सकों के जो गुरु थे—नारद, धम्मंतरी, अंगीरस, कपिल, कंदराग्गिसाम, अतुल और पुब्बा कक्कायन—ये सभी गुरु रोग की उत्पत्ति, उसके कारण, प्रकृति, प्रगति, उपचार, इलाज और प्रबंधन को भली-भांति और बिना किसी चूक के स्वयं जानते हुए—इनमें से प्रत्येक ने समय का सदुपयोग करते हुए, यह बताते हुए कि अमुक शरीर में अमुक रोग उत्पन्न होगा, अपना-अपना ग्रंथ एक साथ रचा। अब इनमें से किसी ने भी

तथागत सर्वज्ञ थे। तो फिर, सर्वज्ञ तथागत, जो बुद्ध के ज्ञान से भविष्य में होने वाली घटनाओं को भलीभांति जानते थे और पहले से ही यह निर्धारित कर चुके थे कि अमुक अवसर पर अमुक नियम की आवश्यकता होगी, उन्होंने संपूर्ण नियम संहिता एक साथ क्यों नहीं

बनाई? इसके बजाय, उन्होंने समय-समय पर, जब भी कोई कुकर्म का कलंक चारों ओर फैल चुका था, जब बुराई व्यापक रूप से फैल चुकी थी और बढ़ गई थी, जब लोग आक्रोश से भरे हुए थे, तब उन्होंने अपने शिष्यों को नियम संहिता क्यों बताई?

21. हे राजा, तथागत भली-भांति जानते थे कि समय आने पर उन सभी डेढ़ सौ नियमों को उन लोगों को बताना पड़ेगा। परन्तु तथागत ने ऐसा सोचा: "यदि मैं एक साथ ही सभी डेढ़ सौ नियम बता दूँ तो लोग भयभीत हो जाएँगे, और जो संघ में प्रवेश करना चाहते हैं वे यह कहकर पीछे हट जाएँगे, 'यहाँ कितना कुछ पालन करना है! समना गौतम की पद्धति के अनुसार धर्म में प्रवेश करना कितना कठिन है' — वे मेरे वचनों पर विश्वास नहीं करेंगे, और विश्वास की कमी के कारण वे दुःखमय जन्मों के लिए उत्तरदायी होंगे। अतः जब भी अवसर आएगा, धार्मिक प्रवचन द्वारा उसका उदाहरण देते हुए, जब बुराई स्पष्ट हो जाएगी, मैं प्रत्येक नियम बताऊँगा।"

नागसेन, बुद्धों में एक अद्भुत बात है, और तथागत की सर्वज्ञता का इतना महान होना अत्यंत आश्चर्यजनक है। यह बिल्कुल सच है।

आदरणीय नागसेन। तथागत इस बात को भली-भांति समझते थे कि इतनी सारी बातों का पालन करने की बात सुनकर लोग इतने भयभीत हो जाते कि उनमें से एक भी व्यक्ति विजयकर्ताओं की पद्धति के अनुसार धर्म का पालन नहीं करता। यह सत्य है, और मैं इसे आपकी बात से स्वीकार करता हूँ।

[नियमों को निर्धारित करने की विधि को लेकर दुविधा यहीं समाप्त होती है।]

[दुविधा: उनसठवीं। सूर्य की ऊष्मा]

22. 'आदरणीय नागसेना, क्या यह सूर्य हमेशा प्रचंड रूप से जलता है, या ऐसे भी समय होते हैं जब यह कम ताप के साथ चमकता है?'

'हे राजा, यह हमेशा भयंकर रूप से जलता है, कभी धीरे से नहीं।'

लेकिन अगर ऐसा है, तो ऐसा कैसे होता है कि सूर्य की गर्मी कभी तीव्र होती है और कभी नहीं?

23. हे महाराज, सूर्य में चार प्रकार की गड़बड़ियाँ होती हैं, और इनमें से किसी एक के कारण उसकी ऊष्मा कम हो जाती है। वे चार क्या हैं? हे महाराज, बादल, कोहरा, और...

धुंआ और ग्रहण—ये चार प्रकार की गड़बड़ियां हैं जो सूर्य में घटित होती हैं, और जब सूर्य इनमें से किसी एक से प्रभावित होता है तभी उसकी ऊष्मा कम हो जाती है।

'हे नागसेन, यह अत्यंत अद्भुत और विचित्र है कि महिमा में इतना महान सूर्य भी विक्षिप्त हो सकता है—अन्य तुच्छ प्राणियों की तुलना में यह कितना अधिक विक्षिप्त होगा। आपके जैसे बुद्धिमान के सिवा कोई और इसकी व्याख्या नहीं कर सकता था!'

[सूर्य की ऊष्मा को लेकर दुविधा यहीं समाप्त होती है।]

[सत्तरवीं दुविधा। ऋतुएँ।]

24. 'आदरणीय नागसेना, ऐसा क्यों है कि सूर्य की गर्मी गर्मियों की तुलना में सर्दियों में अधिक तीव्र होती है?'

हे राजा, ग्रीष्म ऋतु में धूल उड़कर बादलों में समा जाती है, हवाओं से परागकण आकाश में उठ खड़े होते हैं, बादल आसमान में बढ़ जाते हैं और आंधी ज़ोरों से चलती है। ये सब मिलकर सूर्य की किरणों को रोक देते हैं, जिससे ग्रीष्म ऋतु में सूर्य की गर्मी कम हो जाती है। परन्तु हे राजा, शीत ऋतु में धरती शांत रहती है और ऊपर वर्षा होती रहती है।

जब सब कुछ शांत होता है, तो धूल शांत हो जाती है, परागकण हवा में धीरे-धीरे विचरण करते हैं, आकाश बादलों से मुक्त होता है, और हवाएँ बहुत धीमी गति से बहती हैं। इन सभी के निष्क्रिय हो जाने से सूर्य की किरणें स्पष्ट हो जाती हैं, और हर अवरोध से मुक्त होकर सूर्य की ऊष्मा प्रज्वलित और तीव्र हो जाती है। हे राजा, यही कारण है कि सूर्य की ऊष्मा ग्रीष्म ऋतु की तुलना में शीत ऋतु में अधिक तीव्र होती है।

'इसलिए जब सूर्य अपने चारों ओर मौजूद बाधाओं से मुक्त हो जाता है, तभी वह प्रचंड रूप से चमकता है, जो वह बारिश आदि की उपस्थिति में नहीं कर सकता।'

['बहुत अच्छा, नागसेना! यह सच है, और मैं इसे आपके कहे अनुसार स्वीकार करता हूँ।']

[यहाँ ऋतुओं की दुविधा समाप्त होती है।]

सातवां अध्याय यहीं समाप्त होता है।
टिपिटका >> सुत्त पिटक >> खुद्दक निकाय >> मिलिंदपन्हा >> पुस्तक IV। दुविधाओं का समाधान - अध्याय 8

अनुवादक: टी.डब्ल्यू. राइस डेविड्स

पिछला <<<<-----||-16-||----->>>> अगला

1. 'आदरणीय नागसेना, क्या सभी बोधिसात अपनी पत्नियों और बच्चों को त्याग देते हैं, या ऐसा करने वाला केवल राजा वेसंतारा ही था?'

'वे सभी ऐसा करते हैं, केवल वेसंतारा ही नहीं।'

'तो क्या वे फिर अपनी सहमति से उन्हें दे देते हैं?'

'हे राजा, पत्नी तो सहमत थी। परन्तु बच्चे अपनी कम उम्र के कारण विलाप कर रहे थे। यदि वे पूरी तरह समझ गए होते, तो वे भी सहमत हो जाते।'

नागसेन, बोधिसात ने जो किया वह बड़ा कठोर था, क्योंकि उसने अपने इकलौते, प्रिय बच्चों को ब्राह्मण की गुलामी में सौंप दिया। और दूसरा कार्य तो उससे भी अधिक कठोर था, क्योंकि उसने अपने इकलौते, प्रिय बच्चों को, जो छोटे और कोमल थे, जंगल की रस्सी से बांध दिया, और फिर जब उसने ब्राह्मण को उन्हें घसीटते देखा, तो उनके हाथ

लता से घायल होने के बावजूद, वह उस दृश्य को देख सका। और यह तीसरा कार्य तो और भी कठिन था, कि जब उसका बेटा अपने प्रयासों से बंधन खोलकर उसके पास वापस भागा, तो उसने उसे फिर से जंगल की रस्सी से बांध दिया और उसे फिर से सौंप दिया। और यह चौथा कार्य तो और भी कठिन था, कि जब बच्चे रोते हुए चिल्लाए, "प्यारे पिता, यह राक्षस हमें खाने के लिए ले जा रहा है!" तो उसे उन्हें यह कहकर शांत करना चाहिए था, "डरो मत।" और यह पाँचवाँ कार्य तो और भी कठिन था, कि जब राजकुमार गाली रोते हुए उसके चरणों में गिर पड़ा और उससे विनती करते हुए कहा, "कृपा करके शांत हो जाइए, प्यारे पिता, केवल कन्हागिना (मेरी छोटी बहन) को रख लीजिए। मैं राक्षस के साथ चला जाऊँगा। उसे मुझे खाने दीजिए!" - तब भी वह नहीं माना। और यह छठा कार्य तो और भी कठिन था, कि जब बालक गाली विलाप करते हुए बोला, "क्या आपका हृदय पत्थर का है, पिता, कि आप हमें इस दयनीय स्थिति में राक्षस द्वारा घने और भयावह जंगल में ले जाते हुए देख रहे हैं और हमें वापस नहीं बुला रहे?" - तब भी उन्हें हम पर कोई दया नहीं आई। और यह सातवां कार्य तो और भी कठिन था, कि जब उनके बच्चों को इस प्रकार अज्ञात भयावहता की ओर ले जाया गया, जब तक कि वे धीरे-धीरे अपनी दुखद नियति की ओर, उनकी आँखों से ओझल नहीं हो गए - तब भी उनका हृदय नहीं टूटा, पूरी तरह से नहीं टूटा! जो व्यक्ति पुण्य कमाना चाहता है, उसे दूसरों को दुख पहुँचाने से क्या लेना-देना है! क्या उसे स्वयं को बलिदान नहीं कर देना चाहिए?'

2. 'ऐसा इसलिए है क्योंकि हे राजा, उसने जो किया वह इतना गंभीर था।

यह बात समझ से परे है कि बोधिसात की प्रसिद्धि दस हजार लोकों में देवताओं और मनुष्यों के बीच फैल गई थी—कि देवता स्वर्ग में उनका आदर करते हैं; टाइटन अपने लोक में, गरुड़ अपने निवास स्थानों में, नाग अपने नाग लोक में और यक्ष जहाँ वे निवास करते हैं—कि युगों-युगों से उनकी इस महिमा का गुणगान परंपरा के माध्यम से होता आया है—यहाँ तक कि आज यह हमारी इस सभा तक भी पहुँच गया है, जहाँ हम सब बैठे-बैठे उस दान की निंदा और निंदा कर रहे हैं, और इस बात पर बहस कर रहे हैं कि वह दान उचित था या अनुचित! परन्तु हे राजा, यह उच्च प्रशंसा बुद्धिमान, बुद्धिमान, सक्षम और सूक्ष्म बुद्धि वाले बोधिसात के दस महान गुणों को प्रकट

करती है। और वे दस गुण क्या हैं? लोभ से मुक्ति, सांसारिक लक्ष्यों से आसक्ति न रखना, आत्म-बलिदान, त्याग, निम्नतम अवस्था में कभी वापस न लौटना, समान कोमलता और महानता, बोधगम्यता, दुर्लभता और बुद्धत्व की अद्वितीयता। इन्हीं सभी पहलुओं में उस दान की प्रसिद्धि बोदिसातों के महान गुणों को प्रकट करती है।

3. 'हे पूज्य नागसेन, क्या? जो व्यक्ति इस प्रकार दान देता है जिससे दूसरों को दुःख होता है—क्या उसका वह दान सुखदायी फल देता है, क्या वह आनंदमय पुनर्जन्म की ओर ले जाता है?'

'जी हां, हे राजा। इसके विपरीत क्या कहा जा सकता है?'

'हे नागसेना, मैं आपसे प्रार्थना करता हूँ, मुझे इसका कारण बताइए।'

'मान लीजिए, हे राजा, कोई गुणी समना या ब्राह्मण हो, जो उच्च चरित्र का हो, और वह...'

मान लीजिए कोई व्यक्ति लकवाग्रस्त, अपंग या किसी अन्य बीमारी से पीड़ित है, और पुण्य की इच्छा रखने वाला कोई व्यक्ति उसे रथ में बिठाकर उसके इच्छित स्थान पर ले जाए। क्या इससे उस व्यक्ति को सुख प्राप्त होगा? क्या यह कार्य आनंदमय पुनर्जन्म की ओर ले जाएगा?

'जी हाँ, महोदय। इसके विपरीत क्या कहा जा सकता है? इससे मनुष्य को प्रशिक्षित हाथी, सवारी का घोड़ा या बैलगाड़ी, भूमि पर वाहन और जल पर जलयान, स्वर्ग में देवताओं का वाहन और पृथ्वी पर मनुष्यों द्वारा उपयोग किया जाने वाला वाहन प्राप्त होगा; जन्म-जन्मांतर तक उसे वह सब प्राप्त होता रहेगा जो प्रत्येक जन्म के लिए उपयुक्त और उचित होगा; उसे उचित आनंद प्राप्त होंगे; वह आनंद की विभिन्न अवस्थाओं में प्रवेश करेगा; और उस कर्म के फलस्वरूप इद्धि के वाहन पर सवार होकर वह अपने प्रतीक्षित लक्ष्य, निर्वाण नगर तक पहुँच जाएगा।'

लेकिन फिर, हे राजा, जो उपहार दूसरों को दुःख पहुँचाने के लिए दिया जाता है, वह सुख का फल देता है, आनंद की अवस्थाओं में पुनर्जन्म की ओर ले जाता है, क्योंकि वह व्यक्ति बैलगाड़ी को पीड़ा देकर ऐसा आनंद प्राप्त करता है।

4. हे राजा, इसी बात का एक और कारण सुनो। मान लो कि कोई राजा अपनी प्रजा से उचित कर वसूले और फिर आदेश द्वारा उसके बदले कोई उपहार दे, तो क्या हे राजा, उस कर से उस राजा को कोई सुख प्राप्त होगा? क्या वह उपहार आनंदमय पुनर्जन्म की ओर ले जाएगा?

'निश्चित रूप से, महोदय। इसमें क्या आपत्ति हो सकती है? इस कारण से सम्राट को एक लाख गुना लाभ प्राप्त होगा, वह राजाओं का राजा, देवताओं का स्वामी, ब्रह्मा देवताओं का स्वामी, समनों का प्रमुख, ब्राह्मणों का नेता या अरहतों में श्रेष्ठ बन सकता है।'

'तो, हे राजा, जो दान दूसरों को दुःख पहुँचाने के लिए दिया जाता है, वह सुख का फल देता है, आनंदमय पुनर्जन्म की ओर ले जाता है—क्योंकि वह राजा अपने लोगों पर कर लगाकर जो धन अर्जित करता है, उसे दान के रूप में देकर अत्यधिक प्रसिद्धि और गौरव प्राप्त करता है।'

5. "परन्तु, आदरणीय नागसेन, राजा वेसंतारा द्वारा दिया गया दान अत्यधिक था; क्योंकि उसने अपनी पत्नी को दूसरे पुरुष को दे दिया, और अपने इकलौते बच्चों को एक ब्राह्मण को दासी बना दिया। और संसार में बुद्धिमान लोग अत्यधिक दान को निंदा और दोषारोपण के योग्य मानते हैं।" हे नागसेन, ठीक वैसे ही जैसे अधिक भार के कारण गाड़ी का धुरा टूट जाता है, या जहाज डूब जाता है, जैसे अधिक खाने वाले को भोजन से परेशानी होती है, या अत्यधिक वर्षा से फसलें बर्बाद हो जाती हैं, या अत्यधिक उदारता के कारण दिवालियापन हो जाता है, या अत्यधिक गर्मी से बुखार आ जाता है, या अत्यधिक कामवासना से मनुष्य पागल हो जाता है, या अत्यधिक क्रोध के कारण अपराध का दोषी हो जाता है, या अत्यधिक मूर्खता के कारण पाप में पड़ जाता है, या अत्यधिक लालच के कारण लुटेरों के चंगुल में फंस जाता है, या अनावश्यक भय के कारण बर्बाद हो जाता है, या जैसे अत्यधिक प्रवाह के कारण नदी उफान पर आ जाती है, या अत्यधिक हवा के कारण बिजली गिर जाती है, या अत्यधिक गर्म आग पर दलिया उबल कर बाहर गिर जाता है, या भटकने वाला मनुष्य...

बहुत अधिक दान करने से जीवन लंबा नहीं होता—ठीक वैसे ही, नागसेन, संसार में बुद्धिमान लोग अत्यधिक दान को निंदा और दोष के योग्य मानते हैं। और राजा वेसंतारा का दान अत्यधिक था, इसलिए उससे कोई अच्छा परिणाम अपेक्षित नहीं था।

6. 'हे राजा, अत्यधिक दान देना संसार के बुद्धिमानों द्वारा प्रशंसित, सराहा और स्वीकृत किया जाता है; और जो लोग अपनी इच्छा अनुसार कुछ भी दान कर देते हैं, वे संसार में अत्यंत उदार दाताओं के रूप में प्रसिद्धि प्राप्त करते हैं।' हे राजा, ठीक उसी प्रकार जैसे कोई व्यक्ति किसी ऐसी जंगली जड़ को पकड़ लेता है जो अपने असाधारण गुणों के कारण दिव्य होती है, उस क्षण वह अपने आस-पास खड़े लोगों के लिए भी अदृश्य हो जाता है—ठीक उसी प्रकार जैसे कोई औषधीय जड़ी बूटी अपनी असाधारण शक्ति से दर्द को पूरी तरह से दूर कर देती है और रोग का अंत कर देती है—ठीक उसी प्रकार जैसे आग अपनी अत्यधिक गर्मी से जलाती है और पानी अपनी अत्यधिक ठंड से उस आग को बुझा देता है—ठीक उसी प्रकार जैसे अपनी अत्यधिक पवित्रता के कारण कमल पानी या कीचड़ से अछूता रहता है—ठीक उसी प्रकार जैसे कोई (जादुई) रत्न अपने अंतर्निहित असाधारण गुण के कारण हर इच्छा की पूर्ति करता है—ठीक उसी प्रकार जैसे बिजली अपनी अद्भुत तीव्र गति से हीरे, मोती और क्रिस्टल को भी चीर देती है—ठीक उसी प्रकार जैसे पृथ्वी अपने विशाल आकार के कारण मनुष्यों, साँपों, जंगली जानवरों, पक्षियों और जल को धारण कर सकती है।

चट्टानें, पहाड़ियाँ और पेड़—जैसे सागर अपनी विशालता के कारण कभी पूर्ण रूप से भरा नहीं जा सकता—जैसे सिंह अपने भारी भार के कारण अचल रहता है, और अंतरिक्ष अपने विशाल विस्तार के कारण अनंत है, और सूर्य अपनी अपार महिमा से अंधकार को दूर करता है—जैसे सिंह अपने वंश की महानता के कारण भयमुक्त रहता है—जैसे पहलवान अपनी शक्ति के बल पर आसानी से अपने शत्रु को उठा लेता है—जैसे राजा अपने न्याय की श्रेष्ठता के कारण सर्वोपरि हो जाता है, और भिक्षु अपने धर्मपरायणता के कारण नागों, यक्षों, मनुष्यों और मारों के लिए आदर का पात्र बन जाता है—जैसे बुद्ध अपनी सर्वोच्चता की श्रेष्ठता के कारण अद्वितीय होते हैं—ठीक उसी प्रकार, हे राजा, अत्यधिक उदारता की संसार में ज्ञानियों द्वारा प्रशंसा, सराहना और स्वीकृति की जाती है; और जो लोग किसी भी वस्तु को दान के रूप में देते हैं, जैसे ही उन्हें वह विचार आता है, वे संसार में महान उदारता के रूप में ख्याति प्राप्त करते हैं। और हे राजा, अपने अपार दान के कारण राजा वेसंतारा की प्रशंसा हुई, उनका गुणगान हुआ, उन्हें ऊंचा स्थान मिला, उनकी महिमा हुई और वे दस हजार विश्व प्रणालियों में प्रसिद्ध हुए, और उसी अपार दान के कारण राजा वेसंतारा आज हमारे समय में बुद्ध, देवताओं और मनुष्यों के प्रमुख बन गए हैं।

7. 'और अब, हे राजा, मुझे बताइए—क्या संसार में ऐसी कोई वस्तु है जिसे उपहार के रूप में देने से रोक दिया जाए, और न दिया जाए, जबकि उपहार के योग्य कोई व्यक्ति, जिसे देना हमारा कर्तव्य है, मौजूद हो?'

नागसेन, संसार में दस प्रकार के उपहार हैं जिन्हें सामान्यतः दान के रूप में देना अनुचित माना जाता है। वे दस क्या हैं? नागसेन, मादक पेय, ऊंचे स्थानों पर आयोजित उत्सव, स्त्रियां, भैंसें, मोहक चित्र, शस्त्र, विष, जंजीरें, मुर्गे, सूअर और गलत बाट-माप। नागसेन, ये सभी संसार में दान के रूप में अनुचित माने जाते हैं, और ऐसे उपहार देने वाले दुःखपूर्ण जन्मों के लिए उत्तरदायी होते हैं।

'मैंने आपसे यह नहीं पूछा, हे महाराज, कि किस प्रकार के उपहार अस्वीकार्य हैं। बल्कि, हे महाराज, मैंने यह पूछा: "क्या संसार में ऐसी कोई वस्तु है जिसे रोककर रखना चाहिए, और उपहार के रूप में नहीं देना चाहिए, यदि कोई उपहार के योग्य व्यक्ति उपस्थित हो?"'

नहीं, महोदय। जब उनके हृदयों में आस्था जागृत होती है, तो कुछ लोग दान के योग्य लोगों को भोजन देते हैं, कुछ वस्त्र देते हैं, कुछ बिस्तर देते हैं, कुछ आवास देते हैं, कुछ चटाई या वस्त्र देते हैं, कुछ दासी या दासियाँ देते हैं, कुछ खेत या परिसर देते हैं, और कुछ दो पैरों वाले या चार पैरों वाले प्राणी देते हैं।

कुछ लोग सौ, हजार या एक लाख रुपये देते हैं, कुछ लोग अपना राज्य ही दे देते हैं, और कुछ लोग तो अपनी जान तक दे देते हैं।

लेकिन फिर, हे राजा, यदि कुछ लोग अपना प्राण तक दे देते हैं, तो आप दानदाताओं के राजा वेसंतारा पर, अपने पुत्र और पत्नी के पुण्य दान के लिए, इतनी क्रूरता से आक्रमण क्यों करते हैं? क्या संसार में कोई सामान्य प्रथा, कोई स्वीकृत रिवाज नहीं है, जिसके अनुसार ऋणग्रस्त या आजीविका खो चुके पिता के लिए अपने पुत्र को गिरवी रखना या बेचना जायज़ है?

'हां, ऐसा ही है।'

"तो इसी के अनुरूप, हे राजा, सर्वज्ञ ज्ञान प्राप्त न कर पाने के कारण व्यसंतारा ने उस आध्यात्मिक खजाने के लिए अपनी पत्नी और बच्चों को गिरवी रखकर बेच दिया। इस प्रकार उसने वही दान दिया जो अन्य लोगों ने दिया था, उसने वही किया जो अन्य लोगों ने किया था। तो फिर, हे राजा, आप दानदाताओं के राजा पर इतना कठोर प्रहार क्यों कर रहे हैं?"

8. 'आदरणीय नागसेना, मैं उन्हें दान देने के लिए दोषी नहीं ठहराता, बल्कि इसलिए दोषी ठहराता हूँ कि उन्होंने भिखारी के साथ वस्तु विनिमय नहीं किया, बल्कि अपनी पत्नी और बच्चों के बजाय स्वयं को ही दान कर दिया।'

'हे राजा, अगर कोई अपनी पत्नी और बच्चों को मांगे तो खुद को दे देना तो पापी का काम होगा। क्योंकि जो भी चीज मांगी जाए, वही देनी चाहिए। और यही भले लोगों का आचरण है। मान लीजिए, हे राजा, कोई व्यक्ति पानी मांगे, तो क्या भोजन लाने वाला कोई व्यक्ति उसकी इच्छा पूरी करेगा?'

'नहीं, महोदय। जिस व्यक्ति को वह चीज़ देनी चाहिए थी जिसे उसने पहले लाने के लिए कहा था, वह वही करता जो वह चाहता था।'

हे राजा, जब ब्राह्मण ने वेसंतारा राजा से उनकी पत्नी और संतानें माँगीं, तो उन्होंने अपनी पत्नी और संतानें दे दीं। हे राजा, यदि ब्राह्मण ने वेसंतारा का शरीर माँगा होता, तो वेसंतारा अपने शरीर को नहीं बचाते, न तो काँपते और न ही (स्वार्थ से) दूषित होते, बल्कि अपना शरीर त्याग देते। हे राजा, यदि कोई वेसंतारा राजा के पास आकर उनसे यह कहता, "मेरे दास बन जाइए," तो वे अपना शरीर त्याग देते और ऐसा करने में उन्हें कोई पीड़ा नहीं होती।

9. हे राजा, राजा वेसंतारा का जीवन एक अच्छी बात थी जिसे बहुतों ने आपस में बाँटा—जैसे पका हुआ मांस बहुतों में बाँटा जाता है, या जैसे फलों से लदे पेड़ को बहुत से भेड़-बकरियाँ आपस में बाँट लेती हैं।

पक्षियों। और ऐसा क्यों? क्योंकि उसने मन ही मन कहा था: "इस प्रकार कर्म करके मैं बुद्धत्व प्राप्त कर सकूँ।" हे राजा, जिस प्रकार धन की खोज में भटकता हुआ एक जरूरतमंद व्यक्ति बकरियों के रास्तों और डंडों से भरे जंगलों से होकर गुजरता है, और समुद्र और भूमि पर व्यापार करता है, वह अपने कर्म, वचन और विचार धन प्राप्ति में लगाता है—ठीक उसी प्रकार, हे राजा, दानदाताओं के राजा वेस्संतारा ने, जो बुद्धत्व के खजाने, सर्वज्ञ ज्ञान की प्राप्ति के लिए तरस रहे थे, भीख मांगने वाले किसी भी व्यक्ति को अपनी संपत्ति और अनाज, अपनी दासियाँ और दास, अपने सवारी के जानवर और रथ, अपनी सारी संपत्ति, अपनी पत्नी और बच्चे और स्वयं को अर्पित कर दिया, और इस प्रकार परम ज्ञान की खोज की। हे राजा, जिस प्रकार एक अधिकारी मुहर और उसके संरक्षण के पद के लिए उत्सुक होकर अपने घर की हर चीज - संपत्ति, अनाज, सोना और चांदी, सब कुछ - त्याग कर मुहर प्राप्त करने का प्रयास करता है, ठीक उसी प्रकार, हे राजा, दानदाताओं के राजा वेसंतारा ने अपने घर के अंदर और बाहर सब कुछ दान करके, यहां तक कि दूसरों के लिए अपना प्राण भी देकर, परम ज्ञान की खोज की।

10. और हे राजा, दानदाताओं के राजा वेसंतारा ने ऐसा सोचा: "उसे ठीक वही देकर, जो वह मांगता है, मैं उसकी सेवा कर पाऊंगा।"

ब्राह्मण को: और इसलिए उसने उसे अपनी पत्नी और बच्चों को दे दिया। हे राजा, उसने उन्हें नापसंदगी के कारण नहीं दिया, न ही इसलिए कि वह उन्हें और देखना नहीं चाहता था, न ही इसलिए कि वह उन्हें बोझ समझता था या सोचता था कि वह अब उनका भरण-पोषण नहीं कर सकता, न ही इसलिए कि उसे जो अप्रिय था उससे छुटकारा पाने की इच्छा से वह नाराज था—बल्कि इसलिए कि सर्वज्ञता का रत्न उसे प्रिय था, सर्वज्ञों की अंतर्दृष्टि के लिए, उसने वह गौरवशाली उपहार दिया—अतुलनीय, भव्य, अतुलनीय—जो उसे प्रिय था, अत्यंत प्रिय था, अपने जीवन के समान प्रिय था, अपने बच्चों और अपनी पत्नी को! क्योंकि हे राजा, भगवान बुद्ध ने, देवताओं के देव, करिया पिटक में कहा है:

"'यह मेरे प्यारे बच्चों के प्रति घृणा के कारण नहीं था, यह मेरी रानी, मद्दी, दिलों को वश में करने वाली, के प्रति घृणा के कारण नहीं था - ऐसा नहीं था कि मैंने उनसे कम प्यार किया - बल्कि बुद्धत्व के प्रति अधिक प्रेम के कारण, मैंने उन सभी का त्याग किया।"

हे राजा, उस समय वेसंतारा ने अपनी पत्नी और बच्चों को त्यागने के बाद, पत्तों की कुटिया में प्रवेश किया और वहाँ बैठ गया। उनके प्रति अत्यधिक प्रेम के कारण वह गहरे शोक में डूब गया, उसका हृदय प्रचंड हो गया, और गर्म साँसें इतनी अधिक निकलने लगीं कि नाक से भी बाहर नहीं निकल पा रही थीं, और उसकी आँखों से खून की बूँदों जैसे आँसू बहने लगे। हे राजा, इसी शोक में वेसंतारा ने ब्राह्मण को अपनी पत्नी और बच्चों को इस विचार से दिया कि उसका दान का नियम भंग न हो। हे राजा, इसके दो कारण थे। वे दो

कारण क्या थे? एक तो यह कि उसका दान का नियम भंग न हो; दूसरा यह कि ऐसा करने से उसके बच्चे, जो उसके साथ केवल जंगली जड़ों और फलों पर जीवन यापन करते-करते दुखी थे, अंततः अपने नए स्वामी द्वारा मुक्त हो जाएँगे। क्योंकि वेसंतारा जानता था, हे राजा, "कोई भी मेरे बच्चों को गुलाम बनाकर नहीं रख सकता। उनके दादा बच्चों को छुड़ा लेंगे, और इस प्रकार वे मेरे पास वापस आ जाएँगे।" ये दो कारण हैं जिनकी वजह से उसने अपने बच्चों को ब्राह्मण को सौंप दिया।

12. 'और हे राजा, वेसंतारा को यह भी पता था:

"यह ब्राह्मण बूढ़ा, जर्जर, उम्रदराज, दुर्बल और टूटा हुआ है, छड़ी के सहारे चलता है, उसके जीवन का अंत निकट है, उसका पुण्य नगण्य है, वह मेरे बच्चों की देखभाल करने में सक्षम नहीं होगा।"

दास।" हे राजा, क्या कोई मनुष्य अपनी साधारण शक्ति से चंद्रमा और सूर्य को पकड़ सकेगा?

वे कितने ही शक्तिशाली और बलिष्ठ क्यों न हों, उन्हें टोकरी या डिब्बे में रखकर, उनकी रोशनी से वंचित करके, प्लेटों की तरह इस्तेमाल करना?

'बिल्कुल नहीं, महोदय।'

'हे राजा, कोई भी वेसंतारा के बच्चों को, जो संसार के लिए महिमा में चंद्रमा और सूर्य के समान थे, अपने दासों के रूप में नहीं रख सकता था।'

13. हे राजा, इसी बात का एक और कारण सुनो। हे सर्वोपरि अधिपति के राजा, वह अद्भुत रत्न, जो चमकीला और सुंदर है, जिसके आठ पहलू इतनी खूबसूरती से तराशे गए हैं, जिसकी मोटाई चार हाथ है और जिसकी परिधि बैलगाड़ी के पहिये के केंद्र के बराबर है, उसे कोई भी व्यक्ति कपड़े में लपेटकर टोकरी में रखकर कैंची की धार तेज करने के लिए इस्तेमाल नहीं कर सकता। और न ही, हे राजा, कोई भी उसे अपने दासों, वेसंतारा के बच्चों की तरह, विश्व के महिमावान स्वामी के रत्नों के समान उपयोग में रख सकता है।

14. और हे राजा, एक और कारण सुनो। जैसे हाथी राजा उपोसथ, जो सौम्य और सुंदर था, आठ हाथ ऊँचा और नौ हाथ लंबा, जिसके शरीर पर तीन स्थानों पर मद के लक्षण थे, पूर्णतः सफेद, सात गुना दृढ़, उसे कोई भी कभी नहीं पा सकता था।

उन्हें तश्तरी या सूप से ढक कर नहीं रखा जा सकता था, उन्हें कभी भी बछड़े की तरह गौशाला में नहीं रखा जा सकता था, न ही उनका उपयोग बछड़े की तरह किया जा सकता था; ठीक उसी तरह, वेसंतारा के बच्चों को, जो संसार में हाथी राजा उपोसथ के समान थे, कोई भी अपने दास के रूप में उपयोग में नहीं रख सकता था।

15. 'और हे राजा, एक और कारण सुनो। हे राजा, जैसे विशाल सागर लंबाई और चौड़ाई में विशाल और गहरा है, जिसकी गहराई मापी नहीं जा सकती, जिसे पार करना कठिन है, जिसे नापना या ढकना असंभव है, और कोई भी उसे घेरकर एक नौका के रूप में उपयोग नहीं कर सकता, ठीक उसी प्रकार कोई भी वेसंतारा के बच्चों को, जो संसार में विशाल सागर के समान सम्मानित हैं, अपने दासों के समान उपयोग में नहीं रख सकता।

16. हे राजा, एक और कारण सुनो। जिस प्रकार हिमालय, पर्वतों का राजा, पाँच मील ऊँचा और तीन हज़ार मील परिधि वाला, अपनी अड़तालीस हज़ार चोटियों की श्रृंखलाओं के साथ, पाँच सौ नदियों का स्रोत, असंख्य शक्तिशाली प्राणियों का निवास स्थान, अनेक सुगंधों का उत्पादक, सैकड़ों जादुई औषधियों से समृद्ध, पृथ्वी के केंद्र में बादल की तरह ऊपर उठता हुआ दिखाई देता है; हे राजा, उसके समान कोई भी अपने दासों के रूप में वेस्संतारा के बच्चों को, विश्व में हिमालय, पर्वतों के राजा के समान सम्मानित नहीं रख सकता।

और हे राजा, एक और कारण सुनो। ठीक वैसे ही जैसे एक

पर्वत की चोटी पर जलती विशाल अग्नि रात के अंधेरे और अंधकार में भी दूर से दिखाई देती थी, राजा वेसंतारा मनुष्यों में इतने प्रसिद्ध थे कि कोई भी उनके पुत्रों को अपने दास के रूप में नहीं रख सकता था—क्योंकि जैसे हिमालय पर्वतों में नाग वृक्षों के फूल खिलने के समय, जब वसंत ऋतु की कोमल हवाएँ चलती हैं, तो फूलों की सुगंध दस या बारह मील तक फैल जाती है, वैसे ही राजा वेसंतारा की प्रसिद्धि दूर-दूर तक गूंजती थी, और उनके धर्म की मधुर सुगंध हजारों मील तक, यहाँ तक कि अकनित (सर्वोच्च) देवताओं के निवास

स्थानों तक पहुँचती थी, रास्ते में देवताओं और असुरों, गरुड़ों और गंधर्वों, यक्षों और राक्षसों, महोरगों और किन्नरों, और देवताओं के सम्राट इंद्र के निवास स्थानों से होकर गुजरती थी! इसलिए कोई भी अपने बच्चों को गुलाम बनाकर नहीं रख सकता था।

17. "हे राजा, युवा राजकुमार गाली को उसके पिता वेस्सन्तारा ने इन शब्दों में उपदेश दिया: 'हे बालक, जब तेरे दादा ब्राह्मण को धन देकर तुझे छुड़ाएँ, तो तुझे एक हजार औंस सोने में वापस खरीद लेना, और जब तेरी बहन कन्हागिना को छुड़ाएँ, तो उसे सौ दासियों, सौ दासियों, सौ हाथियों, सौ घोड़ों, सौ गायों, सौ भैंसों और सौ औंस सोने में वापस खरीद लेना। और हे बालक, यदि तेरे दादा आज्ञा से या बलपूर्वक, बिना कुछ दिए, तुझे ब्राह्मण के हाथों से छुड़ा लें, तो अपने दादा की बात न मानना, बल्कि ब्राह्मण के अधीन रहना।' ऐसा उपदेश देकर उन्होंने उसे विदा किया। और युवा गाली ने ऐसा ही किया, और जब उसके दादा ने उससे पूछा, तो उसने कहा:

"महोदय, मेरे पिता ने मुझे इस आदमी को सौंप दिया, जिसकी कीमत एक हजार औंस के बराबर थी; सौ हाथियों के बराबर, उन्होंने कन्हागिना नाम की लड़की को सौंप दिया।"

'हे नागसेन, यह पहेली तो भली-भांति सुलझ गई है, विधर्म का जाल भली-भांति टूट गया है, विरोधियों के तर्क पर विजय प्राप्त कर तुम्हारा अपना सिद्धांत सिद्ध हो गया है, और शास्त्रों के अक्षरशः पालन का कार्य भली-भांति संपन्न हुआ है।'

आपने इसके सार को इस प्रकार स्पष्ट कर दिया है! यह सच है, और मैं इसे आपके कहे अनुसार स्वीकार करता हूँ।'

[यहाँ वेसंतारा द्वारा अपनी पत्नी और बच्चों को उपहार में देने की दुविधा समाप्त होती है।]

[बहत्तरवीं दुविधा। प्रायश्चित।]

18. 'आदरणीय नागसेना, क्या सभी बोदिसात तपस्या की अवधि से गुजरे थे, या केवल गौतम?'

'हे महाराज, सभी ने नहीं, लेकिन गौतम ने किया।'

'आदरणीय नागसेना, यदि ऐसा है तो बोदिसात और बोदिसात में भेद करना उचित नहीं है।'

'हे महाराज, चार ऐसे विषय हैं जिनमें इतना अंतर है। वे चार विषय क्या हैं? एक तो उनके जन्मस्थान (परिवार) में अंतर है, दूसरा बुद्धों के उत्तराधिकार के प्रारंभ से बीते काल में उनके स्थान में अंतर है, और तीसरा यह है कि...

उनके व्यक्तिगत जीवनकाल की लंबाई में अंतर है, उनके व्यक्तिगत आकार में अंतर है। हे राजा, इन चार पहलुओं में बोधिसात और बोधिसात में अंतर है। लेकिन किसी भी बुद्ध में कोई अंतर नहीं है, जो शारीरिक सौंदर्य, चरित्र की अच्छाई, ध्यान और तर्क शक्ति, मोक्ष, मोक्ष के ज्ञान से उत्पन्न अंतर्दृष्टि आदि में समान हैं।

विश्वास के चार आधार, तथागत की दस शक्तियों में, छह प्रकार की विशेष शक्तियों में

ज्ञान, बुद्ध के चौदह प्रकार के ज्ञान में, बुद्ध के अठारह गुणों में—संक्षेप में, बुद्ध के सभी गुणों में। क्योंकि सभी बुद्ध, बुद्ध के सभी गुणों में बिल्कुल एक समान हैं।

लेकिन अगर, नागसेना, ऐसा है तो क्या कारण है कि केवल गौतम बोधिसात ने ही तपस्या की?

'हे राजा, गौतम बोधिसात अपरिपक्व अवस्था में संसार से विदा हुए थे। और जब वे अपने उस अपरिपक्व ज्ञान को परिपक्वता की ओर ले जा रहे थे, तभी उन्होंने तपस्या की।'

19. 'तो फिर, नागसेन, वह अपरिपक्व ज्ञान और बुद्धि के साथ क्यों निकला? उसने पहले अपने ज्ञान को परिपक्व क्यों नहीं किया, और फिर परिपक्व ज्ञान के साथ संसार का त्याग क्यों नहीं किया?'

'हे राजा, जब बोदिसात ने अपने हरम की स्त्रियों को अव्यवस्थित अवस्था में देखा, तब वह घृणा से भर गया।'

और इस प्रकार उसके मन में घृणा और असंतोष उत्पन्न हो गया। जब उसने देखा कि उसका हृदय असंतोष से भरा हुआ है, तो मृत्यु के सेवकों में से एक देवता (मारा) ने सोचा: "अब उसके हृदय के असंतोष को दूर करने का समय आ गया है," और आकाश में खड़े होकर उसने ये शब्द कहे: "हे आदरणीय! हे सौभाग्यशाली! व्याकुल मत हो। आज से सातवें दिन तुम्हें चक्र का दिव्य खजाना, उसके हजार तीलियों, उसके पहिये और उसके केंद्र सहित, पूर्ण और परिपूर्ण रूप में प्रकट होगा; और अन्य खजाने, जो पृथ्वी पर विचरण करते हैं और जो आकाश में यात्रा करते हैं, वे स्वयं तुम्हारे पास आ जाएँगे; और तुम्हारे मुख के आदेश चारों महान महाद्वीपों और दो हजार आश्रित द्वीपों पर शासन करेंगे; और तुम्हारे एक हजार से अधिक पुत्र होंगे, जो शत्रु की सेनाओं को कुचलने में सक्षम शक्तिशाली वीर होंगे; और उन पुत्रों से घिरे हुए तुम, सात खजानों के स्वामी, संसार पर शासन करोगे!" लेकिन जैसे मानो दिनभर गर्म होकर चमकती हुई लोहे की छड़ उसके कान में घुस गई हो, वैसे ही 'हे राजा' शब्द बोदिसात के कान में प्रवेश कर गए। और उस देवता के उच्चारण से उसके पहले से ही मौजूद स्वाभाविक कष्ट में एक और भावना, चिंता और भय जुड़ गया। जैसे एक भयंकर भट्टी में नया ईंधन डालने पर वह और भी भयंकर रूप से जलने लगती है—जैसे स्वभाव से नम और पहले से ही उस पर उगी वनस्पति और घास से टपकते पानी के कारण दलदली धरती, भारी बारिश होने पर और भी कीचड़युक्त हो जाती है—वैसे ही उसके पहले से ही मौजूद कष्ट में एक और भावना जुड़ गई...

उस देवता के उच्चारण से एक और भावना, चिंता और भय उत्पन्न हो गया।

20. 'परन्तु मुझे बताओ, नागसेन, यदि सातवें दिन बोधिसात को दिव्य चक्र-खजाना प्रकट हो जाता, तो क्या वह चक्र के प्रकट होने पर अपने उद्देश्य से विमुख हो जाता?'

हे राजा, सातवें दिन बोधिसात को कोई चक्र-खजाना प्रकट नहीं हुआ। क्योंकि यह उस देवता का झूठ था, जो उसने बोधिसात को प्रलोभित करने के उद्देश्य से बोला था। और यदि वह प्रकट भी होता, तो भी बोधिसात उससे मुँह नहीं मोड़ता। और क्यों नहीं? क्योंकि हे राजा, बोधिसात ने सभी चीजों की अनित्यता, व्यक्ति के रूप में अस्तित्व में निहित दुख, और पाँच स्कंधों से बने किसी भी प्राणी में आत्मा के अभाव के तथ्यों को दृढ़ता से समझ लिया था, और इस प्रकार उसने (कामवासना, विधर्म, बाह्य कर्मों पर निर्भरता, या शाश्वत आत्मा के होने के भ्रम से उत्पन्न होने वाली व्यक्तिवादिता से आसक्ति का) नाश कर लिया था। हे राजा, जो जल अनत्तत झील से गंगा नदी में, गंगा नदी से सागर में, और सागर से समुद्र के छिद्रों में बहता है...

पृथ्वी के नीचे के क्षेत्रों में—क्या वह जल, एक बार उस छिद्र में प्रवेश करने के बाद, वापस मुड़कर विशाल सागर में, और विशाल सागर से गंगा नदी में, और गंगा नदी से अनट्टता झील में बह जाएगा?'

'बिल्कुल नहीं, महोदय।'

'इसी प्रकार, हे राजा, बोधिसात ने अपने अंतिम जन्म के लिए ही अनंत युगों तक पुण्य अर्जित किया था। अब वे अपने अंतिम जन्म तक पहुँच चुके थे, बुद्धों का ज्ञान उनमें परिपक्व हो चुका था, छह वर्षों में वे सर्वज्ञ बुद्ध बन जाएँगे, संसार के सर्वोच्च प्राणी। तो क्या बोधिसात, चक्र-राक्षस के लिए, वापस लौटेंगे?'

'बिल्कुल नहीं, महोदय।'

नहीं! हे राजा, चाहे विशाल पृथ्वी अपने सभी शिखरों और पर्वत श्रृंखलाओं सहित पीछे मुड़ जाए, तब भी बोधिसात बुद्धत्व प्राप्त करने से पहले नहीं मुड़ेंगे। चाहे गंगा का जल धारा के विपरीत दिशा में बहने लगे, तब भी बोधिसात बुद्धत्व प्राप्त करने से पहले नहीं मुड़ेंगे। चाहे विशाल सागर अपने असीम जल के साथ गाय के पदचिह्न के जल की तरह सूख जाए, तब भी बोधिसात बुद्धत्व प्राप्त करने से पहले नहीं मुड़ेंगे। यहाँ तक कि पर्वतों के राजा सिनेरु भी,

चाहे बोधिसत् सौ या हज़ार टुकड़ों में बिखर जाए, फिर भी बुद्धत्व प्राप्त करने से पहले वह पीछे नहीं हटेंगे। चाहे सूर्य, चंद्रमा और सभी तारे मिट्टी के ढेले की तरह ज़मीन पर गिर पड़ें, फिर भी बुद्धत्व प्राप्त करने से पहले वह पीछे नहीं हटेंगे। चाहे आकाश का विस्तार चटाई की तरह लिपट जाए, फिर भी बुद्धत्व प्राप्त करने से पहले वह पीछे नहीं हटेंगे! और क्यों नहीं? क्योंकि उन्होंने हर बंधन को तोड़ दिया था।

21. 'आदरणीय नागसेना, संसार में कितने बंधन हैं?'

'हे महाराज, संसार में ये दस बंधन हैं, जिनके द्वारा मनुष्य न तो संसार का त्याग करता है और न ही उसमें लौटता है। और वे दस क्या हैं? हे महाराज, माता, पिता, पत्नी, बच्चे, रिश्तेदार, मित्र, धन, सुखी आय, संप्रभुता और इंद्रियों के पाँच सुख, ये दस बंधन संसार में सामान्य हैं, जिनके द्वारा मनुष्य न तो संसार का त्याग करता है और न ही उसमें लौटता है। और हे महाराज, बोदिसात ने इन सभी बंधनों को तोड़ दिया था। इसलिए, हे महाराज, वह लौट नहीं सका।'

22. 'हे पूज्य नागसेन, यदि बोधिसात ने, देवता के वचनों से हृदय में असंतोष उत्पन्न होने पर, यद्यपि उनका (चार सत्यों का) ज्ञान अभी अपूर्ण था और बुद्ध के रूप में उनकी अंतर्दृष्टि परिपक्व नहीं थी, फिर भी संसार का त्याग कर दिया, तो उनके लिए तपस्या का क्या लाभ था? क्या उन्हें अपने ज्ञान की परिपक्वता की प्रतीक्षा करते हुए सभी (उपयुक्त) खाद्य पदार्थों का आनंद लेते हुए जीवन व्यतीत नहीं करना चाहिए था?'

हे राजा, संसार में दस प्रकार के ऐसे व्यक्ति हैं जो तिरस्कृत और घृणास्पद हैं।

शर्मनाक समझे जाने वाले, तिरस्कृत, निंदनीय माने जाने वाले, अपमानित और अलोकप्रिय। और वे दस कौन हैं? हे राजा, एक अविवाहित स्त्री, एक दुर्बल प्राणी, एक मित्र या रिश्तेदार विहीन स्त्री, एक पेटू स्त्री, एक बदनाम परिवार में रहने वाली स्त्री, पापियों की मित्र, वह जिसका धन नष्ट हो चुका है, वह चरित्रहीन, वह निर्धन, और वह निर्धन। ये दस संसार में तिरस्कृत और अपमानित हैं, शर्मनाक समझे जाने वाले, तिरस्कृत, निंदनीय माने जाने वाले, अपमानित और अलोकप्रिय। हे महाराज, इन्हीं परिस्थितियों को याद करते हुए बोधिसात के मन में यह विचार आया: "देवताओं और मनुष्यों के बीच मैं बेरोजगार या निर्धन होने के कारण कलंकित न होऊं! कर्म में निपुण, कर्म के कारण आदरणीय, कर्म से उत्पन्न सर्वोच्चता प्राप्त, कर्म पर आधारित आचरण वाला, कर्म को जीवन के हर पहलू में उतारने वाला, कर्म में निवास करने वाला, निरंतर लगन से तपस्या करूं।" हे महाराज, इसी भावना से बोधिसात ने अपने ज्ञान को परिपक्वता की ओर ले जाते हुए तपस्या का अभ्यास शुरू किया।

23. आदरणीय नागसेन, बोधिसात, जब तपस्या कर रहे थे, तब उन्होंने मन ही मन कहा:

लेकिन इस कठोर तपस्या से मैं उस विशिष्ट अंतर्दृष्टि को प्राप्त नहीं कर पाऊंगा जो उचित और श्रेष्ठ ज्ञान से उत्पन्न होती है—वह अंतर्दृष्टि जो साधारण मनुष्यों की क्षमता से परे है। क्या बुद्धत्व की प्राप्ति का कोई और मार्ग नहीं है?

'क्या उस समय बोडिसैट अपने रास्ते को लेकर असमंजस में था?'

हे महाराज, पच्चीस गुण हैं जो मन की दुर्बलता के कारण हैं, जिनके कारण मन आसवों (महान बुराइयों - कामवासना, अहंकार, भ्रम और अज्ञान) के नाश में सफलतापूर्वक संलग्न नहीं हो सकता। और वे पच्चीस गुण क्या हैं? हे महाराज, क्रोध, शत्रुता, पाखंड, अहंकार, ईर्ष्या, लोभ और छल।

और कपट, और हठधर्मिता, और कुटिलता, और अभिमान, और घमंड, और (जन्म, स्वास्थ्य या धन के बारे में) उच्च विचारों का नशा, और (भलाई में) लापरवाही, और बौद्धिक निष्क्रियता या शारीरिक आलस्य, और उनींदापन, और निष्क्रियता, और पापियों से मित्रता, और रूप, और ध्वनियाँ, और गंध, और स्वाद, और स्पर्श की संवेदनाएँ, और भूख, और प्यास, और असंतोष। ये सब हैं

हे महाराज, पच्चीस गुण हैं जो मन की दुर्बलता के कारण हैं, जिनके कारण मन आसवों के नाश में सफलतापूर्वक संलग्न नहीं हो पाता। (और इनमें से) हे महाराज, भूख और प्यास ने ही बोधिसात के शरीर को जकड़ लिया था। और इस प्रकार, मानो "ग्रस्त" होने के कारण, उनका मन आसवों के नाश में ठीक से संलग्न नहीं हो पा रहा था। अब, हे महाराज, बोधिसात ने असंख्य युगों से अपने सभी जन्मों में चार आर्य सत्यों की अनुभूति का अनुसरण किया था। तो क्या यह संभव है कि उनके अंतिम जन्म में, जिस जन्म में उन्हें यह अनुभूति प्राप्त होनी थी, उनके मन में मार्ग को लेकर कोई भ्रम हो? फिर भी, हे महाराज, बोधिसात के मन में यह विचार आया: "क्या अब बुद्ध के ज्ञान तक पहुँचने का कोई और मार्ग नहीं है?" और इससे पहले ही, हे राजा, जब वह केवल एक महीने का था, जब उसके पिता शाक्य खेत जोत रहे थे, तब बोधिसात को गंबू वृक्ष की छाया में शीतलता के लिए उसके पवित्र पलंग में लिटाया गया, और वह पालथी मारकर बैठ गया, और वासनाओं को त्यागकर, हृदय की सभी बुरी अवस्थाओं से मुक्त होकर, प्रथम ध्यान में प्रवेश कर गया और उसी अवस्था में बना रहा—एकांतवास से उत्पन्न आनंद और शांति की अवस्था, चिंतन से परिपूर्ण, अन्वेषण से परिपूर्ण, और फिर द्वितीय, तृतीय और चतुर्थ ध्यान में प्रवेश कर गया।

'बहुत खूब, नागसेना! यह सच है, और मैं इसे आपकी बात मानकर स्वीकार करता हूँ। बोधिसात ने अपने ज्ञान को परिपक्वता तक पहुँचाने के दौरान ही तपस्या की थी।'

[बोदिसात द्वारा किए गए प्रायश्चित को लेकर दुविधा यहीं समाप्त होती है।]

[तिहत्तरवीं दुविधा। बुराई से सद्गुण अधिक शक्तिशाली।]

24. 'आदरणीय नागसेन, सद्गुण या दुर्गुण में से कौन अधिक शक्तिशाली है?'

'हे राजा, सद्गुण।'

नागसेना, यह एक ऐसी कहावत है जिस पर मैं विश्वास नहीं कर सकता—कि पुण्य दुर्गुण से अधिक शक्तिशाली है। क्योंकि इस संसार में ऐसे लोग देखे जा सकते हैं जो जीवित प्राणियों का नाश करते हैं, जो बिना माँगे ही सब कुछ ले लेते हैं, जो अपनी वासनाओं में लिप्त होकर बुराई के मार्ग पर चलते हैं, जो झूठ बोलते हैं, जो पूरे गाँवों में गिरोह बनाकर लूटपाट करते हैं, जो लुटेरे, ठग और जालसाज हैं, और इन सभी को उनके अपराध के अनुसार उनके हाथ, या पैर, या हाथ और पैर, या कान काट दिए जाते हैं।

उनकी नाक, या उनके कान और नाक, या दलिया का पात्र, या शंख का मुकुट, या राहु का मुख, या अग्नि की माला, या हाथ की मशाल, या सांप की पट्टियाँ, या छाल का वस्त्र, या चित्तीदार मृग, या मांस के हुक, या सिक्के के कट, या खारे पानी की चीरें, या छड़ का मोड़, या पुआल का आसन, या उन्हें उबलते तेल से अभिषेक किया जाता है, या कुत्तों द्वारा खाया जाता है, या जीवित सूली पर चढ़ाया जाता है, या तलवार से उनका सिर काट दिया जाता है। उनमें से कुछ एक रात पाप करते हैं और उसी रात अपने पाप का फल भोगते हैं, कुछ रात में पाप करके अगले दिन फल भोगते हैं, कुछ एक दिन पाप करके उसी दिन फल भोगते हैं, कुछ दिन में पाप करके उसी रात फल भोगते हैं, कुछ दो या तीन दिन बीत जाने पर फल भोगते हैं। परन्तु सभी इस वर्तमान दृश्य संसार में अपने अधर्म का फल भोगते हैं। और क्या कोई ऐसा है, नागसेना, जिसने एक, दो, तीन, चार, पाँच, दस, सौ या हज़ार (संगठन के सदस्यों) के लिए सभी प्रकार के भोजन सहित व्यवस्था करके इस वर्तमान दृश्य संसार में धन, प्रसिद्धि या सुख का आनंद प्राप्त किया हो? (क्या कोई ऐसा है) जिसने धार्मिक जीवन या उपोसथ के पालन से इस जीवन में भी आनंद प्राप्त किया हो?'

25. 'हे राजा, चार ऐसे पुरुष हैं जिन्होंने दान देकर, धर्मपरायणता का अभ्यास करके और उपोसथा की पूजा करके अपने पार्थिव शरीर में ही तिदासपुरा (देवताओं के नगर) में यश प्राप्त किया।'

'और वे कौन थे, महोदय?'

'मंधाता राजा, निमी राजा, साधीना राजा और गुट्टिला संगीतकार।'

'आदरणीय नागसेना, यह घटना हजारों जन्म पहले घटी थी और हम दोनों की समझ से परे है। यदि संभव हो तो, उस काल (संसार के) के कुछ उदाहरण दीजिए जो अब बीत रहा है और जिसमें भगवान बुद्ध जीवित रहे हैं।'

हे राजा, इस समय, दास पुन्नक ने सारिपुत्त को भोजन कराया, जिससे वह उसी दिन कोषाध्यक्ष (सेठी) बन गया और अब वह पुन्नक सेठी के नाम से जाना जाता है। गोपाल की माता, रानी, जिसने (गरीब किसान परिवार की पुत्री होते हुए) अपने बाल आठ पैसे में बेचकर महा कक्कायन और उनके सात साथियों को भोजन कराया, उसी दिन राजा उदेना की प्रधान रानी बन गई। विश्वासी स्त्री सुप्पिया ने एक बीमार भिक्षु के लिए शोरबा बनाने के लिए अपनी जांघ से मांस काटा, और अगले ही दिन घाव भर गया और वह ठीक हो गया, उस पर नई त्वचा उग आई। मल्लिका, रानी जिसने (जब वह एक गरीब फूलवाली थी) पिछली रात का दलिया (जो उसने अपने भोजन के लिए रखा था) भगवान बुद्ध को दिया, उसी दिन कोसल के राजा की प्रधान रानी बन गई। सुमाना, माला बनाने वाली, जब उसने

भगवान बुद्ध को आठ गुच्छे चमेली के फूल भेंट करने वाले सभी लोग उसी दिन अपार समृद्धि प्राप्त कर गए। ब्राह्मण एका-सातक, जिन्होंने भगवान बुद्ध को अपना एकमात्र वस्त्र भेंट किया था, उसी दिन सब्बथक (महामंत्री) का पद प्राप्त कर लिया। हे राजा, इन सभी ने अपने जीवनकाल में ही धन और यश का आनंद प्राप्त किया।

'तो फिर, नागसेना, अपनी तमाम खोज और पूछताछ के बावजूद आपको केवल छह मामले ही मिले?'

'यही सत्य है, हे राजा।'

26. 'तो फिर, नागसेन, पुण्य नहीं, बल्कि पाप अधिक शक्तिशाली है। क्योंकि एक ही दिन में मैंने दस पुरुषों को अपने अपराधों का प्रायश्चित करते हुए जीवित सूली पर चढ़ते देखा है, और तीस, चालीस, पचास, सौ और हज़ार को भी। और फिर, नंदा के राजपरिवार की सेवा में भद्दसाला नामक एक सैनिक था, जिसने राजा कंदगुत्त के विरुद्ध युद्ध छेड़ा। अब उस युद्ध में, नागसेन, अस्सी शव नृत्य हुए। क्योंकि कहते हैं कि जब एक बड़ा सिर कलम करने का नरसंहार होता है (जिसका अर्थ है दस हज़ार हाथियों, एक लाख घोड़ों, पाँच हज़ार रथ चालकों और सौ कोटि पैदल सैनिकों का वध), तब सिर कटे शव उठते हैं और युद्ध के मैदान में उन्माद में नाचते हैं। और सभी पुरुष

इस प्रकार मारे गए लोग अपने बुरे कर्मों के फल के कारण विनाश को प्राप्त हुए। इसलिए, नागसेन, मैं कहता हूँ कि बुराई, अच्छाई से अधिक शक्तिशाली है। और क्या तुमने सुना है, नागसेन, कि इस समस्त युग में (गौतम बुद्ध के समय से) कोसल राजा का दान अद्वितीय रहा है?

'जी हां, मैंने ऐसा ही सुना है, हे राजा।'

लेकिन क्या नागसेन ने अपने अतुलनीय दान के कारण इस वर्तमान जीवन में धन, यश या सुख प्राप्त किया?

'नहीं, हे राजा, उसने ऐसा नहीं किया।'

'तो फिर, नागसेन, क्या सच में बुराई अच्छाई से अधिक शक्तिशाली है?'

27. हे राजा, बुराई अपनी नीचता के कारण शीघ्र ही नष्ट हो जाती है। परन्तु पुण्य अपनी महानता के कारण लंबे समय तक नहीं मरता। इसे एक दृष्टांत के द्वारा और भी स्पष्ट किया जा सकता है। हे राजा, जैसे पश्चिम देश में कुमुद-भंडिका नामक अनाज, जो जल्दी पक जाता है और एक महीने में ही काटा जा सकता है, उसे मसालु (एक महीने में प्राप्त) कहा जाता है, परन्तु चावल छह या पाँच महीने में ही पूर्ण रूप से पकते हैं। तो फिर कुमुद-भंडिका और चावल में क्या अंतर है?

'एक पौधा तो तुच्छ है, हे राजा, दूसरा भव्य। ये चावल राजाओं के योग्य हैं, राजा के लिए उपयुक्त हैं।'

एक भोजन राजा की मेज पर परोसा जाता है; दूसरा भोजन नौकरों और गुलामों का होता है।

'ठीक इसी प्रकार, हे राजा, बुराई अपनी नीचता के कारण शीघ्र ही नष्ट हो जाती है। परन्तु सद्‌गुण अपनी महानता के कारण लंबे समय तक नष्ट नहीं होता।'

28. 'परन्तु, नागसेन, संसार में सबसे शक्तिशाली वही वस्तुएँ मानी जाती हैं जिनका अंत सबसे शीघ्र होता है। अतः बुराई ही अधिक शक्तिशाली है, सद्‌गुण नहीं।' नागसेन, ठीक वैसे ही जैसे भयंकर युद्ध में प्रवेश करने पर जो बलवान योद्धा सबसे शीघ्र अपने शत्रुओं के सिर अपनी बगल में दबाकर उन्हें घसीटते हुए अपने स्वामी के पास बंदी बनाकर लाता है, वही संसार में सबसे योग्य योद्धा माना जाता है। ठीक वैसे ही जैसे जो सर्जन सबसे शीघ्र तीर निकालकर रोग का उपचार करता है, उसे सबसे चतुर माना जाता है। ठीक वैसे ही जैसे जो लेखाकार सबसे तेजी से गणना करके परिणाम प्रस्तुत करता है, उसे सबसे चतुर माना जाता है। ठीक वैसे ही जैसे जो पहलवान अपने प्रतिद्वंद्वी को सबसे शीघ्र उठाकर पीठ के बल गिरा देता है, उसे सबसे योग्य योद्धा माना जाता है। नागसेन, ठीक वैसे ही इन दो चीजों - सद्‌गुण और दुर्गुण - में से जो सबसे शीघ्र अपने अंत की ओर अग्रसर होती है, वही संसार में अधिक शक्तिशाली होती है।

'हे राजा, इन दोनों के कर्म आने वाले जन्मों में प्रकट होंगे; परन्तु इसके अतिरिक्त अन्य पाप अपने अपराध के कारण इसी जन्म में प्रकट हो जाएंगे। क्षत्रिय शासकों को...'

हे राजा, प्राचीन काल में यह फरमान जारी किया गया था: "जो कोई किसी की जान लेता है, उस पर जुर्माना लगाया जाएगा, और जो कोई बिना माँगी वस्तु अपने पास रखता है, और जो कोई व्यभिचार करता है, और जो कोई झूठ बोलता है, और जो कोई डाकू है, और जो कोई लुटेरा है, और जो कोई ठगी और छल करता है, ऐसे लोगों पर जुर्माना लगाया जाएगा, या उन्हें पीटा जाएगा, या उनके अंग काट दिए जाएँगे, या उन्हें मार डाला जाएगा।" और इसके अनुसरण में वे बार-बार जाँच करते थे, और फिर तदनुसार कोई न कोई दंड देते थे।

लेकिन हे राजा, क्या कभी किसी ने ऐसा फरमान जारी किया है: "जो कोई दान देता है, या सदाचारी जीवन जीता है, या उपोसथा का पालन करता है, उसे धन या सम्मान दिया जाएगा?" और क्या वे लगातार जाँच करते हैं, और तदनुसार धन या सम्मान प्रदान करते हैं, जैसे वे किसी चोर को कोड़े मारते हैं या उसे बंधन में बाँध देते हैं?

'बिल्कुल नहीं, महोदय।'

"अगर वे ऐसा करते तो इस जीवन में भी सद्गुण प्रकट हो जाते। परन्तु वे न तो दानदाताओं के विषय में कोई पूछताछ करते हैं, न ही उन्हें धन-दौलत और सम्मान प्रदान करते हैं, इसलिए सद्गुण अभी प्रकट नहीं होता। और यही कारण है, हे राजा, कि इस जीवन में पाप प्रकट हो जाता है, जबकि दानदाता को आने वाले जन्मों में और भी अधिक मिलता है। अतः कर्मों के विनाश के बावजूद, सद्गुण ही दोनों में कहीं अधिक शक्तिशाली है।"

'बहुत बढ़िया, नागसेना! केवल आप जैसे बुद्धिमान व्यक्ति ही इस पहेली को इतनी कुशलता से हल कर सकते थे।'

[पैराग्राफ जारी है] मेरे द्वारा सांसारिक अर्थों में रखी गई समस्या को आप पारलौकिक अर्थों में स्पष्ट कर लें।'

[यहाँ सद्गुण और दुर्गुण को लेकर दुविधा समाप्त होती है।]

[चौहत्तरवीं दुविधा। मृतकों को दी जाने वाली भेंट।]

29. 'हे आदरणीय नागसेन, ये दानदाता जब अपनी भेंट देते हैं, तो वे विशेष रूप से अपने दिवंगत पूर्व (रिश्तेदारों) को समर्पित करते हुए कहते हैं: "यह दान अमुक व्यक्ति को लाभ पहुंचाए।" तो क्या उन्हें (मृतकों को) इससे कोई लाभ मिलता है?'

'हे राजा, कुछ लोग ऐसा करते हैं, और कुछ नहीं करते।'

तो फिर वे कौन हैं जो करते हैं और कौन नहीं करते?

'हे राजा, जो नरक में पुनर्जन्म लेते हैं, वे नहीं लेते; न ही स्वर्ग में पुनर्जन्म लेने वाले; न ही पशु रूप में पुनर्जन्म लेने वाले। और प्रेतों के रूप में पुनर्जन्म लेने वालों में से तीन प्रकार के प्रेत नहीं लेते - वन्तसिका (जो उल्टी खाते हैं), खुप्पिपासिनो (जो भूख और प्यास से मरते हैं), निग्घाम-तन्हिका (जो प्यास से मर जाते हैं)। परन्तु परदत्तुपगीविनो (जो दूसरों के दान पर जीते हैं) लाभ प्राप्त करते हैं, और जो उन्हें याद करते हैं वे भी लाभ प्राप्त करते हैं।'

'तो, नागसेन, दानदाताओं द्वारा दी गई भेंटें व्यर्थ हो गई हैं, और निष्फल हैं, क्योंकि वे

जिनके लाभ के लिए ये दिए गए हैं, उन्हें इनसे कोई लाभ नहीं मिलना चाहिए।

'नहीं, हे राजा। वे व्यर्थ नहीं जाते, न ही निष्फल होते हैं। देने वाले स्वयं उनसे लाभ प्राप्त करते हैं।'

'तो मुझे एक उपमा के माध्यम से इस बात का यकीन दिलाइए।'

'मान लीजिए, हे राजा, कि लोग मछली, मांस, मादक पेय, चावल और केक तैयार करके अपने किसी रिश्तेदार के घर जाएँ। यदि उनके रिश्तेदार उनका उपहार स्वीकार न करें, तो क्या वह उपहार व्यर्थ या निष्फल होगा?'

नहीं, महोदय, यह इसके मालिकों को जाएगा।'

'अच्छा, तो फिर देने वाले ही लाभ उठा लें। या फिर, हे राजा, मान लीजिए कि कोई व्यक्ति किसी भीतरी कक्ष में प्रवेश करे और उसके सामने कोई निकास द्वार न हो, तो वह बाहर कैसे निकलेगा?'

'जिस तरह से वह अंदर आया।'

'ठीक है, ताकि दान देने वालों को ही लाभ मिले।'

30. 'इसे जाने दो, नागसेन। यह सच है, और मैं इसे तुम्हारी बात मानकर स्वीकार करता हूँ। हम तुम्हारे तर्क पर विवाद नहीं करेंगे। लेकिन, आदरणीय नागसेन, यदि ऐसे दाताओं द्वारा दी गई भेंटें कुछ दिवंगत आत्माओं को लाभ पहुँचाती हैं, और वे दान का फल प्राप्त करते हैं, तो यदि कोई व्यक्ति जो जीवित प्राणियों का संहार करता है, रक्त पीता है और निर्दयी हृदय का है, हत्या या कोई अन्य भयानक कृत्य करने के बाद, उसे दिवंगत आत्मा को समर्पित करते हुए कहे: "मेरे इस कर्म का फल दिवंगत आत्मा को प्राप्त हो"—तो क्या वह फल उन्हें हस्तांतरित हो जाएगा?'

'नहीं, हे राजा।'

लेकिन इसका कारण क्या है, क्या वजह है कि उनके अच्छे कर्मों का फल उन्हें मिलता है, बुरे कर्मों का नहीं?

'हे महाराज, यह वास्तव में ऐसा प्रश्न नहीं है जो आपको पूछना चाहिए। हे महाराज, मुझसे कोई मूर्खतापूर्ण प्रश्न मत पूछिए, इस उम्मीद में कि मुझे उत्तर मिल जाएगा। आप मुझसे अगला प्रश्न यह पूछेंगे कि अंतरिक्ष असीम क्यों है, गंगा ऊपर की ओर क्यों नहीं बहती, मनुष्य और पक्षी दो पैरों पर क्यों चलते हैं और जानवर चार पैरों पर क्यों चलते हैं!'

'नागसेना, मैं यह प्रश्न आपको परेशान करने के लिए नहीं पूछ रहा हूँ, बल्कि एक शंका दूर करने के लिए पूछ रहा हूँ। दुनिया में बहुत से लोग हैं जो बाएं हाथ से लिखते हैं या जिनकी आंखें भेंगी हैं। मैंने यह प्रश्न आपसे यह सोचकर पूछा है: "इन दुर्भाग्यशाली लोगों को भी अपने जीवन को बेहतर बनाने का मौका क्यों नहीं मिलना चाहिए?"'

'हे राजा, किसी बुरे कर्म का बोझ उस व्यक्ति के साथ साझा नहीं किया जा सकता जिसने उसे न किया हो और न ही उसमें सहमति दी हो। लोग जलसेतु के द्वारा लंबी दूरी तक पानी पहुंचाते हैं। लेकिन क्या वे उसी तरह ठोस चट्टान के एक विशाल पर्वत को हटा सकते हैं?'

'बिल्कुल नहीं, महोदय।'

'अच्छा, ठीक इसी तरह अच्छे कर्म को साझा किया जा सकता है, लेकिन बुरे कर्म को नहीं। और तेल से दीपक जलाया जा सकता है, लेकिन क्या उसी तरह, हे राजा, उसे पानी से जलाया जा सकता है?'

'बिल्कुल नहीं, महोदय।'

तो क्या यह सच है कि एक अच्छा काम तो साझा किया जा सकता है, लेकिन एक बुरा काम नहीं? किसान अपनी फसलों को पकाने के लिए जलाशय से पानी लेते हैं, लेकिन क्या वे इसी उद्देश्य से, हे राजा, समुद्र से पानी ले सकते हैं?

'बिल्कुल नहीं, महोदय।'

'तो फिर वही बात है कि भले ही अच्छे कर्म को साझा किया जा सकता है, लेकिन बुरे कर्म को नहीं।'

31. 'परन्तु, आदरणीय नागसेन, ऐसा क्यों है? मुझे इसका कारण बताकर समझाइए। मैं अंधा या अज्ञानी नहीं हूँ। सुनकर समझ जाऊँगा।'

'हे राजा, बुराई एक तुच्छ वस्तु है, पुण्य महान और भव्य है। अपनी तुच्छता के कारण बुराई केवल कर्म करने वाले को ही प्रभावित करती है, परन्तु पुण्य अपनी भव्यता के कारण देवताओं और मनुष्यों के समस्त जगत में व्याप्त हो जाता है।'

'मुझे इसे एक रूपक के माध्यम से समझाओ।'

'हे राजा, यदि पानी की एक छोटी सी बूंद जमीन पर गिरे, तो क्या वह दस या बारह मील तक बह जाएगी?'

'बिल्कुल नहीं। इसका असर केवल उसी जगह पर होगा जहां यह गिरेगा।'

'आखिर ऐसा क्यों?'

'क्योंकि यह बहुत छोटा है।'

'ठीक इसी प्रकार, हे राजा, पाप सूक्ष्म होता है। और अपने छोटेपन के कारण यह केवल करने वाले को ही प्रभावित करता है, और इसे साझा करना संभव नहीं है। लेकिन यदि एक विशाल वर्षा बादल पृथ्वी की सतह को तृप्त करने वाली वर्षा बरसाए, तो क्या वह जल चारों ओर फैलेगा?'

'जी हां, महोदय। वह आंधी जमीन में बने गड्ढों, तालाबों, नालों, दरारों, खाइयों, झीलों, जलाशयों, कुओं और कमल-कुंडों को भर देगी और पानी दस या बारह मील तक फैल जाएगा।'

'पर ऐसा क्यों, हे राजा?'

'तूफान की भयावहता के कारण।'

'हे राजा, इसी प्रकार सद्गुण महान है। और इसकी प्रचुरता के कारण यह देवताओं और मनुष्यों दोनों के बीच साझा किया जा सकता है।'

'आदरणीय नागसेना, ऐसा क्यों है कि बुराई इतनी सीमित है, और अच्छाई इतनी व्यापक है?'

हे राजा, जो कोई इस संसार में दान करता है, धर्म का पालन करता है और उपोसथा का पालन करता है, वह प्रसन्न, परम प्रसन्न, आनंदित और प्रसन्न होकर विश्वास और परमानंद की मधुर भावना से भर जाता है, और उसके हृदय में परमानंद का शासन होने से उसकी अच्छाई लगातार बढ़ती जाती है। हे राजा, जैसे एक गहरे, स्वच्छ जल के कुंड में एक ओर से जल का स्रोत बहता है, और दूसरी ओर से बह जाता है; जैसे ही जल बह जाता है, वह फिर से आ जाता है, और उसमें कोई कमी नहीं होती—हे राजा, उसी प्रकार उसकी अच्छाई लगातार बढ़ती जाती है। हे राजा, यदि कोई व्यक्ति सौ वर्षों तक भी अपने द्वारा किए गए किसी भी अच्छे कार्य का पुण्य दूसरों को देता रहे, तो भी उसकी अच्छाई बढ़ती ही जाती है।

उसने जो किया था, उतना ही वह दान करता गया, उसकी अच्छाई बढ़ती गई, और वह फिर भी इसे जिसे चाहे उसके साथ साझा करने में सक्षम रहा। हे राजा, यही कारण है कि सद्गुण दोनों में इतना श्रेष्ठ है।

32. हे राजा, जब कोई व्यक्ति बुराई करता है, तो वह पश्चाताप से भर जाता है, और पश्चाताप से ग्रस्त व्यक्ति का हृदय (अपने किए गए बुरे कर्मों के विचार से) विमुख नहीं हो पाता; वह उस पर विवश होकर, उस पर ही अटक जाता है, उसे शांति नहीं मिलती; दुखी, जलता हुआ, आशाहीन होकर वह क्षीण हो जाता है, और अवसाद से कोई राहत न पाकर, मानो वह अपने दुख से ग्रस्त हो जाता है! हे राजा, जैसे पानी की एक बूँद, अपने विशाल रेतीले किनारों के साथ, अपने टेढ़े-मेढ़े और अस्थिर मार्ग पर लहरों की तरह उठते-गिरते सूखे नदी तल पर गिरने पर, आयतन में वृद्धि नहीं करती, बल्कि उसी स्थान पर समा जाती है जहाँ वह गिरी थी, ठीक वैसे ही, हे राजा, मनुष्य, जब कोई गलत काम करता है, तो पश्चाताप से ग्रस्त हो जाता है, और पश्चाताप से ग्रस्त व्यक्ति का हृदय अपने किए गए बुरे कर्मों के विचार से विमुख नहीं हो पाता; वह उस पर विवश होकर, उस पर ही अटक जाता है, उसे शांति नहीं मिलती; दुखी, पीड़ा से भरा, आशाहीन, वह धीरे-धीरे कमजोर होता जा रहा है, और अपने अवसाद से कोई मुक्ति न पाकर, वह उसी स्थिति में है जैसा कि...

वे अपने दुख में डूब गए थे। हे राजा, यही कारण है कि पाप इतना नीच होता है।

'बहुत बढ़िया, नागसेना! यह सच है, और मैं इसे आपके कहे अनुसार स्वीकार करता हूँ।'

[इसी के साथ सद्गुण और दुर्गुण का मुद्दा समाप्त होता है।]

[पचहत्तरवीं दुविधा। सपने।]

33. 'हे आदरणीय नागसेना, इस संसार में पुरुष और स्त्रियाँ सुखद और अशुभ, पहले देखी हुई और न देखी हुई, पहले किए हुए और न किए हुए, शांत और भयानक, निकट और दूर की बातों के सपने देखते हैं, अनेक आकृतियों और असंख्य रंगों से भरे हुए। यह क्या है जिसे मनुष्य स्वप्न कहते हैं, और इसे कौन देखता है?'

'हे राजा, यह मन के मार्ग में आने वाला एक सुझाव है, जिसे स्वप्न कहा जाता है। और छह प्रकार के लोग स्वप्न देखते हैं—वह व्यक्ति जो वात दोष वाला हो, या पित्त दोष वाला हो, या कफ दोष वाला हो, वह व्यक्ति जो किसी देवता के प्रभाव से स्वप्न देखता है, वह व्यक्ति जो अपनी आदतों के प्रभाव से स्वप्न देखता है, और वह व्यक्ति जो भविष्यवाणियों के रूप में स्वप्न देखता है।'

हे राजा, इनमें से केवल अंतिम प्रकार का स्वप्न ही सत्य है; बाकी सभी स्वप्न झूठे हैं।

34. 'आदरणीय नागसेना, जब कोई व्यक्ति ऐसा सपना देखता है जो भविष्यसूचक होता है, तो वह कैसे होता है? क्या उसका स्वयं का मन शगुन खोजने के लिए प्रेरित होता है, या क्या भविष्यसूचक स्वतः ही उसके मन के मार्ग में आ जाता है, या क्या कोई और आकर उसे इसके बारे में बताता है?'

'उसका मन स्वयं शगुन की खोज नहीं करता, न ही कोई और आकर उसे इसके बारे में बताता है। भविष्यवाणी स्वतः ही उसके मन में आ जाती है। यह एक दर्पण के समान है, जो प्रतिबिंब की खोज में कहीं नहीं जाता; न ही कोई और आकर दर्पण पर प्रतिबिंब डालता है। परन्तु प्रतिबिंबित वस्तु दर्पण की परावर्तक शक्ति के क्षेत्र में कहीं से आती है।'

35. 'आदरणीय नागसेना, क्या स्वप्न देखने वाला वही मन यह भी जानता है: "इसका फलस्वरूप, शुभ या अशुभ परिणाम होगा?"'

'नहीं, ऐसा नहीं है, हे राजा। शगुन घटित होने के बाद वह दूसरों को बताता है, और फिर वे उसका अर्थ समझाते हैं।'

'अब आओ, नागसेना, मुझे इसे समझाने के लिए एक उपमा दो।'

'हे राजा, यह उन निशानों, फुंसियों और त्वचा पर होने वाले दानों के समान है जो मनुष्य के शरीर पर उसके लाभ या हानि, उसकी प्रसिद्धि या बदनामी, उसकी प्रशंसा या निंदा, उसके सुख या दुख के लिए उत्पन्न होते हैं।

उस स्थिति में मुहांसे इसलिए निकलते हैं क्योंकि उन्हें पता होता है: "ऐसा और ऐसा ही कुछ होने वाला है?"

"बिल्कुल नहीं, महोदय। लेकिन फुंसी जिस स्थान पर निकली हैं, उसके आधार पर ज्योतिषी अपना अवलोकन करते हुए निर्णय देते हैं और कहते हैं: ऐसा-ऐसा परिणाम होगा।"

"ठीक उसी प्रकार, हे राजा, स्वप्न देखने वाला मन ही यह नहीं जान पाता कि 'ऐसा-ऐसा परिणाम होगा, चाहे वह स्पष्ट हो या भयानक।' बल्कि शगुन घटित होने के बाद वह दूसरों को बताता है, और फिर वे उसका अर्थ समझाते हैं।"

36. 'आदरणीय नागसेना, जब कोई व्यक्ति सपना देखता है, तो क्या वह जाग रहा होता है या सो रहा होता है?'

हे राजा, न तो यह, न ही वह। परन्तु जब उसकी नींद हल्की हो जाती है और वह पूरी तरह से होश में नहीं होता, उसी अंतराल में स्वप्न देखे जाते हैं। हे राजा, जब मनुष्य गहरी नींद में होता है, तो उसका मन अपने घर लौट आता है (भवंग में फिर से प्रवेश कर जाता है), और इस प्रकार बंद मन क्रिया नहीं करता, और क्रिया में बाधित मन भले और बुरे का ज्ञान नहीं रखता, और जो नहीं जानता उसे स्वप्न नहीं आते। मन के सक्रिय होने पर ही स्वप्न देखे जाते हैं। हे राजा, जैसे अंधकार और उदासी में, जहाँ प्रकाश नहीं होता, वहाँ सबसे चमकीले दर्पण पर भी छाया नहीं पड़ती, वैसे ही जब मनुष्य गहरी नींद में होता है तो उसका मन अपने भीतर लौट आता है, और

एकांत में डूबा मन कर्म नहीं करता, निष्क्रिय मन भले-बुरे का ज्ञान नहीं कर पाता, और जो ज्ञान से वंचित रहता है, वह स्वप्न भी नहीं देखता। क्योंकि मन के सक्रिय होने पर ही स्वप्न देखे जाते हैं। हे राजा, शरीर को दर्पण के समान, अंधकार को नींद के समान, और मन को प्रकाश के समान देखना चाहिए। या फिर, हे राजा, जैसे कोहरे में ढके सूर्य की महिमा अदृश्य हो जाती है, उसकी किरणें, यद्यपि विद्यमान होती हैं, भेद नहीं पातीं, और जब उसकी किरणें क्रियाशील नहीं होतीं तो प्रकाश नहीं होता, वैसे ही गहरी नींद में मनुष्य का मन अपने आप में लीन हो जाता है, और एकांत में डूबा मन कर्म नहीं करता, निष्क्रिय मन भले-बुरे का ज्ञान नहीं कर पाता, और जो ज्ञान से

वंचित रहता है, वह स्वप्न भी नहीं देखता। क्योंकि मन के सक्रिय होने पर ही स्वप्न देखे जाते हैं। हे राजा, शरीर को सूर्य के समान, कोहरे के आवरण को नींद के समान, और किरणों को मन के समान देखना चाहिए।

37. हे महाराज, दो स्थितियों में शरीर के रहते हुए भी मन निष्क्रिय रहता है—जब कोई व्यक्ति गहरी नींद में होता है और उसका मन एकाग्र हो जाता है, और जब वह समाधि में चला जाता है। हे महाराज, जागृत व्यक्ति का मन उत्तेजित, खुला, स्पष्ट और निर्मल होता है, और ऐसे मन वाले व्यक्ति को कोई भविष्यवाणी नहीं सूझती। हे महाराज, जिस प्रकार गुप्त रहने वाले लोग खुले, स्पष्टवादी, निस्वार्थ और निडर व्यक्ति से दूर रहते हैं—ठीक उसी प्रकार ईश्वरीय इच्छा जागृत व्यक्ति को प्रकट नहीं होती, और इसलिए जागृत व्यक्ति को कोई स्वप्न नहीं दिखाई देता। या फिर, हे महाराज, जिस प्रकार ज्ञान की ओर ले जाने वाले गुण उस भाई में नहीं पाए जाते जिसका जीवनयापन और आचरण कुटिल है, जो पापियों का मित्र है, दुष्ट है, अभिमानी है और निर्धन है।

उत्साह के कारण ही, ठीक उसी प्रकार ईश्वरीय उद्देश्य जागृत व्यक्ति के समक्ष प्रकट नहीं होता, और इसलिए जागृत व्यक्ति कोई स्वप्न नहीं देखता।

38. 'आदरणीय नागसेना, क्या नींद का कोई आरंभ, मध्य और अंत होता है?'

'जी हां, हे राजा, है।'

तो फिर शुरुआत कौन सी है, मध्य कौन सा है और अंत कौन सा है?

हे राजा, शरीर में होने वाला दमन और असमर्थता का भाव, कमजोरी, सुस्ती, जड़ता—यही नींद की शुरुआत है। वह हल्की "बंदर की नींद" जिसमें मनुष्य अपने बिखरे हुए विचारों पर नियंत्रण रखता है—वह नींद का मध्य चरण है। जब मन अंतर्मन में लीन हो जाता है—वही नींद का अंत है। और हे राजा, मध्य अवस्था में, "बंदर की नींद" में ही सपने देखे जाते हैं। हे राजा, जिस प्रकार एक संयमित, एकाग्र, दृढ़ विश्वास वाला, अविचलित ज्ञान वाला व्यक्ति जब शोरगुल से दूर घने जंगलों में जाकर किसी सूक्ष्म विषय पर चिंतन करता है, तो वह वहाँ शांत और स्थिर होकर उसका अर्थ समझ लेता है—ठीक उसी प्रकार एक सचेत व्यक्ति, जो नींद में नहीं डूबा है, बल्कि "बंदर की नींद" में ऊंघ रहा है, सपना देखता है। हे राजा, जिस प्रकार शोरगुल को आप भय और एकांत जंगल को "बंदर की नींद" समझते हैं, उसी प्रकार आपको भी समझना चाहिए। और जिस प्रकार वह व्यक्ति जो कलह की ध्वनि से बचता है, नींद से दूर रहता है, मध्य अवस्था में बना रहता है, उस सूक्ष्म विषय के अर्थ को समझ लेता है, उसी प्रकार जो व्यक्ति शांत और सतर्क रहता है, नींद में नहीं डूबता, बल्कि "बंदर की नींद" में ऊंघता रहता है, वह स्वप्न देखता है।

'बहुत बढ़िया, नागसेना! यह सच है, और मैं इसे आपके कहे अनुसार स्वीकार करता हूँ।'

[सपनों को लेकर दुविधा यहीं समाप्त होती है।]

[सत्तरवीं दुविधा। असमय मृत्यु।]

39. 'हे आदरणीय नागसेन, जब प्राणी मरते हैं, तो क्या वे सभी समय की पूर्णता में मरते हैं, या कुछ समय से पहले मर जाते हैं?'

'हे राजा, नियत समय पर मृत्यु भी होती है और असमय मृत्यु भी।'

तो फिर वे कौन हैं जिनकी मृत्यु नियत समय पर हुई है, और वे कौन हैं जिनकी मृत्यु असमय हुई है?

'हे राजा, क्या आपने कभी आम के पेड़ों, गंबू के पेड़ों या अन्य फल देने वाले पेड़ों के मामले में गौर किया है कि उनके फल पकने पर भी गिरते हैं और कच्चे होने पर भी?'

'हाँ मेरे पास है।'

'अच्छा, वे गिरे हुए फल, क्या वे सभी नियत समय पर गिरते हैं, या कुछ समय से पहले गिर जाते हैं?'

नागसेन, जो फल पकने और परिपक्व होने पर गिरते हैं, वे समय पर गिरते हैं। लेकिन बाकी फलों में से कुछ कीड़ों द्वारा छेद किए जाने के कारण गिर जाते हैं, कुछ किसी चीज से टकराकर गिर जाते हैं।

लंबी लकड़ियाँ, कुछ हवा से गिर जाती हैं, कुछ सड़ जाती हैं—और ये सभी समय से पहले ही गिर जाती हैं।

'हे राजा, ठीक इसी प्रकार, जो पुरुष वृद्धावस्था के फल से मरते हैं, वे अपने समय की पूर्णता में मरते हैं। परन्तु शेषों में से कुछ कर्मों के भयानक फल से मरते हैं, कुछ अत्यधिक यात्राओं से, कुछ अत्यधिक कर्मों से।'

40. 'हे आदरणीय नागसेन, कर्म, यात्रा, गतिविधि या वृद्धावस्था के कारण मरने वाले सभी लोग अपने नियत समय पर ही मरते हैं; यहाँ तक कि गर्भ में मरने वाला भी, उसका नियत समय ही होता है, इसलिए वह भी नियत समय पर ही मरता है; और जन्म कक्ष में मरने वाला, एक महीने का होने पर मरने वाला, या सौ वर्ष तक की किसी भी आयु में मरने वाला, उसका भी नियत समय होता है, और वह नियत समय पर ही मरता है। अतः, नागसेन, समय से पहले मृत्यु जैसी कोई बात नहीं होती। क्योंकि जो भी मरता है, वह नियत समय पर ही मरता है।'

हे राजा, सात प्रकार के व्यक्ति होते हैं, जो अपनी नियत आयु शेष रहते हुए भी समय से पहले मर जाते हैं। वे सात कौन से हैं? हे राजा, भूखा व्यक्ति, जिसे भोजन नहीं मिलता, जिसके आंतरिक अंग नष्ट हो जाते हैं; प्यासा व्यक्ति, जिसे पानी नहीं मिलता, जिसका हृदय सूख जाता है; और साँप के काटने से घायल व्यक्ति, जो विष की प्रचंड शक्ति से ग्रस्त होकर ठीक नहीं हो पाता; और वह व्यक्ति जिसने विष ग्रहण किया है, और जब उसके सभी अंग निष्क्रिय हो जाते हैं।

जलने से पीड़ित व्यक्ति को दवा नहीं मिल पाती—और आग में गिरे व्यक्ति को आग बुझाने का कोई साधन नहीं मिलता—और पानी में गिरे व्यक्ति को खड़े होने के लिए कोई स्थिर ज़मीन नहीं मिलती—और भाले से घायल व्यक्ति को बीमारी में कोई चिकित्सक नहीं मिलता—ये सातों, अपने नियत समय का कुछ भाग शेष रहते हुए, समय से पहले ही मर जाते हैं। और इस प्रकार (इन सभी सात मामलों में) मैं घोषणा करता हूँ कि ये सभी एक ही प्रकृति के हैं। हे राजा, मनुष्यों की मृत्यु आठ प्रकार से होती है—वाष्प दोष की अधिकता से, या पित्त दोष की अधिकता से, या कफ दोष की अधिकता से, इन तीनों के प्रतिकूल संयोजन से, तापमान में भिन्नता से, सुरक्षा में असमानता से, (चिकित्सा) उपचार से, और कर्म के फल से। और हे राजा, इनमें से केवल कर्म के फल से होने वाली मृत्यु ही समय पर होने वाली मृत्यु है, शेष सभी समय से पहले होने वाली मृत्यु हैं। क्योंकि ऐसा कहा गया है:

"भूख, प्यास, जहर और काटने से, जलने, डूबने या मारे जाने से, मनुष्य समय से पहले मर जाते हैं; तीनों द्रव्यों और तीनों के संयोजन से, गर्मी से, असमानताओं से, और इन सभी सात कारणों से मनुष्य समय से पहले मर जाते हैं।"

41. 'परन्तु हे राजा, कुछ ऐसे मनुष्य भी होते हैं जो पिछले जन्म में किए गए किसी बुरे कर्म के फलस्वरूप मर जाते हैं। और उनमें से

हे राजा, जिसने भी दूसरों को भूखा रखकर मृत्युदंड दिया है, वह स्वयं लाखों वर्षों तक भूख से पीड़ित, कमजोर, दुर्बल, हृदयहीन, सूखा हुआ, क्षीण, प्रचंड और भीतर से प्रज्वलित रहेगा, वह भी यौवन, पुरुष या वृद्धावस्था में भूख से ही मरेगा। और वह मृत्यु उसके लिए नियत समय पर होगी। जिसने भी दूसरों को प्यास से मृत्युदंड दिया है, वह स्वयं लाखों वर्षों तक प्यास से क्षीण, दुबला-पतला और दयनीय हो जाएगा, वह भी यौवन, पुरुष या वृद्धावस्था में प्यास से ही मरेगा। और वह मृत्यु उसके लिए नियत समय पर होगी। जिसने भी दूसरों को सांपों के कटवाकर मृत्युदंड दिया है, वह भी लाखों वर्षों तक जन्म-जन्मांतर में भटकता रहेगा, जिसमें उसे लगातार अजगरों और काले सांपों द्वारा काटा जाता रहेगा, और वह भी यौवन, पुरुष या वृद्धावस्था में सांप के काटने से मरेगा। और वह मृत्यु उसके लिए नियत समय पर होगी। जिसने भी दूसरों को विष से मृत्युदंड दिया है, वह लाखों वर्षों तक जलते अंगों और क्षत-विक्षत शरीर के साथ, और एक शव की दुर्गंध छोड़ते हुए, स्वयं भी, चाहे युवक हो, पुरुष हो या वृद्ध, विष से मर जाएगा। और यही उसके लिए नियत समय पर मृत्यु होगी। जिसने भी दूसरों को अग्नि से मृत्युदंड दिया है, वह एक नरक से दूसरे नरक में, जलते हुए कोयले के ढेर से दूसरे नरक में भटकता रहेगा।

दूसरा, जिसके अंग जलकर और यातना से त्रस्त होकर लाखों वर्षों तक कष्ट भोगते रहे, वह स्वयं भी, चाहे युवा हो, पुरुष हो या वृद्ध, जलकर मर जाएगा। और नियत समय पर यही उसकी मृत्यु होगी। जिसने भी दूसरों को डुबोकर मारा है, वह स्वयं भी लाखों वर्षों तक अपंग, क्षत-विक्षत, टूटा हुआ, अंगों से कमजोर और हृदय से चिंतित होकर कष्ट भोगता रहा है, वह स्वयं भी, चाहे युवा हो, पुरुष हो या वृद्ध, डूबकर मर जाएगा। और नियत समय पर यही उसकी मृत्यु होगी। जिसने भी दूसरों को तलवार से मारा है, वह स्वयं भी लाखों वर्षों तक (पशु के रूप में बार-बार जन्म लेकर) कटने, घावों, चोटों और खरोंचों से पीड़ित रहा है, या (मनुष्य के रूप में जन्म लेकर) हथियारों

से लगातार नष्ट होता रहा है, वह स्वयं भी, चाहे युवा हो, पुरुष हो या वृद्ध, तलवार से मर जाएगा। और नियत समय पर यही उसकी मृत्यु होगी।

42. 'आदरणीय नागसेना, जिस असमय मृत्यु की आप बात कर रहे हैं—अब मुझे उसका कारण बताइए।'

हे राजा, जिस प्रकार एक विशाल और शक्तिशाली अग्नि पर सूखी घास, टहनियाँ, शाखाएँ और पत्तियाँ ढेर कर दी जाती हैं, वह भी जब जलकर भस्म हो जाती है, तो ईंधन के समाप्त होने से बुझ जाती है। फिर भी ऐसी अग्नि के बारे में कहा जाता है कि वह समय आने पर बिना किसी विपत्ति या दुर्घटना के बुझ गई। ठीक उसी प्रकार, हे राजा, वह मनुष्य जो हजारों दिन जीने के बाद, वृद्ध और दुर्बल होकर अंत में मर जाता है...

बिना किसी विपत्ति या दुर्घटना के, वृद्धावस्था में मृत्यु को पूर्ण समय पर प्राप्त हुआ माना जाता है। परन्तु हे राजा, यदि कोई प्रचंड अग्नि हो जिस पर सूखी घास, टहनियाँ, डालियाँ और पत्तियाँ ढेर कर दी गई हों, और यदि कोई विशाल बादल उस पर वर्षा करे और ईंधन के पूरी तरह जलने से पहले ही वह अग्नि बुझ जाए, तो क्या हे राजा, यह कहा जा सकता है कि वह प्रचंड अग्नि पूर्ण समय पर बुझी?

'नहीं, महोदय, ऐसा नहीं हो सकता।'

लेकिन दूसरी आग अपनी प्रकृति में पहली आग से किस प्रकार भिन्न होगी?

'महोदय, दूसरा वाला, जो बारिश के प्रकोप से प्रभावित हुआ था—उसमें लगी आग समय से पहले ही बुझ गई होती।'

'हे राजा, जो भी व्यक्ति समय से पहले मरता है, वह किसी न किसी बीमारी के प्रकोप के कारण मरता है—जैसे कि गैस की अधिकता, पित्त की अधिकता, कफ की अधिकता, इन तीनों का संयोजन, तापमान में उतार-चढ़ाव, उचित देखभाल में कमी, उपचार, भूख, प्यास, आग, पानी या तलवार से होने वाली क्षति। हे राजा, यही कारण है कि समय से पहले मृत्यु होती है।'

43. 'या फिर, हे राजा, यह एक शक्तिशाली तूफानी बादल के समान है जो आकाश में उठकर वर्षा करता है और घाटियों और मैदानों को भर देता है। उस बादल से हुई वर्षा को बिना किसी विपत्ति या दुर्घटना के कहा जाएगा। ठीक उसी प्रकार, हे राजा, जो व्यक्ति दीर्घ जीवन जीने के बाद अंत में वृद्धावस्था में बिना किसी विपत्ति या दुर्घटना के वृद्धावस्था से मर जाता है, उसे कहा जाता है कि

समय की पूर्णता में मृत्यु को प्राप्त हुआ। परन्तु हे राजा, यदि कोई विशाल तूफानी बादल आकाश में उठे और जैसे ही वह उठे, एक प्रचंड हवा से छंट जाए, तो क्या यह कहा जा सकता है, हे राजा, कि वह बादल उचित समय पर नष्ट हो गया?

'नहीं, महोदय, ऐसा नहीं हो सकता।'

लेकिन दूसरे बादल की प्रकृति पहले बादल से किस प्रकार भिन्न होगी?

'महोदय, दूसरा वाला, जो बवंडर के प्रकोप से प्रभावित हुआ था, समय से पहले ही नष्ट हो गया होता।'

'हे राजा, जो भी व्यक्ति समय से पहले मरता है, वह किसी न किसी बीमारी के प्रकोप के कारण मरता है—जैसे कि गैस की अधिकता, पित्त की अधिकता, कफ की अधिकता, इन तीनों का संयोजन, तापमान में उतार-चढ़ाव, उचित देखभाल में कमी, उपचार, भूख, प्यास, आग, पानी या तलवार से होने वाली क्षति। हे राजा, यही कारण है कि समय से पहले मृत्यु होती है।'

44. हे राजा, इसे एक शक्तिशाली और घातक साँप के समान समझें, जो क्रोधित होकर किसी मनुष्य को काट ले और वह विष बिना किसी रुकावट या दुर्घटना के उसे मृत्यु दे दे। ऐसा कहा जाता है कि वह विष बिना किसी रुकावट या दुर्घटना के अपने लक्ष्य तक पहुँच गया। ठीक उसी प्रकार, हे राजा, जो मनुष्य दीर्घ जीवन जीने के बाद अंत में वृद्धावस्था में, बिना किसी विपत्ति या दुर्घटना के, वृद्धावस्था से मर जाता है, ऐसा कहा जाता है कि वह बिना किसी बाधा के अपने जीवन के लक्ष्य तक पहुँच गया, और समय की पूर्णता में उसकी मृत्यु हुई। परन्तु यदि कोई सपेरा किसी मनुष्य को, जो किसी विष से पीड़ित हो, कोई औषधि दे दे, तो

क्या यह कहा जा सकता है कि यदि काटने से जहर निकल गया, तो समय की पूर्णता में जहर निकल गया?

'नहीं, महोदय, ऐसा नहीं हो सकता।'

लेकिन हे राजा, दूसरे विष की प्रकृति पहले विष से किस प्रकार भिन्न होगी?

'महोदय, दूसरा वाला, जिस पर दवा के प्रयोग का असर हुआ था, उसे अपना अंतिम परिणाम प्राप्त होने से पहले ही हटा दिया गया होता।'

'हे राजा, जो भी व्यक्ति समय से पहले मरता है, वह किसी न किसी बीमारी के प्रकोप के कारण मरता है—जैसे कि गैस की अधिकता, पित्त की अधिकता, कफ की अधिकता, इन तीनों का संयोजन, तापमान में उतार-चढ़ाव, उचित देखभाल में कमी, उपचार, भूख, प्यास, आग, पानी या तलवार से होने वाली क्षति। हे राजा, यही कारण है कि समय से पहले मृत्यु होती है।'

45. 'हे राजा, इसे एक धनुर्धर द्वारा छोड़े गए तीर के समान समझें। यदि वह तीर अपने स्वाभाविक मार्ग के अंत तक पहुँच जाए, तो यह कहा जाएगा कि वह बिना किसी रुकावट के अपने लक्ष्य तक पहुँच गया है। ठीक उसी प्रकार, हे राजा, जो व्यक्ति दीर्घायु होकर वृद्धावस्था में बिना किसी विपत्ति या दुर्घटना के मर जाता है, उसे भी समय की पूर्णता में, बिना किसी बाधा के मृत्यु प्राप्त हुई कहा जाता है। परन्तु यदि धनुर्धर द्वारा तीर छोड़े जाने के समय कोई उसे पकड़ ले, तो क्या यह कहा जा सकता है कि वह तीर अपने मार्ग के अंत तक पहुँच गया है?'

'नहीं, महोदय, ऐसा नहीं हो सकता।'

लेकिन हे राजा, दूसरा तीर अपनी प्रकृति में पहले तीर से किस प्रकार भिन्न होगा?

'महोदय, बीच में हुई उस कार्रवाई से दूसरे तीर का मार्ग रुक गया।'

'हे राजा, जो भी व्यक्ति समय से पहले मरता है, वह किसी न किसी बीमारी के प्रकोप के कारण मरता है—जैसे कि गैस की अधिकता, पित्त की अधिकता, कफ की अधिकता, इन तीनों का संयोजन, तापमान में उतार-चढ़ाव, उचित देखभाल में कमी, उपचार, भूख, प्यास, आग, पानी या तलवार से होने वाली क्षति। हे राजा, यही कारण है कि समय से पहले मृत्यु होती है।'

46. हे राजा, इसे पीतल के बर्तन के समान समझें, जिस पर कोई व्यक्ति प्रहार करे। प्रहार करने से ध्वनि उत्पन्न हो और वह ध्वनि अपने निर्धारित पथ पर अंत तक पहुँच जाए। तब यह कहा जा सकता है कि ध्वनि बिना किसी रुकावट के अपने लक्ष्य तक पहुँच गई। ठीक इसी प्रकार, हे राजा, जो व्यक्ति दीर्घायु होकर वृद्धावस्था में बिना किसी विपत्ति या दुर्घटना के मर जाता है, उसे भी बिना किसी रुकावट के, समय की पूर्णता में मृत्यु प्राप्त हुई कहा जा सकता है। परन्तु यदि कोई व्यक्ति पीतल के बर्तन पर प्रहार करे और उससे ध्वनि उत्पन्न हो, परन्तु ध्वनि के पहुँचने से पहले ही कोई उसे स्पर्श कर दे और ध्वनि बंद हो जाए, तो क्या तब यह कहा जा सकता है कि ध्वनि अपने निर्धारित पथ पर अंत तक पहुँच गई है?

'नहीं, महोदय, ऐसा नहीं हो सकता।'

लेकिन हे राजा, दूसरी ध्वनि अपनी प्रकृति में पहली ध्वनि से किस प्रकार भिन्न होगी?

'महोदय, बीच में हुए स्पर्श के कारण वह ध्वनि दब गई।'

'हे राजा, जो भी व्यक्ति समय से पहले मरता है, वह किसी न किसी बीमारी के प्रकोप के कारण मरता है—जैसे कि गैस की अधिकता, पित्त की अधिकता, कफ की अधिकता, इन तीनों का संयोजन, तापमान में उतार-चढ़ाव, उचित देखभाल में कमी, उपचार, भूख, प्यास, आग, पानी या तलवार से होने वाली क्षति। हे राजा, यही कारण है कि समय से पहले मृत्यु होती है।'

47. हे राजा, इसे उस अनाज के बीज के समान समझें जो खेत में अच्छी तरह अंकुरित हुआ, और भरपूर वर्षा के कारण दूर-दूर तक अनेक बीजों से लदा हुआ, और फसल के पकने तक सुरक्षित रहा; उस अनाज को बिना किसी रुकावट के अपने उचित समय तक पहुँचा हुआ कहा जा सकता है। ठीक उसी प्रकार, हे राजा, जो व्यक्ति दीर्घायु होकर अंत में वृद्धावस्था में बिना किसी विपत्ति या दुर्घटना

के मर जाता है, उसे बिना किसी रुकावट के अपने उचित समय पर मृत्यु प्राप्त हुई कहा जा सकता है। परन्तु यदि वह अनाज खेत में अच्छी तरह अंकुरित होने के बाद पानी से वंचित होकर मर जाए, तो क्या उसे अपने उचित समय तक पहुँचा हुआ कहा जा सकता है?

'नहीं, महोदय, ऐसा नहीं हो सकता।'

लेकिन हे राजा, दूसरी फसल अपनी प्रकृति में पहली फसल से किस प्रकार भिन्न होगी?

'बीच में पड़ी भीषण गर्मी के कारण वह फसल नष्ट हो गई, महोदय।'

'हे राजा, जो भी व्यक्ति समय से पहले मरता है, वह किसी न किसी बीमारी के प्रकोप के कारण मरता है—जैसे कि गैस की अधिकता, पित्त की अधिकता, कफ की अधिकता, इन तीनों का संयोजन, तापमान में उतार-चढ़ाव, उचित देखभाल में कमी, उपचार, भूख, प्यास, आग, पानी या तलवार से होने वाली क्षति। हे राजा, यही कारण है कि समय से पहले मृत्यु होती है।'

48. 'क्या तुमने कभी सुना है, हे राजा, कि कोई नई फसल पककर पकने के बाद उसमें कीड़े पड़ गए और उसे जड़ तक नष्ट कर दिया?'

'हम दोनों ने ऐसी बात सुनी है, महोदय, और इसे देखा भी है।'

'हे राजा, क्या वह फसल समय पर नष्ट हुई थी या असमय?'

'मौसम ठीक नहीं है, महोदय। अगर कीड़ों ने फसल को नष्ट न किया होता तो वह कटाई के समय तक बच जाती।'

'तो फिर क्या हुआ, हे राजा! किसी आपदा के आने पर फसल नष्ट हो जाती है, लेकिन यदि उसे कोई नुकसान न हो, तो वह कटाई तक बची रहती है?'

'जी हां, महोदय।'

'हे राजा, ठीक इसी प्रकार, जो कोई भी समय से पहले मरता है, वह किसी बीमारी के प्रकोप के कारण मरता है—वात दोष की अधिकता से, या पित्त दोष से, या कफ दोष से, या इन तीनों के संयोजन से, या शरीर में होने वाले बदलावों से।'

तापमान, या सुरक्षा में असमानता, या दुर्व्यवहार, या भूख, या प्यास, या आग, या पानी, या तलवार। हे राजा, यही कारण है कि समय से पहले मृत्यु हो जाती है।

49. 'हे राजा, क्या तुमने कभी ऐसी फसल के बारे में सुना है जो उगी हो और अनाज के दानों के भार से झुक गई हो, बालियाँ ठीक से बन चुकी हों, तभी उस पर तथाकथित करक वर्षा (ओलावृष्टि) हुई और वह नष्ट हो गई?'

'हम दोनों ने ऐसी बात सुनी है, महोदय, और इसे देखा भी है।'

'अच्छा, हे राजा! क्या आप कहेंगे कि फसल समय पर नष्ट हुई या असमय?'

'मौसम ठीक नहीं है, महोदय। अगर ओलावृष्टि न हुई होती तो फसल कटाई के समय तक बनी रहती।'

'तो फिर क्या हुआ, हे राजा! किसी आपदा के आने पर फसल नष्ट हो जाती है, लेकिन यदि उसे कोई नुकसान न हो, तो वह कटाई तक बची रहती है?'

'जी हां, महोदय।'

हे राजा, जो भी व्यक्ति समय से पहले मरता है, वह किसी न किसी बीमारी के प्रकोप के कारण मरता है—जैसे कि गैस की अधिकता, पित्त की अधिकता, कफ की अधिकता, इन तीनों का संयोजन, तापमान में उतार-चढ़ाव, उचित देखभाल में असमानता, उपचार, भूख, प्यास, आग, पानी या तलवार के कारण। हे राजा,

राजा, यही वह कारण है जिसकी वजह से समय से पहले मृत्यु जैसी स्थिति उत्पन्न होती है।'

50. 'अत्यंत अद्भुत, नागसेन, अत्यंत विचित्र! आपने तर्क और उपमाओं के माध्यम से बहुत अच्छे से समझाया है कि लोग समय से पहले कैसे मर जाते हैं। आपने यह स्पष्ट और प्रत्यक्ष कर दिया है कि असमय मृत्यु जैसी कोई चीज होती है। नागसेन, एक नासमझ व्यक्ति भी, एक मंदबुद्धि व्यक्ति भी, आपकी किसी भी उपमा से इस निष्कर्ष पर पहुँच सकता था कि असमय मृत्यु होती है; तो एक सक्षम व्यक्ति कितना अधिक! महोदय, आपकी पहली उपमा से ही मैं आश्वस्त हो गया था कि ऐसी मृत्यु होती है, लेकिन फिर भी, और अधिक स्पष्टीकरण सुनने की इच्छा से, मैंने हार नहीं मानी।'

[अकाल मृत्यु से संबंधित दुविधा यहीं समाप्त होती है।]

[सत्तरवीं दुविधा। कब्र पर आश्चर्य।]

51. 'आदरणीय नागसेना, क्या उन सभी अरहतों (जो पूरी तरह से गुजर चुके हैं) की केतिया (राख पर बने टीले) में कोई आश्चर्य है?'

'हे राजा, कुछ लोगों के बारे में, लेकिन दूसरों के बारे में नहीं।'

लेकिन महोदय, इनमें से किस बात में यह बात लागू होती है और किस बात में नहीं?

हे राजा, तीन प्रकार के लोगों के दृढ़ संकल्प के कारण ही किसी पूर्णतः मुक्त हो चुके मृत व्यक्ति के केतिया पर्व पर चमत्कार घटित होते हैं। वे तीन कौन हैं? हे राजा, सर्वप्रथम, एक अरहत, जीवित रहते हुए, देवताओं और मनुष्यों पर दया करते हुए यह संकल्प कर सकता है: "मेरे केतिया पर्व पर अमुक-अमुक चमत्कार घटित हों।" तब उसके संकल्प के कारण वहाँ चमत्कार घटित होते हैं। इस प्रकार, पूर्णतः मुक्त हो चुके व्यक्ति के केतिया पर्व पर एक अरहत के संकल्प के कारण चमत्कार घटित होते हैं।

और फिर, हे राजा, मनुष्य पर दया करके देवता पूर्णतः मुक्त हुए व्यक्ति के केतिया पर्व पर चमत्कार प्रकट करते हैं, यह सोचते हुए: "इस चमत्कार से पृथ्वी पर सच्चा धर्म सदा स्थापित रहे, और मनुष्य, विश्वास करते हुए, कृपा में वृद्धि करे!" इस प्रकार पूर्णतः मुक्त हुए व्यक्ति के केतिया पर्व पर देवता के संकल्प से चमत्कार घटित होते हैं।

और फिर, हे राजा, कोई स्त्री या कोई विश्वासशील, सक्षम, बुद्धिमान, ज्ञानवान और अंतर्दृष्टि से परिपूर्ण पुरुष जानबूझकर इत्र, या माला, या वस्त्र लेकर केतिया पर रख सकता है, और यह संकल्प कर सकता है: "ऐसा चमत्कार हो!" इस प्रकार पूर्णतः मुक्त व्यक्ति की केतिया पर मनुष्यों के संकल्प से चमत्कार घटित होते हैं।

52. हे महाराज, ये तीन प्रकार के लोग हैं जिनके दृढ़ संकल्प से मृत अरहतों के केतियाओं में चमत्कार होते हैं। और हे महाराज, यदि इनमें से किसी एक में भी ऐसा दृढ़ संकल्प न हो, तो

क्या उस व्यक्ति के केतिया होने पर आश्चर्य नहीं है जिसके आसव नष्ट हो गए हों, जिसने छह प्रकार की अंतर्दृष्टि प्राप्त कर ली हो, जो स्वयं पर स्वामी हो? और यदि ऐसा कोई आश्चर्य नहीं है, तो हे राजा, हमें उस पवित्र आचरण को याद करना चाहिए जो हमने देखा है, और विश्वास के साथ यह निष्कर्ष निकालना चाहिए: "निश्चित रूप से, बुद्धों का यह बालक पूर्णतः मुक्त हो गया है!"

'बहुत बढ़िया, नागसेना! यह सच है, और मैं इसे आपके कहे अनुसार स्वीकार करता हूँ।'

[कब्र पर आश्चर्य करने की दुविधा यहीं समाप्त होती है।]

[अठहत्तरवीं दुविधा: धर्मांतरण और आचरण।]

53. 'आदरणीय नागसेना, जो लोग अपने जीवन को सही ढंग से व्यवस्थित करते हैं—क्या वे सभी सत्य की अंतर्दृष्टि प्राप्त करते हैं, या उनमें से कुछ ऐसे भी हैं जो ऐसा नहीं कर पाते?'

'हे राजा, कुछ लोग ऐसा करते हैं, और कुछ नहीं करते।'

'तो फिर कौन से करते हैं, महोदय, और कौन से नहीं करते?'

हे राजा, जो पशु रूप में जन्म लेता है, वह चाहे अपने जीवन को सही ढंग से व्यवस्थित करे, फिर भी सत्य की अंतर्दृष्टि प्राप्त नहीं कर पाएगा, न ही वह जो जन्म लेता है।

न तो प्रेत जगत का कोई व्यक्ति, न ही गलत विचार रखने वाला, न ही कपटी व्यक्ति, न ही अपनी माता, पिता या अरहत की हत्या करने वाला, न ही संघ में फूट डालने वाला, न ही बुद्ध का रक्त बहाने वाला, न ही गुप्त रूप से संघ से जुड़ने वाला, न ही विकृत व्यक्ति, न ही संघ की किसी बहन का अपमान करने वाला, न ही तेरह गंभीर अपराधों में से किसी एक का दोषी होने के बावजूद पुनर्वासित न हुआ व्यक्ति, न ही नपुंसक, न ही उभयलिंगी—और सात वर्ष से कम आयु का कोई भी मनुष्य बालक, चाहे वह अपने जीवन को सही ढंग से व्यवस्थित करे, सत्य की अंतर्दृष्टि प्राप्त नहीं कर सकता। हे राजा, इन सोलह व्यक्तियों को सत्य की अंतर्दृष्टि प्राप्त नहीं होती, चाहे वे अपने जीवन को सही ढंग से व्यवस्थित करें।

54. आदरणीय नागसेना, आपने जिन पंद्रह का सबसे पहले विरोध किया है, उनमें अंतर्दृष्टि की संभावना हो भी सकती है और नहीं भी। लेकिन सात वर्ष से कम आयु का शिशु, भले ही वह अपने जीवन को सही ढंग से व्यवस्थित करे, अंतर्दृष्टि क्यों न प्राप्त कर सकता है? इसमें अभी भी एक अनसुलझा प्रश्न है। क्या यह स्वीकार नहीं किया जाता कि बच्चे में न तो वासना होती है, न द्वेष, न सुस्ती, न अहंकार, न विधर्म, न असंतोष, न कामुक विचार? पाप से अछूता होने के कारण, जिसे हम शिशु कहते हैं, वह अंतर्दृष्टि प्राप्त करने के योग्य और तैयार होता है।

अरहत पद प्राप्त करने वाला भी—वह तो चार सत्यों को एक नजर में ही भेदने में कितना अधिक सक्षम होगा!'

हे महाराज, मेरे इस कथन का कारण यह है कि शिशु, चाहे वह अपने जीवन को सही ढंग से व्यवस्थित करे, अंतर्दृष्टि प्राप्त नहीं कर सकता। हे महाराज, यदि सात वर्ष से कम आयु का शिशु, वासना जगाने वाली बातों के प्रति आसक्ति महसूस कर सके, अधर्म की ओर ले जाने वाले कार्यों में भटक सके, गुमराह करने वाली बातों में मूर्ख बन सके, मोह उत्पन्न करने वाली बातों के प्रति पागल हो सके, विधर्म को समझ सके, संतोष और असंतोष में भेद कर सके, सद्‌गुण और दुर्गुण का विचार कर सके, तो शायद उसे अंतर्दृष्टि प्राप्त हो सकती है। परन्तु हे महाराज, सात वर्ष से कम आयु के शिशु का मन शक्तिहीन, दुर्बल, तुच्छ, छोटा, अस्पष्ट और मंदबुद्धि होता है, जबकि निर्वाण का मूल सिद्धांत पारलौकिक, महत्वपूर्ण, गहन, व्यापक और विस्तृत है। इसलिए, हे महाराज, शिशु, अपने अपूर्ण मन के कारण, इतने महान विचार को ग्रहण करने में असमर्थ होता है। हे राजा, यह सिनेरू पर्वत के समान है, जो भारी-भरकम, विशाल और शक्तिशाली है—क्या कोई मनुष्य अपनी साधारण शक्ति, सामर्थ्य और ऊर्जा से उस पर्वत को जड़ से उखाड़ सकता है?

'बिल्कुल नहीं, महोदय।'

'लेकिन क्यों नहीं?'

'मनुष्य की कमजोरी के कारण, और पर्वत के राजा सिनेरू की शक्ति के कारण।'

'हे राजा, शिशु के मन का निर्वाण से ठीक यही संबंध है।'

55. 'और फिर, हे राजा, यह विशाल पृथ्वी के समान है, लंबी और चौड़ी, विस्तार और फैलाव में विशाल, विशाल और शक्तिशाली - क्या अब पानी की एक छोटी सी बूंद उस विशाल पृथ्वी को गीला करके कीचड़ में बदल सकती है?'

'बिल्कुल नहीं, महोदय।'

'लेकिन क्यों नहीं, हे राजा?'

'पानी की बूंद के सूक्ष्म आकार के कारण, और पृथ्वी की विशालता के कारण।'

'हे राजा, शिशु के मन का निर्वाण से यही संबंध है।'

56. 'या फिर, हे राजा, मान लीजिए कि एक कमजोर और शक्तिहीन, छोटी, नन्ही, सीमित और मंद अग्नि हो - क्या इतनी तुच्छ अग्नि से अंधकार को दूर करना और देवताओं और मनुष्यों के पूरे संसार में प्रकाश प्रकट करना संभव होगा?'

'बिल्कुल नहीं, महोदय।'

'लेकिन क्यों नहीं, हे राजा?'

'आग की मंदता के कारण, और संसार की महानता के कारण।'

'हे महाराज, सात वर्ष से कम आयु के बच्चे का मन शक्तिहीन, कमजोर, सीमित, महत्वहीन, अस्पष्ट और मंदबुद्धि होता है; वह अज्ञान के घने अंधकार से ढका रहता है। इसलिए, उसके लिए ज्ञान के प्रकाश से जगमगाना कठिन होता है। और यही कारण है, हे महाराज, कि सात वर्ष से कम आयु के शिशु को, भले ही वह सही आचरण करे, सत्य की अंतर्दृष्टि प्राप्त नहीं हो सकती।'

57. 'हे राजा, मान लीजिए कि एक सालक है, जो शरीर से बहुत छोटा और रोगग्रस्त है, और वह एक हाथी राजा को अपने मांद की ओर आते हुए देखता है, जिसमें तीन स्थानों पर मद के लक्षण दिखाई दे रहे हैं, जिसकी लंबाई नौ क्यूबिट, चौड़ाई तीन क्यूबिट, परिधि दस क्यूबिट और ऊंचाई सात क्यूबिट है, तो क्या वह हाथी उसे निगलने के इरादे से अपनी ओर खींचने लगता है - हे राजा, क्या वह सालक ऐसा कर पाएगा?'

'बिल्कुल नहीं, महोदय।'

'लेकिन क्यों नहीं, हे राजा?'

'शालक के शरीर की सूक्ष्मता और हाथी राजा के विशाल आकार के कारण।'

'हे राजा, ठीक इसी प्रकार सात वर्ष से कम आयु के बच्चे का मन शक्तिहीन, दुर्बल, सीमित, तुच्छ, अस्पष्ट और सुस्त होता है। निर्वाण का अमृतमय सार महान और दिव्य है। ऐसे शक्तिहीन, दुर्बल, सीमित, तुच्छ, अस्पष्ट और सुस्त मन से वह निर्वाण के महान और दिव्य सार को ग्रहण नहीं कर सकता।'

और यही कारण है, हे राजा, कि सात वर्ष से कम आयु के शिशु को, भले ही वह अपने आचरण को सही ढंग से व्यवस्थित करे, सत्य की अंतर्दृष्टि प्राप्त नहीं हो सकती।

'बहुत बढ़िया, नागसेना! यह सच है, और मैं इसे आपके कहे अनुसार स्वीकार करता हूँ।'

[धर्मांतरण और आचरण को लेकर दुविधा यहीं समाप्त होती है।]

[उनहत्तरवीं दुविधा। निर्वाण का दर्द।]

58. 'आदरणीय नागसेन, यह कैसा है? क्या निर्वाण पूर्णतः आनंद है, या उसमें कुछ पीड़ा भी है?'

'हे राजा, निर्वाण पूर्णतः आनंद है। इसमें किसी प्रकार का दुख समाहित नहीं है।'

''हे महोदय, यह एक ऐसी बात है जिस पर हम विश्वास नहीं कर सकते—कि निर्वाण ही पूर्ण आनंद है। इस विषय पर, नागसेन, हमारा मानना है कि निर्वाण में पीड़ा भी शामिल होती है। और इस मत को अपनाने का एक कारण है। वह कारण क्या है? नागसेन, जो निर्वाण

की खोज करते हैं, वे शरीर और मन दोनों से परिश्रम और लगन का अभ्यास करते हैं, खड़े होने, चलने, बैठने, लेटने और खाने में संयम बरतते हैं, नींद का दमन करते हैं, इंद्रियों को वश में रखते हैं, धन-संग्रह, प्रिय सगे-संबंधियों और मित्रों का त्याग करते हैं।" लेकिन संसार में जो भी आनंदित और प्रसन्न रहते हैं, वे पाँचों इंद्रिय सुखों में मग्न रहते हैं और उनमें लीन रहते हैं—वे अपनी आँखों को अनेक प्रकार के सुखदायक दृश्यों से प्रसन्न करते हैं, जो उन्हें उस समय सबसे अच्छे लगते हैं—वे अपने कानों को अनेक प्रकार के आनंदमय उत्सव और गीतों की ध्वनियों से प्रसन्न करते हैं, जो उन्हें उस समय सबसे अच्छे लगते हैं—वे अपनी सूंघने की इंद्रिय को अनेक प्रकार की फूलों, फलों, पत्तियों, छाल, जड़ों और रस की सुगंधों से प्रसन्न करते हैं, जो उन्हें उस समय सबसे अच्छी लगती हैं—वे अपनी जीभ को अनेक प्रकार के सुखदायक स्वादों से प्रसन्न करते हैं, जो उन्हें उस समय सबसे अच्छे लगते हैं—वे अपनी स्पर्श इंद्रिय को अनेक प्रकार के सुखदायक संवेदनाओं से प्रसन्न करते हैं, जो उन्हें उस समय सबसे अच्छी लगती हैं—वे अपने मन को अनेक प्रकार की शुद्ध और सूक्ष्म धारणाओं से प्रसन्न करते हैं। अशुद्ध, अच्छे और बुरे, जैसे भी उन्हें सबसे ज्यादा पसंद हों। दूसरी ओर, आप उन्हें रोकते और नष्ट करते हैं।

ये आपके नेत्र, कान, नाक, जीभ, शरीर और मन के विकास को बाधित और अवरुद्ध करते हैं। इसलिए आपका शरीर और मन दोनों ही पीड़ित हैं, और शरीर के पीड़ित होने से आपको शारीरिक कष्ट और पीड़ा होती है, और मन के पीड़ित होने से आपको मानसिक कष्ट और पीड़ा होती है। क्या तपस्वी मार्गंदिया ने भी भगवान बुद्ध की आलोचना करते हुए नहीं कहा था, "समान गौतम वृद्धि का नाश करने वाले हैं?"

59. 'हे महाराज, निर्वाण में कोई पीड़ा नहीं है। यह शुद्ध आनंद है। हे महाराज, जब आप कहते हैं कि निर्वाण पीड़ादायक है, तो जिसे आप "पीड़ादायक" कहते हैं, वह निर्वाण नहीं है। यह निर्वाण की प्राप्ति की प्रारंभिक अवस्था है, यह निर्वाण की खोज की प्रक्रिया है। निर्वाण स्वयं शुद्ध और सरल आनंद है, इसमें कोई पीड़ा नहीं है। और मैं आपको इसका स्पष्टीकरण दूंगा। हे महाराज, क्या राजाओं द्वारा भोगे जाने वाले संप्रभुता के आनंद जैसी कोई वस्तु है?'

'बिल्कुल।'

'और क्या उस आनंद में कोई पीड़ा भी मिश्रित नहीं होती, हे राजा?'

'नहीं, महोदय।'

लेकिन फिर, हे राजा, ऐसा क्यों होता है कि जब उनके सीमावर्ती प्रांतों में विद्रोह भड़क उठता है, तो राजा उन प्रांतों के निवासियों को फिर से अपने अधीन करने के उद्देश्य से, अपने मंत्रियों और सरदारों के साथ, अपने घरों को छोड़कर चले जाते हैं?

सैनिक और उनके अंगरक्षक, समतल और ऊबड़-खाबड़ जमीन पर मार्च करते हुए, मच्छरों, मक्खियों और गर्म हवाओं से परेशान होकर, भयंकर लड़ाइयों में संलग्न होते हैं, और मृत्यु की आशंका से पीड़ित होते हैं?

'हे आदरणीय नागसेन, यह संप्रभुता का आनंद नहीं है। यह तो उस आनंद की प्राप्ति की प्रारंभिक अवस्था मात्र है। जब वे इस प्रकार कष्ट सहते हुए संप्रभुता की खोज कर लेते हैं, तभी उन्हें उसका आनंद प्राप्त होता है। और इस प्रकार, हे नागसेन, वह आनंद स्वयं कष्ट से रहित है, क्योंकि संप्रभुता का आनंद एक बात है और कष्ट दूसरी।'

हे महाराज, निर्वाण भी उसी प्रकार पूर्ण आनंद है, उसमें कोई पीड़ा नहीं होती। जो निर्वाण की खोज में लगे रहते हैं, वे अपने मन और शरीर को कष्ट देते हैं, खड़े होने, चलने, बैठने, लेटने और भोजन करने में संयम बरतते हैं, अपनी नींद को दबाते हैं, अपनी इंद्रियों को वश में रखते हैं, यहाँ तक कि अपने शरीर और प्राण का भी त्याग कर देते हैं। परन्तु जब वे इस प्रकार पीड़ा सहते हुए निर्वाण की खोज करते हैं, तभी वे उस निर्वाण का आनंद लेते हैं जो शुद्ध आनंद है—जैसे राजा अपने शत्रुओं को परास्त करने के बाद संप्रभुता का आनंद लेते हैं। हे महाराज, निर्वाण पूर्ण आनंद है, उसमें कोई पीड़ा नहीं होती। क्योंकि निर्वाण एक है और पीड़ा दूसरी।

60. 'हे राजा, इसी बात की एक और व्याख्या सुनो। हे राजा, क्या ज्ञान का ऐसा आनंद भी होता है जो उन शिक्षकों को प्राप्त होता है जिन्होंने यह पाठ्यक्रम पूरा किया है?'

'जी हां, महोदय, है।'

'तो क्या ज्ञान का वह आनंद पीड़ा से मिश्रित है?'

'नहीं।'

तो फिर, हे राजा, उनके कष्टों से क्या लाभ है?

क्या वे अपने शिक्षकों के सामने झुककर और खड़े होकर, पानी भरकर, कोठरी की सफाई करके, दांत साफ करने वाली छड़ियों और धोने के पानी को तैयार रखकर, बचे हुए टुकड़ों पर जीवन यापन करके, शैम्पू करने, स्नान करने और पैर धोने में सेवा करके, अपनी इच्छा का दमन करके और दूसरों की इच्छा के अनुसार कार्य करके, असुविधा में सोकर और अरुचिकर भोजन खाकर स्वयं को संयमित करते हैं?

'नागसेन, वह ज्ञान का आनंद नहीं है, बल्कि ज्ञान प्राप्ति की प्रारंभिक अवस्था है। गुरु जब कष्ट सहते हुए ज्ञान की खोज करते हैं, तभी उन्हें ज्ञान का आनंद प्राप्त होता है। इस प्रकार, नागसेन, ज्ञान का आनंद कष्ट से रहित होता है। क्योंकि ज्ञान का आनंद एक चीज है और कष्ट दूसरी।'

हे महाराज, निर्वाण भी इसी प्रकार पूर्णतः आनंद है, उसमें किसी प्रकार का दुख नहीं है। जो निर्वाण की खोज में लगे रहते हैं, वे अपने मन और शरीर को कष्ट देते हैं, खड़े होने, चलने, बैठने, लेटने और भोजन करने में संयम बरतते हैं, अपनी नींद को दबाते हैं, अपनी इंद्रियों को वश में रखते हैं, यहाँ तक कि अपने शरीर और प्राण का भी त्याग कर देते हैं। परन्तु इस प्रकार कष्ट सहते हुए निर्वाण की खोज करने के बाद ही वे उस निर्वाण का आनंद लेते हैं जो शुद्ध आनंद है—जैसे गुरु ज्ञान के आनंद का अनुभव करते हैं। हे महाराज, निर्वाण पूर्णतः आनंद है, उसमें किसी प्रकार का दुख नहीं है। क्योंकि निर्वाण एक है और दुख दूसरा।

'बहुत बढ़िया, नागसेना! यह सच है, और मैं इसे आपके कहे अनुसार स्वीकार करता हूँ।'

[निर्वाण की पीड़ा से संबंधित दुविधा यहीं समाप्त होती है।]

[अस्सीवीं दुविधा। निर्वाण का बाह्य स्वरूप।]

61. 'आदरणीय नागसेन, यह निर्वाण जिसके बारे में आप हमेशा बात करते रहते हैं—क्या आप रूपक, व्याख्या, तर्क या दलील के माध्यम से इसके स्वरूप, आकृति, अवधि या माप को स्पष्ट कर सकते हैं?'

'हे राजा, निर्वाण के समान कुछ भी नहीं है। न तो किसी रूपक, न ही व्याख्या, न ही तर्क, न ही दलील से इसके स्वरूप, न ही आकृति, न ही अवधि, न ही माप को स्पष्ट किया जा सकता है।'

'नागसेन, मुझे यह बात समझ में नहीं आती कि निर्वाण, जो वास्तव में एक विद्यमान अवस्था है, उसका रूप, आकार, अवधि या माप किसी भी तरह से समझाना इतना असंभव है! मुझे इसका कुछ स्पष्टीकरण दीजिए।'

62. 'बहुत अच्छा, हे राजा, मैं ऐसा ही करूँगा। हे राजा, क्या विशाल सागर जैसी कोई वस्तु है?'

'हां, महासागर मौजूद है।'

'मान लीजिए कि कोई आपसे पूछे, "महाराज, समुद्र में कितना पानी है और उसमें कितने जीव निवास करते हैं?" यह प्रश्न पूछे जाने पर आप उसे क्या उत्तर देंगे?'

ऐसे प्रश्न का उत्तर मैं इस प्रकार दूंगा: "मेरे प्रिय मित्र! यह एक ऐसा प्रश्न है जो आप मुझसे नहीं पूछ सकते। किसी को भी ऐसा प्रश्न नहीं पूछना चाहिए।

यह एक ऐसा मुद्दा है जिसे अनसुना ही रहना चाहिए। भौतिकविदों ने कभी भी समुद्र का उस तरह से अध्ययन नहीं किया है। और न ही कोई वहां के पानी को माप सकता है, न ही उसमें रहने वाले जीवों की गिनती कर सकता है। इसलिए, महोदय, मुझे उत्तर देना चाहिए।

63. 'पर हे राजा, आप समुद्र के विषय में ऐसा उत्तर क्यों दे रहे हैं, जबकि वास्तव में वह एक विद्यमान स्थिति है? क्या आपको गिनकर उसे यह नहीं बताना चाहिए था, "समुद्र में इतना पानी है और उसमें इतने जीव निवास करते हैं?"'

'यह असंभव होगा, महोदय। यह प्रश्न किसी की शक्ति से परे है।'

हे महाराज, जिस प्रकार समुद्र के जल की मात्रा या उसमें रहने वाले जीवों की संख्या बताना असंभव है, यद्यपि समुद्र का अस्तित्व है, उसी प्रकार आपके द्वारा सुझाए गए किसी भी तरीके से निर्वाण के स्वरूप, आकृति, अवधि या माप को बताना असंभव है, यद्यपि यह एक ऐसी अवस्था है जिसका अस्तित्व है। और हे महाराज, यदि कोई जादुई शक्तियों वाला, मन पर स्वामी, समुद्र के जल और जीवों की गिनती कर भी ले, तो भी वह निर्वाण के स्वरूप, आकृति, अवधि या माप को नहीं बता सकता।

64. 'और हे राजा, इसी बात की एक और व्याख्या सुनो। हे राजा, क्या देवताओं में से कुछ ऐसे हैं जिन्हें "निराकार" कहा जाता है?'

'जी हां, महोदय। मैंने सुना है कि ऐसे लोग होते हैं।'

'हे राजा, क्या आप रूपक, व्याख्या, तर्क या दलील के माध्यम से इन देवताओं, यानी "निराकार" देवताओं के रूप, आकृति, अवधि या आकार को स्पष्ट कर सकते हैं?'

'नहीं, मैं नहीं कर सकता।'

'तो फिर, हे राजा, कोई नहीं है।'

'हे महोदय, निराकार सत्ताएँ वास्तव में विद्यमान हैं; फिर भी आपके द्वारा सुझाए गए किसी भी तरीके से न तो उनके रूप या आकृति, न ही उनकी अवधि और न ही उनके आकार की व्याख्या करना असंभव है।'

'हे राजा, जिस प्रकार निराकार देवताओं के रूप, आकार, अवधि या आकार को बताना असंभव है, यद्यपि वे अंततः विद्यमान प्राणी हैं, उसी प्रकार आपके द्वारा सुझाए गए किसी भी तरीके से निर्वाण के रूप, आकार, अवधि या माप की व्याख्या करना असंभव है, यद्यपि अंततः यह एक ऐसी अवस्था है जो विद्यमान है।'

65. 'आदरणीय नागसेन, मैं मानता हूँ कि निर्वाण शुद्ध आनंद है, फिर भी उपमा या व्याख्या, तर्क या वाद-विवाद से, न तो इसका रूप और न ही इसकी अवधि और न ही इसका आकार स्पष्ट किया जा सकता है। लेकिन क्या निर्वाण का कोई ऐसा गुण नहीं है जो अन्य गुणों में भी अंतर्निहित हो?

क्या यह ऐसी चीज है जिसे रूपक के माध्यम से स्पष्ट किया जा सकता है?

'यद्यपि इसके स्वरूप के बारे में ऐसा कुछ भी नहीं है जिसे इस प्रकार समझाया जा सके, हे राजा, इसके गुणों के बारे में कुछ ऐसा अवश्य है जिसे समझाया जा सकता है।'

'हे शुभ शब्द, नागसेन! जल्दी बोलिए, ताकि मुझे निर्वाण के गुणों में से कम से कम एक बिंदु का स्पष्टीकरण मिल सके। मेरे हृदय की बेचैनी को शांत कीजिए। अपने शब्दों की शीतलता और मधुरता से इसे शांत कीजिए!'

'हे राजा, निर्वाण में कमल का एक गुण अंतर्निहित है, जल के दो गुण, औषधि के तीन गुण, सागर के चार गुण, भोजन के पाँच गुण, आकाश के दस गुण, इच्छा पूरी करने वाले रत्न के तीन गुण, लाल चंदन के तीन गुण, घी के झाग के तीन गुण और पर्वत शिखर के पाँच गुण अंतर्निहित हैं।'

66. 'आदरणीय नागसेना, कमल का वह गुण जिसके बारे में आपने कहा था कि वह निर्वाण में अंतर्निहित है, वह कौन सा गुण है?'

'हे महाराज, जैसे कमल जल से अछूता रहता है, वैसे ही निर्वाण किसी भी बुरी प्रवृत्ति से अछूता रहता है। यही कमल का गुण है जो निर्वाण में अंतर्निहित है।'

67. 'आदरणीय नागसेन, आपने जिन जल के दो गुणों को निर्वाण में अंतर्निहित बताया है, वे कौन से हैं?'

'हे महाराज, जैसे जल शीतलता प्रदान करके ऊष्मा को शांत करता है, वैसे ही निर्वाण शीतलता प्रदान करता है और सभी बुरे भावों से उत्पन्न ज्वर को शांत करता है। यह निर्वाण में निहित जल का पहला गुण है। और फिर, हे महाराज, जैसे जल मनुष्यों और पशुओं की प्यास बुझाता है जब वे थके हुए और चिंतित होते हैं, पीने के लिए तरसते हैं और प्यास से पीड़ित होते हैं, वैसे ही निर्वाण कामवासना, भविष्य के जीवन की लालसा और सांसारिक समृद्धि की लालसा की प्यास बुझाता है। यह निर्वाण में निहित जल का दूसरा गुण है।'

68. 'आदरणीय नागसेना, आपने जिन तीन औषधीय गुणों को निर्वाण में अंतर्निहित बताया है, वे कौन से हैं?'

'हे महाराज, जिस प्रकार औषधि विष से पीड़ित प्राणियों का आश्रय होती है, उसी प्रकार निर्वाण बुरे स्वभावों के विष से पीड़ित प्राणियों का आश्रय होता है। यह निर्वाण में निहित औषधि का पहला गुण है। और फिर, हे महाराज, जिस प्रकार औषधि रोगों का अंत करती है, उसी प्रकार निर्वाण दुःखों का अंत करता है। यह निर्वाण में निहित औषधि का दूसरा गुण है। और फिर, हे महाराज, जिस प्रकार औषधि अमृत है, उसी प्रकार निर्वाण भी अमृत है। यह निर्वाण में निहित औषधि का तीसरा गुण है।'

69. 'आदरणीय नागसेन, आपने जिन चार गुणों को निर्वाण में अंतर्निहित बताया है, वे कौन-कौन से हैं?'

हे महाराज, जैसे सागर शवों से रहित है, वैसे ही निर्वाण भी सभी बुरे स्वभावों के शवों से रहित है। हे महाराज, यह निर्वाण में निहित सागर का पहला गुण है। और हे महाराज, जैसे सागर विशाल और असीम है, फिर भी उसमें गिरने वाली सभी नदियों से भर नहीं पाता; वैसे ही निर्वाण विशाल और असीम है, और उसमें प्रवेश करने वाले सभी प्राणियों से भर नहीं पाता। यह निर्वाण में निहित सागर का दूसरा गुण है। और हे महाराज, जैसे सागर शक्तिशाली प्राणियों का निवास स्थान है, वैसे ही निर्वाण महान पुरुषों—अरहतों—का निवास स्थान है, जिनमें महाबुराइयाँ और सभी दोष नष्ट हो चुके हैं, जो शक्ति से परिपूर्ण हैं और स्वयं के स्वामी हैं। यह निर्वाण में निहित सागर का तीसरा गुण है। और फिर, हे राजा, जैसे सागर अपनी लहरों की असंख्य, विविध और सुंदर फूलों से खिल उठता है, वैसे ही निर्वाण भी असंख्य और सुंदर फूलों से खिल उठता है।

पवित्रता, ज्ञान और मुक्ति के विविध और उत्तम फूल। यही निर्वाण में निहित सागर का चौथा गुण है।

70. 'आदरणीय नागसेन, आपने जिन पांच गुणों वाले भोजन को निर्वाण में अंतर्निहित बताया है, वे कौन से हैं?'

हे महाराज, जिस प्रकार भोजन समस्त प्राणियों के जीवन का आधार है, उसी प्रकार निर्वाण, जब प्राप्त हो जाता है, जीवन का आधार है, क्योंकि यह वृद्धावस्था और मृत्यु का अंत करता है। यह निर्वाण में निहित भोजन का पहला गुण है। और फिर, हे महाराज, जिस प्रकार भोजन समस्त प्राणियों की शक्ति बढ़ाता है, उसी प्रकार निर्वाण, जब प्राप्त हो जाता है, समस्त प्राणियों की इद्धि शक्ति को बढ़ाता है। यह निर्वाण में निहित भोजन का दूसरा गुण है। और फिर, हे महाराज, जिस प्रकार भोजन समस्त प्राणियों के सौंदर्य का स्रोत है, उसी प्रकार निर्वाण, जब प्राप्त हो जाता है, समस्त प्राणियों के लिए पवित्रता के सौंदर्य का स्रोत है। यह निर्वाण में निहित भोजन का तीसरा गुण है। और फिर, हे महाराज, जिस प्रकार भोजन समस्त प्राणियों के दुखों का अंत करता है, उसी प्रकार निर्वाण, जब प्राप्त हो जाता है, समस्त प्राणियों के सभी बुरे स्वभावों से उत्पन्न दुखों का अंत करता है। यह निर्वाण में निहित भोजन का चौथा गुण है। और फिर, हे राजा, जिस प्रकार भोजन सभी प्राणियों में भूख की कमजोरी को दूर करता है, उसी प्रकार निर्वाण की प्राप्ति होने पर वह सभी प्राणियों में भूख और हर प्रकार के दर्द से उत्पन्न कमजोरी को दूर करता है। यह निर्वाण में निहित भोजन का पाँचवाँ गुण है।

71. 'आदरणीय नागसेन, आपने जिन दस गुणों को निर्वाण में अंतर्निहित बताया है, वे कौन-कौन से हैं?'

'हे राजा, जिस प्रकार अंतरिक्ष न तो जन्म लेता है, न बूढ़ा होता है, न मरता है, न मिटता है और न पुनर्जन्म लेता है (उसी प्रकार)

क्योंकि निर्वाण असंपीड्य है, चोरों द्वारा चुराया नहीं जा सकता, किसी चीज पर टिका नहीं है, वह वह क्षेत्र है जिसमें पक्षी उड़ते हैं, वह निर्मल है और अनंत है; इसलिए, हे राजा, निर्वाण न तो जन्म लेता है, न बूढ़ा होता है, न मरता है, न नष्ट होता है, उसका कोई पुनर्जन्म नहीं होता (कोई भविष्य का जीवन नहीं होता), वह अजेय है, चोर उसे चुरा नहीं सकते, वह किसी चीज से जुड़ा नहीं है, वह वह क्षेत्र है जिसमें अरहत विचरण करते हैं, कोई चीज उसे अवरुद्ध नहीं कर सकती और वह अनंत है। ये निर्वाण में निहित अंतरिक्ष के दस गुण हैं।

72. 'आदरणीय नागसेन, आपने कहा था कि निर्वाण में इच्छा पूर्ति करने वाले रत्न के वे तीन गुण अंतर्निहित होते हैं, वे कौन से हैं?'

'हे राजा, जैसे मनोकामना रत्न सभी मनोकामनाओं को तृप्त करता है, वैसे ही निर्वाण भी करता है। यह निर्वाण में निहित मनोकामना रत्न का पहला गुण है। और फिर, हे राजा, जैसे मनोकामना रत्न आनंद का स्रोत होता है, वैसे ही निर्वाण भी होता है। यह निर्वाण में निहित मनोकामना रत्न का दूसरा गुण है। और फिर, हे राजा, जैसे मनोकामना रत्न तेज से परिपूर्ण होता है, वैसे ही निर्वाण भी तेज से परिपूर्ण होता है। यह निर्वाण में निहित मनोकामना रत्न का तीसरा गुण है।'

73. 'आदरणीय नागसेन, लाल चंदन की वे तीन खूबियाँ जिनके बारे में आपने कहा था कि वे निर्वाण में अंतर्निहित हैं, वे कौन सी हैं?'

'हे महाराज, जैसे लाल चंदन दुर्लभ है, वैसे ही निर्वाण प्राप्त करना कठिन है। निर्वाण में निहित लाल चंदन का यह पहला गुण है। और हे महाराज, जैसे लाल चंदन अपनी सुगंध में अद्वितीय है, वैसे ही निर्वाण अद्वितीय है। निर्वाण में निहित लाल चंदन का यह दूसरा गुण है। और हे महाराज, जैसे सभी अच्छे लोग लाल चंदन की प्रशंसा करते हैं, वैसे ही सभी श्रेष्ठ लोग निर्वाण की प्रशंसा करते हैं। निर्वाण में निहित लाल चंदन का यह तीसरा गुण है।'

74. 'आदरणीय नागसेन, घी की मलाई के वे तीन गुण जिनके बारे में आपने कहा था कि वे निर्वाण में अंतर्निहित हैं, वे कौन से हैं?'

'हे महाराज, जैसे घी रंग में सुंदर होता है, वैसे ही निर्वाण धर्म में सुंदर होता है। यह निर्वाण में निहित घी का पहला गुण है। और हे महाराज, जैसे घी में मनभावन सुगंध होती है, वैसे ही निर्वाण में धर्म की मनभावन सुगंध होती है। यह निर्वाण में निहित घी का दूसरा गुण है। और हे महाराज, जैसे घी का स्वाद मनभावन होता है, वैसे ही निर्वाण का स्वाद मनभावन होता है। यह निर्वाण में निहित घी का तीसरा गुण है।'

75. 'आदरणीय नागसेन, आपने जिन पर्वत शिखर के पाँच गुणों को निर्वाण में अंतर्निहित बताया है, वे कौन से हैं?'

जैसे पर्वत शिखर बहुत ऊँचा होता है, वैसे ही निर्वाण भी बहुत ऊँचा होता है। यह निर्वाण में निहित पर्वत शिखर का पहला गुण है। और फिर, हे राजा, जैसे पर्वत शिखर अचल होता है, वैसे ही निर्वाण भी अचल होता है। यह निर्वाण में निहित पर्वत शिखर का दूसरा गुण है। और फिर, हे राजा,

जैसे पर्वत की चोटी तक पहुंचना असंभव है, वैसे ही निर्वाण सभी बुरी प्रवृत्तियों से अछूता है। यह निर्वाण में निहित पर्वत की चोटी का तीसरा गुण है। और फिर, हे राजा, जैसे पर्वत की चोटी वह स्थान है जहाँ कोई वनस्पति नहीं उग सकती, वैसे ही निर्वाण वह अवस्था है जिसमें कोई बुरी प्रवृत्ति नहीं पनप सकती। यह निर्वाण में निहित पर्वत की चोटी का चौथा गुण है। और फिर, हे राजा, जैसे पर्वत की चोटी प्रसन्नता और द्वेष दोनों से मुक्त होती है, वैसे ही निर्वाण भी मुक्त होता है। यह निर्वाण में निहित पर्वत की चोटी का पाँचवाँ गुण है।

[323] 'बहुत अच्छा, नागसेना! यह सच है, और मैं इसे आपके कहे अनुसार स्वीकार करता हूँ।'

[निर्वाण के स्वरूप से संबंधित समस्या यहीं समाप्त होती है।]

[इकतीसवीं दुविधा। निर्वाण का समय।]

76. 'आदरणीय नागसेना, आपके लोग कहते हैं:

"निर्वाण न तो अतीत है, न भविष्य है, न वर्तमान है, न उत्पन्न है, न अउत्पन्न है, और न ही उत्पन्न होने योग्य है।"

'तो फिर, नागसेन, क्या वह व्यक्ति जो अपने जीवन को सही ढंग से व्यवस्थित करके निर्वाण प्राप्त करता है, किसी पूर्वनिर्मित वस्तु को प्राप्त करता है, या वह पहले स्वयं उसे उत्पन्न करता है और फिर उसे प्राप्त करता है?'

'हे राजा, न तो यह, न ही वह। फिर भी, हे राजा, निर्वाण (निब्बान-धातु) का वह सिद्धांत, जिसे वह अपने जीवन को सही ढंग से व्यवस्थित करके प्राप्त करता है—वह विद्यमान है।'

'हे आदरणीय नागसेन, इस पहेली को और अंधकारमय बनाकर हल न कीजिए! इसे स्पष्ट और सरल कीजिए। दृढ़ संकल्प और अथक प्रयास से, जो कुछ आपको सिखाया गया है, वह सब इसमें उड़ेल दीजिए। यह वह मुद्दा है जिस पर यह जनता भ्रमित है, उलझन में डूबी है, संदेह में खोई है। इस दोषपूर्ण अनिश्चितता को दूर कीजिए; यह तीर की तरह चुभती है!'

77. हे राजा, निर्वाण का वह सिद्धांत विद्यमान है, जो इतना शांत, इतना आनंदमय और इतना कोमल है। और वह व्यक्ति जो अपने जीवन को सही ढंग से व्यवस्थित करता है, विजेताओं की शिक्षाओं के अनुसार सभी चीजों (संस्कारों) के विचार को ग्रहण करते हुए, अपनी बुद्धि से उसे प्राप्त करता है—ठीक वैसे ही जैसे एक शिष्य अपने ज्ञान से, अपने गुरु के निर्देशानुसार, किसी कला का उस्ताद बन जाता है।

और यदि आप पूछें: "निर्वाण को कैसे जाना जा सकता है?" तो यह दुख और खतरे से मुक्ति, विश्वास, शांति, स्थिरता, आनंद, खुशी, कोमलता, पवित्रता और ताजगी से प्राप्त होता है।

78. 'हे राजा, न्याय करो, जैसे कोई व्यक्ति धधकती भट्टी में सूखी लकड़ियों के कई गट्ठों से जलाया जा रहा हो, और जब वह अपने आप को उससे मुक्त कर ले

हिंसक प्रयास करके, किसी ठंडी जगह पर पहुँचकर, जो व्यक्ति अपने जीवन को सही ढंग से व्यवस्थित करता है, वह परम आनंद का अनुभव करेगा—ठीक उसी प्रकार, जो कोई अपने जीवन को सही दिशा देता है, वह अपने सजग चिंतन से निर्वाण के परम आनंद को प्राप्त करेगा, जिसमें काम, द्वेष और भ्रम की तीन अग्नियाँ भस्म हो जाती हैं। हे राजा, इस तीन अग्नियों को भट्टी के समान समझो; अपने जीवन को सही दिशा देने वाले व्यक्ति को अग्नि में गिरे हुए व्यक्ति के समान समझो; निर्वाण को ठंडी जगह के समान समझो।

79. हे राजा, फिर, जैसे कोई व्यक्ति साँपों, कुत्तों, मनुष्यों, मल-मूत्र और कचरे से भरे गड्ढे में गिर जाता है, और जब वह शवों के बालों में उलझकर किसी ऐसे स्थान पर पहुँच जाता है जहाँ कोई शव नहीं होता, तो उसे परम आनंद प्राप्त होता है—ठीक उसी प्रकार जो कोई अपने जीवन को सही ढंग से व्यवस्थित करता है, वह अपने चिंतन से निर्वाण के परम आनंद को प्राप्त करेगा, जहाँ से सभी बुरे स्वभावों के शव हटा दिए गए हैं। हे राजा, आपको इंद्रियों के चारों सुखों को शव के समान समझना चाहिए; शवों के बीच गिरे हुए व्यक्ति को सही ढंग से जीवन जीने वाले व्यक्ति के समान समझना चाहिए; शवों से मुक्त स्थान को निर्वाण के समान समझना चाहिए।

80. हे राजा, जैसे कोई व्यक्ति (जो हाथों में तलवार लिए शत्रुओं के बीच गिर पड़ा हो), भय और आतंक से कांपता हुआ, व्याकुल और विचलित मन से, जब वह बलपूर्वक उनसे मुक्त होकर किसी मजबूत शरणस्थल, किसी सुरक्षित स्थान पर पहुँच जाता है, तो परम आनंद का अनुभव करता है—ठीक उसी प्रकार जो कोई भी अपने जीवन को सही ढंग से व्यवस्थित करता है, वह अपने सावधानीपूर्वक चिंतन से निर्वाण के परम आनंद को प्राप्त कर लेगा।

जिसमें भय और आतंक दूर हो गए हैं। हे राजा, जिस प्रकार जन्म, वृद्धावस्था, रोग और मृत्यु के कारण बार-बार उत्पन्न होने वाली चिंता को भय के समान समझो, उसी प्रकार अपने जीवन को सही ढंग से व्यवस्थित करने वाले भयभीत व्यक्ति को, निर्वाण के समान शरणस्थान समझो।

81. हे राजा, फिर उसी प्रकार, जैसे कोई व्यक्ति कीचड़, गंदगी और कीचड़ से लथपथ स्थान पर गिरकर, बड़े प्रयास से कीचड़ से मुक्त होकर स्वच्छ और निर्मल स्थान पर पहुँच जाता है, तो उसे परम आनंद प्राप्त होता है। ठीक उसी प्रकार, जो भी व्यक्ति अपने जीवन को सही ढंग से व्यवस्थित करता है, वह अपने चिंतन से निर्वाण के परम आनंद को प्राप्त कर लेता है, जहाँ से उसके बुरे स्वभाव के दाग और कीचड़ दूर हो जाते हैं। हे राजा, आय, मान-सम्मान और प्रशंसा को कीचड़ के समान ही महत्व दें, जैसे कीचड़ में गिरे हुए व्यक्ति को, वैसे ही निर्वाण को, जैसे स्वच्छ और निर्मल स्थान को।

82. और यदि तुम फिर पूछो, "जो अपने जीवन को सही ढंग से व्यवस्थित करता है, वह निर्वाण कैसे प्राप्त करता है?" (मैं उत्तर दूंगा), हे राजा, जो अपने जीवन को सही ढंग से व्यवस्थित करता है, वह सभी चीजों के विकास के सत्य को समझ लेता है, और ऐसा करते समय वह उसमें जन्म, वृद्धावस्था, रोग और मृत्यु को देखता है। परन्तु वह उसमें सुख या आनंद नहीं देखता, वह उसमें, चाहे आरंभ में हो, मध्य

में हो या अंत में, कुछ भी ऐसा नहीं देखता जिसे (स्थायी संतुष्टि के रूप में) प्राप्त किया जा सके। हे राजा, यदि मनुष्य लोहे का एक पिंड हो तो वह ऐसा ही है।

दिनभर गर्म रहने के बावजूद, यदि सब कुछ धधक रहा होता, झुलस रहा होता और लाल-गर्म होता, तो भी उस पर, चाहे एक छोर पर हो, मध्य में हो या दूसरे छोर पर, कोई ऐसा स्थान नहीं मिलता जिसे पकड़ा जा सके—ठीक उसी प्रकार, हे राजा, जो अपने जीवन को सही ढंग से व्यवस्थित करता है, वह चीजों के विकास के सत्य को समझ लेता है, और ऐसा करने में वह उसमें जन्म, वृद्धावस्था, रोग और मृत्यु को देखता है। परन्तु वह उसमें न तो सुख देखता है, न ही आनंद, वह उसमें, चाहे आरंभ में हो, मध्य में हो या अंत में, कुछ भी ऐसा नहीं देखता जिसे (स्थायी संतुष्टि के रूप में) पकड़ा जा सके।

83. 'जब उसे कोई स्थायी संतोष नहीं मिलता, तो उसके मन में असंतोष उत्पन्न होता है, और उसके शरीर में बुखार छा जाता है, और बिना किसी आश्रय या सुरक्षा के, वह निराश होकर बार-बार जन्म लेने से ऊब जाता है। जैसे कोई व्यक्ति जलती हुई भयंकर भट्टी में गिर जाए, और उसे कोई आश्रय या बचने का रास्ता न दिखे, तो वह निराश होकर आग से ऊब जाएगा—ठीक वैसे ही, हे राजा, जब उसे कोई स्थायी संतोष नहीं मिलता, तो उसके मन में असंतोष उत्पन्न होता है, और उसके शरीर में बुखार छा जाता है, और बिना किसी आश्रय या सुरक्षा के, वह निराश होकर बार-बार जन्म लेने से ऊब जाता है।'

84. 'और जो इस प्रकार अनुभव करता है उसके मन में

क्षणभंगुर जीवन की असुरक्षा (अनगिनत जन्मों से फिर से शुरुआत करने की) से यह विचार उत्पन्न होता है: "यह अंतहीन जन्म-जन्म का चक्र जल रहा है, धधक रहा है! यह पीड़ा और निराशा से भरा है! काश कोई ऐसी अवस्था प्राप्त कर पाता जिसमें जन्म-जन्म का चक्र न हो, तो शांति होगी, वह मधुर होगी - इन सभी अवस्थाओं का अंत, इन सभी दोषों (काम, बुराई और कर्म) से मुक्ति, लालसाओं का अंत, वासना का अभाव, शांति, निर्वाण!" और इसी के साथ उसका मन उस अवस्था की ओर अग्रसर होता है जिसमें जन्म-जन्म का चक्र नहीं होता, और तब उसे शांति प्राप्त होती है, तब वह इस विचार से प्रफुल्लित और आनंदित होता है: "अंततः मुझे शरण मिल गई!" हे राजा, ठीक वैसे ही जैसे कोई व्यक्ति किसी परदेस में भटककर रास्ता खो देता है, और जब उसे जंगल से मुक्त एक ऐसा रास्ता दिखाई देता है जो उसे घर ले जाएगा, तो वह संतुष्ट मन से उस पर आगे बढ़ता है, यह सोचकर आनंदित होता है: "आखिरकार मुझे रास्ता मिल गया!" ठीक उसी प्रकार, जो व्यक्ति क्षणभंगुर जन्मों की अनिश्चितता को महसूस करता है, उसके मन में यह विचार उठता है: "यह अंतहीन जन्म-जन्म का चक्र आग की लपटों में घिरा है, जल रहा है, धधक रहा है! यह पीड़ा और निराशा से भरा है! काश कोई ऐसी अवस्था प्राप्त कर पाता जिसमें जन्म-जन्म का चक्र ही न हो, तो शांति होगी, वह मधुर होगी - इन सभी अवस्थाओं का अंत, इन सभी दोषों का निवारण, इच्छाओं का अंत, कामवासना का अभाव, शांति, निर्वाण!" और इसी के साथ उसका मन उस अवस्था की ओर अग्रसर हो उठता है जिसमें जन्म-जन्म का चक्र नहीं होता।

और तब उसे शांति मिलती है, तब वह इस विचार से प्रफुल्लित और आनंदित होता है: "अंततः मुझे शरण मिल ही गई!" और वह उस मार्ग पर पूरी शक्ति से प्रयास करता है, उसकी खोज करता है, उसमें पूर्णतः अभ्यस्त हो जाता है, इसी उद्देश्य से वह अपने आत्म-नियंत्रण को दृढ़ करता है, इसी उद्देश्य से वह प्रयास में दृढ़ रहता है, इसी उद्देश्य से वह (सभी लोकों के सभी प्राणियों के प्रति) प्रेम में अडिग रहता है, और बार-बार उसी ओर अपना मन लगाता रहता है, जब तक कि क्षणभंगुरता से बहुत दूर जाकर वह वास्तविक सत्य, (अरहत्व का) सर्वोच्च फल प्राप्त नहीं कर लेता। और जब वह उसे प्राप्त कर लेता है, हे राजा, तो अपने जीवन को सही दिशा देने वाले व्यक्ति ने (सामने से) निर्वाण को प्राप्त कर लिया है!

'बहुत बढ़िया, नागसेना! यह सच है, और मैं इसे आपके कहे अनुसार स्वीकार करता हूँ।'

[निर्वाण के समय को लेकर समस्या यहीं समाप्त होती है।]

[बयासीवीं दुविधा। निर्वाण का स्थान।]

85. 'आदरणीय नागसेन, क्या पूर्व, दक्षिण, पश्चिम या उत्तर दिशा में, ऊपर, नीचे या क्षितिज पर कोई ऐसा स्थान है जहाँ निर्वाण संचित होता है?'

'हे राजा, पूर्व, दक्षिण, पश्चिम, उत्तर, ऊपर, नीचे या क्षितिज पर कहीं भी निर्वाण नहीं है।'

लेकिन यदि ऐसा है, नागसेन, तो निर्वाण का अस्तित्व ही नहीं हो सकता, और जो इसे प्राप्त करते हैं, उनका अहसास व्यर्थ है। और मैं आपको इसका स्पष्टीकरण देता हूँ। जैसे पृथ्वी पर खेत हैं जिनमें फसलें उगाई जा सकती हैं, फूल हैं जिनसे सुगंध आती है, झाड़ियाँ हैं जिन पर फूल उगते हैं, पेड़ हैं जिन पर फल पकते हैं, खदानें हैं जिनसे रत्न निकाले जा सकते हैं, ताकि जो कोई भी इन चीजों की इच्छा रखता है वह वहाँ जाकर उसे प्राप्त कर सकता है—ठीक वैसे ही, नागसेन, यदि निर्वाण का अस्तित्व है तो यह अपेक्षित है कि कोई ऐसा स्थान हो जहाँ यह उत्पन्न होता हो। लेकिन चूंकि ऐसा कोई स्थान नहीं है, इसलिए मैं घोषणा करता हूँ कि निर्वाण का कोई अस्तित्व नहीं हो सकता, और जो इसे प्राप्त करते हैं, उनका अहसास व्यर्थ है।

86. 'हे राजा, निर्वाण का कोई स्थान नहीं है।'

स्थित होते हुए भी निर्वाण विद्यमान है, और जो अपने जीवन को सही ढंग से व्यवस्थित करता है, वह सजगतापूर्वक ध्यान लगाकर निर्वाण को प्राप्त कर लेगा। जैसे अग्नि विद्यमान है, फिर भी ऐसी कोई जगह नहीं है जहाँ अग्नि (स्वयं) संग्रहित हो। परन्तु यदि कोई मनुष्य दो लकड़ियों को आपस में रगड़े तो अग्नि उत्पन्न होती है; ठीक उसी प्रकार, हे राजा, निर्वाण विद्यमान है, यद्यपि ऐसी कोई जगह नहीं है जहाँ वह संग्रहित हो। और जो अपने जीवन को सही ढंग से व्यवस्थित करता है, वह सजगतापूर्वक ध्यान लगाकर निर्वाण को प्राप्त कर लेगा।

87. हे राजा, जैसे राजाओं के राजा के सात खजाने होते हैं—चक्र का खजाना, हाथी का खजाना, घोड़े का खजाना, रत्न का खजाना, स्त्री का खजाना, वित्त मंत्री का खजाना और सलाहकार का खजाना। लेकिन इन खजानों को रखने के लिए कोई जगह नहीं है। जब कोई राजा सही आचरण करता है, तो ये खजाने उसे अपने आप प्रकट हो जाते हैं—ठीक वैसे ही, हे राजा, निर्वाण विद्यमान है, यद्यपि इसे रखने के लिए कोई जगह नहीं है। और जो अपने जीवन को सही ढंग से व्यवस्थित करता है, वह सजगतापूर्वक ध्यान लगाकर निर्वाण को प्राप्त कर लेगा।

88. 'आदरणीय नागसेन, मान लीजिए कि निर्वाण का कोई स्थान संचित नहीं है। परन्तु क्या कोई ऐसा स्थान है जहाँ मनुष्य खड़ा होकर अपने जीवन को सही ढंग से व्यवस्थित करके निर्वाण को प्राप्त कर सके?'

'जी हां, हे राजा, ऐसा स्थान है।'

'तो फिर, नागसेना, वह स्थान कौन सा है?'

'हे राजा, सद्‌गुण ही स्थान है। क्योंकि यदि सद्‌गुण में दृढ़ और सजग हो—चाहे सिथियनों की भूमि में हो या यूनानियों की, चाहे चीन में हो या

[पैराग्राफ जारी है] चाहे वह अलेक्जेंड्रिया में हो या निकुम्बा में, चाहे बनारस में हो या कोसल में, चाहे कश्मीर में हो या गांधार में, चाहे पर्वत की चोटी पर हो या सर्वोच्च स्वर्ग में—वह कहीं भी हो, जो व्यक्ति अपने जीवन को सही ढंग से व्यवस्थित करता है, उसे निर्वाण प्राप्त होगा। हे राजा, जिस प्रकार वह व्यक्ति जिसकी आँखें हर जगह होती हैं—चाहे वह स्किथियनों के देश में हो या यूनानियों के देश में, चीन में हो या तातार प्रदेश में, अलेक्जेंड्रिया, निकुम्बा, बनारस या कोसल में, कश्मीर में हो या गांधार में, पर्वत की चोटी पर हो या सर्वोच्च स्वर्ग में—स्वर्ग के विस्तार को देख सकता है और अपने सामने क्षितिज को निहार सकता है—ठीक उसी प्रकार, हे राजा, जो व्यक्ति अपने आचरण को सही ढंग से व्यवस्थित करता है और एकाग्र रहता है—चाहे वह स्किथियनों के देश में हो या यूनानियों के देश में, चाहे चीन में हो या तातार प्रदेश में, चाहे अलेक्जेंड्रिया, बनारस, कोसल या निकुम्बा में, चाहे कश्मीर में हो या गांधार में, चाहे पर्वत की चोटी पर हो या सर्वोच्च स्वर्ग में—वह जहाँ कहीं भी हो, निर्वाण की प्राप्ति कर सकता है।

'बहुत खूब, नागसेन! आपने मुझे निर्वाण और उसकी प्राप्ति का उपदेश दिया है, आपने सद्‌गुणों के लाभों को बताया है, आपने सर्वोच्च उपलब्धि को समझाया है, आपने सत्य का ध्वज बुलंद किया है, आपने सत्य की दृष्टि स्थापित की है, आपने यह दिखाया है कि उच्च उद्देश्यों वाले लोगों द्वारा अपनाए गए सही साधन न तो

न तो बंजर और न ही निष्फल। यह सच है, और मैं इसे आपके कहे अनुसार स्वीकार करता हूँ।

[निर्वाण के स्थान से संबंधित समस्या यहीं समाप्त होती है।]

[यहाँ आठवाँ अध्याय समाप्त होता है।]

टिपिटक >> सुत्त पिटक >> खुद्दक निकाय >> मिलिंदपन्हा >> पुस्तक V: अनुमान की समस्या

अनुवादक: टी.डब्ल्यू. राइस डेविड्स

पिछला <<<<-----||-17-||----->>>> अगला

1. अब राजा मिलिंद नागसेन के पास गए और उनके सामने प्रणाम करके एक तरफ बैठ गए। वहाँ बैठकर वे जानने, सुनने और याद करने की तीव्र इच्छा से, ज्ञान के प्रकाश को प्रज्वलित करने और अपने अज्ञान को चकनाचूर करने की लालसा से प्रेरित होकर, अपने भीतर साहस और उत्साह जगाया और संयम और चिंतन से परिपूर्ण होकर नागसेन से इस प्रकार बोले:

2. 'आदरणीय नागसेना, मुझे बताइए, क्या आपने कभी बुद्ध को देखा है?'

'नहीं, हे राजा।'

'तो क्या आपके शिक्षकों ने कभी बुद्ध को देखा है?'

'नहीं, महाराज।'

'तो हे पूज्य नागसेन, आप कहते हैं कि आपने कभी बुद्ध को नहीं देखा, और न ही आपके गुरुओं ने बुद्ध को देखा है। इसलिए, नागसेन, बुद्ध का अस्तित्व ही नहीं था। इस स्थिति में, बुद्ध के अस्तित्व का कोई स्पष्ट प्रमाण नहीं है।'

लेकिन क्या वे प्राचीन क्षत्रिय वास्तव में मौजूद थे, जिन्होंने राजाओं के उस वंश की स्थापना की जिससे आप आते हैं?

'बिल्कुल, महोदय। इसमें भला कोई संदेह कैसे हो सकता है?'

'अच्छा, हे राजा। क्या आपने उन्हें कभी देखा है?'

'नहीं, महोदय।'

और जिन्होंने आपको शिक्षा दी—परिवार के पादरी, कर्मचारी, कानून बनाने वाले और राज्य के मंत्री—क्या उन्होंने कभी उन प्राचीन क्षत्रियों को देखा है?

'नहीं, महोदय।'

'यदि आपने न तो उन्हें देखा है, न ही अपने शिक्षकों को, तो वे कहाँ हैं? उस स्थिति में, उन प्राचीन क्षत्रियों का कोई स्पष्ट प्रमाण नहीं है!'

3. 'परन्तु, नागसेन, उनके द्वारा प्रयुक्त राजसी प्रतीक चिन्ह आज भी देखे जा सकते हैं—राजकीय सफेद धूपदानी, मुकुट, चप्पलें, याक की पूंछ वाला पंखा, राजकीय तलवार और अमूल्य सिंहासन—और इनसे हम जान और विश्वास कर सकते हैं कि प्राचीन काल में क्षत्रिय रहते थे।'

हे महाराज, इसी प्रकार हम उस भगवान को जान सकते हैं और उन पर विश्वास कर सकते हैं। क्योंकि हमारे ज्ञान और विश्वास का एक कारण है कि वह भगवान थे। और वह कारण क्या है? उस भगवान द्वारा, ज्ञान और अंतर्दृष्टि के स्वामी, अरहत, परम बुद्ध द्वारा प्रयुक्त राजचिह्न अभी भी देखे जा सकते हैं - स्वयं को तैयार और सचेत रखने के चार साधन, चार प्रकार का महा संघर्ष, इद्धि के चार चरण,

नैतिक इंद्रियों के पांच अंग, पांच नैतिक शक्तियां, अरहतों के ज्ञान के सात रूप और आर्य अष्टांगिक मार्ग - और इनके द्वारा संपूर्ण ज्ञान प्राप्त किया जा सकता है।

देवताओं और मनुष्यों का संसार यह जानता और मानता है कि भगवान बुद्ध एक समय अस्तित्व में थे। इसी कारण, इसी आधार पर, इसी तर्क से, इसी निष्कर्ष से यह ज्ञात हो सकता है कि भगवान बुद्ध जीवित थे।

वह व्यक्ति, जो स्वयं उस आनंदमय अवस्था में मुक्त हो गया है, जिसमें उपाधियाँ समाप्त हो चुकी हैं—कामना, पाप और कर्म—और जिसने दुखों के सागर से असंख्य लोगों को सुरक्षित किनारे तक पहुँचाया है—केवल अनुमान से ही यह जाना जा सकता है कि वह, श्रेष्ठ पुरुष, एक समय अस्तित्व में था।

4. 'आदरणीय नागसेना, मुझे एक उदाहरण दीजिए।'

हे राजा, जिस प्रकार एक नगर निर्माता नगर निर्माण करते समय सबसे पहले एक सुंदर, समतल भूमि का चयन करता है, जिसमें कोई दोष न हो, कोई पहाड़ियाँ या खाइयाँ न हों, ऊबड़-खाबड़ और पथरीली भूमि न हो, और आक्रमण का कोई खतरा न हो। फिर, जब वह उस भूमि पर बचे हुए किसी भी ऊबड़-खाबड़ स्थान को समतल कर लेता है, तो वह सभी ठूंठों और खूंटियों को पूरी तरह से हटा देता है, और वहाँ एक सुंदर और सुव्यवस्थित नगर का निर्माण शुरू करता है, जिसे उपयुक्त भागों में विभाजित किया गया हो, जिसके चारों ओर खाइयाँ और प्राचीरें बनाई गई हों, मजबूत द्वार, पहरेदार मीनारें और बुर्ज हों, चौड़े चौक और खुले स्थान हों, चौराहे हों (जहाँ दो सड़कें मिलती हैं) और चौराहे हों (जहाँ चार सड़कें मिलती हैं)।

सड़कें मिलती हैं), साफ-सुथरी और समतल ऊंची सड़कों के साथ, खुली दुकानों (बाजारों) की नियमित कतारों के साथ, पार्कों, उद्यानों, झीलों, कमल-तालाबों और कुओं से सुसज्जित, कई प्रकार के देवी-देवताओं के मंदिरों से सुशोभित, हर दोष से मुक्त। और फिर जब शहर अपनी पूरी शान में खड़ा होता, तो वह किसी दूसरे देश चला जाता। और समय के साथ वह शहर शक्तिशाली और समृद्ध हो जाता, खाद्य भंडारों से भरा, शांतिपूर्ण, गौरवशाली, सुखी, संकट और विपत्ति से मुक्त, सभी प्रकार और स्थितियों के लोगों का मिलन स्थल। फिर कुलीन और ब्राह्मण, व्यापारी और कामगार; हाथियों, घोड़ों और रथों पर सवार सैनिक; पैदल सेना, धनुर्धर और तलवारबाज; ध्वजवाहक, अधिकारी और शिविर-अनुयायी; उच्च कुल के योद्धा जिन्हें युद्ध में आनंद आता है, युद्ध के चैंपियन, हाथियों के समान शक्तिशाली पुरुष, नायक, चमड़े के कवच में लड़ने वाले पुरुष, बड़े घरानों में गुलामों से जन्मे या शाही सेना के सैनिकों से जन्मे समर्पित योद्धा; पेशेवर पहलवानों की टुकड़ियाँ;

रसोइये और करी बनाने वाले, नाई और स्नान कराने वाले, लोहार और फूलवाले, सोने, चांदी, सीसा, टिन, तांबा, पीतल और लोहे का काम करने वाले और जौहरी; संदेशवाहक; कुम्हार, नमक इकट्ठा करने वाले, चमड़ा बनाने वाले, गाड़ी बनाने वाले, हाथी दांत पर नक्काशी करने वाले, रस्सी बनाने वाले, कंघी बनाने वाले, सूती धागा कातने वाले, टोकरी बनाने वाले, धनुष बनाने वाले, धनुष की डोरी बनाने वाले, तीर बनाने वाले, चित्रकार, रंग बनाने वाले, रंगसाज, बुनकर, दर्जी, सोने का परख करने वाले, कपड़े के व्यापारी, इत्र विक्रेता, घास काटने वाले, लकड़ी काटने वाले, किराए के नौकर, जंगल में फूल, फल और जड़ें इकट्ठा करके जीवन यापन करने वाले लोग, उबले हुए चावल बेचने वाले, केक बेचने वाले, मछली विक्रेता, कसाई, शराब विक्रेता, नाटककार, नर्तक, कलाबाज, जादूगर, पेशेवर कवि, पहलवान।

[पैराग्राफ जारी है] (मुक्केबाज), शव जलाने वाले, सड़े हुए फूलों से तराशने वाले, जंगली लोग, जंगल के जंगली आदमी, वेश्याएं, स्विंगर और जम्पर, और गुंडों की गुलाम लड़कियां—कई देशों के लोग, सिथिया, बैक्ट्रिया, चीन और विलाता के लोग; उगेनी, भारुकक्खा, बनारस, कोसल और सीमावर्ती क्षेत्रों के लोग; मगध, साकेत, सूरत और पश्चिम के लोग; कोटुंबरा और मदुरा से, अलेक्जेंड्रिया, कश्मीर और गांधार से—ये सभी वहां आकर बसने लगे और नए शहर को व्यवस्थित, दोषरहित, परिपूर्ण और सुखद पाकर यह जान गए: "जिस वास्तुकार ने इस शहर का निर्माण किया है, वह वास्तव में कुशल रहा होगा!"

5. हे राजा, ठीक उसी प्रकार, वह परम पूज्य, अद्वितीय, अतुलनीय, अतुलनीय, वजन या गणना से परे प्रशंसनीय, अनंत गुणों से परिपूर्ण, सद्‌गुण और पूर्णता से भरपूर, ज्ञान, महिमा, उत्साह और शक्ति में असीम, जिसने सभी पूर्णताओं के शिखर को प्राप्त किया...

बुद्धों में से एक, जिसने मारा और उसकी समस्त सेना को पराजित किया, उसने विधर्म के जाल को चीरते हुए, अज्ञान को त्यागकर, ज्ञान का उदय करते हुए, सत्य की मशाल को बुलंद करते हुए, स्वयं बुद्धत्व की ओर अग्रसर हुआ, और इस प्रकार, युद्ध में अजेय और अपराजेय रहते हुए, इस धर्म नगर का निर्माण किया। और हे राजा, भगवान बुद्ध के धर्म नगर की प्राचीर धर्म है, खाई पाप के भय से भरी

है, द्वार के ऊपर ज्ञान है, उसके ऊपर पहरेदार के लिए उत्साह है, आधार पर स्तंभों के लिए आस्था है, द्वार के पहरेदार के लिए जागरूकता है, ऊपर की छत के लिए ज्ञान है, बाजार के लिए सुत्तन्त हैं, चौराहों के लिए अभिधम्म है, न्याय कक्ष के लिए विनय (धार्मिक विधि) है, और मुख्य सड़क के लिए निरंतर आत्मसंयम है। और हे राजा, उस गली में ये बाज़ार खुले हैं—फूलों का बाज़ार, फलों का बाज़ार, औषधियों का बाज़ार, औषधियों का बाज़ार, अमृत का बाज़ार, कीमती पत्थरों का बाज़ार और हर प्रकार के व्यापार का बाज़ार।

6. 'परन्तु, आदरणीय नागसेना, भगवान बुद्ध का पुष्प बाजार क्या है?'

हे महाराज, ध्यान के कुछ विषय हैं, जिनका ज्ञान और अंतर्दृष्टि के स्वामी, परम बुद्ध, अरहत ने उल्लेख किया है। वे ये हैं: अनित्यता का विचार, किसी भी स्थायी सिद्धांत (किसी भी वस्तु या प्राणी में किसी आत्मा का) का अभाव, शरीर से जुड़ी अशुद्धता और खतरे का विचार, बुरी प्रवृत्तियों से मुक्ति का विचार, वासना से मुक्ति का विचार, शांति का विचार, और शरीर से असंतोष का विचार।

संसार की वस्तुएँ, सभी परिस्थितियों की क्षणभंगुर प्रकृति का विचार, समाधि की अवस्था का विचार, शव के क्षय की विभिन्न अवस्थाओं का विचार, मृत्युदंड स्थल की सभी भयावहताओं का विचार, सभी प्राणियों के प्रति प्रेम का विचार, सभी प्राणियों के प्रति दया का विचार, सभी प्राणियों के प्रति सहानुभूति का विचार, जीवन की सभी बदलती परिस्थितियों में समभाव का विचार, मृत्यु का विचार और शरीर का विचार। हे राजा, ये वे विषय हैं जिन पर भगवान बुद्ध ने ध्यान करने का निर्देश दिया है। और इनमें से जो कोई भी वृद्धावस्था और मृत्यु से मुक्ति पाने की इच्छा से किसी एक को अपने ध्यान का विषय बनाता है, उस ध्यान से वह वासना, द्वेष, सुस्ती, अहंकार और गलत विचारों से मुक्त हो जाता है; इससे वह संसार सागर को पार कर लेता है, भोग-विलास की बाढ़ को रोक देता है, अपने आप को तीन प्रकार के दोषों से शुद्ध कर लेता है और अपने भीतर के सभी दोषों को नष्ट कर देता है। और इस प्रकार, उस गौरवशाली नगर में प्रवेश करके, जो निर्मल, निर्मल, पवित्र और श्वेत, शाश्वत और अमर है, जहाँ सब कुछ सुरक्षा, शांति और आनंद से परिपूर्ण है—निर्वाण के नगर में—वह अपने मन को अरहत्त्व में मुक्त करता है! और हे राजा, यही वह है जिसे "भगवान बुद्ध का पुष्प बाजार" कहा जाता है।

"कर्म को कीमत मानकर साथ ले जाओ, और उस बाजार में जाओ, वहाँ से अपने विचारों के लिए एक वस्तु खरीदो, खुद को मुक्त करो। मुक्त हो जाओ!"

7. 'और हे पूज्य नागसेना, भगवान बुद्ध का इत्र बाजार क्या है?'

हे राजा, कुछ विशेष प्रकार के सद्‌गुण हैं जिनका उल्लेख भगवान बुद्ध ने किया है, और उस धर्म की सुगंध से अभिषिक्त होकर भगवान बुद्ध के बच्चे, अच्छाई की सुगंध से समस्त संसार को, हर दिशा में, हवा की दिशा में और हवा के विपरीत, भर देते हैं, और बार-बार उसमें व्याप्त होते रहते हैं। वे कौन से प्रकार हैं? शरण लेने का सद्‌गुण।

वह सद्‌गुण जो पंचगुणी, अष्टगुणी और दशगुणी है, और आत्मसंयम का सद्‌गुण जो पातिमोक्खा के पाँच पाठों में सारणीबद्ध है। और हे राजा, यही वह है जिसे "भगवान बुद्ध का इत्र बाजार" कहा जाता है। क्योंकि हे राजा, सभी देवताओं के स्वामी भगवान बुद्ध ने कहा है:

"किसी भी फूल की सुगंध हवा के विपरीत नहीं जा सकती, न चंदन की, न कस्तूरी की, न चमेली की: परन्तु अच्छे व्यक्ति की मीठी सुगंध हवा के विपरीत जाती है, और अच्छा व्यक्ति अपने जीवन की मिठास को हर तरफ फैलाता है।"

लाल चंदन, कस्तूरी, कमल और चमेली— इन सब की सुगंध श्रेष्ठ है। कस्तूरी और चंदन की मीठी सुगंध प्रचुर मात्रा में है— इससे भी अधिक प्रबल, अच्छाई की सुगंध स्वर्ग तक पहुँचती है!

8. 'और हे पूज्य नागसेन, भगवान बुद्ध का फल बाजार क्या है?'

हे महाराज, भगवान बुद्ध ने कुछ विशेष फलों का उल्लेख किया है। वे ये हैं:--उत्कृष्ट मार्ग के प्रथम चरण का फल (परिवर्तन)।

दूसरे चरण, तीसरे चरण और चौथे (अरहतत्व) चरण का फल है शून्यता की प्राप्ति का फल—तीन लक्षणों (अपरिवर्तित जीवन, कामवासना, द्वेष और सुस्ती) के निवारण की प्राप्ति का फल—और उस अवस्था की प्राप्ति का सत्य जिसमें कोई नीच आकांक्षाएँ नहीं रहतीं। और जो कोई भी इनमें से किसी एक की इच्छा करता है, वह अपने कर्मों को कीमत के रूप में देता है और अपनी इच्छित फल—या तो धर्म परिवर्तन या कोई अन्य फल—प्राप्त करता है।

9. हे राजा, जिस प्रकार कोई व्यक्ति जिसके पास साल भर फल देने वाला आम का पेड़ होता है, वह खरीदारों के आने तक फल नहीं तोड़ता। परन्तु जब खरीदार आ जाता है और फल उत्पादक कीमत ले लेता है, तब वह कहता है: "आओ, मेरे भले, यह पेड़ सदा फल देता रहता है (इसलिए इसमें हर अवस्था में फल लगते हैं), इसमें से अपनी पसंद का फल ले लो, चाहे वह कच्चा हो, सड़ा हुआ हो, रेशेदार हो, खट्टा हो या पका हुआ हो।" और खरीदार दी गई कीमत पर अपनी पसंद का फल ले लेता है—यदि कच्चा फल हो तो वह उसे लेता है, यदि सड़ा हुआ हो तो उसे, यदि रेशेदार हो तो उसे, यदि खट्टा हो तो उसे, यदि पका हुआ हो तो पका हुआ फल ले लेता है। ठीक उसी प्रकार, हे राजा, जो कोई भी अन्य फलों में से किसी एक को चाहता है, वह अपने कर्मों को कीमत के रूप में देकर अपनी इच्छा का फल खरीद लेता है।

या तो धर्म परिवर्तन या कोई और। और हे राजा, इसी को "भगवान का फलों का बाज़ार" कहा जाता है।

"मनुष्य अपने कर्मों को मूल्य के रूप में देते हैं, और अमृत का फल खरीदते हैं; और सुख और शांति उन्हीं की होती है, जिन्होंने अमृत का फल खरीदा है।"

10. 'और हे पूज्य नागसेना, भगवान बुद्ध का औषधि बाज़ार क्या है?'

हे महाराज, कुछ औषधियाँ भगवान बुद्ध द्वारा प्रकट की गई हैं; वे औषधियाँ जिनसे भगवान बुद्ध समस्त देवताओं और मनुष्यों को बुरी प्रवृत्तियों के विष से मुक्त करते हैं। और ये औषधियाँ क्या हैं? भगवान बुद्ध द्वारा प्रकट किए गए चार आर्य सत्य, अर्थात् दुःख का सत्य, दुःख के कारण का सत्य, दुःख के निवारण का सत्य और दुःख के निवारण के मार्ग का सत्य। और जो कोई भी परम ज्ञान (अरहतत्व का ज्ञान) की कामना करते हुए इन चार सत्यों का उपदेश सुनता है, वह पुनर्जन्म से, वृद्धावस्था से, मृत्यु से, दुःख, विलाप, पीड़ा, दुःख और निराशा से पूर्णतः मुक्त हो जाता है। और हे महाराज, यही वह है जिसे "भगवान बुद्ध का औषधियों का बाज़ार" कहा जाता है।

"संसार की तमाम औषधियों में, भयंकर विष के विषनाशकों में से, कोई भी उस मधुर सिद्धांत के बराबर नहीं है। इसे पियो, हे भाइयों। पियो और जियो!"

11. 'और हे पूज्य नागसेना, भगवान बुद्ध का औषधि बाज़ार क्या है?'

हे महाराज, भगवान बुद्ध ने कुछ औषधियाँ बताई हैं, जिनसे वे समस्त विश्व के देवताओं और मनुष्यों का उपचार करते हैं। वे औषधियाँ ये हैं:-- "स्वयं को सजग और सचेत रखने के चार साधन, चार प्रकार का महासंघर्ष, इद्धि प्राप्ति के चार चरण, पाँच इंद्रियाँ, पाँच नैतिक शक्तियाँ, अरहतों के ज्ञान के सात रूप और अष्टांगिक मार्ग।" इन औषधियों से भगवान बुद्ध मनुष्यों को गलत विचारों से, नीच आकांक्षाओं से, निंदा करने से, बुरे कर्मों से, बुरे जीवनयापन के तरीकों से, गलत प्रयासों से, बुरे विचारों से और भ्रामक ध्यान से मुक्त करते हैं। और वह वासनाओं, द्वेष, सुस्ती, संदेह, आत्म-धर्म, देह की आलस्य, मन की जड़ता, निर्लज्जता, हृदय की कठोरता और समस्त बुराई को दूर भगाने के लिए औषधियाँ देता है। और हे राजा, यही वह है जिसे "भगवान बुद्ध का औषधि बाज़ार" कहा जाता है।

संसार में पाई जाने वाली तमाम औषधियों में से, जो संख्या में अनेक और गुणों में भिन्न-भिन्न हैं, सत्य की इस औषधि के समान कोई नहीं। हे भाइयों, इसे पियो। पियो और पीते रहो, जीवन पाओ!

सत्य की उस औषधि को पीने से तुम वृद्धावस्था और मृत्यु से परे हो जाओगे, और बुराई, वासना और कर्म जड़ से उखड़ जाएंगे—विचारशील और दृष्टिहीन होकर तुम शांति में रहोगे!

12. 'और हे पूज्य नागसेन, भगवान बुद्ध का अमृत बाजार क्या है?'

हे राजा, भगवान बुद्ध ने एक अमृत का ज्ञान कराया है, वह अमृत जिससे वे समस्त देवताओं और मनुष्यों पर छिड़काव करते हैं—जैसे मनुष्य राज्याभिषेक के दिन राजा का अभिषेक करते हैं—और जब मनुष्य और देवता उस अमृत से सींचे जाते हैं, तो वे पुनर्जन्म, वृद्धावस्था, रोग और मृत्यु से, दुःख, विलाप, पीड़ा, शोक और निराशा से मुक्त हो जाते हैं। और वह अमृत क्या है? वह ध्यान जो भौतिक वस्तुओं की वास्तविक परिस्थितियों पर सक्रिय ध्यान देने से उत्पन्न होता है और उन्हें सही मायने में समझने की ओर ले जाता है। क्योंकि हे राजा, समस्त देवताओं के स्वामी भगवान बुद्ध ने यह कहा है:

"हे भाइयों, वे ही अमृत का भोग करते हैं जो भौतिक वस्तुओं पर सक्रिय ध्यान केंद्रित करके भोजन प्राप्त करते हैं।" हे राजा, इसी को "भगवान का अमृत बाजार" कहा जाता है।

उन्होंने मनुष्य जाति को रोगों से पीड़ित देखा, उन्होंने अपना अमृत का भंडार निःशुल्क खोल दिया; हे भाइयों, जाओ, इसके लिए अपना कर्म अर्पित करो, और उस अमृतमय भोजन को खरीदो और उसका सेवन करो।

13. 'और हे पूज्य नागसेन, भगवान बुद्ध का रत्न बाजार क्या है?'

हे महाराज, कुछ विशेष रत्नों का ज्ञान भगवान बुद्ध ने दिलाया है, और इन रत्नों से सुशोभित भगवान बुद्ध की संतानें तेजस्वी होकर समस्त देवी-देवताओं और मनुष्यों के संसार को प्रकाशित करती हैं, उसे ऊंचाइयों और गहराइयों में, क्षितिज से क्षितिज तक, एक उज्ज्वल प्रकाश से जगमगाती हैं। वे रत्न ये हैं—सही आचरण का रत्न, ध्यान का रत्न, ज्ञान का रत्न, मुक्ति का रत्न, मुक्ति की निश्चितता से उत्पन्न अंतर्दृष्टि का रत्न, विवेक का रत्न, और अरहतों के सात प्रकार के ज्ञान का रत्न।

14. हे राजा, भगवान बुद्ध का सही आचरण का रत्न क्या है? वह सही आचरण जो पातिमोक्खा के नियमों के अनुसार आत्म-संयम से प्रेरित है, वह सही आचरण जो...

शरीर और मन पर संयम, शुद्ध आजीविका से प्राप्त उचित आचरण, संन्यासी के चार आवश्यक तत्वों के संबंध में उचित आचरण, लघु, मध्यम और दीर्घ प्रवचनों में वर्णित उचित आचरण, मार्ग पर चलने वालों का उचित आचरण, और उन लोगों का उचित आचरण जिन्होंने इसके विभिन्न फल प्राप्त किए हैं (रूपांतरण से शुरू होकर अरहत्त्व तक)। और हे राजा, संसार के सभी प्राणी, देवता और मनुष्य, मार (दुष्ट आत्माएं), ब्रह्मा (सर्वोच्च देवता), समन और ब्राह्मण, सभी उस व्यक्ति के लिए तरसते और अभिलाषी हैं जो उचित आचरण रूपी इस रत्न को अपने आभूषण के रूप में धारण करता है। और हे राजा, जो भिक्षु इसे धारण करता है, वह चारों ओर, ऊपर-नीचे और अगल-बगल, अपनी महिमा से चमक उठता है, मानो वह अनंत आकाश से लेकर उच्चतम स्वर्ग तक पाए जाने वाले सभी रत्नों से कहीं अधिक तेजस्वी हो, उन सभी से श्रेष्ठ और उन्हें मात देता हो। हे राजा, यही हैं धर्मपरायणता के रत्न, जो भगवान बुद्ध के रत्नों के बाज़ार में बिक्री के लिए रखे गए हैं। और इसी को "भगवान बुद्ध का धर्म का रत्न" कहा जाता है।

"उस बाज़ार में ऐसे ही गुण बिकते हैं, जो उस प्रबुद्ध, धन्य व्यक्ति की दुकान है; हे कुरूप, कर्म का फल भुगतो! इन चमकदार बुद्ध रत्नों को खरीदो और धारण करो!"

15. हे राजा, भगवान बुद्ध का ध्यान का रत्न क्या है? वह ध्यान जो विशिष्ट अवधारणाओं और उनके बारे में अन्वेषण से युक्त है; वह ध्यान जो केवल चिंतन से युक्त है, जिसमें विशिष्ट अवधारणाएँ विलीन हो जाती हैं; वह ध्यान जो विशिष्ट अवधारणाओं और उन पर चिंतन दोनों के समाप्त होने के बाद भी जारी रहता है; वह ध्यान जो (वासनाओं, बुरी प्रवृत्तियों और कर्मों से) रहित है; वह ध्यान जिसमें (अपरिवर्तित जीवन के) तीन लक्षण (वासना, द्वेष और सुस्ती) अनुपस्थित हैं; वह ध्यान जिसमें कोई नीच आकांक्षाएँ शेष नहीं रहतीं। और जब कोई भिक्षु, हे राजा, समाधि के इस रत्न को धारण कर लेता है, तो काम, क्रोध, क्रूरता और वे सभी बुरे विचार जो अहंकार, आत्म-धर्म, गलत विचारों से लगाव और संदेह जैसी बुरी प्रवृत्तियों से उत्पन्न होते हैं—ये सभी ध्यान के संपर्क में आने पर उससे बह जाते हैं, बिखर जाते हैं और दूर हो जाते हैं; वे उसके साथ नहीं रहते, उससे चिपकते नहीं। हे राजा, ठीक वैसे ही जैसे कमल के पत्ते पर पानी गिरने पर वह बह जाता है, बिखर जाता है और फैल जाता है।

दूर नहीं होता, इस पर नहीं ठहरता, इससे चिपकता नहीं—इसलिए जब कोई भिक्षु ध्यान के इस रत्न को धारण कर लेता है, तो काम, क्रोध, क्रूरता और वे सभी बुरे विचार जो अहंकार, आत्म-धर्म, गलत विचारों में हठ और संदेह जैसी बुरी प्रवृत्तियों से उत्पन्न होते हैं—ये सभी ध्यान के संपर्क में आते ही बह जाते हैं, बिखर जाते हैं और दूर हो जाते हैं, उसके साथ नहीं ठहरते, उससे चिपकते नहीं। और क्यों नहीं? क्योंकि ध्यान की आदत अत्यंत पवित्र है। हे राजा, इसे ही "भगवान बुद्ध का ध्यान का रत्न" कहा जाता है, और ऐसे ही ध्यान के रत्न भगवान बुद्ध के रत्नों के बाजार में बिक्री के लिए रखे जाते हैं।

"इस रत्नजड़ित मुकुट से घिरे माथे के नीचे बुरे विचार कभी नहीं आ सकते। यह उलझे और भटकते विचारों को दूर भगाता है। इसे अपना बनाइए, खरीदिए, मुकुट पहनिए!"

16. हे महाराज, बुद्ध का ज्ञान का रत्न क्या है? वह ज्ञान जिससे श्रेष्ठ जनों का शिष्य भली-भांति जान लेता है कि सद्गुण क्या है और क्या नहीं; निंदनीय क्या है और क्या नहीं; किस बात को आदत बनानी चाहिए और किस बात को नहीं; नीच क्या है और श्रेष्ठ क्या है;

अंधकार क्या है और प्रकाश क्या है, और अंधकार और प्रकाश दोनों क्या हैं;—वह ज्ञान जिससे वह वास्तव में जान लेता है कि दुःख क्या है, दुःख का कारण क्या है, दुःख का निवारण क्या है, और दुःख की ओर ले जाने वाला मार्ग क्या है। हे महाराज, इसी को "राजकुमार का ज्ञान का रत्न" कहा जाता है।

जिसके पास ज्ञान का रत्नजड़ित मुकुट है, वह अधिक समय तक इस सांसारिक रूप में नहीं रहेगा। वह शीघ्र ही निर्वाण प्राप्त कर लेगा और पुनर्जन्म में किसी भी लोक में आनंद नहीं लेगा!

17. हे महाराज, भगवान बुद्ध का मोक्ष का रत्न क्या है? अरहतत्व को मोक्ष का रत्न कहा जाता है, और अरहतत्व प्राप्त भिक्षु को मोक्ष के रत्न से सुशोभित कहा जाता है। और हे महाराज, जिस प्रकार एक मनुष्य मोतियों, हीरों, सोने और मूंगे की मालाओं से सुशोभित होता है; जिसके अंगों पर अकालु, लोबान, तालिस और लाल चंदन लगा होता है; जो लौह-लकड़ी के फूलों, रोटलरिया के फूलों, साल के वृक्ष के फूलों, सालाला, चंपक, पीले चमेली और अतिमुत्तक के फूलों की माला से सुशोभित होता है,

तुरही के फूल, कमल, सफेद और अरबी चमेली—जैसे इन सभी अलंकरणों, सुगंधों और आभूषणों से सुसज्जित होकर वह अन्य सभी पुरुषों को अपनी चमक और वैभव से अभिभूत कर देता है—ठीक वैसे ही, हे महाराज, जो अरहतत्व प्राप्त कर चुका है, जिसमें महापाप (कामवासना, अभिमान, भ्रम और अज्ञान) जड़ से उखड़ चुके हैं, जिसने हृदय मुक्ति का मुकुट धारण कर लिया है, वह निम्नतम स्तर के भिक्षुओं से लेकर स्वयं मुक्त भिक्षुओं तक सभी को अपनी चमक और वैभव से अभिभूत कर देता है। और ऐसा क्यों है? क्योंकि, हे महाराज, एक मुकुट है जो सभी मुकुटों में श्रेष्ठ है, और वह है हृदय मुक्ति का मुकुट! और हे महाराज, इसी को "भगवान बुद्ध का मुक्ति का रत्न" कहा जाता है।

"घर में रहने वाले सभी लोग अपने प्रभु की ओर देखते हैं जब वह रत्नों का मुकुट धारण करते हैं—देवताओं और मनुष्यों का विशाल संसार स्वतंत्रता के मुकुटधारी की ओर देखता है!"

18. 'हे राजा, मुक्ति के आश्वासन के बाद प्राप्त होने वाली अंतर्दृष्टि का वह अनमोल रत्न क्या है जो भगवान बुद्ध ने बताया है? वह ज्ञान जो अतीत की घटनाओं पर चिंतन करने से उत्पन्न होता है—वह ज्ञान जो

जो शिष्य उत्तम मार्ग पर चल रहा है, वह समय-समय पर निर्वाण तक पहुँचने वाले मार्ग और उसके फलों की समीक्षा करता है, और इस बात से अवगत होता है कि उसने किन बुरी प्रवृत्तियों से छुटकारा पा लिया है और किन बुरी प्रवृत्तियों पर विजय प्राप्त करना शेष है—इसी को "मुक्ति के ज्ञान के फलस्वरूप प्राप्त होने वाला आश्वासन" कहा जाता है।

"वह ज्ञान जिससे महानजन अपने द्वारा पार किए गए चरणों और अभी तक अछूते मार्ग को जानते हैं; हे विजेता के पुत्रों, उस रत्न - 'आश्वासन' - को स्वयं प्राप्त करने का प्रयास करो!"

19. हे महाराज, भगवान बुद्ध का विवेक का रत्न क्या है? इंद्रियों का विवेक, पवित्र ग्रंथों के भाव में अंतर्निहित गहरे सत्यों का विवेक, भाषाविज्ञान संबंधी विशिष्टताओं का विवेक और सही एवं सहज व्याख्या का विवेक। और हे महाराज, जो भिक्षु इन चार विवेक के रत्नों से सुशोभित है, वह चाहे किसी भी संगति में प्रवेश करे, चाहे वह कुलीनों की हो, ब्राह्मणों की हो, व्यापारियों की हो या कामगारों की, वह आत्मविश्वास से उसमें प्रवेश करता है, न तो विचलित होता है और न ही संकोच करता है; निडर और भयभीत हुए बिना, वह सभा में प्रवेश करता है। हे महाराज, वह ठीक उसी प्रकार है जैसे कोई योद्धा, युद्ध में वीर, अपने संपूर्ण शस्त्र-संरचित होने पर होता है।

युद्ध में, भिक्षु निडर होकर, इस आत्मविश्वासपूर्ण विचार के साथ युद्ध में उतरता है: "यदि शत्रु दूर रहे तो मैं उसे अपने बाणों से मार गिराऊँगा, यदि वह वहाँ से मेरी ओर आए तो मैं उसे अपने भालों से मार गिराऊँगा, यदि वह और निकट आए तो मैं उसे अपने बरछी से भेद दूँगा, यदि वह बिल्कुल पास आ जाए तो मैं उसे अपनी कृपाण से दो टुकड़ों में काट दूँगा, यदि वह निकट आ जाए तो मैं उसे अपने खंजर से आर-पार भेद दूँगा" - हे राजा, ठीक इसी प्रकार भिक्षु, जब वह विवेक के चार गुना रत्न को धारण करता है, तो किसी भी सभा में निडर होकर, इस आत्मविश्वासपूर्ण विचार के साथ प्रवेश करता है: "यदि कोई मुझसे इंद्रियों के विवेक पर आधारित कोई पहेली पूछे, तो मैं उसे इंद्रियों की तुलना इंद्रियों से, व्याख्या की व्याख्या से, तर्क की तुलना तर्क से, तर्क की तुलना तर्क से करके समझा सकूँगा - और इस प्रकार मैं उसके संदेहों को दूर करूँगा।"

यदि कोई मुझसे गहन सत्यों के भेद से संबंधित कोई पहेली पूछे, तो मैं सत्य की सत्य से तुलना करके, और अरहतत्व के विभिन्न पहलुओं और अवस्थाओं की आपस में तुलना करके उसका उत्तर दे सकूँ, और इस प्रकार उसके संदेहों को भी दूर कर सकूँ, और उसके भ्रम को

दूर करके, उसे समस्या के अपने स्पष्टीकरण से प्रसन्न कर सकूँ। यदि कोई मुझसे भाषाविज्ञान संबंधी विशिष्टताओं के भेद से संबंधित कोई पहेली पूछे, तो मैं व्युत्पत्ति की व्युत्पत्ति से, शब्द की शब्द से, कण की कण से, अक्षर की अक्षर से, एक अक्षर के दूसरे अक्षर के संपर्क (संधि) से रूपांतरण से, व्यंजन की व्यंजन से, स्वर की स्वर से, उच्चारण (स्वर) की उच्चारण से, मात्रा की मात्रा से, नियम की नियम से, और मुहावरे की मुहावरे से तुलना करके उसका उत्तर दे सकूँ; और इस प्रकार उसके संदेहों को भी दूर कर सकूँ, और उसके भ्रम को दूर करके, उसे समस्या के अपने स्पष्टीकरण से प्रसन्न कर सकूँ। यदि कोई मुझसे व्याख्याओं के भेद से संबंधित कोई पहेली पूछे, तो मैं रूपक की तुलना रूपक से, विशेषता की तुलना विशेषता से और भाव की तुलना भाव से करके उसे समझा सकूँगा—और इस प्रकार मैं उसके संदेहों को भी दूर कर सकूँगा, और उसकी उलझन को सुलझाकर उसे अपनी व्याख्या से प्रसन्न कर दूँगा।

समस्या खड़ी हो गई। और हे राजा, यही वह है जिसे "भगवान बुद्ध का विवेक का रत्न" कहा जाता है।

पहले विवेक का रत्न खरीदो, फिर उसे अपने ज्ञान और कौशल से तराशो; इस प्रकार, समस्त चिंता और भय से मुक्त होकर, तुम पृथ्वी और आकाश दोनों को प्रकाशित करोगे!

20. हे महाराज, अरहतों के सात प्रकार के ज्ञान में भगवान बुद्ध का रत्न क्या है? यह है आत्म-संयम, धर्म-व्यवस्था का अध्ययन, उत्साह, आनंद, शांति, ध्यान और समभाव। हे महाराज, जो भिक्षु इस उच्चतर ज्ञान के सात प्रकार के रत्न से सुशोभित होता है, वह देवताओं और मनुष्यों के समस्त जगत पर प्रकाश फैलाता है, उसे प्रकाशित करता है और अंधकार को दूर करके प्रकाश उत्पन्न करता है। हे महाराज, इसी को "भगवान बुद्ध का सात प्रकार का ज्ञान" कहा जाता है।

"देवता और मनुष्य श्रद्धापूर्वक उसके सामने खड़े हो जाते हैं जो इस ज्ञान-मुकुट को धारण करता है। इसलिए अपने अच्छे कर्म दिखाओ, यही कीमत है, और इस ज्ञान-मुकुट को खरीदो और धारण करो!"

21. 'और हे पूज्य नागसेन, भगवान बुद्ध द्वारा स्थापित सभी प्रकार के सामानों का वह बाज़ार क्या है?'

'भगवान का हर तरह के सामान का बाज़ार'

हे राजा, व्यापार बुद्ध के नौ गुना वचन हैं; उनके शरीर के अवशेष, उनके द्वारा प्रयुक्त वस्तुएँ; उन पर निर्मित पवित्र टीले (केतियानी, दागबास); और उनके संघ का रत्न। और उस बाज़ार में भगवान बुद्ध ने (भविष्य में) उच्च वंश, धन, दीर्घायु, स्वास्थ्य, सौंदर्य, ज्ञान, सांसारिक यश, स्वर्गीय यश और निर्वाण की प्राप्ति को प्रदर्शित किया है। और इनमें से जो भी किसी एक की इच्छा रखते हैं, वे कर्म का भुगतान करके अपनी इच्छित महिमा प्राप्त करते हैं। कुछ लोग इसके बदले में सही आचरण का व्रत लेते हैं, कुछ उपोसथ दिवस का पालन करते हैं, और इसी प्रकार सबसे छोटे कर्म-मूल्य से लेकर सबसे छोटे तक विभिन्न महिमाएँ प्राप्त करते हैं। हे महाराज, जैसे किसी व्यापारी की दुकान में तेल, बीज, मटर और दालें थोड़ी मात्रा में चावल, मटर या दाल के बदले में ली जा सकती हैं या फिर आवश्यकतानुसार घटते क्रम में थोड़ी कीमत पर खरीदी जा सकती हैं—ठीक वैसे ही, हे महाराज के समस्त वस्तुओं के बाज़ार में, आवश्यकतानुसार कर्म के बदले लाभ प्राप्त किए जाते हैं। और हे महाराज, इसी को "सर्वांगीण वस्तुओं का बाज़ार" कहा जाता है।

"दीर्घायु, उत्तम स्वास्थ्य, सौंदर्य, स्वर्ग में पुनर्जन्म, उच्च जन्म, निर्वाण—ये सब बिक्री के लिए उपलब्ध हैं—छोटे-बड़े कर्मों के बदले खरीदे जा सकते हैं—महान विजेता के विश्वप्रसिद्ध बाज़ार में। आओ, हे भाइयों, अपनी आस्था को मूल्य के रूप में प्रदर्शित करो, और अपनी पसंद की वस्तुएँ खरीदो और उनका आनंद लो!"

22. 'और हे राजा, भगवान बुद्ध के धर्म नगर में निवास करने वाले निवासी ऐसे हैं: सूत्रंतों के स्वामी, विनय के स्वामी और अभिधम्म के स्वामी; धर्म के प्रचारक; गातक पाठ करने वाले, दीघ पाठ करने वाले, मगधिमा पाठ करने वाले, संयुत्त पाठ करने वाले, अंगुत्तरा पाठ करने वाले और खुद्दक निकाय पाठ करने वाले; सही आचरण वाले, ध्यान में निपुण, ज्ञान से परिपूर्ण, अरहतों के सात प्रकार के ज्ञान के चिंतन में आनंद लेने वाले, अंतर्दृष्टि वाले; ध्यान के लिए जंगलों में जाने वाले, वृक्षों की जड़ों में बैठने वाले, खुले में रहने वाले, भूसे के ढेर पर सोने वाले, श्मशान के पास रहने वाले या सोने के लिए लेटने वाले नहीं; उत्तम मार्ग में प्रवेश कर चुके, उसके चार फलों में से एक या अधिक प्राप्त कर चुके, अभी भी सीखने वाले (अभी तक अरहतत्व प्राप्त नहीं किया है, लेकिन उसके निकट हैं), फलों का आनंद लेने वाले, अर्थात् सोतापन्न, सकदागामिन या अनागामिन। या अरहत;--त्रिविध बुद्धि वाले पुरुष, छह प्रकार की पारलौकिक बुद्धि वाले पुरुष, इद्धि की शक्ति वाले पुरुष, ज्ञान में पूर्णता प्राप्त कर चुके पुरुष,

निरंतर आत्मसंयम बनाए रखने में, महान संघर्ष में, इद्धि के चरणों में, अपनी नैतिक इंद्रियों में, सात प्रकार के ज्ञान में, उत्तम मार्ग में, ध्यान में, विमोक्ष में, और उस उदात्त और शांत आनंद की प्राप्ति में निपुण जो रूप से स्वतंत्र है या रूपहीन है—हाँ! बांसों और सरकंडों से भरे जंगल की तरह, धर्म का वह नगर ऐसे अरहतों से हमेशा भरा और आबाद रहा है! क्योंकि ऐसा कहा जाता है:

(1) "वे लोग जो वासना, द्वेष और सुस्ती से रहित हैं, जिनमें महान बुराइयाँ (वासना, अभिमान, भ्रम और अज्ञान) नहीं हैं, जिनमें न तो तीव्र प्यास है और न ही लालची इच्छाएँ हैं,—ये वे लोग हैं जो धर्म के नगर में निवास करते हैं।"

(2) "जिन पुरुषों का घर जंगल है, जिन्होंने अतिरिक्त प्रतिज्ञाएँ ली हैं, जो आनंद से परिपूर्ण हैं, जो खुरदुरे वस्त्र पहने हुए हैं, जो एकांत में आनंदित हैं, वीर—ये वे हैं जो धर्म के नगर में निवास करते हैं।"

(3) "जो लोग बैठकर सोते हैं, या किसी भी सोने की जगह पर सोते हैं, या अपना समय खड़े होकर या ध्यान में इधर-उधर चलते हुए बिताते हैं, जो लोग अपने आप को त्यागे हुए वस्त्रों से ढक लेते हैं—ये सभी लोग धर्म नगर में निवास करते हैं।"

(4) "तीन वस्त्रों का पूरा सेट पहने हुए, शांत, चौथे वस्त्र के लिए एक चमड़ा, जो प्रतिदिन केवल एक ही भोजन करने में आनंदित होते हैं, वे बुद्धिमान हैं—ये वे हैं जो धर्म के नगर में निवास करते हैं।"

(5) "जो गंभीर और विवेकशील हैं, जो थोड़े में ही अपना पेट भरते हैं और लालच नहीं जानते, जो भीख मिले या न मिले, संतुष्ट रहते हैं—ये वे लोग हैं जो धर्म के नगर में निवास करते हैं।"

(6) "ध्यानमग्न, ध्यानमग्न, शांत मन वाले वीर, और निर्वाण की ओर दृढ़ रहने वाले—ये वे हैं जो धर्म नगर में निवास करते हैं।"

(7) "मार्ग पर चलने वाले और उसके फलों में खड़े रहने वाले लोग, जिन्होंने उसके कुछ फल प्राप्त कर लिए हैं, लेकिन अंतिम के बारे में अभी भी सीख रहे हैं, जिनकी आशा अंतिम लक्ष्य की ओर निर्देशित है—ये वे लोग हैं जो धर्म के नगर में निवास करते हैं।"

(8) "जो धारा में प्रवेश कर चुके हैं, और जो दागों से मुक्त होकर पृथ्वी पर एक बार फिर से जन्म लेंगे, जो कभी वापस नहीं लौटेंगे, और अरहत—ये वे हैं जो धर्म के नगर में निवास करते हैं।"

(9) "अविचलित आत्म-संयम प्राप्त करने के साधनों में निपुण, और सात प्रकार के ज्ञान पर चिंतन में आनंदित, अंतर्दृष्टि से परिपूर्ण, और अपने हृदय में धर्म के वचन धारण करने वाले—ये वे लोग हैं जो धर्म नगर में निवास करते हैं।"

(10) "इद्धि के चरणों में निपुण, और समाधि के ध्यान में आनंदित, जो महा संघर्ष के प्रति समर्पित हैं—वे ही धर्म नगर में निवास करते हैं।"

(11) "अभिञ्ञों के छह प्रकार के ज्ञान में परिपूर्ण, अपने उचित उत्तराधिकार से प्राप्त क्षेत्र में आनंदित, वायु में उड़ने की शक्ति रखने वाले—ये वे हैं जो धर्म नगर में निवास करते हैं।"

(12) "वे जिनकी निगाहें झुकी हुई हैं, और जो संयमित स्वर में बोलते हैं, जिनके इंद्रियों के द्वार सुरक्षित हैं, जो

जो आत्मसंयमी हैं, जो सर्वोच्च धम्म के अनुसार सुशिक्षित हैं—वे ही धर्म नगर में निवास करते हैं।

(13) "तीन प्रकार की बुद्धि वाले और छह प्रकार की बुद्धि वाले, इद्धि में परिपूर्ण और ज्ञान में परिपूर्ण हो चुके लोग—ये वे लोग हैं जो धर्म नगर में निवास करते हैं।"

23. और हे राजा, जो भिक्षु अपने हृदय में असीम उत्कृष्ट ज्ञान के वचन धारण करते हैं, जो बंधनों से मुक्त हैं, जिनकी अच्छाई, यश, शक्ति और महिमा का कोई माप नहीं कर सकता, जो (अपने गुरु का अनुकरण करते हुए) धर्म के राज्य के राजचक्र को निरंतर चलाते हैं, जिन्होंने ज्ञान में पूर्णता प्राप्त कर ली है—ऐसे भिक्षुओं को, हे राजा, "भगवान बुद्ध के धर्म नगर में धर्म के सेनापति" कहा जाता है।

और हे महाराज, जो भिक्षु इद्धि की शक्ति से परिपूर्ण हैं, जिन्होंने विवेक का ज्ञान प्राप्त कर लिया है, जो आत्मविश्वास से भरे हैं, जो वायु में विचरण करते हैं, जिनका विरोध करना कठिन है, जिन्हें हराना कठिन है, जो बिना सहारे के चल सकते हैं, जो विशाल पृथ्वी और उस पर टिके जल को हिला सकते हैं, जो सूर्य और चंद्रमा को स्पर्श कर सकते हैं, जो स्वयं को रूपांतरित करने और दृढ़ संकल्प और उच्च आकांक्षाएं बनाने में कुशल हैं, जो इद्धि में परिपूर्ण हैं—ऐसे भिक्षुओं को, हे महाराज, "भगवान के धर्म नगर के राजसी पुजारी" कहा जाता है।

और इसके अतिरिक्त, हे राजा, उन भिक्षुओं में से जिन्होंने अतिरिक्त प्रतिज्ञाएँ ली हैं,

जो कम इच्छा रखते हैं और संतुष्ट रहते हैं, जो भिक्षा मांगने के नियमों के किसी भी उल्लंघन से घृणा करते हैं, और एक कुटिया से दूसरी कुटिया में सीधे भिक्षा मांगते हैं, जैसे एक मधुमक्खी एक फूल को सूंघती है, और फिर जंगल के एकांत में चले जाते हैं, जो अपने शरीर और जीवन के प्रति उदासीन हैं, जिन्होंने अरहतत्व प्राप्त कर लिया है, जो अतिरिक्त व्रतों के पालन के गुणों को सर्वोच्च महत्व देते हैं—ऐसे भिक्षुओं को, हे राजा, "भगवान के धर्म नगर के न्यायाधीश" कहा जाता है।

और हे महाराज, जो भिक्षु शुद्ध और निष्कलंक हैं, जिनमें कोई बुराई शेष नहीं है, जो प्राणियों के पतन और उत्थान के ज्ञान में निपुण हैं और जिन्होंने स्वयं को दिव्य दृष्टि में सिद्ध कर लिया है—हे महाराज, ऐसे भिक्षुओं को "भगवान के धर्म नगर में प्रकाशदाता" कहा जाता है।

और इसके अतिरिक्त, हे राजा, उन भिक्षुओं में से जो परंपराओं के ज्ञाता हैं, जो पीढ़ी दर पीढ़ी चली आ रही बातों को आगे बढ़ाते हैं, जो प्रवचनों, विधि शास्त्रों और विषय-सूची का पुनरावलोकन करते हैं, जो अक्षरों को करणी और स्वरों में सटीक रूप से निर्धारित करने में कुशल हैं,

चाहे वह हल्का हो या भारी, चाहे लंबा हो या छोटा, जो नौ प्रकार के वचन को कंठस्थ जानते हों—हे राजा, ऐसे भिक्षुओं को "भगवान के धर्म नगर में शांति अधिकारी" कहा जाता है।

और हे महाराज, जो भिक्षु विनय (संप्रदाय के नियम, विधि-विधान) में पारंगत हैं, विनय में ज्ञानी हैं, अपराधों के स्रोत का पता लगाने में निपुण हैं, यह निर्णय लेने में निपुण हैं कि कोई कार्य अपराध है या नहीं, अपराध गंभीर है या मामूली, उसका प्रायश्चित किया जा सकता है या नहीं, अपराध के उत्पन्न होने, स्वीकार करने, क्षमा करने या कबूल करने के संबंध में; अपराधी के निलंबन, बहाली या बचाव के संबंध में, जो विनय में पूर्ण स्वामी हैं—हे महाराज, ऐसे भिक्षुओं को "भगवान के धर्म नगर में रूप-दक्ष" कहा जाता है।

और इसके अतिरिक्त, हे राजा, उन भिक्षुओं में से जो अपने माथे पर उस महान मुक्ति की कमल माला धारण करते हैं, जिन्होंने उस अवस्था को प्राप्त कर लिया है।

सभी अवस्थाओं में सर्वोच्च, सर्वश्रेष्ठ और सबसे उत्कृष्ट, जो असंख्य लोगों द्वारा प्रिय और प्रशंसित हैं—ऐसे भिक्षुओं को, हे राजा, "भगवान के धर्म नगर में फूल बेचने वाले" कहा जाता है।

और हे महाराज, वे भिक्षु जिन्होंने चारों सत्यों को भलीभांति जान लिया है और उन्हें अपनी आँखों से देख लिया है, जो शिक्षा में ज्ञानी हैं, जिन्होंने समनत्व के चारों फलों के बारे में संदेह से परे होकर, उन फलों को प्राप्त करके उन अन्य लोगों के साथ साझा करते हैं जिन्होंने मार्ग में प्रवेश किया है—ऐसे भिक्षुओं को, हे महाराज, "धर्म नगर में फल विक्रेता" कहा जाता है।

और हे महाराज, जो भिक्षु उत्तम आचरण की उस उत्कृष्ट सुगंध से अभिषेकित होकर अनेक सद्गुणों से संपन्न होते हैं और पाप एवं बुरे स्वभाव की दुर्गंध को दूर करने में सक्षम होते हैं, उन्हें हे महाराज, "भगवान के धर्म नगर में सुगंध विक्रेता" कहा जाता है।

और हे राजा, उन भिक्षुओं में से जो धम्म में आनंदित होते हैं, जिनकी बातचीत सुखद होती है, जो धर्म और विनय की उच्चतर सूक्ष्मताओं में अत्यधिक आनंद पाते हैं, जो या तो वन में, या वृक्षों की तलहटी में, या एकांत में ध्यान लगाते हैं।

हे राजा, धर्म के मीठे रस का पान करने वाले भिक्षु, जो अपने शरीर, वाणी और मन से धर्म के मीठे रस में डूबे हुए, धर्म की व्याख्या करने में, विभिन्न सिद्धांतों में छिपे गहरे सत्यों की खोज करने में और उन्हें पहचानने में श्रेष्ठ हैं, वे जहाँ कहीं भी और जब भी अल्प इच्छा, संतोष, एकांत, विश्राम, उत्साहपूर्ण परिश्रम, सही आचरण, ध्यान, ज्ञान, मुक्ति, मुक्ति के आश्वासन से उत्पन्न अंतर्दृष्टि का प्रवचन होता

है, वहाँ जाकर उस प्रवचन की मीठी सुगंध का पान करते हैं। हे राजा, ऐसे भिक्षुओं को "भगवान के धर्म नगर में प्यासे और मदहोश" कहा जाता है।

और हे महाराज, जो भिक्षु रात के पहले पहर से लेकर आखिरी पहर तक जागते रहने के अभ्यस्त हैं, जो दिन-रात बैठकर, खड़े होकर या इधर-उधर चलकर ध्यान करते हैं, जो चिंतन के अभ्यस्त होकर बुरी प्रवृत्तियों को दबाकर अपनी उन्नति के लिए समर्पित हैं—हे महाराज, ऐसे भिक्षुओं को "भगवान के धर्म नगर के पहरेदार" कहा जाता है।

और इसके अलावा, हे राजा, जो भिक्षु आत्मा और अक्षर दोनों में, उसके तर्कों और व्याख्याओं में, उसके कारणों और उदाहरणों में, बुद्ध के नौ गुना वचन का उपदेश देते हैं, दोहराते हैं, उच्चारण करते हैं और सारांशित करते हैं, उन्हें हे राजा, "भगवान के धर्म नगर में वकील (धर्म के व्यापारी)" कहा जाता है।

और इसके अलावा, हे राजा, जो भिक्षु धर्म के खजाने, परंपराओं, ग्रंथों और उनके ज्ञान में समृद्ध और धनी हैं, जो उनके संकेतों, स्वरों और व्यंजनों को उनके सभी विवरणों में समझते हैं, और अपने ज्ञान से सभी दिशाओं में व्याप्त हैं—ऐसे भिक्षुओं को, हे राजा, "भगवान के धर्म नगर में धर्म के धनी" कहा जाता है।

और इसके अतिरिक्त, हे महाराज, जो भिक्षु उच्चतर शिक्षा को प्राप्त कर चुके हैं, जो व्याख्या और अभ्यास किए जाने वाले ध्यान के विषयों के विभाजन को समझते हैं, जो प्रशिक्षण के सभी सूक्ष्म बिंदुओं में परिपूर्ण हैं—ऐसे भिक्षुओं को, हे महाराज, "धर्म नगर में धर्म के विशिष्ट गुरु" कहा जाता है।

24. हे राजा, इस प्रकार सुनियोजित, सुसज्जित, रसदयुक्त, स्थापित, सुरक्षित और शत्रुओं से अभेद्य, भगवान बुद्ध का धर्म नगर है। और इस व्याख्या, इस तर्क और इस कारण से, आप यह निष्कर्ष निकाल सकते हैं कि भगवान बुद्ध का अस्तित्व एक समय था।

(I) "जैसे जब लोग किसी सुंदर, सुनियोजित शहर को देखते हैं, तो वे अनुमान से जान जाते हैं कि उसका संस्थापक कितना महान था; वैसे ही जब वे हमारे प्रभु के 'धर्म के शहर' को देखते हैं, तो वे अनुमान से जान जाते हैं कि वह एक समय अस्तित्व में था।"

(2) "जैसे मनुष्य, इसकी लहरों को देखकर, अनुमान से, विश्व को समाहित करने वाले सागर की विशालता और शक्ति का अंदाजा लगा सकते हैं; वैसे ही वे बुद्ध का भी अंदाजा लगा सकते हैं जब वे उन लहरों को देखें जो उन्होंने देवताओं और मनुष्यों के संसार में उत्पन्न कीं—वह जो युद्ध में अजेय रहे, सभी दुखों को दूर करते हैं, जिन्होंने अपने हृदय से लालसा की भयानक शक्ति को जड़ से उखाड़ फेंका, और अपने अनुयायियों को पुनर्जन्म के भंवर से मुक्त किया— 'जिस प्रकार शुभ धर्म की लहरें फैलती और उमड़ती हैं, उसी प्रकार हमारे प्रभु, बुद्ध, महान और शक्तिशाली होंगे।'

(3) "जैसे मनुष्य, हिमालय की विशाल चोटियों को देखकर, अनुमान से उसकी अद्भुत ऊँचाई का अंदाजा लगा सकते हैं; वैसे ही जब वे बुद्ध के धर्म पर्वत को देखते हैं—जो दृढ़ है, तीव्र वासना के तूफानी झटकों से अविचलित है, शांति और सुकून की अद्भुत ऊँचाइयों पर विराजमान है, जहाँ कामवासना, बुराई और कर्म साँस नहीं ले सकते—तो वे यह निष्कर्ष निकालते हैं: 'इस पर्वत की ऊँचाई के समान ही उस महान वीर की शक्ति है जिसके वचन पर यह पर्वत टिका है।'"

(4) "जैसे मनुष्य, हाथी राजा के पदचिह्न देखकर अनुमान लगा सकते हैं: 'उसका आकार कितना विशाल होगा!' उसी प्रकार जब वे मनुष्य रूपी हाथी, बुद्ध, ज्ञानी व्यक्ति के पदचिह्न को उस मार्ग पर देखते हैं जिस पर मनुष्य चले हैं, तो वे अनुमान से जान जाते हैं: 'बुद्ध कितने गौरवशाली थे!'"

(5) जैसे जब वे सभी जीवित प्राणियों को भय से दुबके हुए देखते हैं, तो वे जान जाते हैं: यह पशुओं के राजा की गर्जना है जो उन्हें डराती है।' इसी प्रकार, जब वे अन्य शिक्षकों को भय से कांपते और भागते हुए देखते हैं, तो वे जान जाते हैं: यह सत्य के राजा ने उदात्त शब्द कहे हैं!'

(6) धरती को मुस्कुराते हुए, अच्छी तरह से सींची हुई, हरी-भरी घास से लदी देखकर, लोग कहते हैं: 'एक बड़ी और सुखद बारिश हुई है।' इसलिए जब वे इस भीड़ को आनंदित, शांत और धन्य देखते हैं, तो वे अनुमान लगा सकते हैं: 'कितनी मधुर बारिश थी जिसने उनके दिलों को शांत कर दिया!'

(7) विशाल पृथ्वी को भीगा हुआ, दलदली, कीचड़ से भरा देखकर मनुष्य कहते हैं: 'जल का विशाल सैलाब उमड़ पड़ा है।' इसलिए, जब वे इस विशाल समूह को देखते हैं, जो कभी पाप के कीचड़ से व्याकुल था, धर्म की धारा में बहकर, अच्छे नियम के विशाल सागर में, कुछ यहाँ, कुछ वहाँ, सभी, देवता और मनुष्य समान रूप से, अमृतमय लहरों में डूबे हुए, तो वे निष्कर्ष निकाल सकते हैं और कह सकते हैं: 'धर्म कितना महान है!'

(8) "जैसे यात्रा करते समय मनुष्य जब चारों ओर फैली एक मधुर सुगंध को महसूस करते हैं और प्रसन्न होते हैं, तो वे तुरंत अनुमान लगाते हैं, 'निश्चित रूप से, विशाल वन वृक्षों में फूल खिल रहे हैं!' उसी प्रकार, पृथ्वी और आकाश में व्याप्त धर्म की इस मधुर सुगंध को महसूस करते हुए, वे अनुमान लगा सकते हैं: 'एक समय में, असीम महान बुद्ध अवश्य ही जीवित रहे होंगे!'"

25. हे महाराज, बुद्ध की महानता को सौ या हज़ार उदाहरणों, कारणों, तर्कों और उपमाओं से प्रकट करना संभव होगा। हे महाराज, जिस प्रकार एक कुशल मालाकार अपने गुरु के निर्देशों का पालन करते हुए और अपनी व्यक्तिगत प्रतिभा का प्रयोग करते हुए, सभी प्रकार के फूलों के एक ढेर से अनेक प्रकार के सुंदर गुलदस्ते बनाता है, ठीक उसी प्रकार, हे महाराज, वह बुद्ध मानो अनंत, असीम, सद्गुणों से भरे फूलों का ढेर हैं। और मैं, एक मालाकार, मानो...

विजेता के गिरजाघर में, उन फूलों को एक साथ पिरोकर—अपने प्राचीन गुरुओं के मार्ग का अनुसरण करते हुए और मुझमें विद्यमान ज्ञान की शक्ति का उपयोग करते हुए—असंख्य उपमाओं के माध्यम से बुद्ध की शक्ति को प्रकट किया जा सकता है। परन्तु दूसरी ओर, आपको उन्हें सुनने की इच्छा प्रकट करनी होगी।'

'नागसेन, ऐसे उदाहरणों से निष्कर्ष निकालकर किसी अन्य व्यक्ति के लिए बुद्ध की शक्ति को सिद्ध करना कठिन होगा। हे पूज्य नागसेन, इस समस्या की आपकी इतनी परिपूर्ण और विविध व्याख्या से मैं अत्यंत संतुष्ट हूँ।'

अनुमान लगाने की समस्या यहीं समाप्त होती है।

टिपिटक >> सुत्त पिटक >> खुद्दक निकाय >> मिलिंदपन्हा >> पुस्तक VI: धुतंगस

अनुवादक: टी.डब्ल्यू. राइस डेविड्स

पिछला <<<<-----||-18-||----->>>> अगला

1. राजा ने वन में भिक्षुओं को देखा, जो अकेले और मनुष्यों से दूर, कठिन व्रतों का पालन कर रहे थे। फिर उन्होंने गृहस्थों को भी देखा, जो अपने घरों में, आर्य मार्ग के मीठे फल भोग रहे थे। इन दोनों को देखकर उनके मन में गहरा संदेह उत्पन्न हुआ। 'यदि गृहस्थ भी सत्य को जान लें, तो व्रत रखना व्यर्थ होगा। आइए! मैं उस श्रेष्ठ गुरु से प्रार्थना करता हूँ, जो बुद्ध के वचनों के त्रिगुण में पारंगत हैं और शत्रु के तर्कों को पराजित करने में कुशल हैं। वे ही मेरे संदेहों का समाधान कर सकेंगे!'

2. अब राजा मिलिंद नागसेन के पास गए और उनके सामने प्रणाम करके एक तरफ बैठ गए। बैठने के बाद उन्होंने नागसेन से कहा, "हे आदरणीय नागसेन, क्या कोई ऐसा गृहस्थ है जो घर में रहकर, इंद्रियों के सुखों का आनंद लेते हुए, पत्नी और बच्चों से घिरे घर में रहता हो, बनारस की चंदन, माला, इत्र और मलहम का उपयोग करता हो, सोना-चांदी ग्रहण करता हो, हीरे, मोती और सोने से जड़ा हुआ कढ़ाईदार मुकुट धारण करता हो—क्या ऐसा कोई है जिसने निर्वाण, परम शांति और निर्वाण को प्रत्यक्ष रूप से देखा हो?"

'हे राजा, केवल सौ ही नहीं, न दो और न ही'

तीन, पाँच, छह सौ, केवल एक हजार, एक लाख, दस करोड़, दस करोड़, यहाँ तक कि एक अरब आम लोगों ने भी निर्वाण प्राप्त नहीं किया है—बीस, तीस, सौ या एक हजार लोगों की तो बात ही छोड़िए जिन्होंने (चार सत्यों की) स्पष्ट समझ प्राप्त कर ली है।

मैं आपके सामने किस प्रकार का स्पष्टीकरण प्रस्तुत करूं जिससे यह सिद्ध हो कि मुझे यह बात पता है?

'क्या तुम खुद मुझे बताओगे?'

3. 'तो, हे महाराज, मैं इसे समझाता हूँ। बुद्ध के नौ गुना वचन में जीवन की पवित्रता, मार्ग की प्राप्ति और व्रतों के अधीन उत्तम जीवन शैली के विभाजन से संबंधित सभी अंश इस संदर्भ में प्रस्तुत किए जाएँगे। हे महाराज, जिस प्रकार किसी देश के निचले और ऊँचे स्थानों, समतल और ऊबड़-खाबड़, सूखी और गीली भूमि सहित सभी क्षेत्रों में वर्षा का जल बहकर विशाल सागर में मिल जाता है; उसी प्रकार ये सभी अंश यहाँ आकर आपस में जुड़ेंगे। और मेरे अनुभव और ज्ञान से प्राप्त तर्कों का स्पष्टीकरण भी दिया जाएगा। इस प्रकार इस विषय का गहन विश्लेषण किया जाएगा, इसकी सुंदरता को उजागर किया जाएगा, इसका सार निकाला जाएगा और इसे पूर्णतः समझाया जाएगा।

विश्राम करना। हे राजा, यह वैसा ही होगा जैसे कोई कुशल लेखक, अनुरोध पर अपनी लेखन क्षमता का प्रदर्शन करते हुए, अपने अनुभव और ज्ञान के आधार पर लिखित संकेतों की व्याख्या करता है, और इस प्रकार उसका लेखन पूर्ण, परिपूर्ण और दोषरहित हो जाता है। उसी प्रकार मैं भी अपने अनुभव और ज्ञान के आधार पर तर्कों का स्पष्टीकरण दूंगा; और इस प्रकार इस विषय का गहन विश्लेषण होगा, इसकी सुंदरता उजागर होगी, यह समाप्त होगा, और इसका समापन होगा।

4. हे राजा, सावत्थी नगर में, भगवान बुद्ध के लगभग पचास करोड़ शिष्य, भक्त पुरुष और भक्त स्त्रियाँ, मार्ग पर चल रहे थे, और उनमें से तीन लाख सत्तावन हजार तीसरे मार्ग के फल में स्थापित हो गए। और वे सभी गृहस्थ थे, संघ के सदस्य नहीं थे। और वहाँ भी, गंडम्बा वृक्ष के चरणों में, जब दोहरा चमत्कार हुआ, तो दो करोड़ जीव (चार सत्यों के) ज्ञान की प्राप्ति हुई। और फिर राहुलवाद प्रवचन, महा मंगल प्रवचन, समाकित्त व्याख्या और...

[पैराग्राफ जारी है] पराभव प्रवचन, पुरभेद प्रवचन, कलह-विवाद प्रवचन, कुल-व्यूह प्रवचन, महा-व्यूह प्रवचन, तुवतक प्रवचन और सारिपुत्त प्रवचन से असंख्य दिव्य प्राणियों ने (चार सत्यों का) ज्ञान प्राप्त किया। रागगृह नगर में साढ़े तीन लाख श्रद्धालु गृहस्थ पुरुष और महिलाएं, भगवान बुद्ध के शिष्य, मार्ग पर चल रहे थे। और फिर धनपाल नामक विशाल हाथी को वश में करने के समय नौ सौ मिलियन जीव, और फिर पाषाणिका केतिया में पारायन प्रवचन के अवसर पर सभा में एक सौ चालीस मिलियन जीव, और फिर इंद्राशाला गुफा में आठ सौ मिलियन देवता, और फिर बनारस के इसिपताना हिरण पार्क में धम्म के प्रथम उपदेश के समय एक सौ अस्सी मिलियन ब्रह्मा देवता और असंख्य अन्य, और फिर तैंतीस के स्वर्ग में पांडु कंबला चट्टान पर अभिधम्म के उपदेश के समय आठ सौ मिलियन देवता, और देवताओं के लोक से संकस्सा नगर के द्वार पर अवतरण के समय, संसार में प्रकट होने के चमत्कार के समय।

तीन सौ मिलियन विश्वासी पुरुषों और देवताओं ने (चार सत्यों का) ज्ञान प्राप्त किया। फिर कपिल-वत्थु में शाक्यों के बीच, निग्रोध आराम में बुद्धवंश के उपदेश से, और फिर महा समय सूत्र के उपदेश से, अनगिनत देवताओं ने धम्म का ज्ञान प्राप्त किया। और फिर सुमना (मालाकार), गरहादिन्ना, आनंद (धनी), गंबुका (नग्न तपस्वी), मंदूका (देवता), मत्तकुंडली (देवी), सुलासा (वेश्या), सिरिमा (वेश्या), बुनकर की पुत्री, सुभद्दा, साकेत ब्राह्मण के दाह संस्कार, सूनापरंतों, सक्का द्वारा पूछे गए प्रश्न, तिरोकुद्दा सूत्र और रत्न सूत्र के अवसर पर आयोजित सभाओं में, प्रत्येक अवसर पर चौरासी हजार लोगों ने धम्म का ज्ञान प्राप्त किया। हे राजा, जब तक भगवान बुद्ध संसार में रहे, तीनों महाभागों में जहाँ कहीं भी रहे...

(भारत में) या सोलह प्रमुख देशों में जहाँ वह रहे, वहाँ सामान्यतः दो, तीन, चार, पाँच सौ, एक हजार, या एक लाख, देवता और मनुष्य, सभी ने निर्वाण, परम शांति और आनंद का प्रत्यक्ष अनुभव किया। और हे राजा, वे सभी देवता गृहस्थ थे। उन्होंने संघ में प्रवेश नहीं किया था। अतः हे राजा, इन और अन्य अरबों देवताओं ने—यहाँ तक कि गृहस्थ रहते हुए, इंद्रिय सुखों का आनंद लेते हुए—शांति, परम शांति और निर्वाण की स्थिति का प्रत्यक्ष अनुभव किया।

5. हे पूज्य नागसेन, यदि गृहस्थ जीवन में रहकर इंद्रिय सुखों का आनंद लेने वाले गृहस्थ निर्वाण प्राप्त कर सकते हैं, तो इन अतिरिक्त व्रतों का क्या उद्देश्य है? ऐसा होने पर तो व्रत तो उपद्रव का कारण ही होंगे। क्योंकि, नागसेन, यदि रोग बिना दवा के ठीक हो जाते, तो उल्टी कराने वाली दवाओं, दस्त की दवाओं और अन्य ऐसी ही औषधियों से शरीर को कमजोर करने का क्या लाभ होता? यदि शत्रुओं को केवल मुक्कों से ही वश में किया जा सकता, तो तलवारों, भालों, बरछियों, धनुषों, क्रॉसबो, गदाओं और गदाओं की क्या आवश्यकता होती? यदि वृक्षों पर उनकी गांठों, टेढ़े-मेढ़े और खोखले स्थानों, उन पर उगने वाली कांटेदार शाखाओं और लताओं की सहायता से चढ़कर ही पहुंचा जा सकता, तो लंबी और मजबूत सीढ़ियों की खोज में जाने की क्या आवश्यकता होती? यदि नंगी जमीन पर सोने से निर्वाण प्राप्त हो जाता, तो

जब शरीर को आराम मिल रहा हो, तो मुलायम और आरामदायक बिस्तरों की तलाश क्यों करनी चाहिए?—यदि कोई अकेले ही दुर्गम और खतरों से भरे रेगिस्तान को पार कर सकता है, तो उसे हथियारों से लैस भव्य काफिले का इंतजार क्यों करना चाहिए?—यदि कोई

व्यक्ति अपने बल पर बहती नदी को पार कर सकता है, तो उसे मजबूत बांधों या नावों की क्या आवश्यकता है?—यदि वह अपनी संपत्ति से अपने लिए भोजन और आवास की व्यवस्था कर सकता है, तो उसे दूसरों की सेवा करने, मीठी बातों से उनकी चापलूसी करने और इधर-उधर भागने की क्या जरूरत है?—जब उसे प्राकृतिक स्रोत से पानी मिल सकता है, तो उसे कुएँ, तालाब और कृत्रिम पोखर क्यों खोदने चाहिए? और ठीक इसी प्रकार, हे पूज्य नागसेन, यदि गृहस्थ जीवन में रहकर और इंद्रिय सुखों का आनंद लेते हुए भी मनुष्य अपने भीतर शांति, परम सुख, निर्वाण की स्थिति को प्राप्त कर सकता है, तो इन व्रतों को लेने की क्या आवश्यकता है?

6. हे राजा, व्रतों में ये अट्ठाईस अच्छे गुण निहित हैं, सद्गुण वास्तव में उनमें अंतर्निहित हैं; और इन्हीं के कारण सभी बुद्धों ने समान रूप से इनकी कामना की है और इन्हें प्रिय माना है। और वे अट्ठाईस क्या हैं? हे राजा, व्रतों का पालन करना बुराई रहित जीवन शैली का संकेत देता है, इसका फल आनंदमय शांति है, यह निंदा से बचाता है, यह दूसरों को कोई हानि नहीं पहुँचाता, यह खतरे से मुक्त है, यह दूसरों पर कोई कष्ट नहीं लाता, यह निश्चित रूप से अच्छाई में वृद्धि लाता है, यह क्षीण नहीं होता, यह भ्रम नहीं पैदा करता, यह स्वयं में एक सुरक्षा है, यह इच्छाओं की संतुष्टि और सभी प्राणियों के वशीकरण का कार्य करता है, यह आत्म-संयम के लिए अच्छा है।

यह उचित है, (जो व्रतों का पालन करता है) वह आत्मनिर्भर होता है, मुक्त होता है; व्रतों का पालन कामवासना, द्वेष और सुस्ती का नाश करता है; यह अहंकार को दूर करता है, बुरे विचारों को काटता है, संदेह को दूर करता है, आलस्य को दबाता है और असंतोष को मिटाता है; यह धीरज है, इसका पुण्य अतुलनीय है, इसका गुण असीम है, और यह वह मार्ग है जो हर दुःख के अंत की ओर ले जाता है। हे राजा, ये व्रतों में निहित अट्ठाईस अच्छे गुण हैं; और इन्हीं के कारण सभी बुद्धों ने समान रूप से इनकी कामना की है और इन्हें प्रिय माना है।

7. हे राजा, जो कोई भी प्रतिज्ञाओं का पूर्णतया पालन करता है, वह अठारह गुणों से परिपूर्ण हो जाता है। ये अठारह गुण क्या हैं? उनका आचरण शुद्ध होता है, उनका मार्ग सिद्ध होता है, वे कर्म और वचन में सजग होते हैं, उनका व्यवहार और मन पूर्णतया शुद्ध होता है, उनका उत्साह कभी कम नहीं होता, उनके सभी भय दूर हो जाते हैं, उनकी वैयक्तिकता के सभी भ्रम (स्थायित्व और स्तर के संबंध में) दूर हो जाते हैं, क्रोध का अंत हो जाता है और उनके हृदय में (सभी प्राणियों के प्रति) प्रेम उत्पन्न हो जाता है, वे भोजन ग्रहण करते समय भोजन के संबंध में तीन उचित दृष्टिकोणों से भोजन करते हैं, वे सम्मानित होते हैं।

सभी मनुष्य संयमी होते हैं, वे सतर्क रहते हैं, उन्हें घर की आवश्यकता नहीं होती; जहाँ भी कोई सुखद स्थान होता है, वे वहीं निवास करते हैं; वे बुराई करने से घृणा करते हैं; वे एकांत में आनंदित होते हैं; वे सदा गंभीर रहते हैं। हे राजा, ये वे अच्छे गुण हैं जिनसे व्रतों का पालन करने वाले पूर्णतः संपन्न होते हैं।

8. हे राजा, ये दस व्यक्ति प्रतिज्ञाओं में निहित लाभों के योग्य हैं—विश्वास से परिपूर्ण, गलत कार्य करने से लज्जित, साहसी, कपट रहित, आत्मसंयमी, अस्थिर न होने वाला, सीखने का इच्छुक, कठिन कार्य करने में प्रसन्न, आसानी से नाराज न होने वाला, प्रेममय हृदय वाला। हे राजा, ये दस व्यक्ति प्रतिज्ञाओं में निहित लाभों के योग्य हैं।

9. हे राजा, वे सभी जो गृहस्थी में रहकर इंद्रिय सुखों का आनंद लेते हुए शांति, परम सुख, निर्वाण की अवस्था को अपने भीतर प्राप्त करते हैं—उन्होंने अपने पूर्व जन्मों में तेरह व्रतों का पालन करके प्रशिक्षण पूर्ण किया था, नींव रखी थी और उनके द्वारा अपने आचरण और चाल को शुद्ध किया था; और अब भी, गृहस्थी में रहकर इंद्रिय सुखों का आनंद लेते हुए, वे शांति, परम सुख, निर्वाण की अवस्था को अपने भीतर प्राप्त करते हैं। हे राजा, न्यायप्रिय, जैसे एक कुशल धनुर्धर नियमित क्रम में प्रशिक्षण मैदान में अपने शिष्यों को विभिन्न प्रकार के धनुष, धनुष को पकड़ने का तरीका, उसे दृढ़ता से थामे रखने का तरीका, उंगलियों को मोड़ने का तरीका, पैरों को जमाने का तरीका, बाण को उठाने का तरीका और उसे निशाने पर रखने का तरीका सिखाता है।

डोरी को पकड़ना, उसे वापस खींचना, उसे नियंत्रित करना, लक्ष्य पर निशाना लगाना और इस प्रकार भूसे के बने व्यक्ति, खानका पौधे से बने लक्ष्य, घास, भूसे, मिट्टी के ढेर या ढालों को भेदना—और उसके बाद, उन्हें राजा की सेवा में लगाकर, वह उच्च नस्ल के घोड़ों, रथों, हाथियों, घोड़ों, धन, अनाज, लाल सोने, दासियों, दासों, पत्नियों और भूमि का पुरस्कार प्राप्त करता है। ठीक इसी प्रकार, हे राजा, वे सभी जो गृहस्थ रहते हुए इंद्रिय सुखों का आनंद लेते हैं, अपने भीतर शांति, परम सुख, निर्वाण की स्थिति को प्राप्त करते हैं—उन्होंने पिछले जन्मों में तेरह व्रतों के अभ्यास में अपना प्रशिक्षण पूर्ण किया था, नींव रखी थी, उनके माध्यम से अपने आचरण और चाल को शुद्ध किया था; और अब भी, गृहस्थ रहते हुए इंद्रिय सुखों का आनंद लेते हुए, वे अपने भीतर शांति, परम सुख, निर्वाण की स्थिति को प्राप्त करते हैं।

10. हे राजा, व्रतों का पूर्वपालन किए बिना एक ही जन्म में अरहतत्व की प्राप्ति नहीं होती। केवल अत्यंत उत्साह और धर्म के पूर्ण समर्पणपूर्ण अभ्यास से तथा एक उपयुक्त गुरु की सहायता से ही अरहतत्व की प्राप्ति होती है। हे राजा, न्यायसंगत, जैसे एक चिकित्सक या शल्यचिकित्सक पहले शुल्क देकर या सेवा करके अपने लिए एक गुरु प्राप्त करता है, और फिर

वह स्वयं को लैंसेट पकड़ने, उससे काटने, निशान लगाने या छेद करने, तीर निकालने, घावों को साफ करने, उन्हें सुखाने, मलहम लगाने, उल्टी कराने वाली दवाएँ, दस्त लाने वाली दवाएँ और तेलयुक्त एनीमा देने का पूर्ण प्रशिक्षण देता है, और जब वह इस प्रकार प्रशिक्षण प्राप्त कर लेता है, अपनी शिक्षा पूरी कर लेता है, और स्वयं को कुशल बना लेता है, तभी वह बीमारों के पास जाकर उनका इलाज करता है। ठीक इसी प्रकार, हे राजा, वे सभी जो गृहस्थ रहते हुए इंद्रिय सुखों का आनंद लेते हैं, अपने भीतर शांति, परम सुख, निर्वाण की अवस्था को प्राप्त करते हैं—उन्होंने अपने पूर्व जन्मों में तेरह व्रतों के पालन में अपना प्रशिक्षण पूर्ण किया था, नींव रखी थी, और उनके माध्यम से अपने आचरण और चाल को शुद्ध किया था; और अब भी, गृहस्थ रहते हुए, इंद्रिय सुखों का आनंद लेते हुए, वे अपने भीतर शांति, परम सुख, निर्वाण की अवस्था को प्राप्त करते हैं।

11. 'जो लोग व्रतों के पालन से प्राप्त होने वाले गुणों से शुद्ध नहीं होते, उन्हें सत्य का ज्ञान नहीं होता। जैसे जल के बिना बीज नहीं उगता, वैसे ही व्रतों के पालन से शुद्ध न होने वालों को सत्य का ज्ञान नहीं होता। जैसे पुण्य कर्म न करने वालों को आनंदमय पुनर्जन्म नहीं मिलता, वैसे ही व्रतों के पालन से शुद्ध न होने वालों को सत्य का ज्ञान नहीं होता।'

12. हे राजा, प्रतिज्ञाओं का पालन करने से उत्पन्न होने वाला चरित्र विशाल पृथ्वी के समान है, जो शुद्ध होने की इच्छा रखने वालों के लिए आधार बनता है। हे राजा, यह जल के समान है, जो सभी वस्तुओं के दाग धो देता है।

जो शुद्ध होना चाहते हैं, उनके भीतर की बुराई को यह अग्नि के समान जलाकर राख कर देता है। हे राजा, यह वायु के समान है, जो शुद्ध होने की इच्छा रखने वालों के भीतर की बुराई की धूल को उड़ा ले जाता है। हे राजा, यह औषधि के समान है, जो शुद्ध होने की इच्छा रखने वालों के भीतर बुराई के रोग को शांत करता है। हे राजा, यह अमृत के समान है, जो शुद्ध होने की इच्छा रखने वालों के भीतर बुराई के विष का विषनाशक है। हे राजा, यह उपजाऊ भूमि के समान है, जिस पर शुद्ध होने की इच्छा रखने वालों के लिए त्याग के सभी गुणों की फसल उगाई जाती है। हे राजा, यह मनोकामना पूरी करने वाले रत्न के समान है, जो शुद्ध होने की इच्छा रखने वालों को उनकी सभी उच्च उपलब्धियों को प्रदान करता है। हे राजा, यह नौका के समान है, जो शुद्ध होने की इच्छा रखने वालों को पुनर्जन्म के विशाल सागर के पार ले जाती है। हे राजा, यह एक शरणस्थल के समान है, जहाँ पवित्रता की इच्छा रखने वाले वृद्धावस्था और मृत्यु के भय से सुरक्षित रह सकते हैं। हे राजा, यह एक माता के समान है, जो पाप के दुःखों से पीड़ित पवित्रता की इच्छा रखने वालों को सांत्वना देती है। हे राजा, यह एक पिता के समान है, जो पवित्रता की इच्छा रखने वालों में संसार त्यागने वालों के सभी अच्छे गुणों को उत्पन्न करता है और उन्हें बढ़ाता है। हे राजा, यह एक मित्र के समान है, जो संसार त्यागने वालों के अच्छे गुणों की खोज में पवित्रता की इच्छा रखने वालों को निराश नहीं करता। हे राजा, यह कमल के फूल के समान है, जो बुराई के दाग से कभी कलंकित नहीं होता। यह कीमती इत्र (केसर, चमेली, तुर्की और यूनानी धूप) के समान है।

हे राजा, क्या यह पवित्रता चाहने वालों के लिए बुराई की दुर्गंध को दूर करने के लिए है? हे राजा, क्या यह एक ऊंचे पर्वत श्रृंखला के समान है, क्या यह पवित्रता चाहने वालों को इस संसार में मनुष्य के अधीन रहने वाली आठ अवस्थाओं (लाभ और हानि, यश और अपमान, प्रशंसा और निंदा, सुख और दुःख) की हवाओं के प्रकोप से बचाने के लिए है? हे राजा, क्या यह स्वर्ग के समान है, क्या यह सभी बाधाओं से मुक्त है, क्या यह विशालता और व्यापकता प्रदान करता है, क्या यह पवित्रता चाहने वालों को प्रदान करता है? हे राजा, क्या यह एक धारा के समान है, क्या यह पवित्रता चाहने वालों के लिए सभी बुराइयों के दाग को धो डालने के लिए है? हे राजा, क्या यह पुनर्जन्म के रेगिस्तान से, कामवासनाओं और पापों के जंगल से, क्या यह पवित्रता चाहने वालों को सुरक्षित बाहर निकालने के लिए एक मार्गदर्शक के समान है। हे राजा, यह एक शक्तिशाली कारवां के समान है, जो शुद्धि की इच्छा रखने वालों को निर्वाण के उस परम पवित्र नगर में सुरक्षित रूप से ले जाता है, जो शांत और निर्मल है, जहाँ भय का कोई स्थान नहीं है। हे राजा, यह एक उत्तम रूप से पॉलिश किए हुए बेदाग दर्पण के समान है, जो शुद्धि की इच्छा रखने वालों को सभी प्राणियों के मूल तत्वों का सच्चा स्वरूप दिखाता है। हे राजा, यह एक ढाल के समान है, जो शुद्धि की इच्छा रखने वालों को बुरी प्रवृत्तियों के गदाओं, बाणों और तलवारों से बचाता है। हे राजा, यह एक धूपदानी के समान है, जो शुद्धि की इच्छा रखने वालों को त्रिगुण अग्नि की झुलसा देने वाली गर्मी से बचाता है।

हे राजा, चंद्रमा ही वह है जिसकी पवित्रता की कामना करने वाले लोग प्रबल इच्छा रखते हैं। हे राजा, यह सूर्य के समान है जो पवित्रता की कामना करने वालों के अज्ञान के अंधकार को दूर करता है। हे राजा, यह सागर के समान है जो पवित्रता की कामना करने वालों में संसार का त्याग करने वालों के गुणों के अनमोल खजाने को उत्पन्न करता है, और ऐसा इसकी विशालता, इसकी असीमता और अनगिनत होने के कारण भी है।

13. हे राजा, यह उन लोगों के लिए अत्यंत उपयोगी है जो शुद्ध होना चाहते हैं; यह सभी दु:ख और विलाप को दूर करता है, असंतोष का इलाज है; यह भय, अहंकार और मन की उदासीनता का अंत करता है; बुराई, दु:ख, पीड़ा, वासना, द्वेष, सुस्ती, अहंकार, विधर्म और सभी गलत प्रवृत्तियों का अंत करता है; यह अपने साथ सम्मान, लाभ और आनंद लाता है; यह उन्हें सहजता, प्रेम और मन की शांति से भर देता है; यह दोषरहित है; इसका फल सुख है; यह असीम और अनगिनत अच्छाई का खजाना है, सभी चीजों से अधिक मूल्यवान और बहुमूल्य है।

14. हे राजा, जिस प्रकार मनुष्य पोषण के लिए भोजन, स्वास्थ्य के लिए औषधि, सहायता के लिए मित्र, जलमार्ग पार करने के लिए नाव, सुगंध के लिए इत्र, सुरक्षा के लिए शरणस्थल, सहारे के लिए पृथ्वी, शिक्षा के लिए शिक्षक, सम्मान के लिए राजा और अपनी हर इच्छा की पूर्ति के लिए रत्न की खोज करते हैं—ठीक उसी प्रकार, हे राजा, अरहत संसार के त्याग के सभी लाभों की प्राप्ति के लिए व्रतों के पालन के गुणों की खोज करते हैं।

15. और जो पानी बीजों के विकास के लिए है, जो आग जलाने के लिए है, जो भोजन शक्ति प्रदान करने के लिए है, जो लता चीजों को बांधने के लिए है, जो तलवार काटने के लिए है, जो पानी प्यास बुझाने के लिए है, जो खजाना आत्मविश्वास देने के लिए है, जो नाव दूर के किनारे तक जाने के लिए है, जो दवा रोग दूर करने के लिए है, जो रथ आराम से यात्रा करने के लिए है, जो शरणस्थल भय को शांत करने के लिए है, जो राजा रक्षा के लिए है, जो ढाल लाठी और डंडों, गदाओं, तीरों और बाणों के वार से बचाव के लिए है, जो शिक्षक शिक्षा के लिए है, जो माँ पालन-पोषण के लिए है, जो दर्पण देखने के लिए है, जो रत्न आभूषण के लिए है, जो पोशाक पहनने के लिए है, जो सीढ़ी चढ़ने के लिए है, जो तराजू तुलना करने के लिए है, जो ताबीज दोहराने के लिए है, जो हथियार तिरस्कार से बचाव के लिए है, जो दीपक अंधकार को दूर करने के लिए है, जो हवा बुखार को शांत करने के लिए है, जो कला का ज्ञान है... व्यापार की सफलता, जीवन की रक्षा के लिए औषधियाँ, रत्नों के उत्पादन के लिए खान, आभूषण के लिए रत्न, अपराध रोकने के लिए आदेश, प्रभुत्व के लिए संप्रभुता—हे राजा, ये सब प्रतिज्ञाओं के पालन से प्राप्त होने वाले गुण हैं, जो त्याग के बीज की अच्छी वृद्धि, बुराई के दागों को जलाने, इद्धि की शक्ति प्रदान करने, आत्म-संयम और मन की उपस्थिति में स्वयं को बांधने, संदेह और अविश्वास को पूरी तरह से दूर करने, लालसा की प्यास बुझाने, सत्य की अनुभूति में विश्वास दिलाने, चार प्रकार की धाराओं (इंद्रिय, व्यभिचार, भ्रम और अज्ञान) के पार जाने, बुरी प्रवृत्तियों के रोग को शांत करने, निर्वाण के आनंद की प्राप्ति, जन्म, वृद्धावस्था, क्षय और मृत्यु, शोक, पीड़ा, विलाप, दु:ख और निराशा से उत्पन्न भय को शांत करने के लिए आवश्यक हैं। त्याग के लाभों से सुरक्षित रहने के लिए, असंतोष और बुरे विचारों को दूर करने के लिए, संसार का त्याग करने वालों के जीवन में निहित सभी अच्छाइयों का उपदेश देने के लिए, उसमें पोषण प्रदान करने के लिए, मनुष्यों को शांति और अंतर्दृष्टि, और उसके मार्ग और फलों तथा निर्वाण के बारे में समझाने के लिए, मनुष्यों को संसार की प्रशंसा और सम्मान में उच्च स्थान प्राप्त एक अनमोल आभूषण प्रदान करने के लिए, सभी बुरी अवस्थाओं के द्वार बंद करने के लिए, त्याग के पर्वत शिखरों तक पहुंचने के लिए, दूसरों में कुटिल, धूर्त और बुरे इरादों को पहचानने के लिए, उन गुणों का उचित पाठ करने के लिए जिनका अभ्यास किया जाना चाहिए और जिनका नहीं, सभी बुरी प्रवृत्तियों को अपने शत्रु के रूप में दूर करने के लिए, अज्ञान के अंधकार को दूर करने के लिए, त्रिगुण अग्नि की झुलसन से उत्पन्न बुखार को शांत करने के लिए, शांति की स्थिति की प्राप्ति के लिए - जो इतनी कोमल और इतनी सूक्ष्म है - एक संन्यासी के जीवन के गुणों की रक्षा के लिए।सात प्रकार के ज्ञान के बहुमूल्य रत्नों - आत्म-संयम, सत्य की खोज, ऊर्जा, आनंद, शांत चिंतन और शांति - के उत्पादन के लिए, संन्यासियों के अलंकरण के लिए, शांति से प्राप्त होने वाले उस निर्दोष, गूढ़, कोमल आनंद के विरुद्ध किसी भी प्रकार के उल्लंघन की रोकथाम के लिए, संन्यासियों और अरहतों द्वारा धारण किए जाने वाले सभी गुणों पर प्रभुत्व प्राप्त करने के लिए। इस प्रकार, हे राजा, व्रतों का पालन करना इन सभी गुणों की प्राप्ति के समान है। और इसका लाभ, हे राजा, न तो तौला जा सकता है, न मापा जा सकता है; इसका कोई सानी नहीं, कोई प्रतिद्वंदी नहीं, कोई श्रेष्ठ नहीं; यह महान और गौरवशाली है, व्यापक और प्रचुर है, गहरा और विस्तृत है, और विशाल और व्यापक है, महत्व और शक्ति से परिपूर्ण है।

16. 'और हे राजा, जिसके हृदय में बुरी इच्छाएँ हों, जो पाखंडी हो, लालची हो, पेटू हो, भौतिक लाभ या सांसारिक यश और यश की चाह रखता हो, (अरहतत्व के बाह्य लक्षणों के लिए) अयोग्य हो, सिद्धियाँ प्राप्त न कर पाया हो, जिसका आचरण (संगठन की सदस्यता के साथ) असंगत हो, उसके लिए अनुपयुक्त हो, उसके लिए अनुपयुक्त हो—ऐसा कोई भी व्यक्ति व्रत ग्रहण करे, तो उसे दोहरा दंड मिलेगा, और वह अपने भीतर के गुणों से वंचित हो जाएगा। क्योंकि इस लोक में उसे अपमान, तिरस्कार, निंदा, उपहास, निलंबन, बहिष्कार और निष्कासन का सामना करना पड़ेगा; और अगले जन्म में उसे सौ मील गहरे महान अवीकी नरक में यातना सहनी पड़ेगी, जो माला की तरह गर्म और झुलसा देने वाली, भयंकर और अग्निमय लपटों से ढका हुआ है; उसमें वह असंख्य वर्षों तक ऊपर-नीचे और अगल-बगल उठता-गिरता रहेगा, मानो उबलते समुद्र में उछाला गया कोई झागदार बुलबुला इधर-उधर फेंका जा रहा हो। और जब वहाँ से मुक्त होगा, तब एक शक्तिशाली प्रेत (भूत) के रूप में, भिक्षु के बाहरी रूप में, परन्तु दुबले-पतले, खुरदुरे और काले शरीर और अंगों के साथ, सूजे हुए, फूले हुए और छेदों से भरे सिर के साथ, भूखा-प्यासा, रंग और रूप में विचित्र और भयानक, उसके कान फटे

हुए, आँखें निरंतर झपकती हुई, उसके अंग कष्टदायक घावों से भरे हुए, उसका पूरा शरीर कीड़ों का शिकार, उसका पेट हवा में धधकती भट्टी की तरह झुलसता हुआ और गर्म, फिर भी उसका मुँह सुई से भी छोटा, जिससे उसकी प्यास कभी बुझती नहीं, शरण लेने के लिए कोई जगह नहीं, मदद करने के लिए कोई रक्षक नहीं, कराहता-बिलखता और दया की भीख माँगता हुआ, वह पृथ्वी पर विलाप करता भटकता रहेगा!

17. 'हे राजा, न्यायसंगत! जो कोई भी राजगद्दी के लिए अयोग्य हो, उचित रूप से राजगद्दी प्राप्त किए बिना, राजगद्दी के लिए अनुपयुक्त हो, उसके योग्य न हो, उसके लिए अनुपयुक्त हो, नीच कुल का हो और वंश में नीच हो, यदि उसे राजा का अभिषेक प्राप्त हो, तो उसे अंग-भंग सहना पड़ेगा; उसके हाथ या पैर काट दिए जाएँगे, या उसके कान या नाक काट दिए जाएँगे, या उसे यातनाएँ दी जाएँगी; उसे दलिया के पात्र, शंख के मुकुट, राहु के मुख, अग्नि माला, हाथ की मशाल, साँप की पट्टियों, छाल के वस्त्र, चित्तीदार मृग, मांस के हुक, सिक्कों, खारे पानी की दरारों, छड़ घुमाने, या पुआल की गद्दी पर बिठाया जाएगा; या उसे उबलते तेल से अभिषेक किया जाएगा, या कुत्तों द्वारा खाया जाएगा, या जीवित सूली पर चढ़ाया जाएगा; या उसे उसका सिर कलम कर दिया जाएगा, या उसे अनेक प्रकार के दंड दिए जाएँगे। और क्यों? क्योंकि वह इसके लिए अयोग्य था, इसे विधिवत प्राप्त किए बिना, इसके लिए अनुपयुक्त, इसके योग्य नहीं, इसके लिए अनुपयुक्त, नीच कुल का और नीच वंश का होने के बावजूद, उसने संप्रभुता के सिंहासन पर आसीन होकर अपनी सीमा का उल्लंघन किया। ठीक इसी प्रकार, हे राजा, जिसके हृदय में बुरी इच्छाएँ हों, जो पाखंडी हो, लालची हो, अपने पेट का गुलाम हो, भौतिक लाभ या सांसारिक यश और यश की चाह रखता हो, (अरहतत्व के बाहरी लक्षणों के लिए) अयोग्य हो, योग्यताओं को प्राप्त न कर पाया हो, जिसका आचरण (आरहतत्व की सदस्यता के साथ) असंगत हो, इसके योग्य न हो, इसके लिए अनुपयुक्त हो—ऐसा कोई भी व्यक्ति जो प्रतिज्ञाएँ ग्रहण करे, उसे दोहरा दंड भुगतना पड़ेगा, और अपने भीतर के गुणों को खोना पड़ेगा। इस संसार में उसे अपमान, तिरस्कार, निंदा, उपहास, निलंबन, बहिष्कार और निष्कासन का सामना करना पड़ेगा; उसे बहिष्कृत, अस्वीकृत और बर्खास्त कर दिया जाएगा; और अगले जन्म में उसे सौ मील गहरे और गर्म, झुलसा देने वाली, भयंकर और प्रचंड लपटों से ढके हुए विशाल अविकी नरक में यातना सहनी पड़ेगी; उसमें वह लाखों वर्षों तक ऊपर-नीचे और अगल-बगल उठता-गिरता रहेगा, मानो उबलते समुद्र में उछाला गया कोई झागदार बुलबुला हो। और, जब वह वहाँ से मुक्त हो जाता है, तो एक शक्तिशाली प्रेत (भूत) के रूप में, एक भिक्षु के बाहरी रूप में, लेकिन दुबले-पतले, खुरदुरे और काले शरीर और अंगों के साथ, सूजे हुए, फूले हुए और छेदों से भरे सिर के साथ, भूखा-प्यासा, रंग और रूप में विचित्र और भयानक, उसके सारे रथ फटे हुए, और उसकी आँखें लगातार झपकती रहती हैं, उसके अंग कष्टदायक घावों का ढेर होते हैं, उसका पूरा शरीर कीड़ों का शिकार होता है, उसका पेट हवा में धधकती भट्टी की तरह झुलसता और गर्म होता है, फिर भी उसका मुँह सुई से बड़ा नहीं होता जिससे उसकी प्यास कभी बुझती नहीं, भागने के लिए कोई शरण स्थान नहीं, उसकी सहायता करने के लिए कोई रक्षक नहीं, कराहता-बिलखता और दया की भीख मांगता हुआ, वह पृथ्वी पर विलाप करता भटकता रहेगा!

18. 'परन्तु हे राजा, जो भी योग्य हो, जिसने योग्यताएँ प्राप्त कर ली हों, जिसका आचरण संघ की सदस्यता के अनुरूप हो, जो इसके योग्य हो, इसके लिए उपयुक्त हो, जो कम इच्छा रखता हो और संतुष्ट हो, एकांतप्रिय हो, समाज से प्रेम न करता हो, उत्साह में सजग हो, दृढ़ निश्चयी हो, छल-कपट रहित हो, छल रहित हो, अपने पेट का गुलाम न हो, न भौतिक लाभ की चाह रखता हो, न सांसारिक यश या महिमा का, आस्था से परिपूर्ण हो, जिसने विश्वास (धर्मशास्त्र में, न कि सांसारिक उद्देश्यों से) के कारण संघ में प्रवेश किया हो, और वृद्धावस्था और मृत्यु से मुक्ति की तीव्र इच्छा रखता हो—ऐसा कोई भी व्यक्ति जो धर्म को कायम रखने के उद्देश्य से प्रतिज्ञाएँ ग्रहण करे, वह दुगुना सम्मान का पात्र है। क्योंकि वह देवताओं और मनुष्यों दोनों के प्रिय हैं, उनसे प्रेम किया जाता है और उनकी कामना की जाती है; वे उतने ही प्रिय हैं जितने स्नान किए और अभिषेक किए हुए व्यक्ति के लिए दुर्लभ चमेली के फूल, भूखे के लिए मीठा भोजन, प्यासे के लिए ठंडा, स्वच्छ और सुगंधित पानी, विष से पीड़ित व्यक्ति के लिए औषधि, जल्दबाजी में यात्रा करने वाले यात्री के लिए उत्तम नस्ल के घोड़ों द्वारा खींचा गया कीमती रथ, लाभ के लालची के लिए मनोकामना पूरी करने वाला रत्न, सिंहासन की महत्वाकांक्षा रखने वाले के लिए संप्रभुता की शुद्ध सफेद छतरी, और पवित्रता के साधक के लिए अरहतत्व के फलों की धन्य प्राप्ति। जो व्यक्ति चार गंभीर ध्यान, चार प्रकार के महा संघर्ष, संतत्व के चार मार्ग, पांच नैतिक इंद्रियों, पांच नैतिक शक्तियों, ज्ञान के सात रूपों और आर्य अष्टांगिक मार्ग पर पूर्ण महारत हासिल कर लेता है, उसके हृदय में शांति और अंतर्दृष्टि का राज होता है, अध्ययन के माध्यम से प्राप्ति उसके लिए सहज हो जाती है, और संन्यासी के जीवन के चार फल, चार प्रकार के विवेक, त्रिविध ज्ञान, छह प्रकार का उच्चतर ज्ञान, संक्षेप में, संन्यासियों का संपूर्ण धर्म उसका अपना हो जाता है; वह एक अभिषिक्त राजा होता है, और उस पर मुक्ति का शुद्ध श्वेत सूर्यछाया पड़ता है!

19. 'हे राजा, जिस प्रकार देश के सभी नागरिक और ग्रामीण, सैनिक और चपरासी (राजकीय दूत), शाही वंश में जन्मे और दोनों ओर से उच्च वंश वाले क्षत्रिय राजा की सेवा में तत्त्वम से रहते हैं, जब उनका क्षत्रिय राज्याभिषेक समारोहों के साथ किया जाता है; राजसी दल के अड़तीस दल, नर्तक, कलाबाज और ज्योतिषी,

और दूत, समन, ब्राह्मण और हर संप्रदाय के अनुयायी उसके दरबार में आते-जाते रहते हैं, और वह हर बंदरगाह, खान, शहर और सीमा शुल्क का स्वामी बन जाता है—हर विदेशी और अपराधी के भाग्य के बारे में निर्देश देता है—ठीक वैसे ही, हे राजा, जो भी योग्य है,

जिसने योग्यता प्राप्त कर ली है, जिसका आचरण संघ की सदस्यता के अनुरूप है, जो इसके योग्य है, इसके लिए उपयुक्त है, जो कम इच्छा रखता है और संतुष्ट है, एकांतप्रिय है, समाज से प्रेम नहीं करता है, उत्साह में तत्पर है, दृढ़ हृदय का है, छल रहित है, कपट रहित है, अपने पेट का गुलाम नहीं है, न तो भौतिक लाभ चाहता है और न ही सांसारिक प्रसिद्धि या यश, आस्था से परिपूर्ण है, जिसने विश्वास (धर्म में, न कि सांसारिक उद्देश्यों से) के कारण संघ में प्रवेश किया है, और वृद्धावस्था और मृत्यु से मुक्ति की तीव्र इच्छा रखता है—ऐसा कोई भी व्यक्ति जो धर्म को बनाए रखने के विचार से प्रतिज्ञा लेता है, वह दुगुना सम्मान का पात्र है। क्योंकि वह देवताओं और मनुष्यों दोनों के प्रिय हैं, उनसे प्रेम किया जाता है और उनकी कामना की जाती है; वे उतने ही प्रिय हैं जितने स्नान किए और अभिषेक किए हुए व्यक्ति के लिए दुर्लभ चमेली के फूल, भूखे के लिए मीठा भोजन, प्यासे के लिए ठंडा, स्वच्छ और सुगंधित पानी, विष से पीड़ित व्यक्ति के लिए औषधि, जल्दबाजी में यात्रा करने वाले यात्री के लिए उत्तम नस्ल के घोड़ों द्वारा खींचा गया कीमती रथ, लाभ के लालची के लिए मनोकामना पूरी करने वाला रत्न, सिंहासन की महत्वाकांक्षा रखने वाले के लिए संप्रभुता की शुद्ध सफेद छतरी, और पवित्रता के साधक के लिए अरहतत्व के फलों की धन्य प्राप्ति। जो व्यक्ति चार गंभीर ध्यान, चार प्रकार के महा संघर्ष, संतत्व के चार मार्ग, नैतिक इंद्रियों के पांच अंग, पांच नैतिक शक्तियां, ज्ञान के सात रूप और आर्य अष्टांगिक मार्ग पर पूर्ण महारत हासिल कर लेता है, उसके हृदय में शांति और अंतर्दृष्टि का राज होता है, अध्ययन के माध्यम से प्राप्ति उसके लिए सहज हो जाती है, और संन्यासी के जीवन के चार फल, चार प्रकार के विवेक, त्रिविध ज्ञान, छह प्रकार का उच्चतर ज्ञान, संक्षेप में, संन्यासियों का संपूर्ण धर्म उसका अपना हो जाता है; वह एक अभिषिक्त राजा होता है, और उस पर मुक्ति का शुद्ध श्वेत सूर्यछाया पड़ता है!

20. 'हे राजा, ये तेरह व्रत हैं जिनके द्वारा मनुष्य निर्वाण के विशाल जल में स्नान करके, लहरों में क्रीड़ा करते हुए धर्म के अनेक सुखों में लिप्त हो जाएगा; वह दिव्य परमानंद के आठ गुणों में लिप्त हो जाएगा; उसे इद्धि की शक्तियाँ प्राप्त होंगी; दूर से आने वाली मानवीय और दिव्य ध्वनियाँ उसके कानों को सुनाई देंगी; वह दूसरों के विचारों को जान सकेगा,

वह अपने पिछले जन्मों को याद कर सकेगा, और दूसरों के जन्म-दर-जन्म उत्थान और पतन को देख सकेगा, और वह जीवन के वास्तविक स्वरूप और उत्पत्ति को समझ सकेगा, वह दुख, कामवासना, व्यभिचार, भ्रम और अज्ञानता जैसे जीवन के कलंकों से मुक्ति पाने के साधन को समझ सकेगा!

और ये तेरह व्रत क्या हैं? कूड़े के ढेर से लिए गए टुकड़ों से बने वस्त्र पहनना—तीन वस्त्र पहनना, और केवल तीन वस्त्र—भीख मांगकर भोजन प्राप्त करना—घर-घर जाकर भीख मांगना—दिन में केवल एक बार, एक ही बार में भोजन करना—केवल एक ही बर्तन में भोजन करना—नियमों से अधिक भोजन न करना—जंगल में रहना—पेड़ की जड़ में रहना—खुले में रहना—कब्रिस्तान में या उसके पास रहना—एक बार सोने के लिए बिछाई गई चटाई या पलंग को न बदलना—और बैठकर सोना। हे राजा, जिसने पिछले जन्मों में इन तेरह व्रतों को अपनाया, अभ्यास किया, पालन किया, ध्यान रखा, अपने आचरण को इनके अनुसार ढाला और पूरा किया, वही संन्यासी जीवन के सभी फल प्राप्त करता है, और शांति और आनंद की समस्त अनुभूति उसका अपना हो जाती है।

21. हे राजा, जिस प्रकार कोई जहाज मालिक किसी बंदरगाह शहर में लगातार भाड़ा वसूल कर धनवान हो जाता है और खुले समुद्र में यात्रा करके वंगा, तकोला, चीन, सोवीरा, सूरत, अलेक्जेंड्रिया, कोरोमंडल तट, सुदूर भारत या किसी अन्य स्थान पर जा सकता है जहाँ जहाज एकत्रित होते हैं—ठीक उसी प्रकार, हे राजा, जिसने पूर्व जन्मों में इन तेरह व्रतों का पालन किया है, अभ्यास किया है, अनुसरण किया है, ध्यानपूर्वक अपने आचरण को इनके अनुसार ढाला है और पूर्ण किया है, वह संन्यासी के जीवन के सभी फल प्राप्त करता है और शांति एवं आनंद की समस्त अनुभूति उसका अपना हो जाती है।

22. और हे राजा, न्यायपूर्वक, जैसे किसान पहले मिट्टी की खामियों—खरपतवार, कांटे और पत्थर—को दूर करता है, फिर जुताई और बुवाई करता है।

सिंचाई करने, बाड़ लगाने, रखवाली करने, फसल काटने और पीसने से बहुत सारा आटा प्राप्त होगा, और इसी प्रकार जो भी गरीब और जरूरतमंद हैं, भीख मांगने और दुख में डूबे हुए हैं, उनका स्वामी बन जाएगा—ठीक उसी प्रकार, हे राजा, जिसने पिछले जन्मों में इन तेरह व्रतों को अपनाया, अभ्यास किया, पालन किया, उनका पालन किया, उनके अनुसार अपना आचरण बनाया और उन्हें पूरा किया, वही संन्यासी के जीवन के सभी लाभ प्राप्त करता है, और शांति और आनंद की समस्त अनुभूति उसका अपना हो जाती है।

23. और फिर, हे राजा, जिस प्रकार एक अभिषिक्त सम्राट अपराधियों के साथ व्यवहार करने में स्वामी होता है, एक स्वतंत्र शासक और स्वामी होता है, और जो चाहे वह करता है, और समस्त पृथ्वी उसके अधीन होती है—ठीक उसी प्रकार, हे राजा, जिसने पूर्व जन्मों में इन प्रतिज्ञाओं को ग्रहण किया, अभ्यास किया और पूरा किया है, वह विजय प्राप्त करने वालों के धर्म में स्वामी, शासक और स्वामी है, और समनाओं के सभी गुण उसके हैं।

24. 'और क्या उपसेन, जो वंगंत वंश के पुत्रों में सबसे बड़े थे, व्रतों के सभी शुद्धिकरण गुणों का पूर्ण अभ्यास करने के कारण, सावत्थी में निवास करने वाले संघ के सदस्यों द्वारा किए गए समझौते की अवहेलना करने और अपने साथी भाइयों के साथ मनुष्यों को जीतने वाले बुद्ध से मिलने, फिर एकांत में एकांतवास करने और उनके समक्ष प्रणाम करने के बाद आदरपूर्वक अपना मल त्याग करने में सक्षम नहीं थे? और जब भगवान बुद्ध ने देखा कि उनका दल कितना सुशिक्षित है, तो प्रसन्न, प्रसन्न और हृदय से उत्साहित होकर उन्होंने विनम्रतापूर्वक उनका अभिवादन किया और अपनी मधुर, निर्मल आवाज में कहा:

"उपसेना, आपके पास सेवा कर रहे इन भाइयों का व्यवहार अत्यंत सुखद है। आपने अपने अनुयायियों को इस प्रकार प्रशिक्षित कैसे किया है?"

और जब सर्वज्ञ बुद्ध, जो सभी देवताओं के स्वामी हैं, ने उनसे यह प्रश्न किया, तो उन्होंने भगवान बुद्ध को उनके अच्छे स्वभाव का वास्तविक कारण बताते हुए कहा: "हे प्रभु, जो कोई भी मेरे पास संघ में प्रवेश पाने या मेरा शिष्य बनने के लिए आए, मैं उससे कहता हूँ: 'हे प्रभु, मैं वनों में रहने वाला, भिक्षा माँगकर भोजन प्राप्त करने वाला और केवल चिथड़ों से बना यह वस्त्र धारण करने वाला व्यक्ति हूँ। यदि आप भी ऐसे ही हों, तो मैं आपको संघ में प्रवेश देकर अपना शिष्य बना सकता हूँ।' फिर, यदि वह प्रसन्नतापूर्वक सहमत हो जाए और स्वयं को दीन बनाए, तो मैं उसे संघ में और अपने शिष्यों के समूह में प्रवेश देता हूँ। परन्तु यदि वह ऐसा न करे, तो मैं उसे न तो संघ में और न ही अपने शिष्यों के समूह में प्रवेश देता हूँ। इस प्रकार, हे प्रभु, मैं उन्हें प्रशिक्षित करता हूँ।" और इस प्रकार, हे राजा, जो प्रतिज्ञा लेता है, वह विजय प्राप्त करने वालों के धर्म में स्वामी, शासक और प्रभु बन जाता है। और शांति और आनंद की वह सारी अनुभूति उसकी अपनी हो जाती है।

25. हे राजा, जिस प्रकार एक तेजस्वी, शुद्ध और उच्च वंश का कमल का फूल चमकदार, कोमल, आकर्षक, सुगंधित, प्रशंसित, जल या कीचड़ से अछूता, नन्हे पंखुड़ियों, तंतुओं और फलियों से सुशोभित, अनेक मधुमक्खियों का आश्रय स्थल और निर्मल ठंडे जलधारा की संतान होता है—ठीक उसी प्रकार वह शिष्य जो पूर्व जन्मों में इन तेरह व्रतों का पालन करता है, अभ्यास करता है, अनुसरण करता है, अपने आचरण को इनके अनुरूप बनाता है और तीस गुणों से परिपूर्ण होता है। और वे तीस गुण क्या हैं? उनका हृदय स्नेहपूर्ण, कोमल और सौम्य प्रेम से भरा है; बुराई उनके भीतर से नष्ट, नाश और निष्कासित हो चुकी है; अहंकार और आत्म-धर्म का अंत हो चुका है; उनका विश्वास स्थिर, दृढ़, स्थापित और अविचल है; वे हृदय की शांति का आनंद लेते हैं; ध्यान की परमानंदमय अवस्था की अत्यंत प्रशंसित और वांछनीय शांति और आनंद को पूर्णतः अनुभव करते हैं; वे जीवन की धार्मिकता की उत्कृष्ट और अद्वितीय मीठी सुगंध का उत्सर्जन करते हैं; वे देवताओं और मनुष्यों दोनों के निकट और प्रिय हैं; स्वयं अरहतों द्वारा श्रेष्ठ माने जाने वाले, देवता और मनुष्य उनका सम्मान करने में प्रसन्न होते हैं; प्रबुद्ध, बुद्धिमान और विद्वान उन्हें स्वीकार करते हैं, उनका आदर करते हैं, उनकी सराहना करते हैं और उनकी प्रशंसा करते हैं; वे इस लोक या परलोक के प्रेम से अछूते हैं; वे छोटे से छोटे अपराध में भी खतरे को देख लेते हैं; वे सर्वश्रेष्ठ धन से संपन्न हैं—वह धन जो मार्ग का फल है, वह धन जो सर्वोच्च उपलब्धियों की खोज करने वालों का है—वे सर्वश्रेष्ठ के भागीदार हैं। एक संन्यासी के लिए चार आवश्यक तत्व जो माँगने से प्राप्त किए जा सकते हैं, वे उसे प्राप्त कर लेते हैं। वह घर रहित रहता है, गहन ध्यान पर आधारित सर्वोत्तम तपस्या में लीन रहता है। उसने बुराई के पूरे जाल को खोल दिया है, उसने पुनर्जन्म की संभावना को पाँचों भविष्य की अवस्थाओं में और इस जीवन में उच्चतर जीवन के पाँचों अवरोधों (काम, द्वेष, आलस्य, अहंकार और संशय) को तोड़कर पूरी तरह नष्ट कर दिया है। वह अपने चरित्र में अटल और आचरण में उत्कृष्ट है, संन्यासी के लिए आवश्यक चार तत्वों के किसी भी नियम का उल्लंघन नहीं करता। वह पुनर्जन्मों से मुक्त हो चुका है, वह सभी उलझनों से परे जा चुका है, उसका मन पूर्ण मुक्ति पर केंद्रित है, उसने सत्य को देख लिया है, उसने सभी भय से सुरक्षित और स्थिर शरणस्थल प्राप्त कर लिया है। सात बुरी प्रवृत्तियाँ (काम, द्वेष, विधर्म, संशय, अहंकार, भविष्य के जीवन की इच्छा और अज्ञान) उसमें जड़ से उखड़ गई हैं, और वह महान मोक्ष के अंत तक पहुँच चुका है। हे राजा, ये तीस गुण उन्हें सुशोभित करते हैं: बुराइयों (कामवासना, अहंकार, भ्रम और अज्ञान) से मुक्त; ध्यान की परमानंदमयी अवस्थाओं की शांति और आनंद से परिपूर्ण; एक संन्यासी में निहित सभी गुणों से युक्त।

26. हे राजा, क्या सारिपुत्त, जो वरिष्ठ हैं, समस्त दस हजार विश्व प्रणालियों में श्रेष्ठ पुरुष नहीं थे, केवल जगत के गुरु को छोड़कर? और जिन्होंने अनंत युगों तक पुण्य अर्जित किया, और ब्राह्मण परिवार में पुनर्जन्म लिया, इंद्रियों के सभी सुखों का त्याग किया, और असीम धन को त्यागकर विजेता के उपदेशों के अनुसार संघ में प्रवेश किया, और इन तेरह व्रतों द्वारा अपने कर्मों, वचनों और विचारों को संयमित करके, इस जीवन में इतने उच्च गुणों वाले हो गए कि वे गुरु के बाद गौतम बुद्ध के धर्म में धर्म के राज्य के राज-रथ को चलाने वाले पहले व्यक्ति थे। इसलिए, हे राजा, यह बात समस्त देवताओं के स्वामी, गौतम बुद्ध ने उस उत्कृष्ट ग्रंथ, अंगुत्तरा निकाय में कही है।

"हे भाइयों, मैं अपने उत्तराधिकारी के रूप में किसी अन्य व्यक्ति को नहीं जानता जो धर्म के राज्य के गौरवशाली रथ के पहिये को सारिपुत्त के समान इतनी कुशलता से घुमाता हो। हे भाइयों, सारिपुत्त ही उस पहिये को सर्वोत्कृष्ट रूप से घुमाता है।"

'हे नागसेन, आप अत्यंत उत्कृष्ट हैं! बुद्ध के संपूर्ण नौ गुना वचन, सर्वोच्च आचरण, संसार में प्राप्त होने वाली सर्वोच्च और सर्वश्रेष्ठ उपलब्धियाँ—ये सभी व्रतों के पालन से उत्पन्न होने वाले सद्गुणों में समाहित हैं।'

नौवां अध्याय यहीं समाप्त होता है।

पहेलियों को सुलझाने का सिलसिला यहीं समाप्त होता है।

टिपिटका >> सुत्त पिटक >> खुद्दक निकाय >> मिलिंदपन्हा >> पुस्तक VII: उपमाएँ - ओपम्मकथा पन्हा अध्याय 1

अनुवादक: टी.डब्ल्यू. राइस डेविड्स

पिछला <<<<-----||-19-||----->>>> अगला

1. गधा।

2. 'आदरणीय नागसेन, कर्कश आवाज वाले गधे का वह एक गुण जिसे आप कहते हैं कि उसे अपनाना चाहिए, वह कौन सा है?'

हे राजा, जैसे गधा जहाँ कहीं भी लेटता है—चाहे धूल के ढेर पर, या खुले मैदान में जहाँ चार या तीन सड़कें मिलती हैं, या गाँव के प्रवेश द्वार पर, या भूसे के ढेर पर—वह कहीं भी लंबे समय तक विश्राम नहीं करता; ठीक उसी प्रकार, हे राजा, परिश्रमी भिक्षु को भी जहाँ कहीं भी विश्राम के लिए अपनी चटाई बिछाता है—चाहे घास पर, या पत्तों पर, या काँटों के बिस्तर पर, या नंगी ज़मीन पर—उसे कहीं भी आलस्य नहीं करना चाहिए। यही गधे का एकमात्र गुण है जो उसमें होना चाहिए। क्योंकि हे राजा, यह बात समस्त देवताओं के स्वामी भगवान बुद्ध ने कही है।

हे मेरे शिष्यों, हे भाइयों, भूसे के तकियों पर सोकर, अपने आप को कठोर संघर्ष में गंभीर और उत्साही बनाए रखो।

और हे राजा, यह बात धर्म के सेनापति, वरिष्ठ सारिपुत्त ने भी कही थी:

"यदि ध्यानमग्न अवस्था में बैठे हुए उस व्यक्ति पर घुटनों तक पानी न गिरे तो आराम की चाह रखने वाले अरहत पदस्थ व्यक्ति को क्या फर्क पड़ता है!"

2. मुर्गा।

3. 'आदरणीय नागसेना, मुर्गे के वे पाँच गुण जो आप कहते हैं कि उसे धारण करने चाहिए, वे क्या हैं?'

हे महाराज, जिस प्रकार मुर्गा सुबह जल्दी अपने घोंसले में जाता है, उसी प्रकार हे महाराज, परिश्रमी भिक्षु को भी सुबह जल्दी दागब के चारों ओर की खुली जगह की सफाई करनी चाहिए, दिनभर के उपयोग के लिए पीने का पानी तैयार करके, वस्त्र धारण करके और स्नान करके उसे प्रणाम करना चाहिए।

दागबा के समक्ष आदरपूर्वक झुकें, फिर वरिष्ठ भिक्षुओं से मिलें, और लौटकर उचित समय पर एकांत कक्ष में प्रवेश करें। हे राजा, यह मुर्गे के उन गुणों में से पहला गुण है जो उसमें होना चाहिए।

4. हे राजा, जिस प्रकार मुर्गा सुबह जल्दी उठता है, उसी प्रकार हे राजा, परिश्रमी भिक्षु को भी सुबह जल्दी उठकर दागब के चारों ओर की खुली जगह की सफाई करनी चाहिए, दिनभर के उपयोग के लिए पीने का पानी तैयार करना चाहिए, वस्त्र धारण करना चाहिए, प्रतिदिन दागब को प्रणाम करना चाहिए और एकांत कक्ष में प्रवेश करना चाहिए। हे राजा, यह मुर्गे के उन गुणों में से दूसरा गुण है जो उसे धारण करना चाहिए।

5. हे राजा, जिस प्रकार मुर्गा लगातार धरती खोदकर खाने के लिए कुछ भी पाता है, उसे चुनता रहता है; उसी प्रकार, हे राजा, परिश्रमी भिक्षु को भी परिश्रमपूर्वक, किसी भी प्रकार का भोजन ग्रहण करते समय निरंतर आत्म-परीक्षण और सावधानी बरतनी चाहिए, और अपने आप को याद दिलाना चाहिए: "मैं इसे सुख, उत्तेजना, शरीर की सुंदरता या रूप की भव्यता की खोज में नहीं, बल्कि केवल अपने शरीर के संरक्षण के लिए, जीवित रहने के लिए, भूख की पीड़ा को शांत करने के लिए और उच्चतर जीवन के अभ्यास में सहायता के लिए ग्रहण कर रहा हूँ। इस प्रकार मैं अपने सभी पूर्व दुःखों का अंत करूँगा और भविष्य में दुःख उत्पन्न होने का कोई कारण नहीं बनने दूँगा; इस प्रकार मैं दोषमुक्त रहूँगा और शांति से निवास करूँगा।" हे राजा, यह मुर्गे के गुणों में से तीसरा गुण है जो उसे धारण करना चाहिए। क्योंकि हे राजा, समस्त देवताओं के स्वामी भगवान बुद्ध ने कहा है:

"जैसे रेगिस्तान में बच्चे का मांस, या पहिये पर ग्रीस मलना, केवल खुद को जीवित रखने के लिए, वह कमजोर महसूस होने पर भोजन करता है।"

6. हे राजा, जैसे मुर्गा, आँखों के बावजूद, रात में अंधा हो जाता है; वैसे ही, हे राजा, परिश्रमी भिक्षु को, जो परिश्रम में तत्पर है, यद्यपि वह अंधा नहीं है, फिर भी एक अंधे के समान होना चाहिए। चाहे वह वनों में हो या भिक्षा मांगने के लिए प्रतिदिन की सैर पर, उसे रूप, ध्वनि, स्वाद, गंध या स्पर्श के सभी सुखों के प्रति अंधा और बहरा और गूंगा होना चाहिए; उसे उन्हें अपने चिंतन का विषय नहीं बनाना चाहिए; उन पर कोई विशेष, विस्तृत ध्यान नहीं देना चाहिए। हे राजा, यह मुर्गे के उन गुणों में से चौथा गुण है जो उसमें होना चाहिए। क्योंकि हे राजा, महा कक्कायन ने कहा है:

"जिसकी आंखें हैं वह अंधे के समान हो जाए, जो सुनता है वह बहरे के समान हो जाए, जो बोल सकता है वह गूंगे के समान हो जाए, बलवान पुरुष दुर्बल के समान हो जाए। जैसे ही कोई नई वस्तु उसकी दृष्टि में आए, वह निर्वाण की शांति के मधुर पलंग पर लेटकर विश्राम करे।"

7. हे राजा, जैसे मुर्गा मिट्टी, डंडों, लाठियों और गदाओं से सताए जाने पर भी अपना घर नहीं छोड़ता; ठीक वैसे ही, हे राजा, परिश्रमी भिक्षु को, चाहे वह वस्त्र बनाने में लगा हो, भवन निर्माण में, अपने दैनिक कर्तव्यों में, अध्यापन में, या शिक्षा प्राप्त करने में, कभी भी अपनी एकाग्रता नहीं छोड़नी चाहिए। क्योंकि, हे राजा, उसकी एकाग्रता ही उसका घर है। हे राजा, यह मुर्गे के उन गुणों में से पाँचवाँ गुण है जो उसमें होना चाहिए। [368] और हे राजा, यह बात समस्त देवताओं के स्वामी भगवान बुद्ध ने कही है:

और हे भिक्षुओं, भिक्षु का आश्रयस्थल कौन सा है, वह क्षेत्र जो उसका अधिकार है?—वही है, सचेत और चिंतनशील होने के चार गुण।

और हे महाराज, यह बात धर्म के सेनापति, वरिष्ठ सारिपुत्त ने भी कही है:

हाथी अच्छे और बुरे भोजन में भेद करता है, वह जानता है कि उसे किससे पोषण मिलता है, और सोते समय भी वह अपनी सूंड की रक्षा करता है — इसलिए प्रत्येक बुद्ध का पुत्र, उत्साह से भरा हुआ, विजेता के वचन का उल्लंघन न करे, और न ही उसकी आत्म-संयम, जो कि सर्वश्रेष्ठ उपहार है, को ठेस पहुंचाए।

3. गिलहरी।

8. 'आदरणीय नागसेना, गिलहरी का वह एक गुण जिसे आप कहते हैं कि उसे अपनाना चाहिए, वह कौन सा है?'

'हे महाराज, जिस प्रकार गिलहरी शत्रु के आक्रमण से बचने के लिए अपनी पूंछ को जमीन पर तब तक पटकती है जब तक वह फूल न जाए, और फिर उसी पूंछ को लाठी बनाकर शत्रु को भगा देती है; ठीक उसी प्रकार, हे महाराज, परिश्रमी भिक्षु को भी, जब उसका शत्रु, पाप, उस पर आक्रमण करे, तो अपने संयम रूपी लाठी को तब तक पटकना चाहिए जब तक वह फूल न जाए, और फिर उसी संयम रूपी लाठी से सभी बुरी प्रवृत्तियों को दूर भगा देना चाहिए। हे महाराज, गिलहरी का यही एक गुण है जो उसमें होना चाहिए। क्योंकि, हे महाराज, वरिष्ठ कुल्ला पंथक ने कहा है:

जब पाप, जो संन्यासी जीवन से प्राप्त लाभों के विनाशक हैं, हम पर आ पड़ते हैं, तो उन्हें दृढ़ आत्मसंयम से बार-बार नष्ट कर देना चाहिए, मानो वे एक गदा हों।

4. पैंथर (मादा)

9. 'आदरणीय नागसेना, तेंदुआ मादा का वह एक गुण जिसे आप कहते हैं कि उसे ग्रहण करना चाहिए, वह कौन सा है?'

हे राजा, जिस प्रकार मादा तेंदुआ एक ही बार गर्भ धारण करती है और बार-बार नर के पास नहीं जाती; ठीक उसी प्रकार, हे राजा, परिश्रमी भिक्षु को भी, जो परिश्रम में तल्लीन हो, यह देखकर कि भविष्य के गर्भाधान और जन्मों में गर्भधारण की अवधि और प्रत्येक अवस्था से पतन, विघटन, मृत्यु और विनाश निहित हैं, और जन्म-मृत्यु के भयावह कष्टों और बुरे जन्मों को देखकर, दृढ़ निश्चय कर लेना चाहिए कि वह भविष्य में कभी भी कोई जीवन ग्रहण नहीं करेगा। हे राजा, यही मादा तेंदुआ का वह गुण है जो उसमें होना चाहिए। क्योंकि हे राजा, समस्त देवताओं के स्वामी भगवान बुद्ध ने धनीय ग्वाले के सूत्र निपात में कहा है:

"जैसे कोई बलवान बैल अपने बंधन तोड़कर निकल जाता है, या कोई हाथी जंगल में अपना रास्ता बना लेता है, वैसे ही मैं अब कभी गर्भ में प्रवेश नहीं करूँगा—और अब, हे ईश्वर, यदि यही आपकी इच्छा हो, तो वर्षा कीजिए!"

5. पैंथर (नर)।

10. 'आदरणीय नागसेना, पैंथर के वे दो गुण जो आप कहते हैं कि उसे धारण करने चाहिए, वे कौन से हैं?'

हे राजा, जिस प्रकार एक तेंदुआ जंगली स्थानों में, घनी घास या झाड़ियों के पीछे या चट्टानों के बीच घात लगाकर हिरण का शिकार करता है; उसी प्रकार, हे राजा, परिश्रमी भिक्षु को वनों में, वृक्षों की छाया में, पर्वतों की ऊँचाइयों पर, गुफाओं और कंदराओं में, श्मशान घाटों में, जंगलों में, खुले आकाश के नीचे, पुआल के बिस्तरों पर, शांत, शोर-रहित स्थानों में, तेज हवाओं से मुक्त और मनुष्यों के निवास से दूर एकांत स्थानों में शरण लेनी चाहिए। क्योंकि हे राजा, परिश्रमी भिक्षु जो ऐसे एकांत स्थानों में समय बिताते हैं, वे शीघ्र ही छह प्रकार की दिव्य अंतर्दृष्टि के स्वामी बन जाते हैं। हे राजा, यह तेंदुआ के उन गुणों में से पहला गुण है जो उनमें होना चाहिए। क्योंकि हे राजा, शास्त्रों का संकलन करने वाले वृहदों ने कहा है:

"जैसे तेंदुआ घात लगाकर हिरण को पकड़ लेता है, वैसे ही बुद्ध के पुत्र अंतर्दृष्टि और लगन से सुसज्जित होकर एकांतवास में जाकर सर्वश्रेष्ठ फल प्राप्त करते हैं।"

11. हे राजा, जैसे तेंदुआ चाहे जिस भी जानवर को मारे, यदि वह बाईं ओर गिरा हो तो उसे कभी नहीं खाता; ठीक उसी प्रकार, हे राजा, परिश्रमी भिक्षु को भी बांस, ताड़ के पत्ते, फूल, फल, स्नान, चूना, दाँत साफ करने वाली लकड़ी या धोने के पानी के उपहारों से प्राप्त किसी भी भोजन का सेवन नहीं करना चाहिए; न ही चापलूसी से, न ही आम लोगों को मीठी-मीठी बातें करके लुभाने से।

शब्दों (शाब्दिक रूप से मटमैली बातों) द्वारा, सत्य को दबाकर और असत्य का सुझाव देकर, या उनके बच्चों को दुलार कर, या घर-घर जाकर संदेश लेकर, या उनका इलाज करके, या मध्यस्थ बनकर, या व्यापारिक या धार्मिक मामलों में संदेशवाहक बनकर, या भिक्षा में प्राप्त वस्तुओं का उनसे आदान-प्रदान करके, या रिश्वत के रूप में उन्हें वही वस्त्र या भोजन वापस देकर जो उन्हें पहले दिया गया था, या उन्हें शुभ स्थानों, शुभ दिनों, या शुभ चिह्नों (उनके बच्चों के जन्म के समय उनके शरीर पर) के संकेत देकर, या जीविका प्राप्त करने के उन अन्य गलत तरीकों में से किसी का भी उपयोग करके जिनकी बुद्ध ने निंदा की है—उसे इस प्रकार प्राप्त कोई भी भोजन नहीं खाना चाहिए, क्योंकि तेंदुआ अपने बाईं ओर गिरे हुए शिकार को नहीं खाता। यह तेंदुआ के उन गुणों में से दूसरा गुण है जो उसे धारण करना चाहिए। क्योंकि हे राजा, धर्म के सेनापति, सारिपुत्त ने कहा है:

"यह इतना स्वादिष्ट भोजन वाणी द्वारा दिए गए संकेत के माध्यम से प्राप्त किया गया है। यदि मैं इसे ग्रहण कर लूँ, तो मेरी आजीविका पर कलंक लग जाएगा।"

अब भले ही मैं भयंकर भूख से पीड़ित हूँ, मेरा पेट उफान पर है, मुझे कुछ करने को तैयार है, फिर भी मैं अपने जीवन के नियम को कभी नहीं तोड़ूंगा, चाहे मुझे अपनी जान ही क्यों न कुर्बान करनी पड़े।

6. कछुआ।

12. 'आदरणीय नागसेन, कछुए के वे पाँच गुण जो आप कहते हैं कि उसे धारण करने चाहिए, वे क्या हैं?'

हे राजा, जिस प्रकार कछुआ, जो जल में रहने वाला जीव है, जल में ही रहता है; ठीक उसी प्रकार, हे राजा, परिश्रमी भिक्षु को भी समस्त संसार में असीम, अपार, अपार दया और प्रेम से परिपूर्ण होकर सभी सजीव प्राणियों के प्रति प्रेम रखना चाहिए। हे राजा, यही कछुए का पहला गुण है जो उसे धारण करना चाहिए।

13. हे राजा, जैसे कछुआ जब पानी पर तैरते हुए अपना सिर ऊपर उठाता है और किसी को देखता है, तो उसी क्षण डूब जाता है और गहराई में गोता लगा लेता है, ताकि वह उसे फिर से न देख सके; ठीक वैसे ही, हे राजा, परिश्रमी भिक्षु, जो लगन से प्रयास कर रहा हो, जब उस पर बुरी प्रवृत्तियाँ हावी हों, तो ध्यान के जल में डूब जाए, उसकी गहराई में गोता लगा ले, ताकि वे बुरी प्रवृत्तियाँ उसे फिर से न देख सकें। हे राजा, यही है...

कछुए के जिन गुणों में से दूसरा गुण उसमें होना चाहिए।

14. हे राजा, जिस प्रकार कछुआ पानी से बाहर निकलकर धूप सेंकता है, ठीक उसी प्रकार, हे राजा, परिश्रमी भिक्षु को भी, जब वह ध्यान से जागृत होता है (अपना मन एकाग्र करता है)—चाहे वह बैठा हो, लेटा हो, खड़ा हो या इधर-उधर चल रहा हो—बुरे स्वभावों के विरुद्ध महा संघर्ष में अपना मन मग्न करना चाहिए। हे राजा, यह कछुए के उन गुणों में से तीसरा गुण है जो उसे धारण करना चाहिए।

15. हे राजा, जिस प्रकार कछुआ जमीन में गड्ढा खोदकर अकेला रहता है; ठीक उसी प्रकार, हे राजा, परिश्रमी भिक्षु को भी सांसारिक लाभ, मान-सम्मान और प्रशंसा का त्याग करके, एकांत में, वनों, जंगलों, पहाड़ियों, गुफाओं और कंदराओं में एकांतवास करना चाहिए। हे राजा, यह कछुए का चौथा गुण है जो उसे धारण करना चाहिए। क्योंकि हे राजा, उपसेन ने वंगंत वंश के पुत्रों के विषय में कहा था:

"एकांत और शांत स्थान, हिरणों और जंगली जानवरों के ठिकाने, भिक्षु को अपने निवास स्थान के रूप में तलाशने चाहिए, एकांत के मधुर आनंद के लिए।"

16. 'और फिर, हे राजा, जैसे कछुआ अपने चक्कर लगाते समय किसी को भी देखता है, तो तुरंत अपना सिर और सारे अंग अपने खोल में समेट लेता है और उन्हें वहाँ छिपाकर चुपचाप खड़ा रहता है ताकि वह सुरक्षित रहे; ठीक उसी प्रकार, हे राजा, परिश्रमी भिक्षु को, जो लगन से प्रयास करता है, जहाँ कहीं भी कोई रूप, ध्वनि, गंध या स्वाद दिखाई दे,

या जब भावनाएँ उस पर हावी हो जाएँ, तो वह अपनी छहों इंद्रियों के द्वार पर आत्म-संयम का द्वार बंद कर ले, अपने मन को आत्म-नियंत्रण से ढक ले, और अपने समनत्व को बचाने के लिए निरंतर सचेतन और विचारशील बना रहे। हे राजा, यह कछुए के पाँच गुणों में से पाँचवाँ गुण है जो उसमें होना चाहिए। क्योंकि हे राजा, समस्त देवताओं के स्वामी, भगवान बुद्ध ने सर्वश्रेष्ठ संयुत्त निकाय में, कछुए के दृष्टांत के सूत्र में कहा है:

"जैसे कछुआ अपने अंगों को अपने खोल में समेट लेता है, वैसे ही भिक्षु अपने मन के विचारों को दफना दे, स्वयं स्वतंत्र होकर, किसी को हानि न पहुंचाते हुए, स्वयं को मुक्त कर ले, किसी की बुराई न करे।"

7. बांस।

17. 'आदरणीय नागसेना, बांस का वह एक गुण जिसे आप कहते हैं कि उसे ग्रहण करना चाहिए, वह कौन सा है?'

हे महाराज, जिस प्रकार बांस हवा के झोंके की दिशा में झुक जाता है, उसी प्रकार वह अपने आप मुड़ जाता है; ठीक उसी प्रकार, हे महाराज, परिश्रमी भिक्षु को भी लगन से परिश्रम करते हुए, गुरु बुद्ध के वचन, नौ प्रकार की शिक्षाओं का पालन करते हुए, और सभी विधिक और निष्पाप बातों का दृढ़तापूर्वक पालन करते हुए, समनत्व के गुणों की खोज करनी चाहिए। हे महाराज, यही वह गुण है जो उसे धारण करना चाहिए। क्योंकि, हे महाराज, राहुल ने कहा है:

"बुद्ध के नौ गुना वचनों का सदा पालन करते हुए और सभी विधिवत, निष्पाप कर्मों में दृढ़ रहते हुए, मैं बुरे जन्मों के चक्र से मुक्त हो गया हूँ।"

8. धनुष।

18. 'आदरणीय नागसेना, धनुष का वह गुण जो आप कहते हैं कि उसमें होना चाहिए, वह कौन सा है?'

हे महाराज, जिस प्रकार एक सुगठित और संतुलित धनुष दोनों सिरों से समान रूप से झुकता है और किसी खंभे की तरह अकड़कर नहीं रहता; ठीक उसी प्रकार, हे महाराज, परिश्रमी भिक्षु को भी अपने सभी भाइयों—चाहे वे बड़ों के हों, कनिष्ठों के हों, मध्यम पद के हों या अपने समान पद के हों—के अनुरूप सहजता से झुकना चाहिए और उन्हें विमुख नहीं करना चाहिए। हे महाराज, धनुष का यही गुण उसमें होना चाहिए। क्योंकि हे महाराज, समस्त देवताओं के अधिपति भगवान बुद्ध ने विदुर पुन्नक गातक में यही कहा है:

बुद्धिमान व्यक्ति धनुष के समान झुके, सरकंडे के समान कोमल हो, और विपरीत स्वभाव का न हो। वह राजाओं के घर में निवास करेगा।

9. कौआ।

19. 'आदरणीय नागसेन, कौवे के वे दो गुण जो आप कहते हैं कि उसे धारण करने चाहिए, वे कौन से हैं?'

'हे राजा, जिस प्रकार कौआ आशंका और संशय से भरा हुआ, सदा चौकस और सतर्क रहता है; ठीक उसी प्रकार, हे राजा, परिश्रमी भिक्षु को भी परिश्रम में तत्पर रहते हुए आशंका और संशय से भरा हुआ, सदा चौकस और सतर्क रहना चाहिए।'

पूर्ण आत्मसंयम में, अपनी इंद्रियों को नियंत्रण में रखते हुए। हे राजा, कौवे के गुणों में से यह पहला गुण है जो उसमें होना चाहिए।

20. हे राजा, जैसे कौआ जो भी भोजन देखता है, उसे अपने साथियों के साथ बाँटकर खा लेता है; ठीक उसी प्रकार, हे राजा, परिश्रमी भिक्षु को भी, जो लगन से परिश्रम करता है, अपने सद्गुणी सहधर्मियों के साथ, बिना किसी भेदभाव या मात्रा का ध्यान रखे, अपने सभी वैध दान, यहाँ तक कि अपने भिक्षापात्र में रखी सामग्री भी, बाँटने में कभी संकोच नहीं करना चाहिए। हे राजा, यह कौए के उन गुणों में से दूसरा गुण है जो उसे धारण करना चाहिए। क्योंकि, हे राजा, धर्म के प्रमुख, सारिपुत्त ने कहा है:

"जो कुछ भी वे मुझे दें, मैं संयमी जीवन जीते हुए, वह सब कुछ, जैसा आता है, मैं सबके साथ बाँट लेता हूँ, और फिर मैं स्वयं अपना भोजन ग्रहण करता हूँ।"

10. बंदर।

21. 'आदरणीय नागसेन, बंदर के वे दो गुण जो आप कहते हैं कि उसमें होने चाहिए, वे कौन से हैं?'

हे राजा, जिस प्रकार बंदर अपना निवास स्थान बनाने से पहले किसी विशाल वृक्ष जैसे एकांत स्थान पर, शाखाओं से घिरे सुरक्षित आश्रय स्थल में शरण लेता है, ठीक उसी प्रकार, हे राजा, परिश्रमी भिक्षु को भी अपने गुरु के रूप में विनम्र, सौम्य, धर्मात्मा, सुंदर चरित्र वाला, परंपरा और शास्त्रों का ज्ञाता, प्रिय, आदरणीय और योग्य व्यक्ति का चयन करना चाहिए।

आदरशील, लाभप्रद बातें कहने वाला, नम्र, उपदेश देने, निर्देश देने और शिक्षा देने में कुशल, उत्साह जगाने, प्रेरित करने और प्रसन्न करने में सक्षम—ऐसा मित्र ही राजा को शिक्षक के रूप में चुनना चाहिए। हे राजा, यह बंदर के उन गुणों में से पहला गुण है जो उसमें होना चाहिए।

22. हे राजा, जिस प्रकार बंदर इधर-उधर घूमता है, खड़ा होता है और बैठता है, सदा वृक्षों पर, और यदि सोता है तो रात वृक्षों पर ही बिताता है; ठीक उसी प्रकार, हे राजा, परिश्रमी भिक्षु को भी परिश्रम में तल्लीन होकर वन में खड़े होकर इधर-उधर घूमना चाहिए, चिंतन करना चाहिए, लेटना चाहिए और सोना चाहिए, और वहाँ आत्म-संयम का अनुभव करना चाहिए। हे राजा, यह बंदर के गुणों में से दूसरा गुण है जो उसे धारण करना चाहिए। क्योंकि हे राजा, धर्म के सेनापति, वरिष्ठ सारिपुत्त ने कहा है:

चलते हुए, खड़े होते हुए, बैठे हुए, लेटे हुए, वन में ही भिक्षु का तेज दिखाई देता है। सुदूर वनों में निवास करना सभी बुद्धों द्वारा उत्कृष्ट माना गया है।

यहां पहला अध्याय समाप्त होता है।

टिपिटक >> सुत्त पिटक >> खुद्दक निकाय >> मिलिंदपन्हा >> पुस्तक VII: उपमाएँ - ओपम्मकथा पन्हा अध्याय 2

अनुवादक: टी.डब्ल्यू. राइस डेविड्स

पिछला <<<<-----||-20-||----->>>> अगला

11. लौकी।

1. 'आदरणीय नागसेना, लौकी का वह एक गुण जिसे आप कहते हैं कि उसे ग्रहण करना चाहिए, वह कौन सा है?'

हे महाराज, जिस प्रकार लौकी अपनी लताओं से किसी अन्य पौधे—चाहे वह घास हो, काँटा हो या लता—पर चढ़कर उसे पूरी तरह ढक लेती है, ठीक उसी प्रकार, हे महाराज, परिश्रमी भिक्षु, जो अर्हतत्व प्राप्त करने की इच्छा रखता है, उसे अपने मन को उन विचारों पर चढ़कर ऊपर उठना चाहिए जो उसके समक्ष प्रस्तुत होते हैं (कम्मत्थाना ध्यान के विषय के रूप में)। हे महाराज, लौकी का यही एक गुण है जो उसमें होना चाहिए। क्योंकि, हे महाराज, धर्म के प्रमुख, सारिपुत्त ने कहा है:

जैसे लौकी अपनी लताओं के सहारे घास, कांटेदार झाड़ी या फैली हुई लता पर चढ़ती है, वैसे ही अर्हत पद पर आसीन बुद्ध के पुत्र विचारों से ऊपर चढ़कर पूर्णता और शांति की ओर अग्रसर होते हैं।

12. कमल।

2. 'आदरणीय नागसेना, कमल के वे तीन गुण जो आप कहते हैं कि उसे धारण करने चाहिए, वे कौन से हैं?'

हे महाराज, जिस प्रकार कमल जल में जन्म लेता है और जल में ही बढ़ता है, फिर भी जल से अछूता रहता है (क्योंकि जल उस पर नहीं चिपकता); ठीक उसी प्रकार, हे महाराज, परिश्रमी भिक्षु को भी अपने द्वारा प्राप्त समर्थन, शिष्यों के समूह, यश, सम्मान, आदर या सुख-सुविधाओं की प्रचुरता से अछूता रहना चाहिए। हे महाराज, यही कमल का पहला गुण है जो भिक्षु में होना चाहिए।

3. हे राजा, जिस प्रकार कमल जल से बहुत ऊपर उठा रहता है, ठीक उसी प्रकार, हे राजा, परिश्रमी भिक्षु को भी सांसारिक वस्तुओं से बहुत ऊपर रहना चाहिए। हे राजा, यह कमल के गुणों में से दूसरा गुण है जो उसे धारण करना चाहिए।

4. हे महाराज, जैसे कमल हल्की सी हवा से भी कांप उठता है; ठीक वैसे ही, हे महाराज, परिश्रमी भिक्षु को भी परिश्रम में तत्पर रहते हुए, छोटी से छोटी बुराई के प्रति भी आत्मसंयम रखना चाहिए, क्योंकि वह छोटी से छोटी गलती में भी छिपे खतरे को पहचानता है। हे महाराज, यह कमल के गुणों में से तीसरा गुण है जो उसे धारण करना चाहिए। क्योंकि हे महाराज, समस्त देवताओं के स्वामी भगवान बुद्ध ने कहा है:

"छोटी से छोटी गलती में भी खतरा देखकर, वह स्वयं पर उपदेशों का भार लेता है और उनका अभ्यास करता है।"

13. बीज।

5. 'आदरणीय नागसेना, बीज के वे दो गुण जो आप कहते हैं कि उसमें होने चाहिए, वे कौन से हैं?'

'हे महाराज, जिस प्रकार बीज, चाहे कितना भी छोटा क्यों न हो, यदि अच्छी मिट्टी में बोया जाए और ईश्वर अनुकूल वर्षा करे तो भरपूर फल देता है; ठीक उसी प्रकार, हे महाराज, परिश्रमी भिक्षु को भी लगन से परिश्रम करते हुए ऐसा आचरण करना चाहिए कि उसके जीवन की धार्मिकता से उसे समनत्व के भरपूर फल प्राप्त हों। हे महाराज, यही बीज का पहला गुण है जो उसमें होना चाहिए।'

6. हे राजा, जैसे अच्छी तरह से साफ की गई मिट्टी में बोया गया बीज शीघ्र ही परिपक्व हो जाता है; ठीक उसी प्रकार, हे राजा, जब मन एकांत में अच्छी तरह से नियंत्रित और शुद्ध हो जाए, तो परिश्रमी भिक्षु द्वारा आत्म-संयम के उत्तम क्षेत्र में डाला जाए तो वह शीघ्र ही परिपक्व हो जाएगा। हे राजा, यह बीज का दूसरा गुण है जो उसमें होना चाहिए। क्योंकि हे राजा, वरिष्ठ अनुरुद्ध ने कहा है:

"यदि बीज को अच्छी तरह से साफ किए गए खेत में बोया जाए, तो उसका भरपूर फल बोने वाले को प्रसन्न करेगा। उसी प्रकार एकांत में शुद्ध हुआ संन्यासी का हृदय, आत्म-संयम के क्षेत्र में शीघ्र ही परिपक्व हो जाता है।" 14. साल का पेड़।

7. 'आदरणीय नागसेना, साल के पेड़ का वह एक गुण जिसे आप कहते हैं कि उसे ग्रहण करना चाहिए, वह कौन सा है?'

हे महाराज, जिस प्रकार साल का वृक्ष सौ हाथ या उससे अधिक गहराई तक जमीन में उगता है, ठीक उसी प्रकार, हे महाराज, परिश्रमी भिक्षु को एकांतवास में रहकर समनत्व के चार फल, चार विवेक, छह प्रकार की दिव्य अंतर्दृष्टि और संन्यासी के सभी गुणों को सिद्ध करना चाहिए। हे महाराज, यही वह गुण है जो साल के वृक्ष में होना चाहिए। क्योंकि हे महाराज, राहुल ने कहा है:

"साल का पेड़ धरती के ऊपर उगता है, और सौ हाथ गहराई तक नीचे की ओर शाखाएँ निकालता है। जैसे समय की पूर्णता में, और अपनी चरम वृद्धि पर, वह पेड़ एक दिन में सौ हाथ ऊँचा हो जाता है, ठीक वैसे ही, हे बुद्ध, मैं भी साल के पेड़ की तरह, एकांत में, आंतरिक अच्छाई में वृद्धि करता हूँ।" 15. जहाज।

8. 'आदरणीय नागसेना, जहाज के वे तीन गुण जो आप कहते हैं कि उसे अपनाने चाहिए, वे कौन से हैं?'

'हे राजा, जिस प्रकार एक जहाज विभिन्न प्रकार की लकड़ियों के संयोजन से अनेक लोगों को पार कराता है; ठीक उसी प्रकार, हे राजा, परिश्रमी भिक्षु को भी लगन से प्रयास करते हुए, अच्छे आचरण, धर्म, सद्गुण और कर्तव्य पालन से उत्पन्न अनेक गुणों के संयोजन से स्वर्ग या पृथ्वी पर, समस्त संसार को पार कर लेना चाहिए।'

[पैराग्राफ जारी है] हे राजा, यह एक जहाज के उन गुणों में से पहला गुण है जो उसके पास होना चाहिए।

9. हे राजा, जिस प्रकार एक जहाज अनेक गरजती लहरों और दूरगामी भंवरों का सामना कर सकता है; उसी प्रकार, हे राजा, परिश्रमी भिक्षु को अनेक बुरी प्रवृत्तियों की लहरों और अनेक प्रकार के दोषों—जैसे कि अपने परिवार से बाहर के लोगों में आदर और तिरस्कार, समर्थन और सम्मान, प्रशंसा और महिमा, भेंट और सम्मान, निंदा और प्रशंसा—का सामना करने में सक्षम होना चाहिए। हे राजा, यह उस जहाज का दूसरा गुण है जो उसमें होना चाहिए।

10. हे राजा, जिस प्रकार एक जहाज विशाल सागर पर यात्रा करता है, जो असीम और अनंत है, जिसका कोई किनारा नहीं है, जो अपनी गहराई में अविचलित है, गर्जना करता है, और सभी प्रकार की मछलियों, राक्षसों और अजगरों से भरा हुआ है; ठीक उसी प्रकार, हे राजा, परिश्रमी भिक्षु को, जो प्रयास में गंभीर है, अपने मन को चारों सत्यों के त्रिगुण, उनके बारह रूपों में प्रवेश करने के लिए यात्रा करानी चाहिए। हे राजा, यह उस जहाज का तीसरा गुण है जो उसे धारण करना चाहिए। क्योंकि हे राजा, सभी देवताओं के प्रधान भगवान ने, सबसे उत्कृष्ट संयुत्त निकाय में, सत्यों पर संयुत्त में कहा है:

"हे भिक्षुओं, जब भी आप विचार कर रहे हों, तो यह सोचें: 'दुःख ऐसा है,' - 'दुःख का कारण ऐसा है,' - 'दुःख का अंत ऐसा है,' - 'दुःख के अंत की ओर ले जाने वाला मार्ग ऐसा है।'"

16. एंकर।

11. 'आदरणीय नागसेना, लंगर के वे दो गुण जो आप कहते हैं कि उसे अपनाने चाहिए, वे कौन से हैं?'

'हे महाराज, जिस प्रकार लंगर विशाल सागर में भी, लहरों के निरंतर बदलते प्रवाह से अशांत जल में भी, जहाज को स्थिर रखता है और उसे किसी भी दिशा में बहने नहीं देता; ठीक उसी प्रकार, हे महाराज, परिश्रमी भिक्षु को भी, कर्म, द्वेष और सुस्ती की लहरों के भयंकर संघर्ष में, अपने मन को स्थिर रखना चाहिए और उसे किसी भी दिशा में विचलित नहीं होने देना चाहिए। हे महाराज, यही वह पहला गुण है जो उसे लंगर के रूप में धारण करना चाहिए।'

12. हे राजा, जिस प्रकार लंगर तैरता नहीं, बल्कि डूब जाता है और सौ हाथ गहरे पानी में भी जहाज को थामे रखता है, उसे स्थिर कर देता है; ठीक उसी प्रकार, हे राजा, परिश्रमी भिक्षु को, जो परिश्रम में तत्पर है, जब उसे सहारा, यश, सम्मान, आदर, भेंट और प्रशंसा प्राप्त हो, तो उसे सहारे या यश के शिखर पर नहीं चढ़ना चाहिए, बल्कि अपना मन केवल अपने शरीर को जीवित रखने के विचार पर स्थिर रखना चाहिए। हे राजा, यह लंगर का दूसरा गुण है जो उसे धारण करना चाहिए। क्योंकि, हे राजा, धर्म के सेनापति, वरिष्ठ सारिपुत्त ने कहा है:

"जैसे लंगर तैरता नहीं, बल्कि लहरों के नीचे डूब जाता है, वैसे ही प्रशंसा या उपहारों से ऊपर उठने के बजाय विनम्र रहो।"

17. मस्तूल।

13. 'आदरणीय नागसेना, मस्तूल का वह एक गुण जिसे आप कहते हैं कि उसे अपनाना चाहिए, वह कौन सा है?'

हे महाराज, जिस प्रकार मस्तूल रस्सियों, रस्सियों और पालों को धारण करता है, ठीक उसी प्रकार परिश्रमी भिक्षु को भी सदा सचेत और आत्मसंयमित रहना चाहिए—चाहे वह बाहर जा रहा हो या वापस आ रहा हो, आगे देख रहा हो या चारों ओर, चाहे वह अपना हाथ फैला रहा हो या पीछे मोड़ रहा हो, चाहे वह वस्त्र पहन रहा हो या पान का पात्र लिए हो, चाहे वह खा रहा हो, पी रहा हो, निगल रहा हो या चख रहा हो, चाहे वह शौच कर रहा हो, चल रहा हो, खड़ा हो या बैठा हो, चाहे सो रहा हो या जाग रहा हो, चाहे बोल रहा हो या चुप हो, उसे कभी भी अपना सचेतन और आत्मसंयम नहीं खोना चाहिए। हे महाराज, यही वह गुण है जो भिक्षु में होना चाहिए। क्योंकि हे महाराज, समस्त देवताओं के स्वामी भगवान बुद्ध ने कहा है:

"मेरे भाइयों, भिक्षु को सचेत और संयमी रहना चाहिए। यही मेरा तुम्हें निर्देश है।" 18. पायलट।

14. 'आदरणीय नागसेना, पायलट के वे तीन गुण जो आप कहते हैं कि उसे धारण करने चाहिए, वे कौन से हैं?'

'हे राजा, जैसे नाविक दिन-रात न्याय करता है, वैसे ही न्याय करो, साथ'

निरंतर और अटूट उत्साह और प्रयास से ही कोई व्यक्ति अपने जहाज को चलाता है; ठीक उसी प्रकार, हे राजा, परिश्रमी भिक्षु, जो प्रयास में तत्पर रहता है, अपने मन को नियंत्रित करते समय दिन-रात निरंतर तत्परता और लगन से सावधानीपूर्वक विचार करता है। हे राजा, यही वह गुण है जो नाविक में होना चाहिए। क्योंकि हे राजा, समस्त देवताओं के स्वामी, भगवान बुद्ध ने धम्मपद (शास्त्रों का संग्रह) में यही कहा है:

उत्साह से परिपूर्ण रहो, अपने विचारों पर ध्यान रखो; अंतहीन जन्मों के दलदल से खुद को ऊपर उठाओ, जैसे शक्तिशाली हाथी कीचड़ की गहराई में धंस जाता है।

15. हे राजा, जिस प्रकार नाविक समुद्र में सब कुछ जानता है, चाहे अच्छा हो या बुरा; ठीक उसी प्रकार, हे राजा, परिश्रमी भिक्षु को भी अच्छे और बुरे में, अपराध और अहस्तक्षेप में, नीच और श्रेष्ठ में, अंधकार और प्रकाश में अंतर अवश्य जानना चाहिए। हे राजा, यह नाविक का दूसरा गुण है जो उसमें होना चाहिए।

16. हे महाराज, जिस प्रकार नाविक पतवार पर मुहर लगाता है ताकि कोई उसे छू न सके; उसी प्रकार, हे महाराज, परिश्रमी भिक्षु को अपने हृदय पर संयम की मुहर लगानी चाहिए, ताकि उसमें कोई बुरा या गलत विचार न उत्पन्न हो। यह नाविक का तीसरा गुण है जो उसमें होना चाहिए। क्योंकि, हे महाराज, ऐसा कहा गया है कि

हे परम पूज्य, समस्त देवताओं के स्वामी, सर्वोत्कृष्ट संयुत्त निकाय में विराजमान:

"हे भिक्षुओं, बुरे या गलत विचार मत रखो, जैसे कामवासना, द्वेष या भ्रम के विचार।" 19. नाविक

17. 'आदरणीय नागसेना, नाविक का वह एक गुण जो आप कहते हैं कि उसे अपनाना चाहिए, वह कौन सा है?'

'हे राजा, जिस प्रकार जहाज पर सवार नाविक यह सोचता है: "मैं एक वेतनभोगी हूँ और इस जहाज पर अपनी मजदूरी के लिए काम कर रहा हूँ। इसी जहाज के माध्यम से मुझे भोजन और वस्त्र मिलते हैं। मुझे आलसी नहीं होना चाहिए, बल्कि उत्साहपूर्वक जहाज चलाना चाहिए;" ठीक उसी प्रकार, हे राजा, परिश्रमी भिक्षु को, जो लगन से प्रयास करता है, यह सोचना चाहिए: "चार तत्वों से बने अपने इस शरीर का पूर्ण ज्ञान प्राप्त करके, मैं निरंतर और निरंतर आत्म-संयमित होकर सचेत और चिंतनशील रहूँगा, और शांत और स्थिर होकर जन्म-वृद्धावस्था, रोग, मृत्यु, दुःख, विलाप, शोक, पीड़ा और निराशा से मुक्त होने का प्रयास करूँगा।" हे राजा, यही वह गुण है जो एक नाविक में होना चाहिए। क्योंकि हे राजा, धर्म के प्रमुख, वरिष्ठ सारिपुत्त ने कहा है:

"शरीर क्या है, इसे समझो, इसे बार-बार महसूस करो, शरीर की प्रकृति को देखकर दुःख का अंत करो।"

20. समुद्र।

18. 'आदरणीय नागसेना, समुद्र के वे पाँच गुण जो आप कहते हैं कि उसे ग्रहण करने चाहिए, वे कौन से हैं?'

'हे महाराज, जिस प्रकार सागर किसी शव से संपर्क नहीं रखता; ठीक उसी प्रकार, हे महाराज, परिश्रमी भिक्षु को भी बुराई के दागों से दूर रहना चाहिए—कामवासना, द्वेष, सुस्ती, अहंकार, भ्रम, अपने दोषों को छुपाना और अपने गुणों का दावा करना, ईर्ष्या, लोभ, छल, कपट, कपट, कपट, दुष्टता और पापमय जीवन। हे महाराज, यही वह पहला गुण है जो उसे अपनाना चाहिए।'

19. हे राजा, जिस प्रकार सागर अपने भीतर सभी प्रकार के रत्नों का भंडार रखता है—मोती, हीरा, खट्टी आँख, शंख, क्वार्ट्ज, मूंगा और क्रिस्टल—पर्याप्त रत्न रखता है, परन्तु उन्हें छुपाए रखता है; ठीक उसी प्रकार, हे राजा, परिश्रमी भिक्षु को, जो निरंतर प्रयास करता है, भले ही उसने चरित्र के विभिन्न रत्नों—मार्ग और फल—को प्राप्त कर लिया हो,

इन सब का, और चारों घानों का, आठों विमोक्षों का, समाधि का, पाँचों प्राप्तियों (सम्मोहन और अंतर्दृष्टि के रूपों) का, और पारलौकिक ज्ञान के छह रूपों का – इन्हें छिपा कर रखें, और इन्हें प्रकाश में न लाएँ। हे राजा, यही समुद्र का दूसरा गुण है जो उसमें होना चाहिए।

20. हे राजा, जिस प्रकार समुद्र शक्तिशाली प्राणियों के साथ संगति करता है; उसी प्रकार, हे राजा, परिश्रमी भिक्षु को ऐसे साथी शिष्य के साथ संगति करनी चाहिए जो कम इच्छा रखता हो और संतुष्ट हो, जिसकी वाणी शुद्ध हो, जिसका आचरण बुराई के निवारण की ओर उन्मुख हो, जो धर्मपरायण हो, विनम्र, सौम्य, गरिमामय, आदरणीय, लाभप्रद वचन बोलने वाला, नम्र, जो अपने साथी की गलतियों को इंगित करे और गलत करने पर उसे फटकार लगाए, उपदेश, शिक्षा और मार्गदर्शन में कुशल हो, जो प्रेरित करने, प्रोत्साहित करने और प्रसन्न करने में सक्षम हो—ऐसे व्यक्ति को मित्र बनाकर, धर्मपरायणता से निवास करना चाहिए। हे राजा, यह समुद्र का तीसरा गुण है जो उसमें होना चाहिए।

21. और फिर, हे राजा, जैसे सागर गंगा, यमुना, अकीरावती, सरभू, माही और अन्य लाखों नदियों द्वारा लाए गए ताजे पानी और आकाश की वर्षा से भरा रहता है, फिर भी

समुद्र कभी अपने किनारों से बाहर नहीं बहता; ठीक उसी प्रकार, हे राजा, परिश्रमी भिक्षु को भी, जो लगन से परिश्रम करता है, जीविका, यश, प्रशंसा, अभिवादन, आदर या सम्मान के लिए कभी भी जानबूझकर नियमों का उल्लंघन नहीं करना चाहिए—यहाँ तक कि अपने जीवन के लिए भी नहीं। हे राजा, यह समुद्र के उन गुणों में से चौथा गुण है जो उसे धारण करना चाहिए। क्योंकि हे राजा, समस्त देवताओं के स्वामी भगवान बुद्ध ने कहा है:

"हे राजा, जिस प्रकार विशाल सागर स्थिर रहता है और कभी अपने किनारों से बाहर नहीं निकलता; ठीक उसी प्रकार, हे राजा, मेरे शिष्यों को भी मेरे द्वारा उनके लिए निर्धारित नियमों का उल्लंघन नहीं करना चाहिए—यहाँ तक कि अपने जीवन को बचाने के लिए भी नहीं।"

22. हे राजा, जिस प्रकार गंगा, यमुना, अकीरावती, सरभू और माही जैसी सभी नदियों के बहने से भी और आकाश से बरसने वाली वर्षा से भी समुद्र नहीं भरता; ठीक उसी प्रकार, हे राजा, समुद्र को भी नहीं भरना चाहिए।

परिश्रमी भिक्षु, जो लगन से परिश्रम करता है, उपदेश ग्रहण करने, प्रश्न पूछने और उत्तर देने, वचन सुनने, उसे याद करने और उसका विश्लेषण करने, अभिधम्म और विनय सुनने, सूत्रों के गहन उपदेशों को समझने, रूपों का विश्लेषण करने, सही रचना, संयोजन और व्याकरणिक संरचना के नियमों को सीखने और विजेता के नौ प्रकार के उपदेशों को सुनने से कभी संतुष्ट नहीं होता। हे राजा, यही वह पाँचवाँ गुण है जो उसमें होना चाहिए। क्योंकि हे राजा, समस्त देवताओं के स्वामी भगवान बुद्ध ने सुतसोमा गातक में कहा है:

“जैसे आग घास और लकड़ियों को जलाकर कभी तृप्त नहीं होती, जैसे विशाल सागर सभी धाराओं के जल से भर नहीं जाता— वैसे ही हे राजाओं के राजा, ये बुद्धिमान विद्यार्थी सत्य के वचनों को सुनते हुए कभी तृप्त नहीं होते।”

यहां दूसरा अध्याय समाप्त होता है।

टिपिटका >> सुत्त पिटक >> खुद्दक निकाय >> मिलिंदपन्हा >> पुस्तक VII: उपमाएँ - ओपम्मकथा पन्हा अध्याय 3

अनुवादक: टी.डब्ल्यू. राइस डेविड्स

पिछला <<<<-----॥-21-॥----->>>> अगला

21. पृथ्वी।

1. 'आदरणीय नागसेना, पृथ्वी के वे पाँच गुण जिन्हें आप कहते हैं कि उसे ग्रहण करना चाहिए, वे कौन से हैं?'

हे राजा, जिस प्रकार पृथ्वी पर चाहे वांछनीय वस्तुएँ बिखेरी जाएँ या न बिखेरी जाएँ—चाहे कपूर, अगर, चमेली, चंदन और केसर, या पित्त, कफ, मवाद, रक्त, पसीना, वसा, लार, बलगम, जोड़ों को चिकनाई देने वाला द्रव, मूत्र और मल—वह एक समान ही रहती है; ठीक उसी प्रकार, हे राजा, परिश्रमी भिक्षु को भी स्थिर रहना चाहिए, चाहे उसे समर्थन मिले या उपेक्षा, प्रसिद्धि मिले या अपमान, निंदा मिले या प्रशंसा, सुख मिले या दुःख। हे राजा, यही पृथ्वी का पहला गुण है जो उसे धारण करना चाहिए।

2. हे राजा, जैसे पृथ्वी को कोई आभूषण या माला नहीं पहनाई जाती, बल्कि वह अपनी ही सुगंध से सराबोर रहती है; ठीक उसी प्रकार, हे राजा, परिश्रमी भिक्षु को भी कोई आभूषण नहीं धारण करना चाहिए, बल्कि अपने जीवन के धार्मिकता की मधुर सुगंध से परिपूर्ण रहना चाहिए। हे राजा, पृथ्वी का यह दूसरा गुण है जो उसे धारण करना चाहिए।

3. हे राजा, जैसे पृथ्वी ठोस है, उसमें कोई छेद या अंतराल नहीं है, वह घनी, सघन है और चारों ओर फैली हुई है; ठीक उसी प्रकार, हे राजा, परिश्रमी भिक्षु को, जो लगन से प्रयास करता है, अटूट धार्मिक जीवन से संपन्न होना चाहिए, जिसमें कोई अंतराल न हो।

या उसमें मोटी, घनी और चारों ओर फैली हुई दरारें हों। हे राजा, पृथ्वी का यह तीसरा गुण है जो उसमें होना चाहिए।

4. हे राजा, जिस प्रकार पृथ्वी कभी नहीं थकती, चाहे वह गांवों, कस्बों, शहरों, देशों, वृक्षों, पहाड़ियों, नदियों, तालाबों, झीलों, वन्य जीवों, पक्षियों, मनुष्यों और असंख्य महिलाओं का भार वहन करे; ठीक उसी प्रकार, हे राजा, परिश्रमी भिक्षु को भी निरंतर प्रयास करते हुए उपदेश, उपदेश, शिक्षा, उत्साहवर्धन, प्रेरणा और प्रसन्नता प्रदान करने में और धर्म की व्याख्या करने में कभी नहीं थकना चाहिए। हे राजा, पृथ्वी का यह चौथा गुण है जो उसमें होना चाहिए।

5. हे राजा, जिस प्रकार पृथ्वी चापलूसी और द्वेष दोनों से मुक्त है; ठीक उसी प्रकार, हे राजा, परिश्रमी भिक्षु को भी, जो लगन से प्रयास करता है, पृथ्वी के समान ही मन से किसी की चापलूसी और किसी से द्वेष नहीं रखना चाहिए। यह पृथ्वी का पाँचवाँ गुण है जो उसमें होना चाहिए। क्योंकि हे राजा, भक्त कन्या कुल्ला सुभद्दा ने अपने संप्रदाय के संन्यासियों की प्रशंसा करते हुए कहा था:

यदि कोई क्रोधित होकर कुल्हाड़ी से अपना एक हाथ काट ले, और दूसरा प्रसन्न होकर दूसरे पर मीठी सुगंध छिड़के, तो भी वे एक-दूसरे से द्वेष नहीं रखेंगे और न ही प्रेम करेंगे। उनके हृदय पृथ्वी के समान हैं, मेरे संन्यासी अविचलित हैं।' 22. जल।

6. 'आदरणीय नागसेना, आपने जिन पांच गुणों के जल का सेवन करने को कहा है, वे कौन-कौन से हैं?'

'हे राजा, जिस प्रकार जल स्थिर रहता है (तालाबों, कुओं आदि में), हिलता नहीं, अपनी सामान्य अवस्था में अविचलित रहता है और स्वभाव से शुद्ध होता है; ठीक उसी प्रकार, हे राजा, परिश्रमी भिक्षु को भी, जो पाखंड, शिकायत, अभाव और सभी प्रकार के अनुचित प्रभावों से दूर रहकर परिश्रम करता है, स्थिर, अविचलित, अविचलित और स्वभाव से शुद्ध होना चाहिए। हे राजा, यही जल का पहला गुण है जो उसमें होना चाहिए।'

7. हे राजा, जैसे जल सदा स्फूर्तिदायक होता है; ठीक उसी प्रकार, हे राजा, परिश्रमी भिक्षु को भी परिश्रम में तल्लीन होकर सभी प्राणियों के प्रति दया, प्रेम और करुणा से परिपूर्ण होना चाहिए, सभी का कल्याण चाहना चाहिए और सभी पर कृपा करनी चाहिए। हे राजा, यह जल का दूसरा गुण है जो उसमें होना चाहिए।

8. और फिर, हे राजा, जैसे जल गंदे को साफ कर देता है; ठीक वैसे ही, हे राजा, परिश्रमी भिक्षु को भी परिश्रम करना चाहिए।

हे राजा, प्रयास में तत्पर रहो, चाहे गाँव में हो या जंगल में, अपने शिक्षकों, स्वामियों या गुरु समान माने जाने वालों से किसी भी प्रकार का विवाद न करो, किसी भी प्रकार का अपराध न करो। यह जल का तीसरा गुण है जो उसमें होना चाहिए।

9. हे राजा, जिस प्रकार जल सभी मनुष्यों के लिए वांछनीय है, ठीक उसी प्रकार, हे राजा, परिश्रमी भिक्षु, जो परिश्रम में तत्पर, अल्प इच्छा रखने वाला, संतुष्ट, एकांतवास में रहने वाला, समस्त जगत के लिए सदा प्रेरणास्रोत होना चाहिए। हे राजा, यह जल का चौथा गुण है जो उसमें होना चाहिए।

10. हे राजा, जैसे जल किसी मनुष्य को हानि नहीं पहुँचाता; ठीक वैसे ही, हे राजा, परिश्रमी भिक्षु को कर्म, वचन या विचार से कभी कोई ऐसा कुकर्म नहीं करना चाहिए जिससे दूसरों में कलह, झगड़ा, विवाद, शून्यता की भावना, क्रोध या असंतोष उत्पन्न हो। हे राजा, यह जल का पाँचवाँ गुण है जो उसमें होना चाहिए। क्योंकि हे राजा, समस्त देवताओं के स्वामी भगवान बुद्ध ने कान्हा गातक में कहा है:

"हे सक्का, समस्त प्राणियों के स्वामी, यदि आप मुझे एक वरदान प्रदान करें, तो हे सक्का, मेरे कारण किसी को भी, मन या शरीर से, किसी भी समय या स्थान पर हानि न हो। हे सक्का, मैं यही वरदान श्रेष्ठ वरदान के रूप में चाहता हूँ।"

23. आग।

11. 'आदरणीय नागसेन, अग्नि के वे पाँच गुण जो आप कहते हैं कि उसे धारण करने चाहिए, वे कौन से हैं?'

हे राजा, जिस प्रकार अग्नि घास, टहनियों, शाखाओं और पत्तियों को जला देती है, ठीक उसी प्रकार, हे राजा, परिश्रमी भिक्षु को, जो लगन से प्रयास करता है, ज्ञान की अग्नि में उन सभी बुरी प्रवृत्तियों को जला देना चाहिए जो विचार के विषयों पर पनपती हैं, चाहे वे व्यक्तिपरक हों या वस्तुनिष्ठ, चाहे वांछनीय हों या प्रतिकूल। हे राजा, यही अग्नि का पहला गुण है जो उसमें होना चाहिए।

12. हे राजा, जिस प्रकार अग्नि में दया और करुणा नहीं होती; ठीक उसी प्रकार, हे राजा, परिश्रमी भिक्षु को भी किसी भी बुरी प्रवृत्ति पर दया और करुणा नहीं दिखानी चाहिए। हे राजा, यही अग्नि का दूसरा गुण है जो उसमें होना चाहिए।

13. हे राजा, जिस प्रकार अग्नि शीतलता को नष्ट करती है, ठीक उसी प्रकार, हे राजा, परिश्रमी भिक्षु को अपने हृदय में उत्साह की प्रज्वलित अग्नि प्रज्वलित करके उसमें निहित सभी बुरी प्रवृत्तियों को नष्ट कर देना चाहिए। हे राजा, यह अग्नि का तीसरा गुण है जो उसमें होना चाहिए।

14. हे राजा, जैसे अग्नि किसी की कृपा न चाहकर, किसी से द्वेष न रखते हुए, सभी के लिए ऊष्मा उत्पन्न करती है; ठीक उसी प्रकार, हे राजा, परिश्रमी भिक्षु को, जो परिश्रम में तत्पर है, अग्नि के समान मन से निवास करना चाहिए, किसी की चापलूसी न करना चाहिए, किसी से द्वेष न रखना चाहिए। हे राजा, यही अग्नि का चौथा गुण है जो उसमें होना चाहिए।

15. हे राजा, जिस प्रकार अग्नि अंधकार को दूर करके प्रकाश उत्पन्न करती है, ठीक उसी प्रकार, हे राजा, परिश्रमी भिक्षु को भी अंधकार को दूर करना चाहिए।

अज्ञान के अंधकार को दूर करो और ज्ञान के प्रकाश को प्रकट करो। यह अग्नि का पाँचवाँ गुण है जो उसमें होना चाहिए। क्योंकि हे राजा, समस्त देवताओं के स्वामी, भगवान बुद्ध ने अपने पुत्र राहुल को उपदेश देते हुए कहा था:

"हे राहुल, अग्नि के समान ध्यान का अभ्यास करो। इससे तुम्हारे भीतर न तो कोई अकारण प्रवृत्ति उत्पन्न होगी और न ही उत्पन्न हुई प्रवृत्तियाँ तुम्हारे हृदय पर हावी होंगी।" 24. वायु।

16. 'आदरणीय नागसेन, वायु के वे पाँच गुण जो आप कहते हैं कि उसे ग्रहण करने चाहिए, वे कौन से हैं?'

हे राजा, जिस प्रकार पुष्पन के मौसम में हवा वनों और उपवनों में व्याप्त होती है, उसी प्रकार, हे राजा, परिश्रमी भिक्षु को ध्यान के उन उपवनों में आनंदित होना चाहिए जो मुक्ति के मधुर फूलों से खिले हों। हे राजा, यही हवा का पहला गुण है जो उसमें होना चाहिए।

17. 'और फिर, हे राजा, जैसे हवा पृथ्वी पर उगने वाले सभी वृक्षों को हिला देती है, उन्हें झुका देती है।

ठीक इसी प्रकार, हे राजा, परिश्रमी भिक्षु को भी, जो लगन से प्रयास करता है, वनों के बीच जाकर, समस्त विद्यमान वस्तुओं (समग्र घटनाओं, संखारों) के वास्तविक स्वरूप का अध्ययन करके, सभी बुरी प्रवृत्तियों को परास्त करना चाहिए। हे राजा, यही वायु का दूसरा गुण है जो उसमें होना चाहिए।

18. हे राजा, जिस प्रकार वायु आकाश में विचरण करती है, ठीक उसी प्रकार, हे राजा, परिश्रमी भिक्षु को भी परिश्रम में तत्पर होकर अपने मन को दिव्य तत्वों में विचरण करने का अभ्यस्त करना चाहिए। यह वायु का तीसरा गुण है जो उसमें होना चाहिए।

19. हे राजा, जिस प्रकार वायु सुगंध को अपने साथ ले जाती है; ठीक उसी प्रकार, हे राजा, परिश्रमी भिक्षु को अपने धार्मिक जीवन की सुगंधित खुशबू को सदा अपने साथ रखना चाहिए। हे राजा, यह वायु का चौथा गुण है जो उसमें होना चाहिए।

20. हे राजा, जैसे वायु का कोई घर नहीं होता, रहने के लिए कोई ठिकाना नहीं होता; ठीक वैसे ही, हे राजा, परिश्रमी भिक्षु को, जो परिश्रम में तल्लीन हो, सदा निर्धन रहना चाहिए, समाज से विमुख नहीं होना चाहिए, मन से मुक्त रहना चाहिए। हे राजा, यह वायु का पाँचवाँ गुण है जो उसमें होना चाहिए। क्योंकि हे राजा, समस्त देवताओं के स्वामी भगवान बुद्ध ने सूत्र निपात में कहा है:

संसार की मित्रता में चिंता जन्म लेती है, गृहस्थ जीवन में व्याकुलता की धूल घनी जमी रहती है; घर और मित्रता के बंधनों से मुक्त अवस्था—यही, और केवल यही, संन्यासी का लक्ष्य है।

25. द रॉक।

21. 'आदरणीय नागसेना, चट्टान के वे पाँच गुण जो आप कहते हैं कि उसमें होने चाहिए, वे कौन से हैं?'

हे राजा, जिस प्रकार चट्टान स्थिर, अविचल और अचल होती है, ठीक उसी प्रकार, हे राजा, परिश्रमी भिक्षु को भी, जो परिश्रम में तल्लीन हो, कभी भी आकर्षक वस्तुओं—रूप, ध्वनि, सुगंध, स्वाद या स्पर्श—से विचलित नहीं होना चाहिए, न ही आदर या तिरस्कार से, न ही समर्थन या उपेक्षा से, न ही श्रद्धा या अभाव से, न सम्मान या अपमान से, न ही प्रशंसा या निंदा से, न ही उसे उन चीजों से आहत होना चाहिए जो आहत करती हैं, न ही उसे भ्रम की स्थिति में विचलित होना चाहिए, न ही उसे कांपना चाहिए और न ही थरथराना चाहिए, बल्कि चट्टान के समान उसे स्थिर रहना चाहिए। हे राजा, यही वह पहला गुण है जो उसमें होना चाहिए। क्योंकि हे राजा, समस्त देवताओं के स्वामी, भगवान बुद्ध ने कहा है:

"मजबूत चट्टान हवा से नहीं हिलती, ठीक वैसे ही बुद्धिमान व्यक्ति न तो डगमगाता है और न ही विचलित होता है।"

चाहे प्रशंसा हो या निंदा।
22. हे राजा, जैसे चट्टान दृढ़ और बाहरी चीजों से रहित होती है; ठीक वैसे ही, हे राजा, परिश्रमी भिक्षु को भी दृढ़ और स्वतंत्र होना चाहिए, किसी के साथ संगति नहीं रखनी चाहिए। हे राजा, यह चट्टान का दूसरा गुण है जो उसमें होना चाहिए। क्योंकि हे राजा, समस्त देवताओं के स्वामी भगवान बुद्ध ने कहा है:

जो व्यक्ति गृहस्थों या तपस्वियों के साथ मेलजोल नहीं रखता, बल्कि अकेला घूमता है, बिना घर के और कम इच्छाओं से ग्रस्त रहता है, वही व्यक्ति ब्राह्मण कहलाता है।

23. हे राजा, जैसे चट्टान पर कोई बीज जड़ नहीं पकड़ता; ठीक वैसे ही, हे राजा, परिश्रमी भिक्षु को भी अपने मन में कभी भी बुरी प्रवृत्तियों को जड़ पकड़ने नहीं देना चाहिए। हे राजा, यही चट्टान का तीसरा गुण है जो उसमें होना चाहिए। क्योंकि, हे राजा, सुभूति ने कहा है:

जब मेरे हृदय में कामुक विचार उठते हैं, तो मैं अकेले में आत्मनिरीक्षण करके उन्हें दबा देता हूँ। हे वासना से उत्तेजित, जो आपत्तिजनक बातों से आपत्ति करते हो, और अजीबोगरीब घटनाओं को देखकर व्याकुल हो जाते हो, तो एकांत वनों से दूर चले जाओ। क्योंकि वे शुद्ध, संयमी और पाप के दागों से मुक्त मनुष्यों का निवास स्थान हैं। उस पवित्र स्थान को अपवित्र मत करो। वनों को छोड़ दो।

24. 'और फिर, जैसे चट्टान ऊपर उठती है, वैसे ही परिश्रमी भिक्षु को भी, जो लगन से प्रयास करता है, ज्ञान के माध्यम से ऊपर उठना चाहिए। यह चट्टान का चौथा गुण है जो उसमें होना चाहिए। क्योंकि हे राजा, समस्त देवताओं के स्वामी भगवान ने कहा है:

जब ज्ञानी व्यक्ति लगन से अहंकार को दूर भगा देता है, तो वह ज्ञान की ऊँची चोटियों पर चढ़ता है, और चिंताओं से मुक्त होकर, व्यर्थ संसार और चिंताओं से ग्रस्त भीड़ को देखता है— मानो कोई पर्वत की चोटी पर खड़ा होकर मैदान में परिश्रम कर रहे अपने साथी मनुष्यों को देख रहा हो।

25. 'और फिर, हे राजा, जिस प्रकार चट्टान नहीं हो सकती

न ऊपर उठना चाहिए, न नीचे झुकना चाहिए; ठीक उसी प्रकार, हे राजा, परिश्रमी भिक्षु को भी, जो लगन से परिश्रम कर रहा हो, न ऊपर उठना चाहिए और न नीचे झुकना चाहिए। हे राजा, यही उस चट्टान का पाँचवाँ गुण है जो उसमें होना चाहिए। क्योंकि, हे राजा, यह बात धर्मपरायण महिला कुल्ला सुभद्दा ने अपने संप्रदाय के संन्यासियों की प्रशंसा करते हुए कही थी:

"संसार लाभ से ऊपर उठता है, हानि से नीचे गिरता है। मेरे समना लाभ और हानि में एक समान रहते हैं।"

26. स्थान.

26. 'आदरणीय नागसेना, अंतरिक्ष के वे पाँच गुण जो आप कहते हैं कि उसमें होने चाहिए, वे कौन से हैं?'

'हे महाराज, जिस प्रकार अंतरिक्ष को सर्वत्र पकड़ना असंभव है, ठीक उसी प्रकार, हे महाराज, परिश्रमी भिक्षु को कहीं भी बुरी प्रवृत्तियों का प्रभाव नहीं पड़ना चाहिए। हे महाराज, यही अंतरिक्ष का वह पहला गुण है जो उसमें होना चाहिए।'

27. हे राजा, जिस प्रकार आकाश ऋषियों, तपस्वियों, देवताओं और पक्षियों के झुंडों का परिचित आश्रय स्थल है; ठीक उसी प्रकार, हे राजा, परिश्रमी भिक्षु को, जो लगन से प्रयास कर रहा हो, यह जानते हुए कि प्रत्येक व्यक्ति (संस्कार) अनित्य है, दुःख से ग्रसित है और उसमें कोई स्थायी सिद्धांत (आत्मा) नहीं है, अपने मन को सभी चीजों पर सहजता से विचरण करने देना चाहिए। हे राजा, यह आकाश का दूसरा गुण है जो उसमें होना चाहिए।

28. हे राजा, जिस प्रकार अंतरिक्ष भय उत्पन्न करता है, ठीक उसी प्रकार, हे राजा, परिश्रमी भिक्षु को भी किसी भी प्रकार के जन्म के प्रति सजग होकर अपने मन में पुनर्जन्म का भय उत्पन्न करने का प्रशिक्षण देना चाहिए। उसमें सुख की तलाश नहीं करनी चाहिए। हे राजा, यही अंतरिक्ष का तीसरा गुण है जो उसमें होना चाहिए।

29. हे राजा, जिस प्रकार अंतरिक्ष अनंत, असीम और अथाह है; ठीक उसी प्रकार, हे राजा, परिश्रमी भिक्षु का धर्म, जो परिश्रम में तत्पर है, असीम होना चाहिए और उसका ज्ञान भी असीम होना चाहिए। हे राजा, यही अंतरिक्ष का चौथा गुण है जो उसमें होना चाहिए।

30. हे राजा, जिस प्रकार आकाश किसी चीज से जुड़ा नहीं रहता, किसी चीज से चिपकता नहीं, किसी चीज पर टिका नहीं रहता, किसी चीज से रुकता नहीं; ठीक उसी प्रकार, हे राजा, परिश्रमी भिक्षु को भी, जो लगन से परिश्रम करता है, अपने परिवार, शिष्य, अपने समर्थन, निवास स्थान, धार्मिक जीवन में आने वाली किसी भी बाधा, किसी भी आवश्यकता या किसी भी प्रकार की बुरी प्रवृत्ति पर निर्भर नहीं रहना चाहिए, न ही उनसे चिपकना चाहिए, न ही उन पर टिका रहना चाहिए और न ही उनसे बाधित होना चाहिए। हे राजा, यह आकाश का पाँचवाँ गुण है जो उसमें होना चाहिए। क्योंकि हे राजा, समस्त देवताओं के स्वामी भगवान बुद्ध ने अपने पुत्र राहुल को उपदेश देते हुए कहा था:

"हे राहुल, जिस प्रकार आकाश किसी वस्तु पर टिका नहीं होता, उसी प्रकार तुम आकाश के समान ध्यान का अभ्यास करो। इससे न तो सुखद और न ही अप्रिय संवेदनाएँ, चाहे वे अलग-अलग उत्पन्न हों, तुम्हारे हृदय पर हावी होंगी।"

27. चंद्रमा।

31. 'आदरणीय नागसेन, चंद्रमा के वे पाँच गुण जो आप कहते हैं कि उसमें होने चाहिए, वे कौन से हैं?'

हे महाराज, जिस प्रकार शुक्ल पक्ष में उदय होने पर चंद्रमा निरंतर बढ़ता जाता है, ठीक उसी प्रकार, हे महाराज, परिश्रमी भिक्षु को भी सजग आचरण, धर्म, सद्गुण, कर्तव्य पालन, शास्त्रों के ज्ञान और अध्ययन, एकांतवास, आत्मसंयम, इंद्रियों पर नियंत्रण, संयम और जागरण में निरंतर वृद्धि करनी चाहिए। हे महाराज, यही चंद्रमा का पहला गुण है जो भिक्षु में होना चाहिए।

32. 'और फिर, हे राजा, जैसे चंद्रमा एक शक्तिशाली स्वामी है; ठीक वैसे ही, हे राजा, परिश्रमी भिक्षु को भी, जो प्रयास में गंभीर है, अपनी इच्छा पर एक शक्तिशाली स्वामी होना चाहिए।

चाहे कोई कुआँ हो, या कोई पर्वत की खाई हो, या बाढ़ में डूबी नदी हो, शरीर और मन दोनों से समान रूप से लज्जित हो जाएँगे; हे भाइयों, तुम भी आम लोगों से मिलने जाते समय चंद्रमा के समान रहो। अपने बाहरी व्यवहार और आंतरिक भावना में एकरूपता बनाए रखते हुए, हमेशा ऐसे रहो जैसे कोई अजनबी पहली बार आम लोगों के सामने आता है। 28. सूर्य।

36. 'आदरणीय नागसेन, सूर्य के वे सात गुण जो आप कहते हैं कि उसमें होने चाहिए, वे कौन से हैं?'

'हे महाराज, जिस प्रकार सूर्य जल को वाष्पित कर देता है, ठीक उसी प्रकार, हे महाराज, परिश्रमी भिक्षु को अपने भीतर की सभी बुरी प्रवृत्तियों को बिना किसी अपवाद के नष्ट कर देना चाहिए। हे महाराज, यही सूर्य का पहला गुण है जो उसमें होना चाहिए।'

37. हे राजा, जिस प्रकार सूर्य अंधकार को दूर करता है, ठीक उसी प्रकार, हे राजा, परिश्रमी भिक्षु को भी परिश्रम में तत्पर होकर कामवासना, क्रोध, सुस्ती, अहंकार, विधर्म, बुराई और समस्त अधर्म के अंधकार को दूर करना चाहिए। हे राजा, सूर्य का यह दूसरा गुण है जो उसे धारण करना चाहिए।

38. 'और फिर, हे राजा, जैसे सूर्य सदा गतिमान रहता है; ठीक वैसे ही, हे राजा, परिश्रमी भिक्षु को भी सदा चिंतनशील रहना चाहिए। यह,

[पैराग्राफ जारी है] हे राजा, सूर्य का तीसरा गुण उसमें होना चाहिए।

39. हे राजा, जैसे सूर्य के चारों ओर किरणों का प्रभामंडल होता है, वैसे ही हे राजा, परिश्रमी भिक्षु को भी ध्यान का प्रभामंडल धारण करना चाहिए। हे राजा, यह सूर्य का चौथा गुण है जो उसमें होना चाहिए।

40. हे राजा, जिस प्रकार सूर्य निरंतर असंख्य लोगों को ऊष्मा प्रदान करता है, ठीक उसी प्रकार, हे राजा, परिश्रमी भिक्षु को भी सजग आचरण, धर्म, सद्गुण, कर्तव्यपालन, घान, विमोक्ष, समाधि, समापत्ति (दिव्य ध्यान या परमानंद की विभिन्न अवस्थाएँ), पाँच नैतिक शक्तियों, सात प्रकार के ज्ञान, सचेतन और आत्मसंयम के चार गुणों, बुराई के विरुद्ध चार प्रकार के संघर्ष और संतत्व के चार मार्गों के अनुसरण से समस्त देवी-देवताओं और मनुष्यों के जगत को आनंदित करना चाहिए। हे राजा, यही सूर्य का पाँचवाँ गुण है जो उसमें होना चाहिए।

41. हे राजा, जिस प्रकार सूर्य, राहु (ग्रहण के राक्षस) के भय से भयभीत होता है, ठीक उसी प्रकार, हे राजा, परिश्रमी भिक्षु को भी, जो लगन से परिश्रम करता है, यह देखकर कि प्राणी दुखद जन्म-मृत्यु के दुराचार में फँसे हुए हैं, पूर्व जन्मों के कर्मों के दुखद परिणामों, नरक के दंडों या बुरी प्रवृत्तियों के जाल में फंसे हुए हैं, अपने मन में गहरी चिंता और भय उत्पन्न करना चाहिए। हे राजा, यही सूर्य का छठा गुण है जो उसमें होना चाहिए।

42. हे राजा, जिस प्रकार सूर्य भले और बुरे दोनों को प्रकट करता है, ठीक उसी प्रकार, हे राजा, परिश्रमी भिक्षु को भी सच्चे मन से अच्छे और बुरे दोनों को प्रकट करना चाहिए।

नैतिक शक्तियाँ, ज्ञान के प्रकार, सचेत और आत्मसंयमित रहने के तरीके, बुराई के विरुद्ध संघर्ष, संतत्व के मार्ग और सभी सांसारिक और आध्यात्मिक गुण। हे राजा, सूर्य का यह सातवाँ गुण है जो उनमें होना चाहिए। क्योंकि हे राजा, वंगीसा ने कहा है:

"जैसे उगता हुआ सूरज सभी जीवित प्राणियों को शुद्ध और अशुद्ध, अच्छे और बुरे दोनों रूपों को स्पष्ट करता है, वैसे ही भिक्षु को उगते हुए सूर्य के समान, शास्त्रों को सदा अपने मन में धारण करके, अज्ञान में अंधे मनुष्यों को आनंद के बहुआयामी आर्य मार्ग को प्रकट करना चाहिए।" 29. सक्का।

43. 'आदरणीय नागसेन, सक्का (देवताओं के राजा) के वे तीन गुण जो आप कहते हैं कि उन्हें धारण करने चाहिए, वे कौन से हैं?'

'हे राजा, जिस प्रकार सक्का पूर्ण आनंद का अनुभव करता है, ठीक उसी प्रकार, हे राजा, परिश्रमी भिक्षु को भी एकांतवास के पूर्ण आनंद में मग्न रहना चाहिए। हे राजा, यही सक्का का पहला गुण होना चाहिए।'

44. हे राजा, जैसे सक्का अपने देवताओं को अपने आस-पास देखकर उन्हें प्रसन्न करता है और उन्हें आनंदित करता है; ठीक वैसे ही, हे राजा, परिश्रमी भिक्षु को भी लगन से प्रयास करते हुए अपने मन को एकाग्र, सजग और स्थिर रखना चाहिए, अपने भीतर आनंद उत्पन्न करना चाहिए, स्वयं को प्रेरित करना चाहिए, प्रयास करना चाहिए और उत्साह से परिपूर्ण होना चाहिए। हे राजा, यही सक्का का दूसरा गुण होना चाहिए।

45. हे राजा, जिस प्रकार सक्का कभी असंतुष्ट नहीं होता, ठीक उसी प्रकार, हे राजा, परिश्रमी भिक्षु को भी परिश्रम में तल्लीन होकर एकांतवास से असंतुष्ट नहीं होना चाहिए। हे राजा, यही सक्का का तीसरा गुण होना चाहिए। क्योंकि, हे राजा, वरिष्ठ सुभूति ने कहा है:

"हे महान वीर, मैंने संसार का त्याग कर दिया है, आपके द्वारा सिखाए गए सिद्धांत के अनुसार, मैं यह स्वीकार नहीं करूँगा कि मेरे हृदय में वासना या लालसा का कोई विचार उत्पन्न हुआ हो।" 30. संप्रभु अधिपति।

46. 'आदरणीय नागसेन, आपके अनुसार अधिपति के वे चार गुण कौन से हैं जिन्हें उसे धारण करना चाहिए?'

'हे राजा, जिस प्रकार परम स्वामी लोकप्रियता के चार तत्वों (उदारता, सौम्यता, न्याय और निष्पक्षता) द्वारा जनता का स्नेह प्राप्त करता है; ठीक उसी प्रकार, हे राजा, परिश्रमी भिक्षु, जो लगन से प्रयास करता है, संघ के भाइयों और शासकों तथा सभी लिंगों के गृहस्थों का स्नेह प्राप्त करे, उन्हें प्रसन्न करे और उनके हृदयों को आनंदित करे। हे राजा, यही परम स्वामी का गुण होना चाहिए।'

47. हे राजा, जिस प्रकार परम स्वामी अपने राज्य में लुटेरों के गिरोहों को पनपने नहीं देता; ठीक उसी प्रकार, हे राजा, परिश्रमी भिक्षु को भी परिश्रम में तत्पर रहते हुए अपने भीतर कामुक, क्रोधित या क्रूर विचार उत्पन्न नहीं होने देने चाहिए। हे राजा, यही परम स्वामी का दूसरा गुण है जो उसमें होना चाहिए। क्योंकि हे राजा, समस्त देवताओं के स्वामी, भगवान बुद्ध ने कहा है:

"जो व्यक्ति बुरे विचारों के दमन में आनंद लेता है, और सदा आत्मसंयमित रहता है, संसार जिन चीजों को सुंदर समझता है, उनकी अपवित्रता पर चिंतन करता है, वह शैतान के बंधनों को तोड़ देगा - बल्कि उन्हें दो टुकड़ों में काट देगा।"

48. हे राजा, जिस प्रकार परम स्वामी समस्त संसार में, यहाँ तक कि सागर की सीमा तक, भले-बुरे का परीक्षण करते हैं, ठीक उसी प्रकार, हे राजा, परिश्रमी भिक्षु को भी प्रतिदिन अपने कर्मों, वचनों और विचारों का आत्मनिरीक्षण करना चाहिए और मन ही मन यह कहना चाहिए: "मैं इन तीनों दिशाओं में कैसे निर्दोश होकर दिन व्यतीत करूँ?" हे राजा, यही परम स्वामी का तीसरा गुण है जो उसमें होना चाहिए। क्योंकि हे राजा, समस्त देवताओं के परम स्वामी बुद्ध ने अपने उत्तम एकुत्तर निकाय में कहा है:

"सन्यासी को निरंतर सावधानी से प्रतिदिन स्वयं का आत्मनिरीक्षण करना चाहिए— 'दिन और रातें तेजी से बीतते जा रहे हैं, तो उन्होंने मुझे कैसे पाया? और कैसे छोड़ा?'"

49. हे राजा, जिस प्रकार परम स्वामी को भीतर और बाहर दोनों ओर से पूर्ण सुरक्षा प्राप्त होती है; ठीक उसी प्रकार, हे राजा, परिश्रमी भिक्षु को भी, जो लगन से परिश्रम करता है, आत्मसंयम को अपने द्वारपाल के रूप में धारण करना चाहिए, ताकि वह सभी प्रकार की बुराई, प्रत्यक्ष और अप्रत्यक्ष, से सुरक्षित रहे। हे राजा, यह परम स्वामी का चौथा गुण है जो उसमें होना चाहिए। क्योंकि हे राजा, समस्त देवताओं के स्वामी, भगवान बुद्ध ने कहा है:

"हे भाइयों, आत्मसंयम को अपना द्वारपाल बनाकर, श्रेष्ठ जनों का शिष्य बुराई को त्यागकर अच्छाई में संलग्न होता है, अपराध की बातों को त्यागकर निष्कलंकता में संलग्न होता है, और जीवन की पवित्रता में स्वयं को बनाए रखता है।"

तीसरा अध्याय यहीं समाप्त होता है।

टिपिटका >> सुत्त पिटक >> खुद्दक निकाय >> मिलिंदपन्हा >> पुस्तक VII: उपमाएँ - ओपम्मकथा पन्हा अध्याय 4

अनुवादक: टी.डब्ल्यू. राइस डेविड्स

पिछला <<<<-----॥-22-॥----->>>> अगला

31. सफेद चींटी।

1. 'आदरणीय नागसेना, दीमक का वह गुण जो आप कहते हैं कि उसमें होना चाहिए, वह कौन सा है?'

हे महाराज, जिस प्रकार दीमक अपना काम तभी शुरू करती है जब वह अपने ऊपर छत बना लेती है और खुद को ढक लेती है; ठीक उसी प्रकार, हे महाराज, परिश्रमी भिक्षु को भी भिक्षा मांगने के अपने सफर में अपने मन को धर्म और संयम से छत की तरह ढक लेना चाहिए। क्योंकि ऐसा करने से, हे महाराज, वह सभी भय से मुक्त हो जाएगा। हे महाराज, दीमक का यही गुण उनमें होना चाहिए। क्योंकि, हे महाराज, उपसेना वांगंतपुत्त ने कहा है:

"जो भक्त अपने मन को धर्म और आत्म-संयम की छत्रछाया में रखता है, संसार से अछूता रहता है, और हर भय से मुक्त हो जाता है।"
32. बिल्ली।

2. 'आदरणीय नागसेना, बिल्ली में वे दो गुण जो आप कहते हैं कि उसमें होने चाहिए, वे कौन से हैं?'

हे राजा, जिस प्रकार बिल्ली गुफाओं, बिलों और बहुमंजिला इमारतों के अंदरूनी हिस्सों में चूहों की तलाश में ही जाती है, ठीक उसी प्रकार, हे राजा, आपको भी ऐसा ही करना चाहिए।

परिश्रमी भिक्षु, जो लगन से प्रयास करता है, चाहे वह गाँव जाए, जंगल जाए, वृक्षों की तलहटी में जाए या किसी खाली घर में जाए, उसे निरंतर और सदा अपने भोजन, अर्थात् आत्म-संयम की खोज में तत्पर रहना चाहिए। यही वह पहला गुण है जो उसमें होना चाहिए।

3. हे राजा, जिस प्रकार बिल्ली अपने शिकार का पीछा करते समय हमेशा घात लगाकर बैठती है; ठीक उसी प्रकार, हे राजा, परिश्रमी भिक्षु को, जो लगन से प्रयास करता है, अस्तित्व से आसक्ति के कारण उत्पन्न होने वाले व्यक्तित्व के पाँच विशिष्ट लक्षणों के उद्गम और अंत के प्रति सचेत रहना चाहिए, और मन ही मन सोचना चाहिए: "ऐसा है रूप, ऐसा है उसका उद्‌गम, ऐसा है उसका अंत। ऐसी है संवेदना, ऐसा है उसका उद्‌गम, ऐसा है उसका अंत। ऐसे हैं विचार, ऐसा है उनका उद्‌गम, ऐसा है उनका अंत। ऐसी हैं मानसिक क्षमताएँ (संस्कार), ऐसा है उनका उद्‌गम, ऐसा है उनका अंत। ऐसी है आत्मचेतना, ऐसा है उसका उद्‌गम, ऐसा है उसका अंत।" हे राजा, यही बिल्ली का दूसरा गुण है जो उसमें होना चाहिए। क्योंकि हे राजा, समस्त देवताओं के स्वामी भगवान बुद्ध ने कहा है:

"भविष्य के राज्यों में दूर-दूर तक पुनर्जन्म की तलाश मत करो। प्रार्थना करो, स्वर्ग से तुम्हें क्या लाभ हो सकता है! अभी, इस वर्तमान संसार में, और जिस अवस्था में तुम स्वयं को पाते हो, विजेता बनो!" 33. चूहा।

4. 'आदरणीय नागसेना, चूहे का वह एक गुण जो आप कहते हैं कि उसे अपनाना चाहिए, वह कौन सा है?'

हे महाराज, जिस प्रकार चूहा इधर-उधर भटकते हुए भोजन की तलाश में रहता है, ठीक उसी प्रकार, हे महाराज, परिश्रमी भिक्षु को भी निरंतर चिंतन करते हुए इधर-उधर भटकते रहना चाहिए। यही गुण उसमें चूहे का होना चाहिए। क्योंकि, हे महाराज, उपसेना वांगंतपुत्र ने कहा है:

"सदा सतर्क और शांत, अंतर्दृष्टि वाला व्यक्ति, ज्ञान को सर्वोत्कृष्ट मानते हुए, स्वयं को सभी इच्छाओं और चिंताओं से मुक्त रखता है।" 34. बिच्छू।

5. 'आदरणीय नागसेना, बिच्छू का वह गुण जिसे आप कहते हैं कि उसे अपनाना चाहिए, वह कौन सा है?'

'हे महाराज, जिस प्रकार बिच्छू अपनी पूंछ को हथियार बनाकर चलते समय अपनी पूंछ को सीधा रखता है, ठीक उसी प्रकार, हे महाराज, परिश्रमी भिक्षु को भी अपने ज्ञान को हथियार बनाकर रखना चाहिए।'

और वह अपने हथियार, ज्ञान को सदा धारण किए रखे। हे राजा, यही बिच्छू का गुण होना चाहिए। क्योंकि हे राजा, उपसेना वांगंत-पुत्र, वरिष्ठ ने कहा है:

"ज्ञान की तलवार खींचे हुए, अंतर्दृष्टि वाला व्यक्ति युद्ध में हमेशा अजेय रहेगा, हर डर से मुक्त हो जाएगा।" 35. नेवला।

6. 'आदरणीय नागसेना, नेवले का वह गुण जिसे आप कहते हैं कि उसे अपनाना चाहिए, वह कौन सा है?'

हे महाराज, जिस प्रकार नेवला साँप पर हमला करते समय अपने शरीर पर विषनाशक लेप लगा लेता है, ठीक उसी प्रकार, हे महाराज, परिश्रमी भिक्षु को क्रोध और घृणा से भरे संसार में, जहाँ कलह, संघर्ष, विवाद और शत्रुता व्याप्त है, जाते समय अपने मन को प्रेम के विषनाशक से युक्त रखना चाहिए। हे महाराज, यही वह गुण है जो नेवले में होना चाहिए। क्योंकि, हे महाराज, धर्म के प्रमुख, सारिपुत्त ने कहा है:

"इसलिए अपने सगे-संबंधियों के प्रति प्रेम भाव रखना चाहिए, और अजनबियों के प्रति भी, और समस्त संसार प्रेममय हृदय से परिपूर्ण होना चाहिए—यही समस्त बुद्धों का सिद्धांत है।" 36. बूढ़ा नर सियार।

7. 'आदरणीय नागसेना, आप कहते हैं कि बूढ़े नर सियार को जिन दो गुणों को अपनाना चाहिए, वे कौन से हैं?'

हे महाराज, जिस प्रकार बूढ़ा सियार किसी भी प्रकार का भोजन पाकर अरुचि नहीं करता, बल्कि आवश्यकतानुसार खाता है; ठीक उसी प्रकार, हे महाराज, परिश्रमी भिक्षु को भी अपने जीवन को जीवित रखने के एकमात्र उद्देश्य से प्राप्त भोजन को बिना अरुचि के ग्रहण करना चाहिए। हे महाराज, यही वह पहला गुण है जो बूढ़े सियार में होना चाहिए। क्योंकि, हे महाराज, महा कस्सपा ने कहा है:

अपने घर से निकलकर, मैं भिक्षा मांगने के लिए गांव की गली में गया। वहां मैंने एक कुष्ठ रोगी को भोजन करते देखा, और जैसा उचित था, मैंने भी उसके पास खड़े होकर उससे कुछ दान मांगा। उस कुष्ठ रोगी का हाथ भी कुष्ठ रोग से ग्रसित था, उसने मेरे कटोरे में चावल का एक गोला रखा—उसके पास देने के लिए बस यही था—और जैसे ही उसने उसे रखा, उसकी एक उंगली दर्दनाक तरीके से टूटकर गिर गई। दीवार के पीछे बैठकर मैंने वह चावल का गोला खाया, और न तो खाते समय, न ही बाद में, मेरे मन में कोई घृणा का विचार आया।

8. हे महाराज, जिस प्रकार बूढ़ा सियार भोजन मिलने पर उसकी जाँच-परख नहीं करता; ठीक उसी प्रकार, हे महाराज, परिश्रमी भिक्षु को भी परिश्रम में तल्लीन रहकर यह नहीं देखना चाहिए कि दिया गया भोजन कड़वा है या मीठा, स्वादिष्ट है या बेस्वाद — उसे जैसा है वैसा ही खाकर संतुष्ट हो जाना चाहिए। हे महाराज, यही बूढ़े सियार का दूसरा गुण है।

उसे ऐसा करना चाहिए था। क्योंकि हे राजा, उपसेना वांगंत-पुत्र, बड़े ने कहा था:

कड़वे भोजन का भी उसे आनंद लेना चाहिए, मीठे स्वाद की लालसा नहीं करनी चाहिए। स्वाद की लालसा से विचलित मन कभी भी उच्च ध्यान की परमानंद अवस्था का अनुभव नहीं कर सकता। जो व्यक्ति दी गई किसी भी चीज़ से संतुष्ट है—केवल उसी में समनत्व पूर्ण होता है। 37. हिरण।

9. 'आदरणीय नागसेन, हिरण के वे तीन गुण जिन्हें आप कहते हैं कि उसे ग्रहण करना चाहिए, वे कौन से हैं?'

हे महाराज, जिस प्रकार हिरण दिन में वन में विचरण करता है और रात खुले आकाश में बिताता है; ठीक उसी प्रकार, हे महाराज, परिश्रमी भिक्षु को भी दिन वन में और रात खुले आकाश में बितानी चाहिए। हे महाराज, यही हिरण का पहला गुण है जो उसमें होना चाहिए। क्योंकि हे महाराज, समस्त देवताओं के स्वामी, भगवान बुद्ध ने लोमहा मसन परियाय नामक व्याख्या में यही कहा है।

"और मैं, सारिपुत्त, जब रातें ठंडी और सर्द होती थीं, अष्टक पर्वों के समय, जब बर्फ गिरती थी, तब मैं रात खुले आसमान के नीचे और दिन जंगलों में बिताता था। और गर्मी के आखिरी महीने में भी मैं दिन खुले आसमान के नीचे और रात जंगलों में बिताता था।"

10. हे महाराज, जिस प्रकार हिरण भाला या बाण के आने पर उससे बच निकलता है और अपने शरीर को उसके मार्ग में नहीं आने देता; ठीक उसी प्रकार, हे महाराज, परिश्रमी भिक्षु को भी, जब बुरी प्रवृत्तियाँ उस पर हावी हों, तो उनसे बचकर निकल जाना चाहिए और अपने मन को उनके मार्ग में नहीं लगाना चाहिए। हे महाराज, यह हिरण का दूसरा गुण है जो उसे धारण करना चाहिए।

11. हे राजा, जिस प्रकार हिरण मनुष्यों को देखकर इधर-उधर भाग जाता है ताकि वे उसे देख न सकें; ठीक उसी प्रकार, हे राजा, परिश्रमी भिक्षु को भी, जो लगन से परिश्रम करता है, जब वह झगड़ालू, कलह-झगड़े में लिप्त, दुष्ट और निष्क्रिय, समाजप्रेमी मनुष्यों को देखता है, तो उसे इधर-उधर भाग जाना चाहिए ताकि न तो वे उसे देख सकें और न ही वह उन्हें। हे राजा, यह हिरण का तीसरा गुण है जो उसमें होना चाहिए। क्योंकि, हे राजा, धर्म के सेनापति, वरिष्ठ सारिपुत्त ने कहा है:

"जिस व्यक्ति के हृदय में बुराई हो, जो निष्क्रिय हो, उत्साहहीन हो, दुष्ट जीवन जीता हो, पवित्र वचनों का बहुत कम ज्ञान रखता हो—वह व्यक्ति किसी भी समय या स्थान पर मेरा साथी न बने, न ही मेरे साथ रहे।"

38. बैल।

12. 'आदरणीय नागसेन, बैल के वे चार गुण जो आप कहते हैं कि उसे धारण करने चाहिए, वे कौन से हैं?'

'हे महाराज, जिस प्रकार बैल कभी अपना बाड़ा नहीं छोड़ता; ठीक उसी प्रकार, हे महाराज, परिश्रमी भिक्षु को भी अपने शरीर का त्याग इस आधार पर नहीं करना चाहिए कि उसका स्वभाव ही अपघटन, क्षय, विघटन और नाश है। हे महाराज, यही बैल का पहला गुण है जो उसमें होना चाहिए।'

13. हे राजा, जैसे बैल एक बार जुआ अपने ऊपर ले लेता है तो हर परिस्थिति में, चाहे दुख हो या पीड़ा, उस जुए को सहन करता है; ठीक वैसे ही, हे राजा, परिश्रमी भिक्षु को, जो लगन से प्रयास करता है, एक बार संन्यासी का जीवन अपना लेने के बाद, सुख-दुख में, अपने जीवन के अंत तक, अपनी अंतिम सांस तक, उस पर कायम रहना चाहिए। हे राजा, यह बैल का दूसरा गुण है जो उसमें होना चाहिए।

14. हे राजा, जिस प्रकार बैल कभी तृप्त न होने वाली इच्छा से जल पीता है; ठीक उसी प्रकार, हे राजा, परिश्रमी भिक्षु को भी लगन से अपने गुरुओं और गुरुओं की शिक्षा को कभी तृप्त न होने वाली इच्छा, प्रेम और आनंद के साथ ग्रहण करना चाहिए। हे राजा, यही बैल का तीसरा गुण है जो उसमें होना चाहिए।

15. हे राजा, जिस प्रकार बैल किसी पर भी डाले गए जुए को समान रूप से सहन करता है; ठीक उसी प्रकार, हे राजा, परिश्रमी भिक्षु को भी, जो लगन से प्रयास कर रहा हो, नसीहतों और उपदेशों को सिर झुकाकर स्वीकार करना चाहिए।

बुजुर्गों, कनिष्ठ और मध्यम स्तर के भाइयों और विश्वासी आम लोगों के लिए समान रूप से। हे राजा, यह उस आदेश का चौथा गुण है जो उसमें होना चाहिए। क्योंकि हे राजा, धर्म के सेनापति, वरिष्ठ सारिपुत्त ने कहा था:

"एक नौसिखिया, सात साल का लड़का, आज ही हमारे समूह में शामिल हुआ है, वह भी मुझे सिखा सकता है, और मैं सिर झुकाकर उसकी सलाह सहर्ष स्वीकार करूँगा। बार-बार, जहाँ कहीं भी मैं उससे मिलूँ, मैं उस पर अपना प्रबल स्नेह और प्रेम बरसाऊँगा—यदि वह अच्छा हो—और शिक्षक का सम्मानित स्थान उसे सौंप दूँगा।" 39. सूअर।

16. 'आदरणीय नागसेन, सूअर के वे दो गुण जो आप कहते हैं कि उसे धारण करने चाहिए, वे कौन से हैं?'

हे महाराज, जिस प्रकार गर्म मौसम की उमस भरी गर्मी में सूअर पानी की शरण लेता है, ठीक उसी प्रकार, हे महाराज, परिश्रमी भिक्षु को भी, जब उसका हृदय विचलित होकर क्रोध से व्याकुल होकर पतन के कगार पर हो, प्रेम ध्यान के शीतल, अमृतमय और मधुर जल की शरण लेनी चाहिए। हे महाराज, यही वह पहला गुण है जो सूअर में होना चाहिए।

17. और फिर, हे राजा, जैसे सूअर कीचड़ भरे पानी में जाकर अपनी थूथन से दलदल खोदकर उसमें अपने लिए एक कुंड बना लेता है और लेट जाता है; ठीक उसी प्रकार, हे राजा, परिश्रमी भिक्षु को भी, जो परिश्रम में तत्पर है, अपने शरीर को मन में विलीन कर लेना चाहिए, और

ध्यानमग्न अवस्था में लेट जाओ। हे राजा, यह सूअर का दूसरा गुण है जो उसमें होना चाहिए। क्योंकि हे राजा, पिंडोल भारद्वग ने कहा है:

"अकेले, बिना किसी के पास, अंतर्दृष्टि वाला व्यक्ति, इस शरीर की प्रकृति की खोज और खोज करते हुए, गहन चिंतन के मधुर बिस्तर पर विश्राम कर सकता है।" 40. हाथी।

18. 'हे पूज्य नागसेन, हाथी के वे पाँच गुण कौन से हैं जिन्हें उसे धारण करना चाहिए?'

'हे महाराज, जिस प्रकार हाथी चलते हुए धरती को रौंदता है; ठीक उसी प्रकार, हे महाराज, परिश्रमी भिक्षु को भी लगन से प्रयास करते हुए, शरीर के स्वभाव पर विजय प्राप्त करके समस्त बुराई का नाश करना चाहिए। हे महाराज, यही हाथी का पहला गुण है जो भिक्षु में होना चाहिए।'

19. हे राजा, जिस प्रकार हाथी देखते समय अपना पूरा शरीर घुमाता है, हमेशा सीधे सामने देखता है, इधर-उधर नहीं देखता; ठीक उसी प्रकार, हे राजा, परिश्रमी भिक्षु को भी, जो लगन से परिश्रम करता है, देखते समय अपना पूरा शरीर घुमाना चाहिए, हमेशा सीधे सामने देखना चाहिए, इधर-उधर नहीं देखना चाहिए, ऊपर नहीं देखना चाहिए, अपने पैरों की ओर नहीं देखना चाहिए, बल्कि अपनी आँखें लगभग एक जुए की लंबाई के बराबर आगे स्थिर रखनी चाहिए। हे राजा, यह हाथी का दूसरा गुण है जो उसमें होना चाहिए।

20. और फिर, हे राजा, जैसे हाथी का कोई स्थायी ठिकाना नहीं होता, वैसे ही वह भोजन की तलाश में भी हमेशा एक ही स्थान पर नहीं जाता, उसका कोई निश्चित ठिकाना नहीं होता।

निवास; ठीक इसी प्रकार, हे राजा, परिश्रमी भिक्षु को भी स्थायी विश्राम स्थल नहीं रखना चाहिए, बल्कि बिना घर के ही भिक्षा मांगने के लिए घूमना चाहिए। अंतर्दृष्टि से परिपूर्ण, जहाँ कहीं भी उसे कोई सुखद, उपयुक्त और मनभावन स्थान दिखाई दे, चाहे वह कुटिया हो, वृक्ष की तलहटी हो, गुफा हो या पर्वत की ढलान हो, वहीं निवास करना चाहिए, स्थायी निवास नहीं बनाना चाहिए। हे राजा, हाथी का यह तीसरा गुण होना चाहिए।

21. हे राजा, जिस प्रकार हाथी जल में आनंदित होता है, निर्मल, शीतल जल से भरे, पीले, नीले, लाल और सफेद कमलों से लदे हुए सुंदर कमल-कुंडों में डुबकी लगाता है, और वहाँ उन खेलों में क्रीड़ा करता है जिनमें वह शक्तिशाली प्राणी प्रसन्न होता है; ठीक उसी प्रकार, हे राजा, परिश्रमी भिक्षु को भी परिश्रमपूर्वक आत्म-संयम के सुंदर सरोवर में डुबकी लगानी चाहिए, जो मुक्ति के फूलों से ढका हुआ है, और शुद्ध, निर्मल, निर्मल सत्य के मधुर जल से भरा हुआ है; वहाँ उसे ज्ञान द्वारा संखारों को त्यागकर दूर भगाना चाहिए, वहाँ उसे उस खेल में आनंदित होना चाहिए जो संन्यासी को प्रसन्न करता है। हे राजा, यह हाथी का चौथा गुण है जो उसमें होना चाहिए।

22. हे महाराज, जिस प्रकार हाथी सावधानी से अपना पैर उठाता है और सावधानी से रखता है; ठीक उसी प्रकार, हे महाराज, परिश्रमी भिक्षु को भी लगन से अपना पैर उठाते समय सचेत और संयमित रहना चाहिए।

अपने पैरों को उठाते और रखते समय, चलते या लौटते समय, अपनी भुजा को फैलाते या समेटते समय—वह जहाँ कहीं भी हो, उसे सचेत और संयमित रहना चाहिए। हे राजा, यह हाथी का पाँचवाँ गुण है जो उसमें होना चाहिए। क्योंकि हे राजा, समस्त देवताओं के स्वामी, भगवान बुद्ध ने सर्वश्रेष्ठ संयुत्त निकाय में कहा है:

"कर्म में संयम ही अच्छा है।"
और बोलने में अच्छा संयम बरतना चाहिए।
मन में संयम रखना अच्छा है।
हर स्थिति में संयम बरतना अच्छा है।
कहा जाता है कि उसकी कड़ी सुरक्षा की जाती है।
जो पाप से लज्जित है, वह हर बात में आत्मसंयमित है।
यहां चौथा अध्याय समाप्त होता है।

टिपिटका >> सुत्त पिटक >> खुद्दक निकाय >> मिलिंदपन्हा >> पुस्तक VII: उपमाएँ - ओपम्मकथा पन्हा अध्याय 5

अनुवादक: टी.डब्ल्यू. राइस डेविड्स

पिछला <<<<-----||-23-||----->>>> अगला

41. शेर।

1. 'आदरणीय नागसेना, शेर के वे सात गुण जो आप कहते हैं कि उसमें होने चाहिए, वे कौन से हैं?'

'हे महाराज, जिस प्रकार सिंह निर्मल और शुद्ध पीले रंग का होता है, ठीक उसी प्रकार, हे महाराज, परिश्रमी भिक्षु को भी निर्मल, शांत और निर्मल मन का होना चाहिए, क्रोध और उदासी से मुक्त होना चाहिए। हे महाराज, यही सिंह का पहला गुण है जो उसमें होना चाहिए।'

2. हे राजा, जिस प्रकार सिंह के चार पंजे होते हैं और वह तीव्र गति से चलता है; ठीक उसी प्रकार, हे राजा, परिश्रमी भिक्षु को भी लगन से चारों मार्गों पर चलना चाहिए। हे राजा, यह सिंह का दूसरा गुण है जो उसमें होना चाहिए।

3. हे राजा, जिस प्रकार सिंह के शरीर पर सुंदर, मनमोहक कारा वस्त्र होता है, ठीक उसी प्रकार, हे राजा, परिश्रमी भिक्षु को भी सुंदर, मनमोहक धर्म वस्त्र धारण करना चाहिए। हे राजा, यह सिंह का तीसरा गुण है जो उसमें होना चाहिए।

4. हे राजा, जैसे सिंह अपने प्राण त्यागने पर भी किसी के सामने नहीं झुकता; ठीक उसी प्रकार, हे राजा, परिश्रमी भिक्षु, जो निरंतर प्रयास करता है, भले ही उसे संन्यासी की सभी आवश्यक वस्तुएँ—भोजन, वस्त्र, आवास और बीमारों के लिए औषधि—प्राप्त न हों, फिर भी कभी किसी के सामने न झुके।

किसी भी व्यक्ति के लिए। यह शेर का चौथा गुण है जो उसमें होना चाहिए।

5. हे राजा, जिस प्रकार सिंह नियमित रूप से भोजन करता है, जहाँ कहीं भी उसका शिकार गिरता है, वह वहीं से अपनी आवश्यकता के अनुसार भोजन ग्रहण करता है और मांस के सर्वोत्तम टुकड़ों की खोज नहीं करता; ठीक उसी प्रकार, हे राजा, परिश्रमी भिक्षु को भी नियमित रूप से प्रत्येक कुटिया में भिक्षा माँगते हुए, बेहतर भोजन की तलाश में किसी भी घर को छोड़े बिना, भोजन के मामले में चुन-चुनकर भोजन नहीं करना चाहिए; जहाँ कहीं भी उसे चावल का एक निवाला मिले, उसे वहीं से खा लेना चाहिए, सर्वोत्तम टुकड़ों की खोज नहीं करनी चाहिए। हे राजा, यह सिंह का पाँचवाँ गुण है जो उसमें होना चाहिए।

6. हे राजा, जिस प्रकार सिंह अपने भोजन को संचित नहीं करता और एक बार शिकार खा लेने के बाद दोबारा उसके पास नहीं लौटता; ठीक उसी प्रकार, हे राजा, परिश्रमी भिक्षु को भी परिश्रम में तत्पर रहते हुए भोजन संचित नहीं करना चाहिए। यह सिंह का छठा गुण है जो उसमें होना चाहिए।

7. हे राजा, जैसे शेर को भोजन न मिलने पर भी वह भयभीत नहीं होता, और यदि भोजन मिल भी जाए तो वह बिना लालसा, बिना कमजोरी, बिना क्षीण हुए खाता है; ठीक उसी प्रकार, हे राजा,

हे परिश्रमी भिक्षु, जो परिश्रम में तत्पर हो, भोजन न मिलने पर भी भयभीत न हो; और यदि भोजन मिल जाए तो उसे लालसा, व्याकुलता, क्षीणता के खतरे से सचेत रहते हुए, भोजन के उचित परिणाम (पवित्रता की प्राप्ति के लिए जीवन निर्वाह) का पूर्ण ज्ञान रखते हुए, बिना लालसा, क्षीणता या दुर्बलता के खाए। हे राजा, यही सिंह का सातवाँ गुण है जो उसमें होना चाहिए। क्योंकि हे राजा, समस्त देवताओं के अधिपति भगवान बुद्ध ने परम उत्तम संयुत्त निकाय में महा कस्सपा की स्तुति करते हुए कहा है:

"हे भिक्षुओं, यह कस्सपा जो भी भोजन प्राप्त करता है, उसी से संतुष्ट रहता है; वह जो भी भोजन प्राप्त होता है, उससे संतुष्ट रहने के गुण को बढ़ाता है; वह भिक्षा के लिए किसी भी अनुचित या अशोभनीय कार्य का दोषी नहीं होता; यदि उसे भिक्षा न भी मिले, तो भी वह भयभीत नहीं होता; और यदि भिक्षा मिलती भी है, तो वह उसे लालसा, दुर्बलता, भय से परे, खतरे से अवगत रहते हुए, भोजन ग्रहण करने के सही उद्देश्य का पूर्ण ज्ञान रखते हुए ग्रहण करता है।" 42. काक्रवाका पक्षी।

8. 'आदरणीय नागसेन, काकरावक पक्षी के वे तीन गुण जो आप कहते हैं कि उसे धारण करने चाहिए, वे कौन से हैं?'

हे महाराज, जिस प्रकार काक्रावाक पक्षी अपने जीवन के अंत तक भी अपने साथी का त्याग नहीं करता, ठीक उसी प्रकार, हे महाराज, परिश्रमी भिक्षु को भी कभी भी, यहाँ तक कि अपने जीवन के अंत तक भी, अपने साथी का त्याग नहीं करना चाहिए।

अपने जीवन के अंत तक, चिंतन की आदत को त्याग दो। हे राजा, यही वह पहला गुण है जो काकरावक पक्षी में होना चाहिए।

9. हे महाराज, जिस प्रकार काकरवाक पक्षी सेवाला और पनाका (जलीय पौधे) खाकर तृप्ति प्राप्त करता है और संतुष्ट रहता है, उसकी शक्ति और सुंदरता में कोई कमी नहीं आती; ठीक उसी प्रकार, हे महाराज, परिश्रमी भिक्षु को भी जो परिश्रम में तत्पर रहता है, जो कुछ भी प्राप्त करे, उसमें तृप्ति प्राप्त करनी चाहिए। और यदि वह ऐसा तृप्ति प्राप्त करता है, हे महाराज, तो उसकी ध्यान शक्ति, ज्ञान, मोक्ष, मोक्ष की चेतना से उत्पन्न अंतर्दृष्टि और किसी भी प्रकार की अच्छाई में कोई कमी नहीं आती। हे महाराज, यही काकरवाक पक्षी का दूसरा गुण है जो भिक्षु में होना चाहिए।

10. हे महाराज, जिस प्रकार काकरवाक पक्षी किसी भी सजीव प्राणी को हानि नहीं पहुँचाता, ठीक उसी प्रकार, हे महाराज, परिश्रमी भिक्षु को भी, जो परिश्रम में तत्पर है, गदा और तलवार त्यागकर, नम्रता और करुणा से परिपूर्ण होकर, सभी सजीव प्राणियों के प्रति दयालु और करुणामय होना चाहिए। हे महाराज, यही काकरवाक पक्षी का तीसरा गुण है जो उसे धारण करना चाहिए। क्योंकि हे महाराज, समस्त देवताओं के स्वामी, भगवान बुद्ध ने काकरवाक गातक में कहा है:

"जो व्यक्ति हत्या नहीं करता, विनाश नहीं करता, अत्याचार नहीं करता, और दूसरों को उनका हक छीनने के लिए मजबूर नहीं करता, वह सभी जीवित प्राणियों के प्रति दयालुता दिखाता है— किसी भी व्यक्ति के प्रति क्रोध उसकी शांति भंग नहीं करता।" 43. पेनहिक पक्षी।

11. 'आदरणीय नागसेना, पेनाहिका पक्षी के वे दो गुण जो आप कहते हैं कि उसे ग्रहण करने चाहिए, वे कौन से हैं?'

'हे महाराज, जिस प्रकार पेनाहिका चिड़िया अपने साथी से ईर्ष्या के कारण अपने बच्चों का पालन-पोषण करने से इनकार कर देती है, ठीक उसी प्रकार, हे महाराज, परिश्रमी भिक्षु को भी किसी भी बुरी प्रवृत्ति से सावधान रहना चाहिए।'

जो भावनाएँ उसके भीतर उत्पन्न होती हैं, उन्हें अपने सचेतन मन से आत्म-संयम के उत्तम छिद्र में रखकर, उसके मन के द्वार पर निवास करना चाहिए, और शरीर से संबंधित सभी मामलों में आत्म-नियंत्रण का निरंतर अभ्यास करना चाहिए। हे राजा, यही पेनाहिका पक्षी का पहला गुण है जो उसमें होना चाहिए।

12. हे राजा, जिस प्रकार पेनाहिका पक्षी दिन भर भोजन की खोज में जंगल में भटकता है, परन्तु रात्रि में अपने झुंड में शरण लेता है; ठीक उसी प्रकार, हे राजा, परिश्रमी भिक्षु, जो दस बंधनों से मुक्ति पाने के उद्देश्य से कुछ समय के लिए एकांतवास में रहा हो और उसे वहाँ संतोष न मिला हो, उसे निंदा के खतरे से बचने के लिए संघ में शरण लेनी चाहिए और संघ की शरण में रहना चाहिए। हे राजा, यही पेनाहिका पक्षी का दूसरा गुण है जो उसे धारण करना चाहिए। क्योंकि हे राजा, ब्रह्मा सहमपति ने भगवान बुद्ध की उपस्थिति में यह कहा था:

"मनुष्यों के निवास से दूर एकांतवास की तलाश करो, वहाँ पाप के बंधनों से मुक्त होकर रहो; परन्तु जो एकांत में शांति न पाए, वह संघ के साथ निवास करे, हृदय से सतर्क, सचेत और आत्मसंयमित होकर।"

44. घरेलू कबूतर।

13. 'आदरणीय नागसेना, कबूतर का वह एक गुण जो आप कहते हैं कि उसे अपनाना चाहिए, वह कौन सा है?'

हे राजा, जिस प्रकार घर का कबूतर मनुष्यों के घरों में रहते हुए उनकी किसी भी वस्तु से आसक्त नहीं होता, बल्कि तटस्थ रहता है और केवल पक्षियों से संबंधित वस्तुओं पर ही ध्यान देता है; ठीक उसी प्रकार, हे राजा, परिश्रमी भिक्षु को भी, जो लगन से परिश्रम करता है, जब वह दूसरों के घरों में जाता है, तो उसे न तो स्त्री से, न पुरुष से, न पलंग से, न कुर्सी से, न वस्त्र से, न आभूषण से, न उपयोग या आनंद की वस्तुओं से, न ही वहाँ उपलब्ध विभिन्न प्रकार के भोजन से, बल्कि सदा तटस्थ रहना चाहिए और केवल उन्हीं विचारों में लीन रहना चाहिए जो संन्यासी को शोभा देते हैं। हे राजा, यही घर के कबूतर का गुण है जो उसे धारण करना चाहिए। क्योंकि हे राजा, समस्त देवताओं के स्वामी भगवान बुद्ध ने कुल्लानाद गातक में कहा है:

"भोजन या पेय के लिए लोगों के घरों में बार-बार जाते समय, भोजन और पेय दोनों में संयम बरतें, और सुंदरता के रूप को अपने विचारों को आकर्षित न करने दें।" 45. उल्लू।

14. 'आदरणीय नागसेना, उल्लू के वे दो गुण जो आप कहते हैं कि उसे धारण करने चाहिए, वे कौन से हैं?'

हे महाराज, जिस प्रकार उल्लू कौवों से शत्रुता होने पर रात में कौवों के झुंड के पास जाकर उनमें से कई को मार डालता है, ठीक उसी प्रकार, हे महाराज, परिश्रमी भिक्षु को भी परिश्रम में तत्पर रहना चाहिए।

अज्ञान से शत्रुता रखते हुए, एकांत में बैठकर उसे जड़ से उखाड़ फेंकना चाहिए। हे राजा, उल्लू का यही पहला गुण होना चाहिए।

15. हे महाराज, जैसे उल्लू एकांतप्रिय पक्षी है; ठीक वैसे ही, हे महाराज, परिश्रमी भिक्षु को भी परिश्रम में तल्लीन होकर एकांत में रहना चाहिए और एकांत का आनंद लेना चाहिए। हे महाराज, यही उल्लू का दूसरा गुण है जो उसमें होना चाहिए। क्योंकि हे महाराज, समस्त देवताओं के स्वामी, भगवान बुद्ध ने अपने उत्कृष्ट संयुत्त निकाय में कहा है:

"मेरे भाइयों, भिक्षु एकांतवास में लीन हो जाएं, एकांतवास में आनंद लें, ताकि वे यह जान सकें कि वास्तव में दुःख क्या है, दुःख का कारण क्या है, दुःख का निवारण क्या है और दुःख के निवारण का मार्ग क्या है।" 46. भारतीय सारस

16. 'आदरणीय नागसेना, भारतीय सारस का वह गुण जिसे आप कहते हैं कि उसे अपनाना चाहिए, वह कौन सा है?'

हे महाराज, जिस प्रकार भारतीय सारस अपनी पुकार से दूसरों को उनके साथ होने वाले सौभाग्य या विपत्ति के बारे में सूचित करता है; ठीक उसी प्रकार, हे महाराज, परिश्रमी भिक्षु को अपने धम्म उपदेशों द्वारा यह बताना चाहिए कि नरक कितना भयानक है और निर्वाण कितना आनंदमय है। हे महाराज, यही भारतीय सारस का गुण है जो उनमें होना चाहिए। क्योंकि हे महाराज, पिंडोल भारद्वाज ने कहा है:

"दो बातें हैं जो सच्चे संन्यासी को हमेशा दूसरों को स्पष्ट करनी चाहिए - नरक कितना भयानक, कितना डरावना है; निर्वाण का आनंद कितना महान और कितना गहरा है।" 47. द बैट.

17. 'आदरणीय नागसेना, चमगादड़ के वे दो गुण जो आप कहते हैं कि उसे अपनाने चाहिए, वे कौन से हैं?'

'हे महाराज, जिस प्रकार चमगादड़ भले ही मनुष्यों के घरों में प्रवेश कर उड़ता है, फिर भी शीघ्र ही निकल जाता है, वहाँ ठहरता नहीं; ठीक उसी प्रकार, हे महाराज, परिश्रमी भिक्षु को भी भिक्षा मांगने के लिए गाँव में प्रवेश करने और नियमित रूप से अपने चक्कर लगाने के बाद, प्राप्त भिक्षा लेकर शीघ्र ही प्रस्थान करना चाहिए और वहाँ ठहरना नहीं चाहिए। हे महाराज, यही चमगादड़ का पहला गुण है जो भिक्षु में होना चाहिए।'

18. हे राजा, जिस प्रकार चमगादड़ दूसरों के घरों में जाकर उन्हें कोई हानि नहीं पहुँचाता; ठीक उसी प्रकार, हे राजा, परिश्रमी भिक्षु को भी, जो लगन से परिश्रम करता है, गृहस्थों के घरों में जाकर उन्हें निरंतर अनुरोधों, अपनी इच्छाओं को बताने, अनुचित व्यवहार, बकबक करने या उनकी समृद्धि या विपत्ति के प्रति उदासीन रहने से कभी भी परेशान नहीं करना चाहिए; उसे कभी भी उन्हें उनके मुख्य व्यवसाय से विचलित नहीं करना चाहिए, बल्कि सभी कार्यों में उनकी सफलता की कामना करनी चाहिए। हे राजा, यह चमगादड़ का दूसरा गुण है जो उसे धारण करना चाहिए। क्योंकि हे राजा, समस्त देवताओं के स्वामी भगवान बुद्ध ने लक्खना सूत्र में कहा है:

"ओह! दूसरों को कभी कोई हानि या कमी क्यों नहीं उठानी पड़ती, चाहे उनके विश्वास में हो, या धार्मिकता में, या वचन के ज्ञान में, या समझ में, या आत्म-बलिदान में, या धर्म में, या सभी अच्छी चीजों में, या उनके धन भंडार में, या अनाज में, या जमीनों में, या मकानों में, या उनके बेटों में, या पत्नियों में, या उनके भेड़-बकरियों में, या उनके मित्रों में, और रिश्तेदारों में, और बल में, सौंदर्य में, और आनंद में" - वह इस प्रकार सोचता है - दूसरों के लाभ और सफलता की लालसा में!"

48. जोंक।

19. 'आदरणीय नागसेना, जोंक का वह गुण जिसे आप कहते हैं कि उसे ग्रहण करना चाहिए, वह कौन सा है?'

'हे महाराज, जिस प्रकार जोंक जहाँ कहीं भी लग जाए, वहीं चिपक जाती है और खून पीती है; ठीक उसी प्रकार, हे महाराज, परिश्रमी भिक्षु को, जो लगन से प्रयास कर रहा हो, ध्यान के लिए जिस भी विषय पर अपना मन लगाए, उस विषय को उसके रंग, आकार, स्थिति, विस्तार, सीमाओं, प्रकृति और विशिष्ट चिह्नों सहित दृढ़ता से अपने समक्ष प्रस्तुत करना चाहिए, और मुक्ति के अमृत का आनंद लेना चाहिए। हे महाराज, यही जोंक का गुण है जो भिक्षु में होना चाहिए। क्योंकि, हे महाराज, अनुरुद्ध ने कहा है:

"शुद्ध हृदय से, दृढ़ ध्यान में, स्वतंत्रता के कभी न खत्म होने वाले पेय का भरपूर आनंद लें।"

49. सर्प।

20. 'आदरणीय नागसेन, आप कहते हैं कि सर्प के वे तीन गुण कौन से हैं जिन्हें उसे धारण करना चाहिए?'

हे महाराज, जिस प्रकार सर्प अपने पेट के बल आगे बढ़ता है, ठीक उसी प्रकार हे महाराज, परिश्रमी भिक्षु को अपने ज्ञान के बल पर प्रगति करनी चाहिए। हे महाराज, ज्ञान के बल पर प्रगति करने वाले संन्यासी का हृदय (चार सत्यों का) निरंतर अवलोकन करता रहता है; वह संन्यासी के गुणों के विपरीत गुणों को त्याग देता है और उनके अनुरूप गुणों को अपने भीतर विकसित करता है। हे महाराज, यही सर्प का पहला गुण है जो उसमें होना चाहिए।

21. हे राजा, जिस प्रकार सर्प गति करते समय मादक पदार्थों से दूर रहता है, उसी प्रकार हे राजा, परिश्रमी भिक्षु को भी परिश्रम से दूर रहकर अपने मार्ग पर चलना चाहिए। हे राजा, सर्प का यह दूसरा गुण है जो उसमें होना चाहिए।

22. हे राजा, जिस प्रकार सर्प मनुष्यों को देखकर चिंतित और व्याकुल हो जाता है और बचने का मार्ग खोजता है; ठीक उसी प्रकार, हे राजा, परिश्रमी भिक्षु, जो लगन से परिश्रम कर रहा हो, जब अपने मन में गलत विचार या असंतोष उत्पन्न होते हुए पाता है, तो वह चिंतित और व्याकुल हो जाता है और बचने का मार्ग खोजते हुए अपने आप से कहता है: "आज का दिन मैंने लापरवाही में व्यतीत किया है और इसे मैं कभी वापस नहीं पा सकूंगा।" हे राजा, यही भिक्षु का तीसरा गुण है।

उसे सर्प रखना चाहिए। क्योंकि हे राजा, भल्लातीय गातक में वर्णित दो परी पक्षियों का यही कथन है:

"'शिकारी, हमने घर से दूर, अपनी इच्छा के विरुद्ध, केवल एक ही रात बिताई है, और पूरी रात एक-दूसरे के बारे में सोचते रहे हैं, फिर भी हम उसी एक रात का विलाप करते हैं, और शोक मनाते हैं; क्योंकि वह कभी वापस नहीं आ सकती!'"

50. चट्टानी सांप।

23. 'आदरणीय नागसेना, चट्टानी सर्प का वह एक गुण जो आप कहते हैं कि उसे धारण करना चाहिए, वह कौन सा है?'

हे राजा, जिस प्रकार शिला-सम्मोहक सर्प, चाहे उसका शरीर कितना भी लंबा क्यों न हो, अनेक दिनों तक भूखे पेट रहता है, और भोजन न मिलने पर भी किसी प्रकार जीवित रहता है; ठीक उसी प्रकार, हे राजा, परिश्रमी भिक्षु, जो निरंतर प्रयास करता है, भिक्षा मांगने पर निर्भर रहता है, दूसरों द्वारा दिए गए दान पर आश्रित रहता है, भेंटों की प्रतीक्षा करता है, स्वयं कुछ भी ग्रहण नहीं करता, और तृप्ति पाने में कठिनाई का सामना करता है, फिर भी यदि वह सर्वोच्च पुण्य की खोज करे, तो भले ही उसे चार-पाँच निवाले भी न मिलें, वह जल से अपनी भूख मिटा ले। हे राजा, शिला-सम्मोहक सर्प का यही गुण उसमें होना चाहिए। क्योंकि हे राजा, धर्म के महापुरुष और गुरु सारिपुत्त ने कहा है:

चाहे वह सूखा भोजन खाए या गीला भोजन,
उसे तृप्ति तक कभी न खाने दो।
अच्छा संन्यासी एकांत में आगे बढ़ता है।
और वह अपने भोजन में संयम बरतता है।
अगर उसे सिर्फ चार या पांच निवाले ही मिलें,
उसे पानी पीने दो। उस आदमी को क्या फर्क पड़ता है?
मन को अरहत पद पर स्थिर रखते हुए, शांति के लिए!
यहां पांचवां अध्याय समाप्त होता है।

टिपिटका >> सुत्त पिटक >> खुद्दक निकाय >> मिलिंदपन्हा >> पुस्तक VII: उपमाएँ - ओपम्मकथा पन्हा अध्याय 6

अनुवादक: टी.डब्ल्यू. राइस डेविड्स

पिछला <<<<-----||-24-||----->>>> अगला

51. सड़क मकड़ी।

1. 'आदरणीय नागसेना, सड़क मकड़ी में वह कौन सा गुण होना चाहिए, जैसा कि आप कहते हैं, वह कौन सा गुण है?'

हे महाराज, जिस प्रकार सड़क पर मकड़ी अपना जाला बुनती है और उसमें जो कुछ भी फंसता है, चाहे वह कीड़ा हो, मक्खी हो या भृंग, उसे पकड़कर खा जाती है; ठीक उसी प्रकार, हे महाराज, परिश्रमी भिक्षु को अपने छह इंद्रियों के द्वारों पर आत्म-संयम का जाला फैलाना चाहिए और यदि उसमें कोई भी बुरी मक्खी फंस जाए, तो उसे पकड़ लेना चाहिए। हे महाराज, यही वह गुण है जो भिक्षु में होना चाहिए। क्योंकि, हे महाराज, अनुरुद्ध ने कहा है:

"उसे अपने हृदय को उसके छह द्वारों पर बंद कर लेना चाहिए, आत्म-संयम से, जो सबसे अच्छा और प्रमुख उपहार है, यदि कोई बुरे विचार भीतर आ जाएँ, तो उन्हें अंतर्दृष्टि की तलवार से मार डालना चाहिए।" 52. स्तनपान करता बच्चा।

2. 'आदरणीय नागसेना, आप कहते हैं कि शिशु को स्तनपान करते समय जो गुण धारण करना चाहिए, वह कौन सा है?'

'हे राजा, न्याय करो, जैसे बच्चा स्तनपान करते समय अपने लाभ के लिए ही तरसता है, और यदि उसे दूध की कमी होती है, तो वह उसके लिए रोता है;

हे महाराज, परिश्रमी भिक्षु को भी यही गुण अपना हित साधने के लिए तत्पर रहना चाहिए, और हर कार्य में—शिक्षण में, प्रश्न पूछने और उत्तर देने में, जीवन आचरण में, एकांतवास में, गुरुओं के साथ संगति में, और भले लोगों से मित्रता बढ़ाने में—उसे सत्य के ज्ञान से

युक्त रहना चाहिए। हे महाराज, यही गुण उस बालक में होना चाहिए जो माँ की गोद में होता है। क्योंकि हे महाराज, समस्त देवताओं के स्वामी भगवान बुद्ध ने दीघ निकाय के महामृत्यु सूत्र में कहा है:

"मैं तुमसे विनती करता हूँ, आनंद, अपने हित में उत्साहपूर्वक प्रयास करो। अपने भले के लिए खुद को समर्पित करो। गंभीर रहो, पूरी तरह से उत्साहित रहो, अपने भले के लिए तल्लीन रहो!" 53. स्थलीय कछुआ

3. 'आदरणीय नागसेना, स्थलीय कछुए का वह एक गुण जिसे आप कहते हैं कि उसे अपनाना चाहिए, वह कौन सा है?'

हे राजा, जिस प्रकार स्थलीय कछुआ जल से भयभीत होकर उससे दूर स्थानों पर रहता है और जल से बचने की इस आदत के कारण उसका जीवनकाल निरंतर बना रहता है; ठीक उसी प्रकार, हे राजा, परिश्रमी भिक्षु को परिश्रम की कमी में निहित खतरे को देखकर परिश्रम के लाभों को ध्यान में रखना चाहिए। क्योंकि उस अनुभूति से ही...

लापरवाही में खतरे से बचने पर भी, उनका समनत्व क्षीण नहीं होता, बल्कि वे निर्वाण की ओर अग्रसर होते हैं। हे राजा, यही वह गुण है जो स्थलीय कछुए में होना चाहिए। क्योंकि हे राजा, समस्त देवताओं के स्वामी भगवान ने धम्मपद में कहा है:

"वह भिक्षु जो गंभीरता से आनंद लेता है, जो उदासीनता के खतरे को देखता है, वह अपनी उच्च स्थिति से नहीं गिरेगा, बल्कि निर्वाण की उपस्थिति में निवास करेगा।" 54. पर्वत की ऊँचाई।

4. 'आदरणीय नागसेना, आपने जिस पर्वत की ऊँचाई के पाँच गुणों की बात कही है, वे कौन से हैं?'

'हे महाराज, जिस प्रकार पर्वत की ऊँचाई दुष्टों के लिए छुपने का स्थान होती है, ठीक उसी प्रकार, हे महाराज, परिश्रमी भिक्षु को भी दूसरों के अपराधों और दोषों को गुप्त रखना चाहिए और उन्हें प्रकट नहीं करना चाहिए। हे महाराज, यह पर्वत की ऊँचाई के गुणों में से पहला गुण है जो उसे धारण करना चाहिए।'

5. हे राजा, जिस प्रकार पर्वत की ऊँचाई पर बहुत से लोग नहीं होते; उसी प्रकार, हे राजा, परिश्रमी भिक्षु को भी कामवासना, क्रोध, मूर्खता, अहंकार, गलत विचारों के जाल और सभी बुरी प्रवृत्तियों से मुक्त होना चाहिए। हे राजा,

पर्वत की ऊँचाई का दूसरा गुण जो उसमें होना चाहिए, वह यही है।

6. हे राजा, जिस प्रकार पर्वत की चोटी एक एकांत स्थान होती है, जहाँ मनुष्यों की भीड़ नहीं होती; ठीक उसी प्रकार, हे राजा, परिश्रमी भिक्षु को, जो लगन से परिश्रम करता है, एकांत में रहना चाहिए और बुरे, अशोभनीय गुणों से, उन गुणों से मुक्त रहना चाहिए जो श्रेष्ठ नहीं हैं। हे राजा, पर्वत की चोटी का यह तीसरा गुण है जो उसमें होना चाहिए।

7. हे राजा, जिस प्रकार पर्वत की चोटी निर्मल और पवित्र होती है, ठीक उसी प्रकार, हे राजा, परिश्रमी भिक्षु को भी सजग और शुद्ध, सुखी और आत्म-धर्म से रहित होना चाहिए। हे राजा, यह पर्वत की चोटी का चौथा गुण है जो उसमें होना चाहिए।

8. हे राजा, जिस प्रकार पर्वत की ऊँचाई श्रेष्ठ पुरुषों का आश्रय स्थल होती है, उसी प्रकार हे राजा, परिश्रमी और लगनशील भिक्षु को भी श्रेष्ठ पुरुषों द्वारा चाहा जाना चाहिए। हे राजा, पर्वत की ऊँचाई का यह पाँचवाँ गुण है जो भिक्षु में होना चाहिए। क्योंकि हे राजा, समस्त देवताओं के अधिपति भगवान बुद्ध ने अपने उत्कृष्ट संयुत्त निकाय में कहा है:

"एकान्त पुरुषों के साथ, उन महान पुरुषों के साथ, जिनका मन अरहतत्व की ओर पूर्णतः लीन है, जो सहजता से चिंतन की ऊँचाइयों तक पहुँच जाते हैं, जो उत्साह में दृढ़ और पवित्र ग्रंथों में पारंगत हैं—उसे ऐसे पुरुषों की शरण लेनी चाहिए, ऐसे पुरुषों के साथ संवाद स्थापित करना चाहिए।"

55. वृक्ष।

9. 'आदरणीय नागसेना, आपने कहा है कि उसे वृक्ष के जिन तीन गुणों को ग्रहण करना चाहिए, वे कौन से हैं?'

हे महाराज, जिस प्रकार वृक्ष फल और फूल देता है, ठीक उसी प्रकार हे महाराज, परिश्रमी भिक्षु को भी मोक्ष के फूल और समनत्व के फल देने चाहिए। हे महाराज, यही वह पहला गुण है जो उसमें होना चाहिए।

10. हे राजा, जिस प्रकार वृक्ष अपने पास आने वाले और उसके नीचे ठहरने वाले लोगों पर अपनी छाया डालता है, ठीक उसी प्रकार, हे राजा, परिश्रमी भिक्षु को भी परिश्रम में तत्पर होकर अपने पास आने वाले और अपने निकट रहने वाले लोगों की शारीरिक और धार्मिक दोनों आवश्यकताओं का सहर्ष ध्यान रखना चाहिए। हे राजा, वृक्ष का यही दूसरा गुण है जो भिक्षु में होना चाहिए।

11. 'हे राजा, जिस प्रकार वृक्ष अपनी छाया में किसी प्रकार का भेद नहीं करता; ठीक उसी प्रकार, हे राजा, परिश्रमी भिक्षु को भी सभी मनुष्यों में भेद नहीं करना चाहिए, बल्कि उन लोगों के प्रति समान प्रेम रखना चाहिए जो उसे लूटते हैं, हानि पहुँचाते हैं या उससे शत्रुता रखते हैं, और उन लोगों के प्रति भी जो उसके समान हैं। हे राजा, वृक्ष का यह तीसरा गुण है जो उसमें होना चाहिए। क्योंकि हे राजा, धर्म के सेनापति, वरिष्ठ सारिपुत्त ने कहा है:

"देवदत्त, जिसने उनकी हत्या करने का प्रयास किया; अंगुलिमाला, लुटेरों का सरदार; उनकी जान लेने के लिए छोड़ा गया हाथी; और राहुल, जो उनका इकलौता पुत्र था— ऋषि इन सभी के प्रति समान भाव रखते हैं।"

56. बारिश।

12. 'आदरणीय नागसेना, वर्षा के वे पाँच गुण जो आप कहते हैं कि उसे ग्रहण करने चाहिए, वे कौन से हैं?'

'हे महाराज, जिस प्रकार वर्षा धूल को बहा ले जाती है, ठीक उसी प्रकार, हे महाराज, परिश्रमी भिक्षु को अपने भीतर उत्पन्न होने वाले किसी भी बुरे स्वभाव की धूल और गंदगी को बहा ले जाना चाहिए। हे महाराज, यही वर्षा का पहला गुण है जो उसमें होना चाहिए।'

13. हे राजा, जिस प्रकार वर्षा धरती की गर्मी को शांत करती है, ठीक उसी प्रकार, हे राजा, परिश्रमी भिक्षु को अपने प्रेम भाव से देवताओं और मनुष्यों के समस्त जगत को प्रसन्न करना चाहिए। हे राजा, यह वर्षा का दूसरा गुण है जो उसमें होना चाहिए।

14. हे राजा, जिस प्रकार वर्षा से सभी प्रकार की वनस्पति उगती है, ठीक उसी प्रकार, हे राजा, परिश्रमी भिक्षु को सभी प्राणियों में आस्था का संचार करना चाहिए और उस आस्था के बीज को तीन सिद्धियों तक विकसित करना चाहिए - न केवल स्वर्ग या पृथ्वी पर गौरवशाली पुनर्जन्म की निम्न सिद्धियाँ, बल्कि सर्वोच्च पुण्य, अरहत्त्व का आनंद भी। हे राजा, यह वर्षा का तीसरा गुण है जो उसमें होना चाहिए।

15. हे राजा, जिस प्रकार ग्रीष्म ऋतु में उठने वाला वर्षा-बादल पृथ्वी पर उगने वाली घास, वृक्षों, लताओं, झाड़ियों, औषधीय जड़ी-बूटियों और वनों के राजाओं को सुरक्षा प्रदान करता है; ठीक उसी प्रकार, हे राजा, परिश्रमी भिक्षु को भी परिश्रम में तत्पर रहना चाहिए।

चिंतनशीलता की आदत विकसित करके, उसके चिंतनशीलता के बल पर उसकी समनात्व की स्थिति को संरक्षण प्रदान करो, क्योंकि सभी अच्छे गुणों की जड़ चिंतनशीलता में ही निहित है। हे राजा, यह वर्षा का चौथा गुण है जो उसमें होना चाहिए।

16. हे राजा, जैसे वर्षा जब मूसलाधार होती है तो नदियाँ, जलाशय, कृत्रिम झीलें, गुफाएँ, खड्ड, तालाब, गड्ढे और कुएँ जल से भर जाते हैं; ठीक उसी प्रकार, हे राजा, परिश्रमी भिक्षु को, जो लगन से प्रयास करता है, धर्म की वर्षा करनी चाहिए—परंपरागत ग्रंथों के अनुसार—और इस प्रकार उन लोगों के मन को तृप्त करना चाहिए जो शिक्षा के लिए तरस रहे हैं। हे राजा, यह वर्षा का पाँचवाँ गुण है जो उसे धारण करना चाहिए। क्योंकि, हे राजा, धर्म के सेनापति, वरिष्ठ सारिपुत्त ने कहा है:

"जब महान ऋषि दूर से किसी व्यक्ति को देखते हैं, चाहे वह सौ या हजार मील दूर हो, ज्ञान प्राप्ति के लिए परिपक्व, तो वे तुरंत जाते हैं और उसे धीरे से सत्य के मार्ग पर ले जाते हैं।" 57. हीरा।

17. 'आदरणीय नागसेना, हीरे के वे तीन गुण जो आप कहते हैं कि उसे धारण करने चाहिए, वे कौन से हैं?'

'हे महाराज, जिस प्रकार हीरा पूर्णतया शुद्ध होता है, ठीक उसी प्रकार हे महाराज, परिश्रमी भिक्षु को अपने जीविका के साधनों में पूर्णतया शुद्ध होना चाहिए। हे महाराज, यही हीरे का पहला गुण है जो उसमें होना चाहिए।'

18. 'और फिर, हे राजा, जैसे हीरा नहीं हो सकता

किसी भी अन्य पदार्थ के साथ मिश्रित नहीं होना चाहिए; ठीक उसी प्रकार, हे महाराज, परिश्रमी भिक्षु को दुष्ट पुरुषों के साथ मित्रता नहीं करनी चाहिए। हे महाराज, यही हीरे का दूसरा गुण है जो उसमें होना चाहिए।

19. हे राजा, जिस प्रकार हीरे को सबसे कीमती रत्नों के साथ जड़ा जाता है; ठीक उसी प्रकार, हे राजा, परिश्रमी भिक्षु को, जो लगन से परिश्रम करता है, उच्चतर गुणों वाले लोगों के साथ, आर्य मार्ग के प्रथम, द्वितीय या तृतीय चरण में प्रवेश कर चुके पुरुषों के साथ, अरहतों, संन्यासियों, त्रिविध ज्ञान या षष्ठम अंतर्दृष्टि के रत्नों के साथ संगति करनी चाहिए। हे राजा, यही हीरे का तीसरा गुण है जो उसमें होना चाहिए। क्योंकि हे राजा, समस्त देवताओं के अधिपति भगवान बुद्ध ने सुत्त निपात में कहा है:

"शुद्धों का सत्त्व शुद्धों से हो, सदा स्मरण में दृढ़ रहो; सामंजस्यपूर्ण ढंग से रहते हुए, इस प्रकार तुम दुःखों का अंत करोगे।" 58. शिकारी।

20. 'आदरणीय नागसेन, शिकारी के वे चार गुण जो आप कहते हैं कि उसमें होने चाहिए, वे कौन से हैं?'

'हे महाराज, जिस प्रकार शिकारी अथक होता है, उसी प्रकार हे महाराज, परिश्रमी भिक्षु को भी अथक होना चाहिए। हे महाराज, यही शिकारी का पहला गुण होना चाहिए।'

21. हे राजा, जिस प्रकार शिकारी हिरण पर अपना ध्यान केंद्रित रखता है, ठीक उसी प्रकार, हे राजा, परिश्रमी भिक्षु को भी अपने प्रयास में तत्पर रहना चाहिए।

जिस वस्तु पर उसका ध्यान केंद्रित है, उसी पर उसका ध्यान लगा रहता है। हे राजा, शिकारी का यह दूसरा गुण होना चाहिए।

22. हे राजा, जिस प्रकार शिकारी अपने काम के लिए सही समय जानता है; ठीक उसी प्रकार, हे राजा, परिश्रमी भिक्षु को भी परिश्रम में तत्पर रहते हुए विश्राम के लिए सही समय जानना चाहिए और मन ही मन कहना चाहिए: "अब विश्राम का सही समय है। अब विश्राम से बाहर आने का सही समय है।" हे राजा, यही शिकारी का तीसरा गुण है जो उसमें होना चाहिए।

23. हे राजा, जिस प्रकार शिकारी हिरण को देखकर इस विचार से प्रसन्न होता है: "मैं इसे पाऊंगा!" ठीक उसी प्रकार, हे राजा, परिश्रमी भिक्षु, जो लगन से परिश्रम करता है, ध्यान के विषय को देखकर प्रसन्न होता है और इस विचार से प्रसन्न होता है: "इससे मैं उस विशिष्ट विचार को प्राप्त कर लूंगा जिसकी मैं खोज कर रहा हूं।" हे राजा, यह शिकारी का चौथा गुण है जो उसमें होना चाहिए। क्योंकि हे राजा, महापुरुष मोघराग ने कहा है:

"वह संन्यासी, जिसका मन निर्वाण पर केंद्रित है, जिसने अपने विचारों को निर्देशित करने के लिए एक लक्ष्य प्राप्त कर लिया है, उसे इस आशा से अत्यधिक आनंदित होना चाहिए: 'इसी से मैं अपना परम लक्ष्य प्राप्त करूँगा।'" 59. मछुआरा।

24. 'आदरणीय नागसेना, मछुआरे के वे दो गुण जो आप कहते हैं कि उसे अपनाने चाहिए, वे कौन से हैं?'

'हे महाराज, जिस प्रकार मछुआरा मछली को अपने कांटे से खींचता है, ठीक उसी प्रकार, हे महाराज, परिश्रमी भिक्षु को अपने ज्ञान से, और वह भी पूर्णतः, समनत्व के फल प्राप्त करने चाहिए। हे महाराज, यही वह प्रथम गुण है जो एक मछुआरे में होना चाहिए।'

25. हे महाराज, जिस प्रकार मछुआरा थोड़े से त्याग से बड़ा लाभ प्राप्त करता है, उसी प्रकार हे महाराज, परिश्रमी भिक्षु को सांसारिक वस्तुओं के तुच्छ प्रलोभनों का त्याग करना चाहिए; तब वह त्याग से ही समनत्व के महान फल प्राप्त करेगा। हे महाराज, यह मछुआरे का दूसरा गुण है जो उसमें होना चाहिए। क्योंकि हे महाराज, राहुल ने कहा है:

संसार के प्रलोभनों का त्याग करके वह कामवासना, क्रोध और पाप से रहित अवस्था प्राप्त करेगा— सजीव जीवन की उन अवस्थाओं से मुक्त होगा— और मुक्त हो जाएगा, मनुष्यों की लालसाओं से मुक्त हो जाएगा, और श्रेष्ठ मार्ग के चरणों के फल और अंतर्दृष्टि के छह गुण उसके होंगे।

60. बढ़ई।

26. 'आदरणीय नागसेन, बढ़ई को वे कौन से दो गुण अपनाने चाहिए?'

'हे महाराज, जिस प्रकार बढ़ई काली रस्सी (जो उसके मार्गदर्शन के लिए उसके चारों ओर लिपटी होती है) की रेखा के साथ लकड़ी काटता है; ठीक उसी प्रकार, हे महाराज, परिश्रमी भिक्षु को भी लगन से, धर्म को आधार बनाकर और विश्वास के हाथ में ज्ञान की आरी धारण करके, विजेताओं द्वारा प्रतिपादित सिद्धांत के अनुसार अपने बुरे स्वभावों को काट डालना चाहिए। हे महाराज, यही वह पहला गुण है जो एक बढ़ई में होना चाहिए।'

27. हे राजा, जिस प्रकार बढ़ई लकड़ी के कोमल भागों को त्यागकर कठोर भागों का उपयोग करता है, ठीक उसी प्रकार, हे राजा, परिश्रमी भिक्षु को भी परिश्रम में तत्पर रहकर, व्यर्थ के सिद्धांतों के विवेचना मार्ग को त्यागकर, जैसे कि—शाश्वत जीवन का सिद्धांत—खाओ-पियो, क्योंकि कल मरना है—आत्मा और शरीर एक हैं—आत्मा एक है, शरीर दूसरी—सभी शिक्षाएँ एक समान हैं—इन सिद्धांतों का त्याग करना चाहिए।

उत्कृष्ट—कि जो नहीं किया जाता उसका कोई लाभ नहीं—कि मनुष्य के कर्मों का कोई महत्व नहीं—कि जीवन की पवित्रता मायने नहीं रखती—कि प्राणियों के विनाश पर नौ नए प्रकार के प्राणी प्रकट होते हैं—कि अस्तित्व के मूल तत्व शाश्वत हैं—कि जो कर्म करता है उसे उसका फल भोगना पड़ता है—कि एक कर्म करता है और दूसरा उस कर्म का फल भोगता है—और कर्म के ऐसे ही अन्य सिद्धांत या कर्मों के फल के बारे में गलत विचार—मैं कहता हूँ, इन सभी सिद्धांतों, विधर्म की ओर ले जाने वाले मार्गों को त्यागकर, उसे उन मूल तत्वों की वास्तविक प्रकृति को सीखना चाहिए जिनसे प्रत्येक व्यक्तित्व अपने अल्पकालिक अस्तित्व के लिए बना होता है, और इस प्रकार उस अवस्था की ओर अग्रसर होना चाहिए जो वासनाओं, द्वेष और सुस्ती से रहित है, जिसमें व्यक्तित्व की उत्तेजनाएँ अब ज्ञात नहीं होतीं, और जिसे इसलिए परम शून्य कहा जाता है।

हे महाराज, यह बढ़ई का दूसरा गुण है जो उसमें होना चाहिए। क्योंकि हे महाराज, समस्त देवताओं के स्वामी, भगवान बुद्ध ने सूत्र निपात में कहा है:

गंदगी से छुटकारा पाओ! अपने आस-पास का कूड़ा-कचरा अलग कर दो!
बेकार की चीजों को अलग कर दो, जो लोग पकड़े हुए हैं
जो सच्चे समना नहीं हैं!
बुरे विचार रखने वालों से छुटकारा पाओ।
जो जीवन के बुरे तरीकों का अनुसरण करते हैं!
अपने आप को विचारशील और पवित्र रखें, उन रिसॉर्ट के साथ।
उन्हीं लोगों के साथ रहो, जो स्वयं शुद्ध हैं!
यहां छठा अध्याय समाप्त होता है।

टिपिटका >> सुत्त पिटक >> खुद्दक निकाय >> मिलिंदपन्हा >> पुस्तक VII: उपमाएँ - ओपम्मकथा पन्हा अध्याय 7

अनुवादक: टी.डब्ल्यू. राइस डेविड्स

पिछला <<<<-----॥-25-॥समाप्त

61. पानी का बर्तन।

1. 'आदरणीय नागसेना, आपने जिस जलपात्र के गुण के बारे में कहा है कि उसे ग्रहण करना चाहिए, वह कौन सा गुण है?'

हे महाराज, जिस प्रकार भरा हुआ घड़ा शांत रहता है, उसी प्रकार हे महाराज, परिश्रमी भिक्षु को भी, चाहे वह समनत्व की शिखर अवस्था पर पहुँच गया हो और समस्त परंपराओं, विद्याओं और व्याख्याओं का ज्ञाता हो, शांत रहना चाहिए, उस पर अभिमान नहीं करना चाहिए, अहंकार नहीं दिखाना चाहिए, बल्कि अभिमान और आत्म-धर्म का त्याग करके, सरल, वाचाल और दूसरों की निंदा न करने वाला होना चाहिए। हे महाराज, यही घड़े का गुण है जो उसे धारण करना चाहिए। क्योंकि हे महाराज, समस्त देवताओं के स्वामी भगवान बुद्ध ने सूत्र निपात में कहा है:

"जो भरा हुआ नहीं है, वही आवाज़ करता है; जो भरा हुआ है, वह शांत और स्थिर है; मूर्ख खाली पानी के घड़े के समान है, बुद्धिमान गहरे, साफ और भरे हुए तालाब के समान है।" 62. काला लोहा।

2. 'आदरणीय नागसेना, काले लोहे के वे दो गुण जो आप कहते हैं कि उसे ग्रहण करने चाहिए, वे कौन से हैं?'

'हे राजा, न्यायपूर्ण, काले लोहे के समान, तब भी जब

पीटा हुआ भार वहन करता है; ठीक उसी प्रकार, हे महाराज, परिश्रमी भिक्षु का मन, जो लगन से परिश्रम करता है, अपने चिंतनशील स्वभाव के कारण भारी भार वहन करने में सक्षम होना चाहिए। हे महाराज, यही वह प्रथम गुण है जो उसमें होना चाहिए।

3. हे राजा, जिस प्रकार काला लोहा एक बार भीगने के बाद पानी नहीं उगलता; ठीक उसी प्रकार, हे राजा, परिश्रमी भिक्षु को, जो लगन से परिश्रम करता है, भगवान बुद्ध की महानता, उनके उपदेशों की पूर्णता, संघ की श्रेष्ठता में एक बार स्थापित विश्वास को कभी नहीं छोड़ना चाहिए—रूपों, संवेदनाओं, विचारों, गुणों या चेतना के रूपों की अनित्यता के ज्ञान को कभी नहीं छोड़ना चाहिए। हे राजा, यही वह दूसरा गुण है जो काले लोहे में होना चाहिए। क्योंकि हे राजा, सभी देवताओं के स्वामी भगवान बुद्ध ने कहा है:

"वह व्यक्ति जो अंतर्दृष्टि से शुद्ध हो गया हो, श्रेष्ठों के सिद्धांत में प्रशिक्षित हो, भेदों को उनके वास्तविक स्वरूप में समझता हो, उसे कांपने की क्या आवश्यकता है? वह केवल आंशिक रूप से ही नहीं, बल्कि पूर्ण रूप से अरहतत्व की स्पष्ट ऊंचाइयों को प्राप्त करेगा।" 63. द सनशेड।

4. 'आदरणीय नागसेना, आपने जिस धूप से बचाव के लिए जिन तीन गुणों की बात कही है, वे कौन से हैं?'

'हे महाराज, जिस प्रकार सूर्य की छाया सिर पर रहती है, ठीक उसी प्रकार, हे महाराज, परिश्रमी भिक्षु को सभी बुरे स्वभावों से ऊपर होना चाहिए। हे महाराज, यही सूर्य की छाया का पहला गुण है जो उसमें होना चाहिए।'

5. हे महाराज, जिस प्रकार धूप से बचने के लिए छाता एक डंडे से सिर पर टिकाया जाता है, ठीक उसी प्रकार, हे महाराज, परिश्रमी भिक्षु को, जो लगन से प्रयास करता है, चिंतन को अपना सहारा बनाना चाहिए। हे महाराज, यही धूप से बचने के लिए छाते का दूसरा गुण है जो उसमें होना चाहिए।

6. हे राजा, जिस प्रकार धूप से बचाव के लिए छाता हवा, गर्मी और बारिश के तूफानों से बचाता है; ठीक उसी प्रकार, हे राजा, परिश्रमी भिक्षु को, जो लगन से प्रयास करता है, अनेक सामनों और ब्राह्मणों के विभिन्न और भिन्न-भिन्न मतों की व्यर्थ हवाओं से, काम, द्वेष और सुस्ती की त्रिगुण अग्नि की गर्मी से और बुरे स्वभाव की वर्षा से बचाव करना चाहिए। हे राजा, यही वह तीसरा गुण है जो उसे धारण करना चाहिए। क्योंकि, हे राजा, धर्म के सेनापति, वरिष्ठ सारिपुत्त ने कहा है:

"जैसे एक विशाल, दृढ़ छतरी दूर तक फैली होती है, जिसमें एक छोर से दूसरे छोर तक कोई छेद नहीं होता, जो जलती हुई गर्मी और देवताओं की प्रचंड वर्षा को रोकती है; उसी प्रकार बुद्ध का पुत्र, जो पूर्णतः पवित्र है, धर्म की वीर छतरी धारण किए हुए, बुरी प्रवृत्तियों की वर्षा और तीनों प्रकार की अग्नि की भयानक गर्मी को रोकता है।"

64. धान का खेत।

7. 'आदरणीय नागसेना, धान के खेत के वे तीन गुण जो आप कहते हैं कि उसमें होने चाहिए, वे कौन से हैं?'

हे महाराज, जिस प्रकार धान के खेतों में सिंचाई के लिए नहरें होती हैं, ठीक उसी प्रकार, हे महाराज, परिश्रमी भिक्षु को धर्मात्मा व्यक्ति के लिए अनिवार्य विभिन्न कर्तव्यों की सूची से सुसज्जित किया जाना चाहिए—वे नहरें जो बुद्ध के उपदेशों के धान के खेतों तक जल पहुंचाती हैं। हे महाराज, यह धान के खेत के उन गुणों में से पहला गुण है जो उसमें होना चाहिए।

8. हे राजा, जिस प्रकार धान के खेत में तटबंध बनाए जाते हैं जिससे पानी रुका रहता है और फसल पकती है; ठीक उसी प्रकार, हे राजा, परिश्रमी भिक्षु को भी धार्मिक जीवन और पाप से लज्जा के तटबंधों से युक्त होना चाहिए, जिससे वह अपने समनत्व को बनाए रखे और उसके फल प्राप्त करे। हे राजा, यह धान के खेत का दूसरा गुण है जो उसमें होना चाहिए।

9. हे राजा, जिस प्रकार धान का खेत उपजाऊ होता है और किसान के हृदय को आनंद से भर देता है, जिससे यदि बीज थोड़ा हो तो फसल अधिक होती है और यदि बीज अधिक हो तो फसल और भी अधिक होती है; ठीक उसी प्रकार, हे राजा, परिश्रमी भिक्षु, जो लगन से प्रयास करता है, बहुत अच्छे फल उत्पन्न करे और उसका समर्थन करने वालों के हृदयों को प्रसन्न करे, जिससे जहाँ थोड़ा दिया जाता है वहाँ परिणाम अधिक होता है और जहाँ अधिक दिया जाता है वहाँ परिणाम और भी अधिक होता है।

[पैराग्राफ जारी है] हे राजा, यह धान के खेत का तीसरा गुण है जो आपके पास होना चाहिए। क्योंकि हे राजा, उपाली, जो वरिष्ठ हैं और जिन्होंने संघ के नियमों को अपने सिर पर धारण किया है, ने कहा है:

"धान के खेत की तरह फलदायी बनो, हाँ, सभी अच्छे कामों में समृद्ध बनो! क्योंकि वही सबसे अच्छा खेत है जो बोने वाले को सबसे अच्छी फसल देता है।" 65. चिकित्सा।

10. 'आदरणीय नागसेना, आपने जिन दो गुणों की औषधि लेने की बात कही है, वे कौन-कौन सी हैं?'

'हे महाराज, जिस प्रकार औषधि में कीटाणु उत्पन्न नहीं होते, ठीक उसी प्रकार, हे महाराज, परिश्रमी भिक्षु के मन में किसी प्रकार की बुरी प्रवृत्ति उत्पन्न न होने दें। हे महाराज, यह औषधि का पहला गुण है जो उसमें होना चाहिए।'

11. हे महाराज, जिस प्रकार औषधि किसी भी विष का प्रतिकार करती है, चाहे वह काटने, संपर्क, खाने या पीने से हुआ हो; ठीक उसी प्रकार, हे महाराज, परिश्रमी भिक्षु को अपने भीतर कामवासना, द्वेष, सुस्ती, अहंकार और गलत धारणाओं के विष का प्रतिकार करना चाहिए। हे महाराज, यह औषधि का दूसरा गुण है जो उसे धारण करना चाहिए। क्योंकि हे महाराज, समस्त देवताओं के अधिपति भगवान बुद्ध ने कहा है:

"वह परिश्रमी संन्यासी जो वस्तुओं के मूल तत्वों की प्रकृति और सच्चे अर्थ को जानने की लालसा रखता है, वह मानो सभी बुरे विचारों के नाश का प्रतिकार बन जाता है।"

66. भोजन।

12. 'आदरणीय नागसेना, आपने जिन तीन गुणों के भोजन का उल्लेख किया है, वे कौन से हैं?'

हे महाराज, जिस प्रकार भोजन सभी प्राणियों का आधार है, ठीक उसी प्रकार, हे महाराज, परिश्रमी भिक्षु को भी एक ऐसे साधन के समान होना चाहिए, जिसके द्वारा सभी प्राणी श्रेष्ठ अष्टांगिक मार्ग का द्वार खोल सकें। हे महाराज, यह भोजन का पहला गुण है जो भिक्षु में होना चाहिए।

13. हे राजा, जिस प्रकार भोजन से लोगों की शक्ति बढ़ती है, उसी प्रकार हे राजा, परिश्रमी भिक्षु को भी सद्गुणों में वृद्धि करनी चाहिए। हे राजा, यह भोजन का दूसरा गुण है जो उसे धारण करना चाहिए।

14. हे महाराज, जिस प्रकार भोजन सभी प्राणियों की इच्छा होती है, उसी प्रकार हे महाराज, परिश्रमी भिक्षु समस्त जगत की इच्छा के पात्र होने चाहिए। हे महाराज, यह उनके लिए भोजन के गुणों में तीसरा गुण है। क्योंकि हे महाराज, महा मोग्गलाना ने कहा है:

"आत्मसंयम, प्रशिक्षण और धार्मिकता द्वारा, कर्तव्य पालन द्वारा और उपलब्धियों द्वारा, परिश्रमी संन्यासी को स्वयं को संसार के सभी मनुष्यों के लिए एक वांछनीय वस्तु बना लेना चाहिए।" 67. धनुर्धर।

15. 'आदरणीय नागसेन, धनुर्धारी के वे चार गुण जो आप कहते हैं कि उसे धारण करने चाहिए, वे कौन से हैं?'

हे राजा, न्यायप्रिय, जैसे धनुर्धर तीर चलाते समय न्यायप्रिय होता है।

अपने तीरों को उठाते हुए, वह अपने दोनों पैरों को जमीन पर मजबूती से जमाता है, घुटनों को सीधा रखता है, तरकश को कमर के संकरे हिस्से पर लटकाता है, पूरे शरीर को स्थिर रखता है, दोनों हाथों को धनुष पर तीर के जोड़ बिंदु पर मजबूती से रखता है, मुट्ठियाँ बंद करता है, उंगलियों के बीच कोई जगह नहीं छोड़ता, गर्दन को आगे बढ़ाता है, मुंह और एक आंख बंद कर लेता है, और इस विचार से प्रसन्न होकर निशाना साधता है: "मैं इसे मार गिराऊंगा।" हे राजा, परिश्रमी भिक्षु को भी इसी प्रकार परिश्रम में तत्पर रहते हुए, धर्म के आधार पर अपने उत्साह के चरणों को दृढ़तापूर्वक स्थापित करना चाहिए, अपने हृदय की दया और कोमलता को बरकरार रखना चाहिए, इंद्रियों को वश में करने पर अपना ध्यान केंद्रित करना चाहिए, आत्मसंयम और कर्तव्य पालन द्वारा स्वयं को स्थिर रखना चाहिए, उत्तेजना और कमजोरी की भावना को दबा देना चाहिए, निरंतर चिंतन द्वारा अपने मन में कोई भी खालीपन न रहने देना चाहिए, उत्साह से आगे बढ़ना चाहिए, छह द्वारों (पाँच इंद्रियों और मन के) को बंद कर लेना चाहिए, और इस विचार में आनंदित होकर सचेत और चिंतनशील रहना चाहिए: "मैं अपने ज्ञान के भाले से अपने सभी बुरे स्वभावों का नाश करूँगा।" हे राजा, यह धनुर्धर का पहला गुण है जो उसमें होना चाहिए।

16. और फिर, हे राजा, जैसे धनुर्धर टेढ़े-मेढ़े और मुड़े हुए हिस्सों को सीधा करने के लिए भाला रखता है, वैसे ही

हे महाराज, जिस प्रकार तीर टेढ़े-मेढ़े होते हैं, ठीक उसी प्रकार परिश्रमी भिक्षु को भी, जब तक वह शरीर में है, अपने साथ सजग और विचारशील होने का गुण धारण करना चाहिए, जिससे वह अपने टेढ़े-मेढ़े, असंबद्ध और चंचल विचारों को सीधा कर सके। हे महाराज, धनुर्धर का यह दूसरा गुण है जो उसमें होना चाहिए।

17. हे राजा, जिस प्रकार धनुर्धर लक्ष्य पर अभ्यास करता है, ठीक उसी प्रकार, हे राजा, परिश्रमी भिक्षु को भी शरीर में रहते हुए लगन से अभ्यास करना चाहिए। और हे राजा, उसे कैसे अभ्यास करना चाहिए? उसे समस्त वस्तुओं की अनित्यता, वैयक्तिकता में निहित दुःख, किसी भी वस्तु या प्राणी में किसी भी स्थायी सिद्धांत (आत्मा) के अभाव, वैयक्तिकता की आवश्यक अवस्थाओं के फलस्वरूप होने वाले शरीर के रोगों, फोड़ों, पीड़ाओं, कष्टों और विपत्तियों, दूसरों पर उसकी निर्भरता और उसके निश्चित विघटन, उन विपत्तियों, खतरों, भयों और दुर्भाग्य के विचारों में अभ्यास करना चाहिए जिनके वह अधीन है, जीवन की बदलती परिस्थितियों में उसकी अस्थिरता, विघटन की उसकी संभावना, उसकी दृढ़ता की कमी, उसके सच्चे शरणस्थल न होने, सुरक्षा की गुफा न होने, सुरक्षा का घर न होने, विश्वास का उचित पात्र न होने के विचार में अभ्यास करना चाहिए। इसके व्यर्थता, शून्यता, खतरे और सारहीनता के बारे में; इसके कष्टों का स्रोत होने और इसके अधीन होने के बारे में

दंडों से परिपूर्ण और अशुद्धता से भरा, यह असंगत परिस्थितियों और गुणों का एक मिश्रित रूप है; यह बुराई और शैतान दोनों का भोजन है; इसमें पुनर्जन्म, वृद्धावस्था, रोग और मृत्यु, दुःख, विलाप और निराशा अंतर्निहित हैं; और इसमें लालसा और भ्रम का भ्रष्टाचार हमेशा बना रहता है। हे राजा, धनुर्धारी के तीन गुण हैं जो उसमें होने चाहिए।

18. हे महाराज, जिस प्रकार धनुर्धर सुबह-शाम अभ्यास करता है, उसी प्रकार हे महाराज, परिश्रमी भिक्षु को भी सुबह-शाम ध्यान करना चाहिए। क्योंकि हे महाराज, धर्म के महापुरुष और वरिष्ठ सारिपुत्त ने कहा है:

"सच्चा धनुर्धर सुबह से शाम तक अभ्यास करता है, अपनी कला का निरंतर ध्यान रखने से ही उसे अपने कौशल का फल और प्रतिफल मिलता है। इसी प्रकार बुद्ध के पुत्र भी अपनी कला का अभ्यास करते हैं। वे इस शरीर में जीवन की परिस्थितियों को कभी भी ध्यान में न रखकर ही उन समृद्ध फलों को प्राप्त करते हैं जिन्हें अरहत प्रिय मानते हैं।"

यहां पांचवीं पहेली, धनुर्धर की पहेली समाप्त होती है।

मिलिंद के दो सौ बासठ प्रश्न यहीं समाप्त होते हैं, जैसा कि पुस्तक के छह भागों में, बाईस अध्यायों में वर्णित है। अब वे प्रश्न जो वर्णित नहीं हैं, वे हैं-

दो. उन सभी को मिलाकर, जो पीढ़ी दर पीढ़ी चले आ रहे हैं और जो नहीं चले आ रहे हैं, उनकी संख्या तीन सौ चार से अधिक है, और इन सभी को 'मिलिंद के प्रश्न' के रूप में गिना जाता है।

19. राजा और नागसेन के बीच पहेलियों के आदान-प्रदान और उनके हल के समापन पर, चौरासी हजार मील तक फैली यह विशाल पृथ्वी अपने समुद्र तट तक छह बार कांपी, बिजली कड़की, देवताओं ने स्वर्ग से फूलों की वर्षा की, स्वयं महा ब्रह्मा ने अपनी प्रशंसा व्यक्त की, और गहरे समुद्र में तूफान की गर्जना जैसी भीषण गर्जना हुई। उस चमत्कार को देखकर राजा के पांच सौ उच्च मंत्रियों, सागल नगर के सभी निवासियों और राजा के महल की स्त्रियों ने महान गुरु नागसेन के समक्ष सिर झुकाया, अपने हाथ माथे पर रखे और वहां से चले गए।

20. परन्तु राजा मिलिंदा का हृदय आनंद से भर उठा और उनका सारा अहंकार धराशायी हो गया। जब उन्हें बुद्ध धर्म का गुण ज्ञात हुआ, तो उन्होंने तीन रत्नों के प्रति अपना सारा संदेह त्याग दिया, वे विधर्म के जंगल में भटकते नहीं रहे, उन्होंने सारी हठधर्मिता का त्याग कर दिया; और उच्चतर ज्ञान से अत्यंत प्रसन्न हुए।

वृहत्तर के गुणों और संन्यासी के योग्य उत्तम आचरण से प्रभावित होकर, नागसेना आत्मविश्वास से भर उठे, उनकी सारी इच्छाएँ समाप्त हो गईं और उनका सारा अहंकार और आत्म-धर्मीपन उनके हृदय से निकल गया; और जैसे किसी नाग के दाँत काट दिए गए हों, वैसे ही उन्होंने कहा: 'हे परम श्रेष्ठ, हे परम श्रेष्ठ, पूज्य नागसेना! आपने उन पहेलियों को स्पष्ट कर दिया है जिन्हें बुद्ध ही सुलझा सकते हैं। बुद्ध के सभी अनुयायियों में, समस्याओं के समाधान में आपके समान कोई नहीं है, सिवाय स्वयं वृहत्तर सारिपुत्त, जो धर्म के सेनापति हैं। हे पूज्य नागसेना, मेरी गलतियों के लिए मुझे क्षमा करें। हे पूज्य नागसेना, आज से जीवन भर मुझे धर्म का अनुयायी, सच्चा धर्मांतरित स्वीकार करें!'

21. इसके बाद राजा और उसके वीर पुरुष नागसेन का आदर करते रहे। राजा ने मिलिंद विहार नामक एक विहार बनवाया और उसे नागसेन को सौंप दिया। राजा ने नागसेन और उनके साथ-साथ सभी अरहत भिक्षुओं की सेवा की, जिनमें नागसेन प्रमुख थे, और भिक्षु जीवन की चारों आवश्यक वस्तुओं का पालन किया। बाद में, नागसेन के ज्ञान से प्रसन्न होकर, उन्होंने अपना राज्य अपने पुत्र को सौंप दिया और गृहस्थ जीवन त्यागकर निर्धन हो गए, अंतर्दृष्टि में महान बन गए और स्वयं अरहत पद प्राप्त कर लिया! इसीलिए कहा जाता है:

'बुद्धि का महिमामंडन समस्त संसार में होता है।'
और आस्था की दृढ़ता के लिए उपदेश देना।
जब वे बुद्धिमत्ता से संदेह को दूर कर देते हैं
बुद्धिमान लोग उस शांत अवस्था को प्राप्त करने का प्रयास करते हैं।
वह व्यक्ति जिसमें ज्ञान दृढ़ता से विद्यमान है,
और सचेत आत्म-नियंत्रण कभी विफल नहीं होता।
वह उन लोगों में सर्वश्रेष्ठ है जिन्हें उपहार प्राप्त होते हैं।
वह व्यक्ति जिसे विशेष सम्मान दिया जाता है।
इसलिए योग्य पुरुषों को उचित ध्यान में रखते हुए
अपने कल्याण के लिए, बुद्धिमानों का सम्मान करें,--
पवित्र चिता के समान सम्मान के योग्य
जिसके विशाल गुंबद के नीचे महान मृतकों की हड्डियाँ दबी हुई हैं।
मिलिंदा और नागसेना की पहेलियों और उनके हलों की यह पुस्तक यहीं समाप्त होती है।